उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त
विश्वविद्यालय, प्रयागराज

MAEC-101(N)
व्यष्टिभावी अर्थशास्त्र

खण्ड 01 मूलभूत अवधारणाएं			
इकाई 01	:	व्यष्टि एवं समष्टि अर्थशास्त्र	3–11
इकाई 02	:	स्थैतिक एव गत्यात्मक की अवधारणा	12–24
इकाई 03	:	साम्य की अवधारणा	25–36
इकाई 04	:	आर्थिक प्रणालियां : पूंजीवादी, समाजवादी तथा मिश्रित अर्थव्यवस्थाएं	37–47
इकाई 05	:	कीमत मैकानिज्म तंत्र मैकेनिज्म की भूमिका	48–54
इकाई 06	:	आधुनिक नवबाजारवाद	55–59
खण्ड 02 उत्पादन			
इकाई 01	:	फर्म के सिद्धान्त : फर्म के उद्देश्य – लाभ अधिकतमीकरण, विक्रय अधिकतमीकरण, अल्पकाल एवं दीर्घकाल में फर्म के उद्देश्य	61–74
इकाई 02	:	उत्पादन फलन, परिवर्तनशील अनुपातों का नियम	75–86
इकाई 03	:	उत्पादन फलन : सम उत्पाद वक्र	87–96
इकाई 04	:	पैमाने का प्रतिफल	97–105
इकाई 05	:	काब डगलस उत्पादन फलन	106–111
इकाई 06	:	पैमाने की मितव्ययिताएँ	112–120
खण्ड 03 उपभोक्ता व्यवहार			
इकाई 01	:	नव क्लासिकीय उपयोगिता विश्लेषण	121–134
इकाई 02	:	हिक्स का तटस्थता वक्र विश्लेषण	135–155
इकाई 03	:	जोखिम व अनिश्चितता के संदर्भ चुनाव हेतु आधुनिक उपयोगिता विश्लेषणः बरनौली अवधारणा, न्यूमान मार्गेस्टन उपयोगिता माप विधि	156–168
खण्ड 04 कीमत सिद्धान्त			
इकाई 01	:	पूर्ण प्रतियोगिता के अर्न्तगत कीमत एवं उत्पादन निर्धारण (अल्पकालीन एवं दीर्घकालीन)	169–177
इकाई 02	:	अपूर्ण प्रतियोगिता : एकाधिकारिक, द्वयाधिकार, अल्पाधिकार में कीमत निर्धारण	178–188
इकाई 03	:	सन्धिपूर्ण एवं गैर – सन्धिपूर्ण अल्पाधिकार के विभिन्न स्वरूप	189–192
इकाई 04	:	एकाधिकार प्रतियोगिता	193–196
इकाई 05	:	मूल्य विभेद एवं क्रेता एकाधिकार	197–200
इकाई 06	:	द्विपक्षीय एकाधिकार में मूल्य निर्धारण	201–204
खण्ड 05 साधन कीमत निर्धारण			
इकाई 01	:	सीमान्त उत्पादकता सिद्धान्त –वस्तु तथा साधन कीमत अन्तर	205–209
इकाई 02	:	लगान के सिद्धान्त – रिकार्डो का सिद्धान्त, आधुनिक सिद्धान्त	210–216
इकाई 03	:	मजदूरी के सिद्धान्त	217–222
इकाई 04	:	व्याज के सिद्धान्त पूर्व किन्सीयन एवं किन्सीयन सिद्धान्त	223–230
इकाई 05	:	ब्याज का आधुनिक सिद्धान्त IS – LM वक्र द्वारा	231–234
इकाई 06	:	लाभ के सिद्धान्त : जोखिम व अनिश्चिततावहन सिद्धान्त –लाभ के कार्य	235–238

MAEC-101(N)
व्यष्टिभावी अर्थशास्त्र

परामर्श–समिति

प्रोफेसर सीमा सिंह	**कुलपति–अध्यक्ष**
प्रो. सत्यपाल तिवारी	निदेशक, मानविकी विद्याशाखा–कार्यक्रम संयोजक
श्री विनय कुमार	कुलसचिव–सचिव

विशेषज्ञ समिति

प्रो. सत्यपाल तिवारी	**अध्यक्ष**	उ.प्र. राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
डॉ अनिल कुमार यादव	**संयोजक**	उ.प्र. राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रो.किरन सिंह		इलाहाबाद केन्द्रीय विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रो. एम.के. सिंह		एम.जे.पी. रूहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली
डॉ. विश्वनाथ कुमार		एस.बी. पी.जी. कालेज, बड़ागाँव, वाराणसी
डॉ. अनूप कुमार		इलाहाबाद केन्द्रीय विश्वविद्यालय, प्रयागराज

पाठ्यक्रम समन्वयक

डॉ. अनिल कुमार यादव	सहायक आचार्य, अर्थशास्त्र, उ.प्र. राजर्षि टण्डन मुक्त वि.वि., प्रयागराज

सम्पादक

डॉ. शील प्रिय त्रिपाठी	पूर्व प्राचार्य एवं प्रो. (अर्थशास्त्र) हेमवती नंदन बहुगुणा पी.जी. कालेज नैनी, प्रयागराज

परिमापक

डॉ. अनिल कुमार यादव	सहायक आचार्य, अर्थशास्त्र, उ.प्र. राजर्षि टण्डन मुक्त वि.वि., प्रयागराज

लेखक मण्डल

लेखक

डॉ. अनिल कुमार यादव	सहायक आचार्य, अर्थशास्त्र, उ.प्र. राजर्षि टण्डन मुक्त वि.वि., प्रयागराज
डॉ. अनूप कुमार	सहायक आचार्य (।।।), अर्थशास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज
डॉ. वेद प्रकाश मिश्रा	सहायक आचार्य, अर्थशास्त्र विभाग, ईश्वर शरन पी.जी. कॉलेज, प्रयागराज
डॉ. गरिमा मौर्या	सहायक आचार्य, अर्थशास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

मुद्रित–2024

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज – (वर्ष)

ISBN-978-81-19530-16-8

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठ्य सामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति के बिना, मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज की ओर से श्री विनय कुमार कुलसचिव द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित-2024

मुद्रकः चन्द्रकला यूनिवर्सल प्रा0लि0, 42/7 जवाहरलाल नेहरू रोड, प्रयागराज– 211002

इकाई–01 व्यष्टि एवं समष्टि अर्थशास्त्र (MicroAnd Macro Economics)

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 अर्थशास्त्र की परिभाषा

1.3 अर्थशास्त्र के महत्व

1.4 अर्थशास्त्र के विभाग

1.5 व्यष्टि अर्थशास्त्र

1.5.1 समष्टि अर्थशास्त्र

1.5.2 समष्टि अर्थशास्त्र का महत्व

1.6 व्यष्टि एवं समष्टि अर्थशास्त्र में अन्तर

1.7 व्यष्टि एवं समष्टि अर्थशास्त्र की एक दूसरे पर निर्भरता

1.8 निष्कर्ष

1.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.11 अभ्यासार्थ प्रश्न

1.0 उद्देश्य (Objective)

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप समझ सकेंगे कि –

- अर्थशास्त्र क्या है? तथा इसका अध्ययन कितने भागों में किया जाता है।
- अर्थशास्त्र की उपयोगितता क्या है?
- व्यष्टि एवं समष्टि अर्थशास्त्र क्या है?
- व्यष्टि एवं समष्टि अर्थशास्त्र की एक दूसरे पर निर्भरता को समझ पायेंगे।
- भारत में अर्थशास्त्र का महत्व, उपयोगिता एवं प्रासंगिकता समझ पायेंगे।

1.1 प्रस्तावना (Introduction)

अर्थशास्त्र की परिभाषा

सामाजिक विज्ञान शब्द का प्रयोग अधिकतर अर्थशास्त्र को संदर्भित करने के लिए किया जाता है। समाज में रहने वाले व्यक्ति की आर्थिक क्रियाएँ इस अध्ययन का केन्द्र बिन्दु है। अर्थव्यवस्था का हिस्सा मानी जाने वाली गतिविधियाँ वे है, जो मनुष्य की आवश्यकताओं को पूर्ण करने हेतु सीमित संसाधनों के प्रभावी उपयोग पर केन्द्रित हैं। यह सुनिश्चित करने के बाद भोजन, आवास व कपड़े जैसी सबसे मूलभूत आवश्यकताओं को पूरा किया जाता है। ध्यान फिर यह सुनिश्चित करने के लिए स्थानांतरित हो जाता है कि अन्य इच्छाएँ भी पूर्ण हों। मनुष्य की इच्छाएँ असीमित है, इस अर्थ में कि जैसे ही एक इच्छा पूरी होती है,

उसके स्थान पर दूसरी इच्छा प्रकट हो जाती है। इन इच्छाओं को पूरा करने के अधिकांश तरीके प्रतिबंधित हैं क्योंकि इनकी आपूर्ति व मांग के बीच अंतर है। इन विधियों का उपयोग विभिन्न तरीकों से किया जा सकता है, तो काफी चुनैतियाँ उत्पन्न करता है कि कौन सा विकल्प चुनना है। प्रा—तिक दुनिया में उनकी सीमित उपलब्धता के कारण, उच्चतम संभव स्तर की खुशी प्राप्त करने के लिए संसाधनों को उपलब्ध विकल्पों की सीमाओं के भीतर उत्पादक उपयोग के लिए रखा जाना चाहिए। अर्थशास्त्र की समझ हमें ऐसे विकल्प चुनने में मदद करती है जो हमारे सर्वोत्तम हित में हों। प्रयास व संतोष के स्तर आर्थिक सिध्दान्त और व्यवहार में सभी आवश्यक पूर्वाग्रह हैं। दूसरे शब्दों में यह उन वस्तुओं व सेवाओं पर चुनाव करने से संबंधित है जो अर्थव्यवस्था में बनने जा रहे है इसके साथ ही उन वस्तुओं व सेवाओं को सबसे अधिक लागत प्रभावी तरीके से कैसे उत्पन्न किया जाए और इसके विस्तार को कैसे सुनिश्चित किया जा सके। अर्थशास्त्र के अध्ययन ज्ञान का अपना विशिष्ट निकाय है। अर्थशास्त्र इस बात का अध्ययन है कि लोग अपनी असीमित मांगों को पूर्ण करने के लिए सीमित संसाधनों का उपयोग कैसे करते है। मनुष्य के लिए उपलब्ध समय और धन की मात्रा परिमित है। उसके लिए यह महत्वपूर्ण है कि वह अपने समय और संसाधनों को इस तरह से आवंटित करे, जिससे उसे उपलब्धि का सबसे बड़ा एहसास हो। मनुष्य को भोजन, वस्त्र और सोने के लिए स्थान चाहिए। इन वस्तुओं को प्राप्त करने के लिए उसके पास धन होना आवश्यक है। धन प्राप्ति के लिए पुरुषार्थ करना आवश्यक है। किसी के प्रयासों का प्रतिफल खुशी है। इसलिए, अर्थशास्त्र की विषय वस्तु को इच्छाओं, प्रयासों और संतुष्टि के रुप में अभिव्यक्त किया जा सकता है। यह विशेष रुप से आदिम समाजों में आर्थिक विकास के प्रारंभिक चरणों पर लागू होता है, क्योंकि जरुरतों, प्रयासों व संतुष्टि के मध्य सीधा संबंध होता है।

अर्थशास्त्र बहुत प्राचीन विद्या है जो संस्कृत शब्दों अर्थ (धन) और कार्यों (किसी विषय के सम्बन्ध में मनुष्यों के कार्यों के क्रमबद्ध ज्ञान को उस विषय का शास्त्र कहते हैं) को जोड़कर बना है जिसका शाब्दिक अर्थ है—'धन का अध्ययन'।

अर्थशास्त्र के सम्बन्ध में विभिन्न विद्वानों के द्वारा दी गयी परिभाषा प्रो. एडम स्मिथ जिनको कि अर्थशास्त्र का जन्मदाता माना जाता है ने अर्थशास्त्र का धन के विज्ञान के रूप में परिभाषित किया। यहाँ हमे धन का अर्थ केवल समृद्धता या मुद्रा की प्रचुरता तक सीमित नहीं रखना चाहिए, बल्कि व्यापक रूप से धन का अभिप्राय उन सभी पदार्थों से है जिनमें स्वल्पता(Scarcity) और उपयोगिता(Utility) है।

डॉ. मार्शल ने अर्थशास्त्र की परिभाषा में धन के साथ—साथ मानव कल्याण के महत्व को शामिल किया तथा बताया कि धन तो साधन मात्र है जिसकी सहायता से मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति होती है।

प्रो. पीगू ने अर्थशास्त्र के क्षेत्र को व्यापक करके इसमें उन सभी भौतिक एवं गैर भौतिक पदार्थों को शामिल किया है जिनका मौद्रिक मूल्य होता है और जो कीमत प्रणाली में शामिल होती है।

अर्थशास्त्र की ऐतिहासिक स्थिति प्रारम्भिक अवस्था में आर्थिक विचार और सिद्धान्त राजनीति शास्त्र, तर्कशास्त्र, नैतिकता और धर्म के सम्मिलित स्वरूपों से विकसित हुए। समयोपरांत धीरे—धीरे मनुष्य प्रत्यक्ष और शुद्ध आर्थिक क्रियाओं में संलग्न हुआ।

अर्थशास्त्र का ऐतिहासिक विकास

- आर्थिक क्रियाओं के प्रारम्भ का काल (4000—1000 ई.पू.)
- आर्थिक विचारों का उदीयमान काल (800 ई.पू.—600 ई.)
- आर्थिक विचारों की परिपक्वता और आर्थिक सिद्धान्तों के सृजन का काल (1600 ई. के बाद)

➢ इस उपकार्यक्रम के भीतर तीन कार्य धाराएँ है.

➢ व्यष्टि आर्थिक नीति

➢ समष्टि आर्थिक नीति

➢ आर्थिक संरचना

बोध प्रश्न.1: अर्थशास्त्र किसे कहते हैं एवं अर्थशास्त्र का महत्व बताइये।

समष्टि आर्थिक नीति

सरकार अपने विकासात्मक कार्यक्रम की प्रगति की निगरानी के लिए करों, सार्वजनिक व्यय, सब्सिडी, ऋण उपलब्धता और ब्याज दर में बदलाव सहित कई तरह के नीतिगत उपायों का उपयोग करती है। व्यापक आर्थिक नीति का लक्ष्य यह सुनिश्चित करने के लिए विभिन्न नीतिगत उपकरणों के उपयोग का समन्वय करना है कि वे स्थायी मानव विकास परिणामों के वितरण में योगदान करते है। समष्टि आर्थिक नीति का प्रभाव, अन्य बातों के अलावा, रोजगार के स्तर, निवेश के स्तर और समग्र आर्थिक विकास पर पड़ता है। यह नीति के प्रमुख उत्तोलक में से एक है। एक ऐसे माहौल के निर्माण के लिए उपयुक्त समष्टि आर्थिक नीति का कार्यान्वयन आवश्यक है जो प्रत्येक समय नई नौकरियों के स्थिर निर्माण के लिए अनुकूल हो। समष्टि आर्थिक नीति पर काम करने से उन ट्रेड आफ्स की व्याख्या होनी चाहिए जो सरकार किसी विशेष समय पर सामना करती है और इन ट्रेड आफ्स के आलोक में निर्णय लेते समय सरकार को पालन करने की सिफारिशें पेश करती है। इस कार्य धारा का उद्देश्य राष्ट्र हेतु विस्तारित कई व्यापक आर्थिक नीति विकल्पों का निर्धारण करना और विश्लेषण करना है कि ये विभिन्न संभावनाएँ विकास एवं बेहतर कार्य उद्देश्यों के विरुध्द कैसे खड़ी होती है और नीतिगत समस्याओं पर अपने सुझाव को प्रस्तावित करती है। ऐसा करने में यह सरकार के नीतिगत उद्देश्यों, अंतर्राष्ट्रीय अनुभवों, विकास की प्राथमिकताओं और विश्व अर्थव्यवस्था की वर्तमान स्थिति द्वारा प्रदान की गई चुनौतियों पर उचित विचार करते हुए प्रासंगिक व्यापक आर्थिक नीति संबंधी चिंताओं को स्वीकार करेगा।

व्यष्टि आर्थिक नीति

व्यष्टि आर्थिक नीति का क्षेत्र व्यक्तिगत उद्यमों, परिवारों और संपूर्ण आर्थिक क्षेत्रों के विकास पर आर्थिक नीतियों के प्रभावों का अध्ययन करता है। यह वास्तविक अर्थव्यवस्था में निवेश के प्रोत्साहन, आर्थिक संस्थानों की दक्षता व उत्पादकता को सुनिश्चित करना चाहता है, जिससे अंततः आय के स्तर और जीवन स्तर में वृध्दि होगी। इस कार्यधारा का उद्देश्य कई सूक्ष्म आर्थिक नीति विकल्पों को निर्धारित करना है जो अब सुलभ हैए समग्र विकास एवं अच्छी तरह से संचालित कार्य उद्देश्यों के प्रकाश में उन संभावनाओं का मूल्यांकन करें और नीति व निष्पादन से संबंधित चिंताओं के बारे में सरकारी नीति के सदस्यों का सुझाव प्रदान करें। इसके परिणामस्वरुप यह निर्धारित करेगा कि सरकार के समग्र नीतिगत लक्ष्यों को ध्यान में रखते हुए कौन सी सूक्ष्म आर्थिक नीति संबंधी चिंताएँ प्रासंगिक है। यह वास्तविक अर्थव्यवस्था फर्मों पर एक आर्थिक नीति सम्बन्धित आवश्यक कार्यों का संचालन स्थापित करेगाए जो आर्थिक उद्यम है जिनमें राज्य की हिस्सेदारी है और यह इसकों प्रोत्साहन भी देता है। जिन्हें राज्य सहायता प्राप्त हुई है। यह इसे अपने कर्तव्यों को पूरा करने हेतु यथासंभवन कुशलता से करने की अनुमति देगा। अपने कर्तव्यों को पूरा करने के लिए कार्यधारा अनुसंधान करेगी और ऐसी नीतियाँ तैयार करेगी जो पूर्ण रोजगार एवं समान रोजगार के अवसरों के निर्माण में योगदान दे सके।

आर्थिक संरचना

अर्थव्यवस्था एक जटिल प्रणाली है जो अपनी पहल पर चलती है। जब नीति के बारे में सोचने की प्रक्रिया की बात आती है, तो एक औपचारिक और मात्रात्मक संरचना का होना काफी सहायक होता है। एक ऐसी संरचना के उपयोग से जो आर्थिक चरों के बीच आवश्यक संबंधों को रेखांकित करता है। कई आर्थिक नीतिगत पहलों को तभी प्रभावी रुप से समझा जा सकता है और उन पर बहस भी की जा सकती है यदि उन्हें एक संरचना के रुप में प्रस्तुत किया जाए। समष्टि आर्थिक नीति स्तर पर जहाँ प्रत्येक वस्तु हर एक वस्तु से संबंधित होती है। नीति प्रस्ताव के संभावित परिणामों का विश्लेषण करते समय एक संरचना का उपयोग करना महत्वपूर्ण है। आर्थिक संरचना विभिन्न नीतियों के बीच तालमेल स्थापित करने में सहायक होते है क्योंकि वे अर्थव्यवस्था में अनुभवजन्य रुप से प्रासंगिक प्रभावों और अप्रत्यक्ष संबंधों पर अपना प्रसार करती है। वे समग्र चर जैसे विकास, रोजगार, मुद्रास्फीति आदिद्ध क्षेत्र के प्रदर्शन, गरीबी एवं असमानता पर नीतिगत सुझावों के प्रहार को भी गिनते है। इस कार्यधारा के लक्ष्यों को संक्षेप में प्रस्तु करता है। विभिन्न प्रकार के नीति संयोजनों के जवाब में अर्थव्यवस्था द्वारा अपनाए जा सकने वाले संभावित भावी पाठ्यक्रमों की रुपरेखा तैयार करना और उनका तार्किक तरीके से विश्लेषण करना है। प्राथमिक

वृध्दि व विकास सूचकांक पर पड़ने वाले विभिन्न नीतिगत विकल्पों वं चुनौतियों के प्रभाव का मात्रात्मक विश्लेषण करने का प्रयास करता है। अर्थव्यवस्था पर अनिश्चितता के प्रभावों का विश्लेषण करने के लिए यह प्रदर्शित करने के लिए कि बाहरी तत्वों की स्थिति जैसे कि तेल और वैश्विक वाणिज्य की कीमत में विभिन्न परिवर्तनों पर संस्थाएँ कैसे प्रतिक्रिया करेगा।

अर्थशास्त्र के महत्व

अर्थशास्त्र के महत्व को स्पष्ट करते हुए समाजशास्त्री डरविन अपने कथन में कहते है कि वर्तमान युग का बौध्दिक धर्म अर्थशास्त्र है। सैध्दान्तिक और व्यावहारिक रुप से अर्थशास्त्र में दोनों का ही महत्व है। सैध्दान्तिक महत्व के अन्तर्गत अनेक प्रकार की आर्थिक घटनाओं का विश्लेषण किया जाता है जिससे ज्ञान में वृध्दि होती है और इसमें वैश्विक स्तर पर असमान धन वितरण के कारण व परिणान का अवलोकन प्राप्त हो सकता है। अर्थशास्त्र के अध्ययन में स्वाभाविक रुप से मस्तिष्क में तर्क सम्बन्धी योग्यता व निरीक्षण की क्षमता का विकास होता है। अर्थशास्त्र के अध्ययन का व्यावहारिक महत्व कुछ इस प्रकार से है। उपभोक्ताओं, किसानों, श्रमिकों को लाभ इत्यादि के माध्यम से इसके महत्व को जाना जा सकता है। वर्तमान युग उपभोक्तावादी है जिसमें अपनी सीमित आय से अधिकतम संतुष्टि का मूल्याँकन उपभोक्ता की दृष्टि से काफी महत्वपूर्ण होता है। किसानों को कृषि से सम्बन्धित सभी जानकारियाँ एवं कृषि उत्पादन की नवीनतम तकनीकी से जुड़ी सभी जानकारी अर्थशास्त्र के द्वारा ही संभव है। श्रमिकों का लाभ का अध्ययन अर्थशास्त्र के द्वारा ही हो पाता है।

अर्थशास्त्र के विभाग

अर्थशास्त्र की विषय वस्तु पर पारंपरिक पध्दति या आधुनिक दृष्टिकोण का उपयोग करके चर्चा की जा सकती है। इन्हें दृष्टिकोण के रुप में जाना जाता है। दृष्टिकोण जो पारंपरिक है और इसने अर्थशास्त्र को धन के अध्ययन के रुप में देखा एवं इसे चार उपक्षेत्रों में विभाजित किया है।

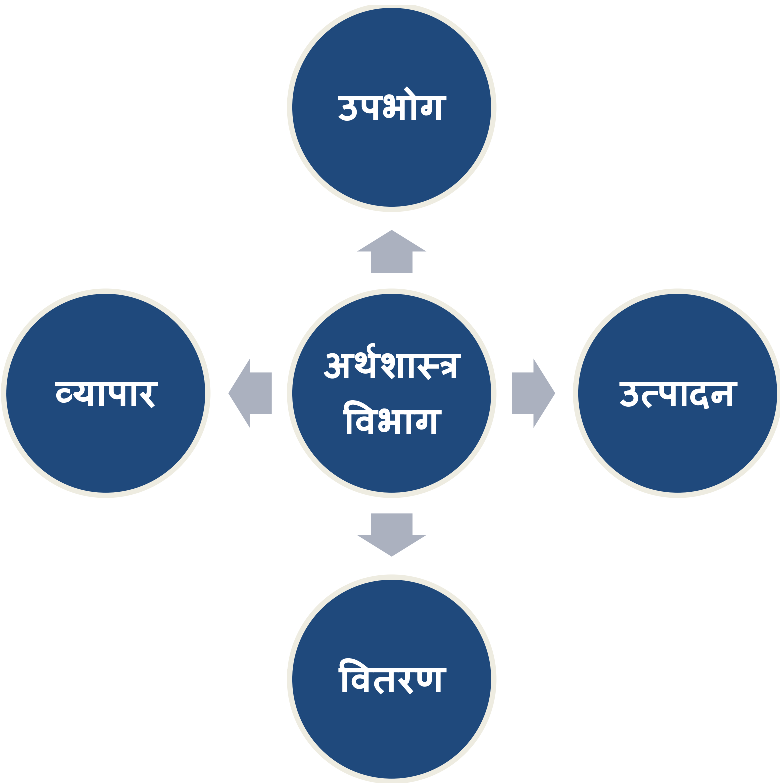

चित्र अर्थशास्त्र विभाग के उपक्षेत्र

- उपभोग का तात्पर्य किसी की अपनी इच्छाओं को पूर्ण करने हेतु अपने संसाधनों का उपयोग करने की क्रिया से है। यह मानवीय इच्छाओं को पूरा करने के लिए वस्तुओं एवं सेवाओं की उपयोगिता या उपयोग के उन्मूलन को भी दर्शाता है।

- किसी वस्तु को उपयोगी बनाने की प्रक्रिया को उत्पादन कहा जाता है। इसमें अमूर्त इनपुट (विचार, ज्ञान और जानकारी) और भौतिक इनपुट (कच्चे माल, आधे पूर्ण वस्तुओं या उपसमूहों) के वस्तुओं या सेवाओं में अनुवाद में लागू प्रक्रियाओं और सीमाओं को शामिल किया गया है।
- विनिमय शब्द का अर्थ धन या वस्तुओं को एक के बदले दूसरी वस्तु या धन के रुप में स्थानंतरित करने के कार्य को संदर्भित करता है। यह लोगों के बीच या राष्ट्रों के बीच हो सकता है। व्यापार के परिणामस्वरुप उत्पादों व सेवाओं के लिए अधिक उपयोगिताओं की स्थापना से व्यक्तिगत हित में वृध्दि होती है, जिसके परिणामस्वरुप समग्र सामाजिक कल्याण में वृध्दि होती है।
- वितरण उत्पादन के कई तत्वों के बीच सृजित धन को विभाजित करने की प्रक्रिया है। यह धन के व्यक्तिगत वितरण के साथ साथ राजस्व के कार्यात्मक वितरण दोनों को संदर्भित करता है। शब्द व्यक्तिगत वितरण उन कारकों को संदर्भित करता है जो यह निर्धारित करते है कि किसी राष्ट्र की आय और धन उसकी आबादी के कई अलग अलग लोगों में कैसे फैला हुआ है। कार्यात्मक वितरण जिसे कारक शेयर वितरण के रुप में भी जाना जाता है। कुल राजस्व के अनुपात का एक स्पष्टीकरण है जो उत्पादन के चार कारकों में से प्रत्येक द्वारा प्राप्त किया जाता है, जो क्रमशः भूमि, श्रम और पूंजी है।

यदि हम अर्थव्यवस्था की प्रगति का मूल्यांकन करना चाहते है तो हमें अर्थव्यवस्था के प्रत्येक क्षेत्र के कार्य के बारे में जानकारी प्राप्त करनी होगी और प्रत्येक क्षेत्र के कार्य की जानकारी के लिए उस क्षेत्र की उत्पादन इकाइयों की प्रगति के बारे में व्यक्तिगत या सामूहिक रुप से जानकारी प्राप्त करनी होगी। उत्पादन इकाइयों के प्रत्येक समूह या प्रत्येक क्षेत्र का अध्ययन व्यष्टिगत आर्थिक अध्ययन है जबकि पूरी अर्थव्यवस्था की प्रगति का अध्ययन समष्टिगत आर्थिक अध्ययन है। अतः व्यष्टिगत और समष्टिगत अर्थशास्त्र, अर्थशास्त्र के दो पारस्परिक संबंधित भाग है।

अर्थशास्त्र के अध्ययन को दो अलग अलग लेकिन संबंधित भागों में विभाजित किया जा सकता है–

- व्यष्टि अर्थशास्त्र
- समष्टि अर्थशास्त्र

व्यष्टि अर्थशास्त्र

व्यष्टि अर्थशास्त्र अत्यन्त ही सूक्ष्म स्तर पर अर्थशास्त्र के अध्ययन का अर्थ प्रस्तुत करता है। जिसमें एक समाज में व्याप्त सामूहिक रुप से बहुतायत व्यक्ति समावेशित होते है और उसमें अकेला व्यक्ति उस अर्थशास्त्र का एक सूक्ष्म भाग होता है। जिसके कारण एक अकेले व्यक्ति द्वारा लिये गये आर्थिक रुप से निर्णय को व्यष्टि अर्थशास्त्र के रुप में जाना जाता है। संसाधनों के वितरण व विभिन्न उत्पादों व सेवाओं के मूल्य निर्धारण के संबंध में व्यक्तियों और कंपनियों द्वारा किए जाने वाले विकल्पों का अध्ययन व्यष्टि अर्थशास्त्र के रुप में जाना जाता है। इसके लिए न केवल सरकारी स्तर बल्कि नियमों व विनियमों को भी ध्यान में रखना आवश्यक है। व्यष्टि अर्थशास्त्र का अध्ययन आपूर्ति एवं मांग के साथ साथ अन्य कारकों पर केन्द्रित है, जो अर्थशास्त्र में मूल्य स्तर के गठन में योगदान करते है। उदाहरण के लिए व्यष्टि अर्थशास्त्र का अध्ययन इस बात का अन्वेषण करेगा कि कैसे एक विशेष व्यवसाय अपने मूल्य निर्धारण को कम करने और अपने उद्योग के भीतर प्रतिस्पर्धा करने की क्षमता में सुधार करने के लिए अपने उत्पादन व क्षमता को अधिकतम कर सकता है। वास्तविक स्वरुप में व्यष्टि अर्थशास्त्र अपने नियमों सिध्दान्तों और प्रमेयों के संगत संग्रह से प्राप्त करता है। समाजशास्त्रियों के अनुसार व्यष्टि अर्थशास्त्र–

प्रो. बोल्डिंग के अनुसार– व्यष्टि अर्थशास्त्र विशिष्ट फर्मों, विशिष्ट परिवारों, वैयक्तिक कीमतों, मजदूरियों, आयों, विशिष्ट उद्योगों और विशिष्ट वस्तुओं का अध्ययन है।

प्रो. चेम्बरलिन के अनुसार– व्यष्टि अर्थशास्त्र यह पूरी तरह से किसी की अपनी व्यक्तिगत धारणा पर निर्भर है और यह व्यक्तियों के बीच संबंधों पर भी ध्यान केन्द्रित करता है।

प्रो. मेहता के अनुसार– व्यष्टि अर्थशास्त्र यह उन कारकों का अन्वेषण करता है जिसमें विभिन्न वस्तुओं और सेवाओं के मूल्य निर्धारण में जाते है।

समष्टि अर्थशास्त्र

समष्टि अर्थशास्त्र का क्षेत्र है जो समग्र रुप से अर्थव्यवस्था के व्यवहार का अध्ययन करता है और न केवल विशिष्ट कंपनियों पर बल्कि यह पूरी तरह से उद्योगों एवं अर्थव्यवस्थाओं को समावेशित करता है। यह सकल राष्ट्रीय उत्पाद (जीडीपी) जैसी अर्थव्यवस्था व्यापी घटनाओं को देखता है और यह बेरोजगारी, राष्ट्रीय आय, विकास दर और मूल्य स्तरों में परिवर्तन से कैसे प्रभावित होता है। उदाहरण स्वरुप समष्टि अर्थशास्त्र यह देखेगा कि शुध्द निर्यात में वृध्दि या कमी किसी देश के पूंजी खाते को कैसे प्रभावित करेगी व कैसे जीडीपी गैर रोजगार दर से प्रभावित होगी। जान मेनार्ड केन्स को अक्सर समष्टि अर्थशास्त्र की स्थापना का श्रेय दिया जाता है। उन्होंने व्यापक परिघटनाओं का अध्ययन करने हेतु मौद्रिक समुच्चय का उपयोग शुरु किया। कुछ अर्थशास्त्री उनके सिध्दान्त को नकारते है और इसका उपयोग करने वाले कई लोग इस बात से असहमत है कि इसकी व्याख्या कैसे की जाए। जबकि अर्थशास्त्र के ये दो अध्ययन अलग अलग दिखाई देते है, वे वास्तव में अन्योन्याश्रित है और एक दूसरे के पूरक है क्योंकि दोनों क्षेत्रों के बीच कई अतिव्यापी मुद्दे है। उदाहरण के लिए बढ़ी हुई मुद्रास्फीति (स्थूल प्रभाव) कच्चे माल की कीमत में वृध्दि का कारण होगी। कंपनियों के लिए और बदले में जनता के लिए अंतिम उत्पाद की कीमत को प्रभावित करते है। कहने का मतलब यह है कि समष्टि अर्थशास्त्र अर्थव्यवस्था का विश्लेषण करने के लिए नीचे से ऊपर का –ष्टिकोण अपनाता है जबकि समाष्टि अर्थशास्त्र ऊपर से नीचे का –दृष्टिकोण अपनाता है। सूक्ष्मअर्थशास्त्र मानव विकल्पों और स्रोत आवंटन को समझने की कोशिश करता है और समष्टि अर्थशास्त्र ऐसे सवालों का जवाब देने की कोशिश करता है। जैसे मुद्रास्फीति की दर क्या होनी चाहिए? या क्या आर्थिक विकास को उत्तेजित करता है? भले ही, सूक्ष्म व समष्टि अर्थशास्त्र दोनों किसी भी वित्त पेशेवर के लिए मौलिक उपकरण प्रदान करते है और पूरी तरह से समझने के लिए एक साथ अध्ययन किया जाना चाहिए कि कंपनियाँ कैसे काम करती है एवं राजस्व अर्जित करती है। इस प्रकार एक पूर्ण अर्थव्यवस्था कैसे प्रबंधित व निरंतर होती है। समाजशास्त्रियों के अनुसार समष्टि अर्थशास्त्र–

प्रो. बोल्डिंग के अनुसार, समष्टि अर्थशास्त्र व्यक्तिगत मात्राओं का अध्ययन करने पर ध्यान केन्द्रित नहीं करता है, बल्कि इन संख्याओं के कुल अध्ययन पर ध्यान केन्द्रित करता है। यह व्यक्तिगत आय के साथ नहीं बल्कि राष्ट्रीय आय के साथ व्यक्तिगत मूल्य स्तरों के बिना मूल्य स्तरों के साथ और राष्ट्रीय उत्पादन से उत्पादन के बिना उत्पादन के साथ संबंधित होता है।

प्रो. चेम्बररलिन के अनुसार समष्टि अर्थशास्त्र कुल संबंधों की व्याख्या करता है।

प्रो. शुल्ज के अनुसार, समष्टि अर्थशास्त्र में मुख्य यंत्र राष्ट्रीय आय विश्लेषण है।

बोध प्रश्न 2 : समष्टि अर्थशास्त्र की उपयोगिता बताइये।

समष्टि अर्थशास्त्र का महत्व

समष्टि अर्थशास्त्र के सन्दर्भ में उनकी उपयोगिता को निम्न बिन्दुओं के आधार पर स्पष्ट किया जा सकता है–

- जटिल समस्याओं का अध्ययन– अर्थव्यवस्था के इतने सारे पहलू एक दूसरे पर निर्भर करते है। आधुनिक अर्थव्यवस्था को समझना बेहद मुश्किल है। इस प्रकार व्यापाक आर्थिक विश्लेषण का उपयोग करके जटिल मुद्दों की जांच की जाती है, जो अन्य कारकों के साथ साथ पूर्ण रोजगार व व्यापार चक्र जैसे कारकों को ध्यान में रखता है।

- आर्थिक नीतियों के निर्माण में सहायक– कुल रोजगार, कुल आय, सामान्य मूल्य स्तर, सामान्य व्यापार स्तर आदि को नियंत्रित करना राज्य की प्राथमिक भूमिका है, जिसे करने के लिए सरकार की स्थापना की गई थी। इस वजह से समष्टि अर्थशास्त्र आर्थिक नीति बनाने में सरकार के लिए उपयोगी है।

- व्यष्टि अर्थशास्त्र का सहायक– व्यष्टि अर्थशास्त्र के अध्ययन के लिए बहुत फायदेमंद है। उदाहरण के लिए अपने स्वयं के उत्पादन के संबंध में निर्णय लेते समय, एक निर्माता इस बात से प्रभावित होने वाला है कि समग्र उत्पादन कैसा व्यवहार करने वाला है।

- आर्थिक विकास का अध्ययन– समष्टि का क्षेत्र आर्थिक विकास के अध्ययन में अनुसंधान पर महत्वपूर्ण ध्यान देता है। समष्टि अर्थशास्त्र विश्लेषण के आधार पर अर्थव्यवस्था के विकास के संसाधनों और क्षमताओं का मूल्यांकन किया जाता है। इस मूल्यांकन का उपयोग आर्थिक नीति का मार्गदर्शन करने के लिए किया जाता है। राष्ट्रीय स्तर पर रोजगार, उत्पादन व राजस्व के स्तर को बढ़ाने के लिए योजनाएँ विकसित की जाती है और उन्हें क्रियान्वित किया जाता है।

व्यष्टि अर्थशास्त्र व समष्टि अर्थशास्त्र में अन्तर

व्यष्टि अर्थशास्त्र	**समष्टि अर्थशास्त्र**
व्यक्तिगत स्तर पर जुड़ी आर्थिक सम्बन्धों एवं समस्याओं का अध्ययन व्यष्टि अर्थशास्त्र के माध्यम से किया जाता है।	सम्पूर्ण अर्थशास्त्र के स्तर पर जुड़ी आर्थिक सम्बन्धों एवं समस्याओं का अध्ययन समष्टि अर्थशास्त्र के माध्यम से किया जाता है।
इसका सम्बन्ध मुख्यरुप से एक व्यक्तिगत फर्म और उद्योग में उत्पादन व उसकी कीमत के आधार पर निर्धारण से है।	इसका सम्बन्ध मुख्यरुप से पूरी अर्थव्यवस्था के कुल उत्पादन व उसकी सामान्य कीमत के आधार पर निर्धारण से है।
व्यष्टि अर्थशास्त्र के मापन का माध्यम माँग और पूर्ति है।	समष्टि अर्थशास्त्र के मापन का माध्यम माँग और समग्र पूर्ति है।
व्यष्टि अर्थशास्त्र के अन्तर्गत जब हम किसी फर्म का अध्ययन करते है तो यह मान लेते है कि राष्ट्रीय उत्पादन पूरी तरह से स्थिर रहती है।	समष्टि अर्थशास्त्र के अन्तर्गत इसमें कुल राष्ट्रीय उत्पादन स्तर का अवलोकन किया जाता है जिसमें आय का विवरण स्थिर रहता है।

https://www.shaalaa.com/question-bank-solutions/vysti-arthshaastr-aur-smsti-arthshaastr-men-kyaa-antr-hai-smsti-arthshaastr-kaa-udbhv_241380

बोध प्रश्न 3 : व्यष्टि एवं समष्टि अर्थशास्त्र में अन्तर बताइये।

व्यष्टि अर्थशास्त्र और समष्टि अर्थशास्त्र की एक दूसरे पर निर्भरता

व्यष्टि और समष्टि अर्थशास्त्र के दो उपक्षेत्र न केवल एक दूसरे से संबंधित है बल्कि एक दूसरे के साथ असंगत भी है। ये दोनों वाक्यांश एक दूसरे से महत्वपूर्ण तरीके से जुड़े हुए है। व्यष्टि अर्थशास्त्र के सभी विषयों का विश्लेषण करने और व्यष्टि व समष्टि अर्थशास्त्र को प्रभावित करने वाले कारकों का बेहतर ज्ञान प्राप्त करने के लिए उपयोग किया जा सकता है। इस प्रकार का अध्ययन आर्थिक नीतियों एवं कार्यक्रमों के निर्माण की प्रक्रिया में सहायक होगा। अर्थव्यवस्था में परिवर्तन व प्रक्रियाओं को स्थानीय एवं बड़े पैमाने के दोनों कारकों के परिणाम के रुप में जाना जाता है, जो एक दूसरे को प्रभावित करने की शक्ति रखते है या एक दूसरे से सीधे प्रभावित होते है। यह सामान्य ज्ञान है कि इन तत्वों का एक दूसरे पर प्रभाव हो सकता है। उदाहरण के लिए, हालांकि करों को बढ़ाने का विकल्प समष्टि अर्थशास्त्र के दायरे में है, यह निर्धारित करना कि बढ़ोत्तरी कैसे कंपनियों की पैसे बचाने की क्षमता को प्रभावित करेगी, समष्टि अर्थशास्त्र के दायरे में आती है।

यदि हम यह समझ ले कि किसी भी वस्तु की कीमत कैसे स्थापित होती है, साथ ही इस प्रक्रिया में खरीददार व विक्रेता की क्या भूमिका होती है, तो हम समग्र कीमत में होने वाले बदलावों का विश्लेषण करने में बेहतर सक्षम होंगे। सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था में सभी वस्तुओं का स्तर एक समान नहीं हो सकता है। उदाहरण के लिए अगर हमें पता होता कि सोने की कीमत कैसे स्थापित की जाती है। समष्टि अर्थशास्त्र उस पद्धति का अध्ययन है जिसके द्वारा किसी विशिष्ट वस्तु या सेवा की कीमत निर्धारित की जाती है, साथ ही इस प्रक्रिया में खरीददार व विक्रेता की भूमिका भी होती है। समष्टि अर्थशास्त्र दूसरी ओर

अर्थव्यवस्था में कीमतों के समग्र स्तर का अध्ययन है। यदि हम किसी अर्थव्यवस्था के प्रदर्शन की पहचान करना चाहते है, तो हमें पहले अर्थव्यवस्था के प्रत्येक क्षेत्र के प्रदर्शन का पता लगाना होगा। अर्थव्यवस्था के प्रत्येक क्षेत्र के प्रदर्शन को निर्धारित करने के लिए हमें प्रत्येक क्षेत्र के प्रदर्शन को स्वयं या समूहों में निर्धारित करने की आवश्यकता होगी। इसी तरह यदि हम किसी अर्थव्यवस्था के प्रदर्शन का निर्धारण करना चाहते है तो हमें पहले अर्थव्यवस्था के प्रत्येक क्षेत्र के प्रदर्शन का निर्धारण करना होगा। व्यक्ति अर्थशास्त्र एक उत्पादन इकाई के अलग अलग समूहों या अलग अलग खंडों के अध्ययन को संदर्भित करता है, जबकि समष्टि अर्थशास्त्र संपूर्ण अर्थव्यवस्था के अध्ययन को संदर्भित करता है जिसमें सभी उत्पादन ईकाईयाँ व खंड शामिल है। इसलिए व्यष्टि अर्थशास्त्र एवं समष्टि अर्थशास्त्र के दो उप क्षेत्र है जो एक दूसरे से जटिल रुप से जुड़े हुए है। इस वजह से अर्थशास्त्र के क्षेत्र में इन दोनों शब्दों को सीखना जरुरी है।

निष्कर्ष

प्रस्तुत अध्ययन के अन्तर्गत अर्थशास्त्र की परिभाषा एवं व्यष्टि व समष्टि अर्थशास्त्र के विषय, क्षेत्र का अवलोकन करने का प्रयास किया गया है। व्यष्टि और समष्टि दोनों ही अर्थशास्त्र के आवश्यक पहलू है जिन्हें अर्थशास्त्र के क्षेत्र की अच्छी तरह से समझने हेतु इसकी जानकारी आवश्यक होती है। इस तथ्य के बावजूद कि वे कुछ प्रमुख मामलों में भिन्न है। घरेलू अर्थव्यवस्था की अच्छी समझ होना आवश्यक है, लेकिन समग्र रुप से अर्थव्यवस्था और व्यक्तिगत परिवारों की अर्थव्यवस्था की अच्छी समझ होना भी महत्वपूर्ण है, क्योंकि इससे किसी देश की आर्थिक नीतियों को निर्धारित करने में मदद मिलती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. https://www.freejankari.com/2022/07/economics-in-hindi.html
2. एंडर्टन ए., 2008, अर्थशास्त्र, पांचवे संस्करण, पियर्सन शिक्षा, 764 पीपी, आईएसबीएन 978-1-4058-9235-3
3. https://www.kailasheducation.com/2021/02/samasti-arthashastra-ke-uddeshya%20.html
4. https://www.kailasheducation.com/2020/12/vyasti-arthashastra-arth-paribhasha-visheshtaye-prakar.html
5. https://hi.thpanorama.com/articles/cultura-general/qu-es-una-estructura-econmica.html
6. https://www.freejankari.com/2022/07/economics-in-hindi.html
7. ज्योति सरवन, हीनू शर्मा, जसजीत नारंग, नाजिम उद्दीन, जगदीश चंद्र बोस के, सूक्ष्मअर्थशास्त्र कोविड–19 महामारी के प्रभाव, मीडिया विश्लेषण, एशियाई सूक्ष्म आर्थिक समीक्षा, 1(1), 3-15,2021
8. ब्लागस्पाट, 2013, समष्टि अर्थशास्त्र, http://macro2013-blogspot-com/2013/05/short&run&economic&fluctuation-html,
9. https://carleton.ca/keirarmstrong/learning-resources/selected-biographies/keynes-john-maynard-1883-1946/
10. https://www.shaalaa.com/question-bank-solutions/vysti-arthshaastr-aur-smsti-arthshaastr-men-kyaa-antr-hai-smsti-arthshaastr-kaa-udbhv_241380
11. रश्मि गुजराती, सूक्ष्म आर्थिक और मैक्रोइकानामिक– आर्थिक विकास पर मुद्दे और प्रभाव, इंटरनेशनल जर्नल आफ हाल ही में वैज्ञानिक खंड–6, अंक–7,पीपी.5310–5317, जुलाई 2015

प्रश्न सं0–1 का उत्तर–

1. अर्थशास्त्र मूलतः एक ऐसा सामाजिक विज्ञान है जो वस्तुओं और सेवाओं के उत्पादन, वितरण, विनिमय और उपभोग का अध्ययन करता है।

2. 'अर्थशास्त्र'शब्द संस्कृत शब्दों अर्थ (धन) और शास्त्र (किसी विषय के सम्बन्ध में मनुष्यों के कार्यों के क्रमबद्ध ज्ञान को उस विषय का शास्त्र कहते हैं) की संधि से बना है, जिसका शाब्दिक अर्थ है–धन का अध्ययन।
3. अर्थशास्त्र एक सामाजिक विज्ञान है।
4. अर्थशास्त्र मानव व्यवहार का अध्ययन करता है।
5. अर्थशास्त्र के अध्ययन में ऐसे सभी भौतिक एवं गैर भौतिक पदार्थों को शामिल करते हैं जिनका मौद्रिक मूल्य होता है और जो कीमत प्रणाली में शामिल होती है।

प्रश्न सं0–2 का उत्तर

1. व्यष्टि अर्थशास्त्र में व्यक्तिगत गृहस्थ, श्रमिक की मजदूरी, उद्यमों के लाभ का निर्धारण आदि समस्याओं का अध्ययन सम्मिलित होता है जबकि समष्टिगत अर्थशास्त्र में सामूहिक इकाइयों पर विचार किया जाता है। यह व्यक्तिगत आय से नहीं बल्कि राष्ट्रीय आय से सम्बन्धित होता है।
2. व्यष्टि अर्थशास्त्र में व्यक्तिगत स्तर पर जुड़ी आर्थिक सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है जबकि सम्पूर्ण अर्थशास्त्र से जुड़ी समस्याओं का अध्ययन समष्टि अर्थशास्त्र के माध्यम से किया जाता है।
3. व्यष्टि अर्थशास्त्र के मापन का माध्यम मांग और पूर्ति है जबकि समष्टि अर्थशास्त्र के मापन का माध्यम मांग और समग्र पूर्ति है।

प्रश्न सं0–3 का उत्तर

1. व्यष्टिगत अर्थशास्त्र के दोषों को दूर करने के लिए समष्टिगत आर्थिक विश्लेषण का प्रादुर्भाव हुआ।
2. आर्थिक नीतियों के निर्धारण में समष्टिगत विश्लेषण का विशेष महत्व होता है।
3. व्यष्टि अर्थशास्त्र के अध्ययन के लिए बहुत फायदेमंद (निर्णय लेते समय) है।
4. समष्टि का क्षेत्र आर्थिक विकास के अध्ययन में अनुसंधान पर महत्वपूर्ण ध्यान देता है।
5. यह अन्य कारकों के साथ–साथ पूर्ण रोजगार व व्यापार चक्र जैसे कारकों को ध्यान में रखता है।

1.11 अभ्यास प्रश्न (Unit-end Questions)

1. अर्थशास्त्र से आप क्या समझते हैं? अर्थशास्त्र के अध्ययन की आवश्यकता पर प्रकाश डालिये।
2. भारत में अर्थशास्त्र के अध्ययन की प्रासंगिकता पर प्रकाश डालिये।
3. अर्थशास्त्र के विभाग बताइये।
4. अर्थशास्त्र का अध्ययन कितने भागों में किया जाता है।
5. व्यष्टि अर्थशास्त्र किसे कहते हैं?
6. समष्टि अर्थशास्त्र किसे कहते हैं?
7. व्यष्टि और समष्टि अर्थशास्त्र में अन्तर बताइये।
8. समष्टि अर्थशास्त्र का महत्व बताइये।
9. समष्टि अर्थशास्त्र, व्यष्टि अर्थशास्त्र के दोषों को कैसे दूर करता है?

इकाई 02: स्थैतिक एवं गत्यात्मक की अवधारणा

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 आर्थिक स्थैतिकी

2.2.0 स्थैतिक विश्लेषण के प्रकार

2.2.0.1 व्यष्टिपरक स्थैतिक विश्लेषण

2.2.0.2 समष्टिपरक स्थैतिक विश्लेषण

2.2.0.3 तुलनात्मक स्थैतिकी

2.2.1 आर्थिक स्थैतिकी का महत्व

2.2.2 आर्थिक स्थैतिकी की सीमाएं

2.3 आर्थिक प्रावैगिकी

2.3.0 आर्थिक प्रावैगिकी के प्रकार

2.3.0.1 व्यष्टिपरक प्रावौगिक विश्लेषण

2.3.0.2 समष्टिपरक प्रावौगिक विश्लेषण

2.3.1 प्रावैगिकी का महत्व तथा क्षेत्र

2.3.2 प्रावैगिकी की सीमाएं

2.4 साम्य की अवधारणा

2.5 सरांश

2.6 संदर्भ ग्रन्थ सूची

2.7 उपयोगी / सहायक ग्रन्थ

2.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात हम

1) अर्थशास्त्र के स्थैतिक विश्लेषण व उसकी उपयोगिता को जान सकेगें।
2) प्रावैगिक विश्लेषण को भली भाँति जान सकेंगे।
3) विकासशील अर्थव्यवस्था में प्रावैगिक विश्लेषण की महत्ता से अवगत हो सकेंगे।
4) सामान्य सन्तुलन विश्लेषण की एक संक्षिप्त जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

2.1 प्रस्तावना

इसके पूर्व की इकाई में आर्थिक सिद्धांतो के दो प्रकारों-व्यष्टि परक विश्लेषण तथा समष्टि परक आर्थिक विश्लेषण की चर्चा की गयी। इसके अन्तर्गत आपने यह जाना कि वर्तमान समय में आर्थिक सिद्धातों को मुख्यतः इन्हीं दो शीर्षको के अन्तर्गत विभाजित किया जाता है।

अर्थशास्त्र के अन्तर्गत किसी समस्या के फलनात्मक सम्बन्धो के विश्लेषण हेतु दो प्रकार की अध्ययन प्रविधि प्रयुक्त होती है- स्थैतिक तथा प्रावैगिक। आधुनिक अर्थशास्त्र के विश्लेषण में स्थैतिक या आर्थिक स्थैतिकी तथा प्रावैगिक या आर्थिक गतिकी दोनों ही शब्दों की प्रासंगिकता बढ़ती जा रही हैं। स्थैतिक तथा प्रावैगिक शब्दों का सर्वप्रथम प्रयोग फ्रांसीसी अर्थशास्त्री काम्टे ने किया परन्तु अर्थशास्त्र में इन शब्दों का प्रयोग सर्वप्रथम जे0 एस0 मिल द्वारा किया गया। यदि किसी आर्थिक माडल के सभी चर एक ही समयावधि से सम्बन्धित हों और जिनके तिथिकरण की कोई समस्या ही नहीं हो तो इन चरों के मध्य स्थैतिक सम्बन्ध होगा। जबकि यदि माडल के चर विभिन्न समयावधि से जुड़े हो तथा उनका तिथिकरण भी हो, तो यह प्रावैगिक सम्बन्ध कहलाता है। आर्थिक स्थैतिकी स्थैतिक अर्थशास्त्र तथा आर्थिक प्रावैगिकी; प्रावैगिक अर्थशास्त्र का प्रयोग व्यष्टिपरक तथा समष्टि परक दोनों ही क्षेत्रों में किया जा सकता हैं।

इस इकाई के अन्तर्गत आर्थिक स्थैतिकी तथा आर्थिक गतिकी की विस्तृत चर्चा की गई है। इसके साथ ही सामान्य सन्तुलन विश्लेषण को भी स्पष्ट किया गया है।

2.2 आर्थिक स्थैतिकी

सामान्यतः भौतिक शास्त्र में स्थैतिक शब्द विश्राम की अवस्था(state of resat) को व्यक्त करता है, परन्तु अर्थशास्त्र में इसका समबन्ध किसी गतिहीन अर्थव्यवस्था से नहीं होता बल्कि ऐसी अर्थव्यवस्था से होता है जिसमें गति तो होती है परन्तु गति की दर(rate of movement) में कोई परिवर्तन नहीं होता। यह गति निश्चित और नियमित रूप से होती हैं। उसमें कोई उतार चढ़ाव या अनिश्चितता नहीं होती है।

हैरॉड के अनुसार, "इस सक्रिय परन्तु अपरिवर्तनशील प्रक्रिया को ही स्थैतिक अर्थशास्त्र कहा जाता है।" स्थैतिक तथा प्रावैगिक के विचारों को अधिक सुस्पष्ट करते हुए **जे. आर. हिक्स कहते हैं कि,** "आर्थिक सिद्धांत के उन भागों को मैं स्थैतिक अर्थशास्त्र कहता हूँ जिनमें हमें तिथिकरण की आवश्यकता नहीं पडती तथा उन भागों को प्रावैगिक अर्थशास्त्र कहता हूँ जिनमें प्रत्येक मात्रा का तिथिकरण करना आवश्यक है।"

हिक्स के कथन से स्पष्ट है कि वे स्थिर स्थितियों के विश्लेषण को ही स्थैतिक मानते है। उनके स्थिर स्थितियों का आशय ऐसी स्थितियों से हैं जहाँ मुख्य या आधारभूत बातों में कोई परिवर्तन नहीं होता। जहाँ भूतकाल तथा वर्तमान के मध्य सम्बन्ध पर ध्यान देने की कोई आवश्यकता नहीं होती। इसका कारण यह है कि परिवर्तन की अनुपस्थिति के कारण वर्तमान से सम्बन्धित तथ्य तथा विश्लेषण किसी भी अन्य समय पर लागू किये जा सकेगें।

हैराड, हिक्स की इस धारणा में थोडा संशोधन कर और स्पष्टता लाने का प्रयास करते हुए बताते हैं कि, स्थैतिक अर्थशास्त्र को परिवर्तनों की पूर्ण अनुपस्थिति वाली स्थिर अर्थशास्त्र का अध्ययन समझना पूर्णतया सही नहीं हैं। हैरॉड यह स्पष्ट करते है कि कुछ विशेष प्रकार के परिवर्तनों जैसे- मौसमों तथा फसलों में परिवर्तन, एकबारगी परिवर्तन आदि यदि सन्तुलन के स्थापित होने की प्रवृति नष्ट न करते हो तो वे स्थैतिक अर्थशास्त्र में सम्मिलित होंगें। हैरॉड इसी सन्दर्भ में यहाँ तक कहते हैं कि तिथिकरण के होने या न होने से आर्थिक विश्लेषण प्रावैगिक या स्थैतिक नहीं हो जाता है।

अब तक के विश्लेषण से हम यह समझ चुके हैं कि-

1) आर्थिक स्थैतिकी के लिए सन्तुलन या साम्य का विचार आधार है। अर्थात इसका सम्बन्ध एक क्षण या एक समय विशेष पर अर्थव्यवस्था अथवा किसी विशेष आर्थिक इकाई के केवल साम्य की स्थिति के अध्ययन से होता हैं।

2) स्थैतिक विश्लेषण एक समय-रहित विचार है। इसका अभिप्राय है कि स्थैतिक विश्लेषण समय की उपेक्षा करता है। स्थैतिक विश्लेषण मान लेता है कि अर्थव्यवस्था में परिवर्तन के साथ ही तुरन्त समायोजन हो जाता है और यह किसी विशेष आर्थिक इकाई के केवल एक स्थिर चित्र का ही अध्ययन करता हैं।

अतः हम यह कह सकते हैं कि आर्थिक स्थैतिकी आर्थिक विश्लेषण की एक तकनीकी है जिसके द्वारा किसी आर्थिक विश्लेषण में समय की उपेक्षा की जाती हैं अर्थात परिवर्तन की प्रक्रिया पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता। अब हम इसकी व्याख्या आर्थिक चरों के फलनात्मक सम्बन्ध के रूप में करते हैं। आर्थिक विश्लेषण में आर्थिक चरों के मध्य फलनात्मक सम्बन्धो की व्याख्या की जाती है। यदि विश्लेषण के अन्तर्गत हम फलनात्मक सम्बन्धों को उन चरों के मध्य स्थापित करते हैं जिनके मूल्यों का सम्बन्ध एक ही समय या समयावधि से जुड़ा है तो यह विश्लेषण स्थैतिक कहलाएगा। अर्थात चरों में फलन सम्बन्धों को स्थैतिक तब माना जाएगा जबकि विभिन्न आर्थिक चरों का सम्बन्ध

उसी समय बिन्दु अथवा उसी समयावधि से हो। आइए हम आपको इसे एक उदाहरण से समझाते है - अर्थशास्त्र में मॉग का नियम है कि- "अन्य बातें समान रहने पर किसी समय में वस्तु की माँग मात्रा में कीमत परिवर्तन की विपरीत दिशा में परिवर्तन होता है।" स्पष्ट है कि यहाँ किसी वस्तु की एक समय विशेष की माँग उस वस्तु की उसी समय की कीमत पर निर्भर करती है। अतः यह एक स्थैतिक सम्बन्ध कहलाएगा।

इसे हम गणितीय रूप में निम्न प्रकार लिख सकते हैं,

$$D_t = f(P_t) \ldots\ldots (i)$$

यहाँ, D_t= एक वस्तु की एक विशेष समय 't' पर मॉग को व्यक्त करती है, P_t उसी समय विशेष 't' पर उस वस्तु की कीमत व्यक्त करती है तथा f' फलनात्मक सम्बन्ध का प्रतीक है।

इसी प्रकार हम किसी वस्तु की कीमत तथा उसकी पूर्ति मात्रा में स्थैतिक सम्बन्ध का भी विश्लेषण कर सकते हैं, जिसे गणितीय रूप में हम निम्न प्रकार से लिखेगें-

$$S_t = f(P_t) \ldots\ldots (ii)$$

यहाँ, S_t एक समय विशेष 't' पर वस्तु की पूर्ति की जाने वाली मात्रा को व्यक्त करता है, P_t एक समय विशेष 't' पर वस्तु के अलग-अलग मूल्यों को प्रदर्शित करता है।

उपयुक्त दोनों गणितीय सम्बन्धों में चरों का सम्बन्ध एक ही समय 't' से जुड़ा होने के कारण इन सम्बन्धों का विश्लेषण स्थैतिक बन जाता हैं। अन्ततः संक्षेप में हम कह सकते है कि,

1) आर्थिक स्थैतिकी का सम्बन्ध एक क्षण या एक समय विशेष पर अर्थव्यवस्था अथवा किसी आर्थिक इकाई के साम्य के स्थिति के अध्ययन से होता हैं।

2) स्थैतिक का अर्थ ऐसी अर्थव्यवस्था से है जिसमें गति या हलचल तो होती है परन्तु गति सदा एक समान, नियमित एवं शांतिपूर्ण रहती है।

3) स्थैतिक अर्थव्यवस्था में न तो बचत होती है और न ही विनियोग, क्योंकि अर्थव्यवस्था में कोई परिवर्तन नहीं होता। स्थैतिक अवस्था में पूंजी का संचयन नहीं होता अतः विनियोग भी नहीं होगा। इस स्थिति में कुल बचत कुल विनियोग के बराबर होती है।

4) स्थैतिक विश्लेषण एक समय रहित धारणा है क्योंकि इसमें एक दिये हुए क्षण या एक दिये हुए समय पर ही आर्थिक तत्वों पर विचार किया जाता हैं। स्थैतिक विश्लेषण का सम्बन्ध केवल वर्तमान से हैं।

2.2.0 स्थैतिक विश्लेषण के प्रकार

स्थैतिक विश्लेषण के अर्न्तगत सन्तुलन का अध्ययन दो प्रकार से संभव है। पहला अर्थव्यवस्था के किसी एक इकाई के सन्तुलन या दूसरा सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था के सन्तुलन का विश्लेषण किया जाए। इस आधार पर स्थैतिक विश्लेषण के दो रूप हैं-

1) व्यष्टिपरक स्थैतिक सन्तुलन

2) समष्टिपरक स्थैतिक सन्तुलन

2.2.0.1 व्यष्टिपरक स्थैतिक सन्तुलन

व्यष्टिपरक स्थैतिक सन्तुलन के अर्न्तगत अर्थव्यवस्था के किसी एक इकाई के सन्तुलन का विश्लेषण किया जाता हैं। इस विश्लेषण में माँग और पूर्ति के फलनात्मक सम्बन्ध एक स्थिर समय पर कीमत का निर्धारण करते हैं। माँग और पूर्ति वक्र के दिये हुए होने पर उनके व्यष्टिगत स्थैतिक सन्तुलन को निम्नलिखित चित्र 2.1 में स्पष्ट किया गया है-

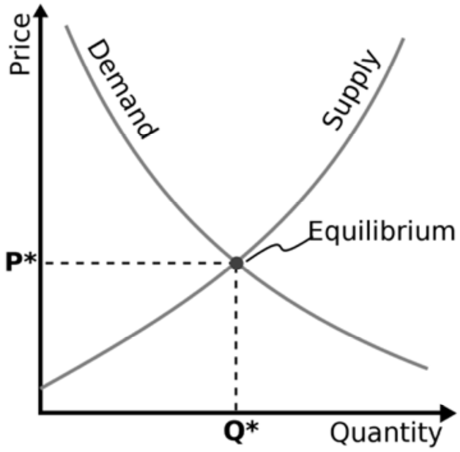

चित्र 2.1

रेखाचित्र के OX अक्ष पर वस्तु की मात्रा तथा OY पर वस्तु की कीमत प्रदर्शित हैं। DD रेखा माँग फलन व SS रेखा पूर्ति वक्र को प्रदर्शित करती हैं। माँग तथा पूर्ति का सन्तुलन बिन्दु E जिसके द्वारा वस्तु का मूल्य OP निर्धारित होता हैं। P स्थैतिक साम्य का बिन्दु है अतः यह कीमत निर्धारण का स्थैतिक विश्लेषण है। क्योंकि इस विश्लेषण में समस्त आर्थिक चरों यथा मॉग मात्रा(Dx), पूर्ति मात्रा(Sx) तथा कीमत सभी एक ही समय बिन्दु से सम्बन्धित है।

2.2.0.2 समष्टि परक स्थैतिक सन्तुलन

समष्टि परक स्थैतिक सन्तुलन के अन्र्तग सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था का अध्ययन किया जाता है। प्रो. जे. एम. कीन्स ने इसे अधिक महत्व दिया। कीन्स के राष्ट्रीय आय के निर्धारण का विश्लेषण मुख्यतः स्थैतिक ही है। इस मॉडल के अनुसार राष्ट्रीय आय का स्तर उस बिन्दु पर निर्धारित होता हैं जहाँ समग्र पूर्ति(कुलपूर्ति) फलन, कुल माँग फलन को प्रतिच्छेदित करता है। इसे हम चित्र 2.2 में स्पष्ट कर रहे हैं-

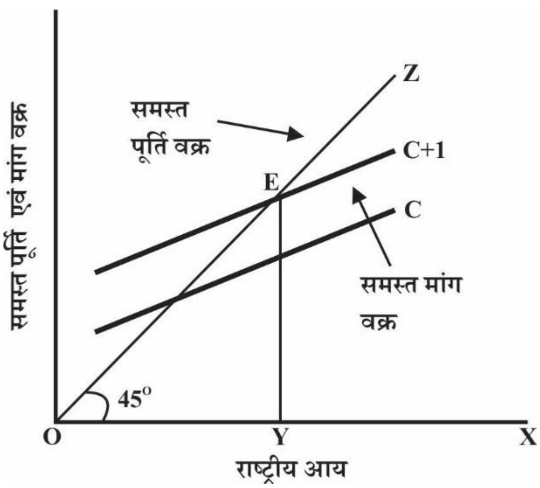

चित्र 2.2

चित्र 2.2 में Y अक्ष पर समस्त पूर्ति तथा समस्त माँग(उपभोग माँग तथा निवेश माँग) को मापा गया है जबकि X अक्ष पर राष्ट्रीय आय के स्तर को दिखाया गया है। समस्त माँग(C+I) तथा समस्त पूर्ति E बिन्दु पर बराबर है और इसलिए राष्ट्रीय आय का सन्तुलन स्तर OY निर्धारित होता है। स्पष्ट है कि यह विश्लेषण पूर्णतया स्थैतिक है, क्योंकि समस्त मॉग(C+I) तथा उत्पादन की समस्त पूर्ति का सम्बन्ध एक ही समय बिन्दु से है अर्थात विभिन्न चरों के विश्लेषण में समय तत्व पर ध्यान नहीं दिया गया है।

इस संबंध में सैम्युलसन स्पष्ट कहते हैं कि, स्थैतिकी का अभिप्राय निर्धारित नियमों के ढाँचे से है जो आर्थिक व्यवस्था के व्यवहार का निर्धारण करते हैं। वक्रों के परस्पर काटने से स्थापित सन्तुलन स्थैतिक होगा। सामान्यतः यह समय रहित होता है जिसमें प्रक्रिया की अवधि के विषय में कुछ भी नहीं बताया जाता परन्तु इसे किसी भी समय अवधि में सत्य होना कहा जाता है।

2.2.0.3 तुलनात्मक स्थैतिकी

तुलनात्मक स्थैतिकी, स्थैतिक तथा प्रावैगिक विश्लेषणों के मध्य की अध्ययन विधि है। स्थैतिक विश्लेषण के अन्तर्गत दिये गये आंकड़ों की सहायता से सन्तुलन मूल्यों के निर्धारण की व्याख्या की जाती है। जबकि प्रावैगिक विश्लेषण में यह व्याख्या की जाती है कि आंकडों में परिवर्तन के परिणामस्वरूप अर्थव्यवस्था किस प्रकार एक सन्तुलन अवस्था से दूसरी सन्तुलन अवस्था में पहुँचती है। तुलनात्मक विश्लेषण के अर्न्तगत हम प्रारम्भिक सन्तुलन अवस्था की तुलना उस अन्य सन्तुलन अवस्था से करते है जो आंकड़ों के परिवर्तित होने के फलस्वरुप प्राप्त होती है। अतः तुलनात्मक स्थैतिकी में प्रारम्भिक सन्तुलन अवस्था की तुलना अन्तिम सन्तुलन अवस्था से की जाती है न कि उस समस्त पथ का विश्लेषण किया जाता है जो कोई व्यवस्था एक सन्तुलन स्थिति से चलकर दूसरी स्थिति को प्राप्त करती है। अब आप समझ गये होंगें कि तुलनात्मक स्थैतिकी में विभिन्न सन्तुलन अवस्थाओं का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है।

तुलनात्मक स्थैतिक विश्लेषण में हम नई सन्तुलन अवस्था E, की तुलना प्रारम्भिक सन्तुलन E, करते है। ध्यान रखिए कि व्यवस्था किस पथ पर चलकर E सन्तुलन अवस्था से E, सन्तुलन अवस्था तक पहुंचती है उसकी व्याख्या नहीं की जाती। संक्षेप में हम कहें तो तुलनात्मक स्थैतिक विश्लेषण में दो सन्तुलनों की दशाओं का तुलनात्मक अध्ययन होता है इसमें परिवर्तन के मार्ग पर कोई विचार नहीं किया जाता।

2.2.1 आर्थिक स्थैतिकी का महत्व

आर्थिक विश्लेषण में आर्थिक स्थैतिकी का प्रयोग निम्नांकित कारणों से अत्यन्त उपयोगी है-

1) परिवर्तनशील अर्थव्यवस्था का वैज्ञानिक अध्ययन अत्यन्त कठिन होता है अतः इसके लिए स्थैतिक विश्लेषण की सहायता लेनी पड़ती है।

2) स्थैतिक विश्लेषण अत्यन्त सरल है क्योंकि इसके लिए उच्च गणितीय ज्ञान की आवश्यकता नहीं पड़ती जबकि प्रावैगिक विश्लेषण में उच्च गणितीय ज्ञान की आवश्यकता पड़ती है। स्थैतिक विश्लेषण के द्वारा किन्हीं दो सन्तुलन स्थितियों की तुलना आसानी से की जा सकती है।

3) अर्थशास्त्र की बहुत सी विषय सामग्री स्थैतिकी के अन्र्तगत आती है। जैसे- स्वतंत्र व्यापार, मूल्य व उत्पादन निर्धारण के सिद्धात, अर्न्तराष्ट्रीय व्यापार आदि। इससे स्थैतिक विश्लेषण का महत्व बढ़ जाता है।

4) स्थैतिक विश्लेषण के अर्न्तगत यह अध्ययन किया जाता है कि एक व्यक्ति अधिकतम संन्तुष्टि हेतु अपनी सीमित आय को विभिन्न वस्तुओं में किस प्रकार बॉटता है? उत्पादक अधिक लाभ कैसे प्राप्त करता है? कीमतें कैसे निर्धारित होती है? तथा राष्ट्रीय आय का वितरण कैसे होता है? यही कारण है कि जटिल समस्याओं के समाधान में स्थैतिक विश्लेषण अव्यन्त महत्वपूर्ण है।

2.2.1 आर्थिक स्थैतिकी की सीमाएं

1) स्थैतिक अर्थशास्त्र स्थिर अर्थव्यवस्था का अध्ययन करता है जबकि वास्तविक जगत परिवर्तनशील है। अतः वास्तविक जगत के सन्दर्भ में इसका प्रयोग बहुत सीमित हो जाता है।

2) स्थैतिक अर्थशास्त्र पूर्ण प्रतियोगिता, पूर्ण गतिशीलता, अनिश्चितता की अनुपस्थिति, जनसंख्या का निश्चित आकार जैसी अवास्तविक मान्यताओं पर आधारित है । अतः व्यावहारिक जीवन में यह महत्वपूर्ण नहीं रह जाता।

3) स्थैतिक विश्लेषण आर्थिक व्यवहार को प्रभावित करने वाले विभिन्त तत्वों यथा- रूचि, फैशन, रीति-रिवाज, आदतों आदि को स्थिर मान लेता है जबकि वास्तविक जीवन में इनमें निरन्तर परिवर्तन होता रहता है।

3.4 आर्थिक प्रावैगिकी

आर्थिक प्रावैगिकी(प्रावैगिक अर्थशास्त्र) जैसा कि इसके नाम से ही स्पष्ट है, यह अर्थव्यवस्था में होने वाले निरन्तर परिवर्तनों तथा परिवर्तन की प्रकिया का अध्ययन करता है। ध्यान रखने योग्य मुख्य बात यह है कि स्थैतिक अर्थशास्त्र की भाँति आर्थिक प्रावैगिकी में आर्थिक तत्वों को स्थिर नहीं माना जाता। स्थैतिकी की भाँति प्रावैगिकी के सम्बन्ध में भी अर्थशास्त्रियों के मत भिन्न-भिन्न है। जे. आर. हिक्स आर्थिक सिद्धांत के उन भागों को ही प्रावैगिकी के अर्न्तगत मानते हैं जिनमें प्रत्येक मात्रा का तिथिकरण करना आवश्यक हो। आपने पीछे पढ़ा है कि हिक्स उस भाग को स्थैतिक अर्थशास्त्र के अर्न्तगत मानते हैं जिनमें तिथिकरण की आवश्यकता नहीं होती। यद्यपि कई

अर्थशास्त्री हिक्स की परिभाषा से सहमत नहीं है। उनका आरोप है कि तिथिकरण करने से ही आर्थिक विश्लेषण प्रावैगिक नहीं हो जाता और हिक्स की धारणा प्रावैगिक अर्थशास्त्र के क्षेत्र को बहुत अधिक विस्तृत कर देती है । हैराड के अनुसार परिवर्तनशील अर्थशास्त्र का आशय आर्थिक आकड़ों में लगातार परिवर्तनों के अध्ययन से है जो एक साथ होने वाले परिवर्तनो से भिन्न है।'

अर्थशास्त्री रैगनर फ्रिश, हैरॉड की परिभाषा में परिवर्तन करते हुए कहते है कि प्रावैगिकी के अध्ययन के लिए निरन्तर परिवर्तन महत्वपूर्ण नहीं है अपितु परिवर्तन की प्रक्रिया अधिक महत्वपूर्ण है। प्रावैगिकी को स्पष्ट करते हुए फ्रिश पुनः कहते है कि- "एक प्रणाली प्रावैगिक होगी यहि समय के विभिन्न बिन्दुओ पर चर एक महत्वपूर्ण तरीके से सम्बन्धित हों।"

चूँकि प्रावैगिक अर्थशास्त्र के अन्तर्गत समय ही महत्वपूर्ण होता है। अतः इसके विश्लेषण में अलग-अलग समयों के आर्थिक चर महत्वपूर्ण तरीके से सम्बन्धित होते हैं। इसे हम एक उदाहरण से स्पष्ट करते हैं। जैसा कि स्थैतिक अर्थशास्त्र के अन्तर्गत आपने मॉग और पूर्ति फलनों के अन्तर्गत पढ़ा कि इसमें आर्थिक चर एक ही समयावधि से जुडे. हुए है, ठीक उसी फलन में यदि दोनों चर अलग-अलग समयावधि से जुड़े हुए तो वह फलन स्थैतिक न रह कर प्रावैगिक हो जाऐगा। आइए हम आपको इसे फलनात्मक सम्बन्ध से स्पष्ट करते है। यदि किसी वस्तु की माँगी जाने वाली मात्रा और उसकी कीमत एक ही समय से जुड़े हुए होते है तो वह फलन स्थैतिक कहलाता है। जैसे

$$D_t = f(P_t) \text{--------------(i)}$$

परन्तु यदि किसी वस्तु की एक समय विशेष पर माँग, उस वस्तु की पिछले समय(t-1) की कीमत पर निर्भर करती है। तो इसे गणितीय रूप में निम्न प्रकार स्पष्ट किया जायेगा-

$$D_t = f(P_{t-1}) \text{ ------(ii)}$$

समीकरण(ii) में D_t = वस्तु की t समय में मांगी गई मात्रा तथा P_{t-1} एक वस्तु की(t - 1) अर्थात t समय से पिछली समयावधि की कीमत को व्यक्त करती है।

इसी प्रकार पूर्ति वक्र के लिए भी हम प्रावैगिक फलन लिख सकते है $S_t=f(P_{t-1})$ उक्त समीकरण(ii) में दोनों आर्थिक चर माँग और कीमत अलग-अलग समयावधि से जुडे हैं अत: यह फलन प्रावैगिक फलन कहलाऐगा। प्रावैगिक फलन की जानकारी के पश्चात अब आपको स्थैतिक फलन और प्रावैगिक फलन में एक महत्वपूर्ण अन्तर यह स्पष्ट हो रहा होगा कि जहाँ स्थैतिक फलन में अर्थव्यवस्था में चरों के मध्य तुरन्त समायोजन की मान्यता स्वीकार करते हैं वहीं प्रावैगिक अर्थशास्त्र में अर्थव्यवस्था के तुरन्त समायोजन की मान्यता को स्वीकार न करके चरों के मध्य विलम्ब सम्बन्धों(Lagged Relationships) का विश्लेषण किया जाता है। आइए हम आपको अर्थव्यवस्था में विलम्बित सम्बन्धो को स्पष्ट करते है। यदि आर्थिक चरों में परिवर्तन करने पर उसका प्रभाव तत्काल अर्थव्यवस्था में परिलक्षित होने लगे तो इसे तत्काल समायोजन कहा जाता है। परन्तु यदि आर्थिक चरों में परिवर्तन का प्रभाव अर्थव्यवस्था में कुछ समय के पश्चात महसूस हो तो इसे बिलम्बित समायोजन कहा जाता है। ऐसी स्थिति में अर्थव्यवस्था को समायोजन में कुछ समय लगता है।

प्रावैगिक विश्लेषण में आपने जाना कि इसमें हम समय में विभिन्न बिन्दुओं पर परिवर्तन की प्रक्रिया का अध्ययन करते है तो इसका एक आशय यह भी है कि इसमें असन्तुलन की स्थिति पर प्रकाश डाला जाता है। चूँकि समय के विभिन्न बिन्दुओ पर आर्थिक चर एक महत्वपूर्व तरीके से सम्बन्धित होते है तो इसका अभिप्राय यह है कि प्रावैगिक विश्लेषण के अन्तर्गत स्पष्ट होता है कि किस प्रकार से एक स्थिति का पिछली स्थिति में से विकास होता है।

आर्थिक चरों के समय निर्धारण के सन्दर्भ में यहाँ आपके समक्ष सेमुलसन की प्रावैगिकी की परिभाषा का उल्लेख करना आवष्यक है। सेम्युलसन ने कहा कि ऐतिहासिक रूप से गतिमान स्थैतिक व्यवस्था में चरों का समय निर्धारण निश्चित रूप से आवश्यक है परन्तु इससे यह प्रावैगिक नहीं बन जायेगी। उनके अनुसार चरो की व्याख्या को प्रावैगिकी कहलाने के लिए आवश्यक है विभिन्न चरों में फलन सम्बन्ध हो। अर्थात एक व्यवस्था तब प्रावैगिकी होती है जब इसका व्यवहार समय के साथ उन फलन समीकरणों द्वारा निर्धारित होता है जिसमें विभिन्न समय बिन्दु अनिवार्य रूप से सम्मिलित हों। अर्थात विभिन्न समय बिन्दुओं पर चारों के मध्य फलनात्मक सम्बन्ध होते हैं और प्रावैगिकी के लिए उनका होना आवश्यक है।

2.3.0 आर्थिक प्रावैगिकी के प्रकार

आर्थिक स्थैतिकी की भाँति आर्थिक प्रावैगिकी को भी व्यष्टिपरक व समष्टिपरक उदाहरणो से स्पष्ट किया जा सकता है-

1) व्यष्टिपरक प्रावौगिक विश्लेषण

2) समष्टिपरक प्रावौगिक विश्लेषण

2.3.0.1 व्यष्टिपरक प्रावौगिक विश्लेषण

जिस प्रकार आर्थिक स्थैतिकी के व्यष्टि परक विश्लेषण को मॉग और पूर्ति वक्र के माध्यम से सरलता पूर्वक स्पष्ट किया गया उसी प्रकार हम व्यष्टिपरक प्रावैगिक विश्लेषण को भी मॉग और पूर्ति वक्र से स्पष्ट कर सकते है। माना DD और SS क्रमशः प्रारम्भिक मॉग और पूर्ति वक्र को प्रदर्शित कर रहे है । चित्र 3.4 के 'अनुसार-

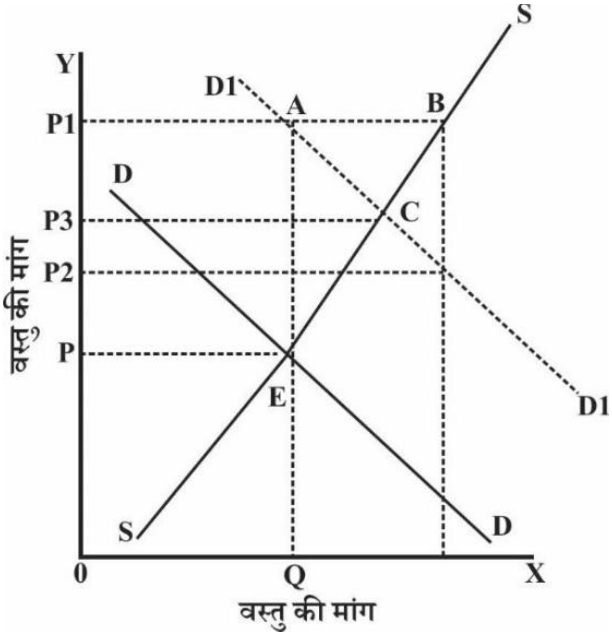

चित्र 3.4

चित्रा में, दोनों वक्र एक दुसरे को E बिन्दु पर काटते है। इस सन्तुलन से वस्तु की कीमत OP तथा मात्रा OQ निर्धारित होती है। अब यदि मॉग अकस्मात् बढ़ जाती है। तो माँग वक्र दाहिनी ओर विवर्तित होकर DAD, हो जायेगी। चूँकि वस्तु की पूर्ति तत्काल नहीं बढ़ायी जा सकती अतः वस्तु की पूर्ति OQ ही रहती है। बेलोच होने के कारण पूर्ति वक्र लम्बवत रेखाAQ के रूप में होगा और इस स्थिति में कीमत बढ़कर OP हो जाऐगी। कीमत में वृद्धि होने के कारण उत्पादक लाभ कमाने हेतु वस्तु का उत्पादन बढाऐगें अतः OP कीमत पर उत्पादक वस्तु कीAB अतिरिक्त मात्रा का उत्पादन करके B बिन्दु पर पहुँच जाऐंगें। अतः इस स्थिति में कुल पूर्ति P1B होगी । वस्तु की पूर्ति में वृद्धि होने के कारण वस्तु की कीमत घटकर OP2 हो जाऐगी। यह असन्तुलन की क्रिया तब तक चलती रहेगी जब तक नया सन्तुलन C बिन्दु पर स्थापित नहीं हो जाता। अतरू इस प्रारम्भिक सन्तुलन E से नए सन्तुलन बिन्दु C तक पहुँचने का विश्लेषण ही आर्थिक प्रावैगिकी कहलाता है।

2.3.0.2 समष्टिपरक प्रावैगिकी विश्लेषण

व्यष्टिपरक प्रावैगिक विश्लेषण के पश्चात अब हम समष्टि प्रावैगिक सन्तुलन को रेखाचित्र के माध्यम से स्पष्ट करते है-

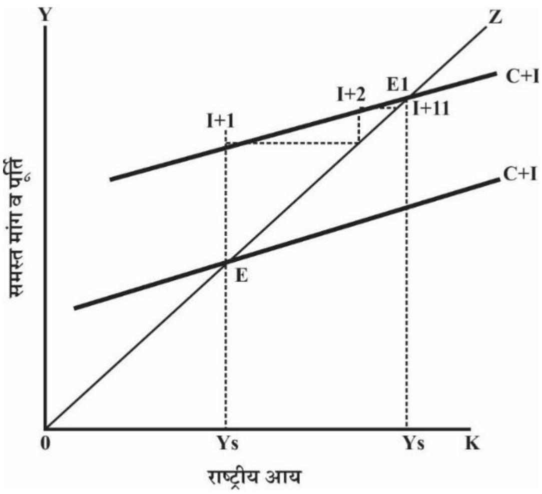

रेखाचित्र में, राष्ट्रीय आय निर्धारण का एक सामान्य समष्टि परक मॉडल प्रदर्शित किया गया है। इस चित्र में समग्र माँग(C+I) वक्र द्वारा प्रदर्शित की गयी है। चित्रानुसार, t समय में OY_0 राष्ट्रीय आय निर्धारित होती है। अब माना समस्त माँग वक्र t समय के अर्न्तगत निवेश में वृद्धि के कारण ऊपर की ओर विवर्तित हो जाती है फलस्वरूप आय में वृद्धि होना प्रारम्भ हो जाती है । परन्तु इसको नई सन्तुलन स्थिति में पहुँचने में समय लगेगा। समय में हुई निवेश में वृद्धि के कारण t+1 समय में राष्ट्रीय आय में वृद्धि होगी। यही आय वृद्धि उपभोग की माँग को बढ़ायेगी। इस बढ़ी हुई मॉग को पूरा करने हेतु उत्पादन में वृद्धि होगी। इसी प्रकार t+2 समय की उपभोग माँग में वृद्धि के कारण t+3 समय में राष्ट्रीय आय में और अधिक वृद्धि होगी। इस प्रकार यह प्रक्रिया निरन्तर चलती जाती है। एक वृद्धि दूसरे वृद्धि को जन्म देती जायेगी और अन्ततः t+n(माना) समय में अंतिम संतुलन E1 को प्राप्त कर लिया जायेगा। इस स्थिति में राष्ट्रीय आय OY_n निर्धारित होती है।

2.3.1. आर्थिक प्रावैगिकी का महत्व क्षेत्र

अब तक के अध्ययन से आप यह जान चुके है कि वास्तविक परिवर्तनशील जगत की आर्थिक समस्याओ का अध्ययन करने के लिए प्रावैगिकी की महत्वपूर्व आवश्यकता है। इसकी महता निम्न सन्दर्भो में अत्यन्त प्रासंगिक है-

1) स्थैतिक अर्थशास्त्र आर्थिक व्यवहार के निर्धारकों यथा रूचि, साधनों, तकनीकी स्तर - आदि को स्थिर मान लेता है यह पूर्ण ज्ञान तथा पूर्णगतिशीलता जैसी अवास्तविक मान्यताओ पर आधारित होता हैं जबकि वास्तविक जगत में ऐसा नहीं होता। अतः प्रावैगिकी का महत्व इस बात में निहित है कि यह स्थैतिकी की अपेक्षा वास्तविकता के अधिक निकट है।

2) विकास का अर्थशास्त्र गतिशील है क्योंकि आर्थिक विकास का एक चक्र होता है। जो निरन्तर गतिमान होता है। अतः आर्थिक विकास के लिए भी प्रावैगिकी का अध्ययन महत्वपूर्ण है।

3) प्रावैगिक विश्लेषण की महत्ता इसलिए भी बढ़ जाती है कि यह लोचदार होती है। जिसके परिणाम स्वरूप यह विकासमान कल्याणकारी व नियोजन जैसी समस्याओ के विश्लेषण के लिए अधिक उपयोगी है।

4) प्रावैगिक विश्लेषण का महत्व इस दृष्टि से भी बढ़ जाता है कि अर्थशास्त्र की अनेक समस्याओं यथा व्यापार चक्र, मकड़जाल सिद्धात, जनसंख्या के विकास का सिद्धांत, लाभ, ब्याज व विनियोग आदि के सिद्धात प्रावैगिक अर्थशास्त्र के अर्न्तगत आते हैं।

5) बहुत सी समस्याएं ऐसी है जिनका अध्ययन स्थैतिक नहीं कर सकता उनके अध्ययन के लिए प्रावैगिक अर्थशास्त्र की ही आवश्यकता पड़ती हैं जैसे-

   A. निरन्तर परिवर्तनो के परिणाम स्वरूप उत्पन्न होने वाली समस्याएं

   B. परिवर्तन उत्पन्न करने वाली मूल शक्तियों के अध्ययन में

   C. मानवीय मनोविज्ञान पर आधारित आर्थिक समस्याओं के अध्ययन के लिए

संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि आर्थिक जीवन की समस्याओं को वास्तविक रूप में समझने तथा हल करने के लिए प्रावैगिकी अर्थशास्त्र की महती आवश्यकता है।

2.3.2. प्रावैगिकी की सीमाएं

यद्यपि प्रावैगिक अर्थशास्त्र अद्यतन तथा विकासमान समाज के सन्दर्भ में अत्यन्त आवश्यक है परन्तु प्रावैगिकी की कुछ सीमाएं अथवा दोष भी है, जो निम्नलिखित हैं-

1) प्रावैगिकी का अध्ययन बहुत जटिल भी है। इसके विश्लेषण के लिए उच्च गणित तथा इकोनोमेंट्रिक्स की आवश्यकता पड़ती है। इसे समझना बड़ा कठिन होता है।

2) प्रावैगिकी परिवर्तन की प्रक्रिया' का अध्ययन करता है परन्तु यदि परिवर्तन की गति बहुत तीव्र है तो समस्या का अध्ययन केवल शुद्ध प्रावैगिक दृष्टिकोण से करना कठिन हो जाता है। इसके लिए समस्या को कई स्थैतिक टुकड़ों में बॉटकर ही अध्ययन किया जा सकता है।

3) यह भी एक महत्वपूर्ण तथ्य है कि प्रावैगिकी का अभी पूर्ण विकास नहीं हो पाया है जिसके कारण इसका प्रयोग कठिन हो जाता है।

स्थैतिकी तथा प्रावैगिकी के उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि स्थैतिकी तथा प्रावैगिकी दोनो विश्लेषणों के अपने-अपने गुण तथा दोष दोनों है। कुछ आर्थिक समस्याएं ऐसी है जिनका अध्ययन प्रावैगिकी द्वारा ही हो सकता है जबकि कुछ समस्याओं का अध्ययन स्थैतिकी द्वारा ही किया जा सकता है। जबकि कुछ विवेचनो के लिए दोनो विश्लेषणों की साथ-साथ आवश्यकता पड़ सकती है। अतः निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि अर्थशास्त्र के पूर्ण विकास तथा वैज्ञानिक विश्लेषण के लिए दोनो प्रणालियों आवश्यक है।

अभ्यास प्रश्न 4

---

1) निम्न कथनों में सत्य / असत्य चुनिए-

A. स्थैतिकी एक समय रहित विचार है जबकि प्रावैगिकी का सम्बन्ध समय से होता है।(सत्य/ असत्य)

B. स्थैतिक अर्थशास्त्र परिवर्तन की प्रक्रिया का अध्ययन नहीं करता।(सत्य / असत्य)

C. प्रावैगिक अर्थशास्त्र आर्थिक व्यवहार को प्रभावित करने वाले विभिन्न परिवर्तनशील तत्वो को स्थिर मान होता है।(सत्य असत्य)

D. तुलनात्मक स्थैतिकी प्रावैगिक विश्लेषण का ही स्वरूप हैं।(सत्य/ असत्य)

E. वह आर्थिक विश्लेषण जिसमें आर्थिक चरों के मूल्य एक ही समयावधि से सम्बन्धित है स्थैतिक अर्थशास्त्र कहलाता है।(सत्य/ असत्य)

F. स्थैतिकी उस स्थिति को व्यक्त करता है जिसमें अर्थव्यवस्था में कोई गति नहीं होती।(सत्य/असत्य)

G. अर्थशास्त्र के वैज्ञानिक विश्लेषण के लिए स्थैतिकी और प्रावैगिकी दोनो आवष्यक है।(सत्य/ असत्य)

2) रिक्त स्थानो की पूर्ति कीजिए-

A. जब आर्थिक चरों में परिवर्तन का प्रभाव अर्थव्यवस्था में कुछ समय पश्चात दिखाई पडता है तो यह समायोजन................कहलाता है।(विलंवित समायोजन / तत्काल समायोजन)

B. एक उपभोग फलन निम्न प्रकार है(Ct=c(Yt -1) जहाँ C- उपभोग Y- आय की मात्रा को प्रदर्षित करता है। उपरोक्त फलन की प्रकृति....................है।(स्थैतिक / प्रावैगिकद्)

C. प्रावैगिक विश्लेषण...............का अध्ययन है।(सन्तुलन / असन्तुलन)

D. अन्तिम सन्तुलन का अध्ययन...............के अन्तर्गत किया जाता है।(प्रावैगिकी / स्थैतिकी)

E. व्यापार चक्र, जनसंख्या के विकास, तथा मूल्य निर्धारण पर समय के प्रभाव का अध्ययन..................के अन्तर्गत किया जाता है।(स्थैतिक अर्थशास्त्र / प्रावैगिक अर्थशास्त्र)

2.4. साम्य की अवधारणा

आर्थिक विश्लेषण के अन्तर्गत 'सन्तुलन' या 'संस्थिति' की धारणा का बहुत व्यापक महत्व है। यदि यह कहा जाय कि अर्थशास्त्र सन्तुलन की ही समस्या का अध्ययन करता है तो इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। अर्थशास्त्र में इसकी महत्ता को देखते हुए ही प्रख्यात अर्थशास्त्री प्रो0 स्ट्रिगलर अर्थशास्त्र को 'सन्तुलन विश्लेषण' का नाम देते है।

संन्तुलन का अंग्रेजी रूपान्तरण 'Equilibrium' शब्द दो लैटिन शब्द 'Acqur'(जिसका अर्थ है समान) तथा 'libra'(जिसका अर्थ है सन्तुलन) से मिलकर बना है। इस प्रकार Equilibrium का अर्थ समान सन्तुलन(Equal Balance) से हुआ। अतः यह एक ऐसी स्थिति है जिसके अन्तर्गत शक्तियों का ऐसा सन्तुलन होता है कि प्रणाली में परिवर्तन की कोई प्रवृति नहीं होती । अर्थशास्त्र में संन्तुलन का अभिप्राव गति का पूर्ण अभाव नहीं होता बल्कि ऐसी स्थिति से है जिसमें कार्यशील शक्तियाँ एक दूसरे के प्रभाव को नष्ट कर देती है। स्पष्ट है कि इस अवस्था में गति की अनुपस्थिति नहीं है बल्कि गति के परिवर्तन की दर की अनुपस्थिति होती है।

प्रो. सिटोवस्की संस्थिति को और अधिक स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि कोई भी व्यक्ति या फर्म संस्थिति या सन्तुलन की स्थिति में तब होगा जब तक वह यह समझे कि इन परिस्थितियों में जितना अधिक से अधिक सम्भव हो सकता है उतने उतम ढंग से उसने व्यवहार किया है। और जब तक परिस्थितियाँ अपरिवर्तित रहें उसे अपने व्यवहार को बदलने की इच्छा न हो। अतः कोई बाजारए व्यक्तियो तथा फर्मों का कोई समूह संस्थिति की स्थिति में तब होगा जब तक कि उसका कोई सदस्य अपने वर्तमान व्यवहार को बदलने के लिए बाध्य न हो। इस प्रकार स्पष्ट है कि सन्तुलन या साम्य की दशा में अर्थव्यवस्था में किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं होता है। सभी क्रियाकलाप एक निश्चित गति से होते रहते है। प्रत्येक आर्थिक प्रयास करने वाले का उद्धेश्य अधिकतम लाभ प्राप्त करना होता है। जब तक इस लक्ष्य की प्राप्ति नहीं होती तब तक वह अपने कार्य में परिवर्तन करता रहता है। जब उसे अधिकतम लाभ प्राप्त हो जाता है तो उसके प्रयास में पुनः परिवर्तन नहीं होगा बल्कि इस लक्ष्य को सदैव प्राप्त करते रहने के लिए वह अपने व्यवहार को उसी रूप में करेगा । यही सन्तुलन की स्थिति है। अतः सन्तुलन वह स्थिति है जिसे प्राप्त कर लेने पर अधिकतम लाभ प्राप्त होता है। सामान्य सन्तुलन विश्लेषण की स्पष्टता और सुगमता से इसे ग्रहण करने के लिए आवश्यक है कि हम इसके विश्लेषण के पूर्व संक्षिप्त रूप से आंशिक सन्तुलन की भी चर्चा कर ले।

अर्थशास्त्र में आंशिक सन्तुलन का प्रारम्भ फ्रांसीसी अर्थशास्त्री अग्टोयन अगस्टिन कानो तथा जर्मन अर्थशास्त्री हंस वान मेंकगोल्ड ने किया। परन्तु वर्तमान रूप में प्रस्तुत करने का श्रेय प्रो0 अल्फ्रेड मार्शल को है। आंशिक सन्तुलन व्यष्टि इकाईयों के व्यवहार का अध्ययन करता है। जैसा कि आप जानते है कि व्यष्टि इकाईयों के अन्तर्गत एक उपभोक्ताए एक उत्पादक इकाई अथवा एक उद्योग आते है। अतः एक व्यक्ति का सन्तुलनए एक उद्योग का सन्तुलन या एक फर्म का सन्तुलन आंशिक सन्तुलन के उदाहरण है। आंशिक सन्तुलन जैसा कि इसके नाम से ही स्पष्ट है यह आंशिक विश्लेषण होता है अतः समस्त अर्थव्यवस्था के सम्पूर्ण चित्र की जानकारी इसके द्वारा नहीं प्राप्त की जा सकती। आंशिक सन्तुलन के अन्तर्गत हम केवल विशिष्ट इकाईयो का अध्ययन करते हैं। इकाईयों के सम्बन्ध में विश्लेषण करते समय अन्य बातो को स्थिर मान लिया जाता है। अतः यह सम्पूर्ण अर्थ व्यवस्था के केवल एक अंग को प्रस्तुत करता है। अतः आंशिक सन्तुलन में अन्य बाते समान रहने की मान्यता महत्वपूर्ण हो जाती है। जिसके द्वारा अन्य प्रभावों व चरों को स्थिर माना जाता है।

सामान्य सन्तुलन विश्लेषण रीति का प्रयोग प्रारम्भ में वालरस ने किया। सामान्य सन्तुलन विश्लेषण के अन्तर्गत एक परिवर्तनशील तथ्य का अध्ययन नहीं किया जाता अपितु यह अनेक परिवर्तनशील तत्वों का एक साथ अध्ययन करती है एवं इसका सम्बन्ध सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था से होता है। सामान्य सन्तुलन विश्लेषण सीमित तथ्यों या ऑकड़ो पर ही आधारित नहीं होता बल्कि यह बहुत अधिक विस्तृत होती है। सामान्य सन्तुलन विश्लेषण के अन्तर्गत हम सम्पूर्ण आर्थिक निकाय के सन्तुलन का अध्ययन करते है। अर्थात अर्थव्यवस्था को सामान्य सन्तुलन की स्थिति में तब कहा जाएेगा जब अर्थव्यवस्था में प्रत्येक उपभोक्तता, उत्पादन की प्रत्येक इकाई तथा प्रत्येक उद्योग एक साथ सन्तुलन की अवस्था में हों । इसका अभिप्राय यह भी है कि यदि प्रत्येक उपभोक्ता अधिकतम संतुष्टि की स्थिति में हो तथा प्रत्येक उत्पादक इकाई अधिकतम लाभ की स्थिति में हो तो अर्थव्यवस्था की इस स्थिति को सामान्य सन्तुलन की अवस्था कहेंगे। आप इसकी तुलना मानव शरीर से भी कर सकते है। जिस प्रकार मानव के सम्पूर्ण शरीर के सन्तुलन में रहने के लिए आवश्यक है कि उसका कोई अंग असन्तुलित अवस्था में न हो, अथति सम्पूर्ण शरीर का साम्य उसी अवस्था में सम्भव है जब शरीर के सभी अंगो में पृथक पृथक सन्तुलन हो। उसी प्रकार सम्पूर्ण

अर्थव्यवस्था के साम्या के लिए आवष्यक है कि सभी अलग-2 भागो में एक साथ सन्तुलन हों।

सामान्य सन्तुलन विश्लेषण को और अधिक सरलता से स्पष्ट करने के लिए हम एक उदाहारण लेते हैं। माना अर्थव्यवस्था जो कि सामान्य सन्तुलन की अवस्था में हैं, में एक वस्तु X की मॉग बढ जाती है। इस स्थिति में जब हम आंशिक सन्तुलन विश्लेषण विधि अपनाते है तो वस्तु X की माँग में परिवर्तन का प्रभाव केवल ग वस्तु के बाजार तक ही सीमित मानते है और इस आधार पर यह निष्कर्ष निकालते है कि - वस्तु X की मॉग बढने पर यदि X की पूर्ति अपरिवर्तित रहती है। तो वस्तु X की कीमत बढ़ जायेगी। परन्तु आंशिक सन्तुलन विश्लेषण का उपयोग तब प्रासंगिक नहीं रह जाता जबकि वस्तु ग के बाजार एवं अन्य बाजारो के मध्य प्रबल अर्न्तसम्बन्ध हो । यदि वस्तु ग के बाजार में परिवर्तन से उन वस्तुओं की बाजार मांगो में भी परिवर्तन हो जाता हो जिसका प्रयोग X के साथ किया जाता हो तो इस स्थिति में X वस्तु की मॉग में होने वाला परिवर्तन समूची अर्थव्यवस्था में परिवर्तन उत्पन्न करेगें। आइए हम आपको इसे और स्पष्ट करते हैं। जब X वस्तु की मॉग बढ़ेगी तो उन वस्तुओं की भी माँग बढ़ेगी जो X वस्तु के साथ प्रयुक्त की जाती है अतः उनका भी मूल्य बढ़ेगा। इसके विपरीत X की माँग में वृद्धि के कारण अर्थव्यवस्था में उन वस्तुओ की मॉग कम होगी जोग की स्थानापन्न(ऐसी वस्तुऐ जो X वस्तु के स्थान पर प्रयुक्त हो सकती है) है, उनकी माँग कम होगी फलस्वरूप उन(स्थानापन्न) वस्तुओं के भी मूल्य कम होगे। अब आप समझ रहे होगे कि X वस्तु की माँग में परिवर्तन का केवल X वस्तु के बाजार पर ही प्रभाव नहीं पडता अपितु इसकी पूरक व स्थानापन्न वस्तुओ के बाजारों में भी सन्तुलन परिवर्तित होता है। वस्तु बाजारों में होने वाले ये पारस्परिक परिवर्तन साधनों के वितरण की स्थिति को भी प्रभावित करेगें । ग वस्तु की माँग बढ़ने के फलस्वरूप जब X वस्तु की पूरक वस्तुओं की मॉग बढ़ेगी तो उत्पादक अपने लाभ को अधिकतम करने के उद्देश्य से X वस्तु और X वस्तु की पूरक वस्तुओं के उत्पादन की मात्रा में वृद्धि करेगें । इसके परिणामस्वरूप X और X वस्तु की पूरक वस्तुओं के उत्पादन में प्रयुक्त साधनों(श्रम, पूंजी आदि) की भी माँग बढ़ेगी। अतः X वस्तु और उसकी पूरक वस्तुओं के उत्पादन में लगे साधनों की कीमते भी बढ़ेगी। इसके विपरीत X वस्तु की स्थानापन्न वस्तुओं की मॉग में कमी होगी, फलस्वरूप उत्पादक X वस्तु की स्थानापन्न वस्तुओं के उत्पादन में कमी करेगे और इसका परिणाम यह होगा कि X वस्तु के स्थानापन्न वस्तुओं के उत्पादन में प्रयुक्त साधनों की मॉग कम होगी और उनकी कीमतें भी धट जाएगी। अर्थात केवल X वस्तु की माँग में वृद्धि का यह प्रभाव होगा कि X वस्तु की पूरक वस्तुओं का उत्पादन बढेगा, उनके उत्पादन में प्रयुक्त साधनों की आय बढ़ेगी। इसके साथ ही X वस्तु की स्थानापन्न वस्तुओं की मांग घटने के कारण उत्पादन घटेगा परिणामस्वरूप उनके उत्पादने में प्रयुक्त साधनो की भी आय घटेगी। आप समझ गए होगें कि किस तरह X वस्तु की माँग में परिवर्तन, सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था में वस्तु बाजारो में(विशेष रूप में पूरक और स्थानापन्न वस्तुओ के बाजारों में) तथा साधनों के बाजारों में परिवर्तन उत्पन्न करता है। परिवर्तनो की यह प्रक्रिया तब तक चलती रहेगी जब तक कि सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था(वस्तु बाजार तथा साधन बाजार दोनो) पुनः सन्तुलन 'की स्थिति को नहीं प्राप्त कर लेती। इस स्थिति में अर्थव्यवस्था पुनः सामान्य सन्तुलन की स्थिति को प्राप्त कर लेती है। अब आप यह भी समझ गये होगें कि सामान्य सन्तुलन विश्लेषण अर्थव्यवस्था के अन्तर सम्बन्धो का अध्ययन करता है। इसके विपरीत आंशिक सन्तुलन की पद्धति में यह मान लिया जाता है कि किसी वस्तु बाजार में होने वाले परिवर्तन केवल उस विशिष्ट वस्तु के बाजार को ही प्रभावित करते है, अन्य वस्तुओं के बाजारो विशेष रूप से उसकी स्थानापन्न व पूरक वस्तुओं के बाजारो को नहीं प्रभावित करते है।

दूसरे शब्दों में हम कहे तो सामान्य सन्तुलन विश्लेषण किसी एक बाजार में हुए परिवर्तन के सभी प्रभावो को ध्यान में रखते हुए सभी बाजारो के एक साथ सन्तुलन की मान्यता स्वीकार करता है। आंशिक सन्तुलन की रीति वहाँ ठीक कही जा सकती है जबकि एक बाजार की दशाओं में परिवर्तन से अन्य बाजारो पर लगभग नगण्य प्रभाव हो परन्तु यदि एक बाजार की दशाओं में परिवर्तन का अन्य बाजारों पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है तो वहाँ सामान्य सन्तुलन विश्लेषण आवश्यक हैं हम आपको इसको एक उदाहरण देते हुए और स्पष्ट करना चाहते हैं - यदि पेट्रोल की कीमत में वृद्धि का प्रभाव हम गेद, कलाई घड़ी आदि पर देखेंगे तो पेट्रोल की कीमतों में परिवर्तनो के इन वस्तुओं पर बहुत कम प्रभाव पड़ते है अतः पेट्रोल की कीमत निर्धारण में आंशिक विश्लेषण सही हो सकता है परन्तु जब हम स्वचालित वाहनों के बाजार पर विचार करते हैं तो देखते है कि पेट्रोल की कीमत में वृद्धि का, वाहनो की माँग तथा कीमत पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। क्योंकिपेट्रोल तथा स्वचालित वाहन एक दूसरे के पूरक है। अतः उनके बाजार परस्पर सम्बन्धित होगें तथा उनमें परस्पर निर्भरता भी होगी। अतः पारस्परिक निर्भरता तथा सम्बन्धों वाले बाजारों के अर्न्तगत सामान्य सन्तुलन विश्लेषण का ही उपयोग करना चाहिए।

वास्तविक जगत में यदि आप सूक्ष्मता से विचार करें तो आपको आभास होगा कि वस्तुओं तथा साधनों के अलग- अलग बाजारों

के बीच कुछ अंशों तक पारस्परिक संबंध तथा पारस्परिक निर्भरता पायी जाती है। इसके अर्न्तगत बहुत अधिक संख्या में उपभोक्ता, उत्पादक, श्रमिक तथा अन्य साधनों के स्वामी जुड़े होते है, जो अपने लाभ को अधिकतम करते का प्रयास करते हैं। सामान्य सन्तुलन तभी होगा जब सभी वस्तुओं, साधनों तथा निर्णयकर्ता- उपभोक्ता, उत्पादक तथा साधन स्वामी आदि एक साथ सन्तुलन की स्थिति में हों। यहाँ आप इस तथ्य से भलीभाँति अवगत हो रहें होगें कि सामान्य सन्तुलन विश्लेषण के अर्न्तगत सभी कीमतों को परिवर्तनशील माना जाता है तथा सभी बाजारों में एक साथ सन्तुलन निर्धारण का अध्ययन किया जाता हैं।

यद्यपि सामान्य सन्तुलन विश्लेषण अत्यन्त जटिल है और इसे समझने के लिए सूक्ष्म गणितीय पद्धतियों की जानकारी आवश्यक है।(इसके विपरीत आंशिक सन्तुलन प्रणाली काफी सरल है।) तथापि अर्थशास्त्र के कई महत्वपूर्ण विश्लेषण सामान्य सन्तुलन के अस्तित्व से ही जुड़े है। इसका सबसे महत्वपूर्ण प्रयोग कल्याणकारी अर्थशास्त्र के अन्तगंत सम्मिलित होता है।

2.5. सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप यह भलीभांति समझ चुके होगें कि किसी भी आर्थिक विश्लेषण के अर्न्तगत आर्थिक चरों के मध्य दो प्रकार के फलनात्मक सम्बन्धों - स्थैतिक तथा प्रावैगिक का अध्ययन किया जाता है। जब आर्थिक निकाय का अध्ययन एक समय बिन्दु पर या एक ही समयावधि में होता है तो यह स्थैतिक विश्लेषण कहलाता है। इसके विपरीत जब चरों का सम्बन्ध अलग-2 समयावधियों से होता है तो उसका विश्लेषण प्रावैगिकी के अर्न्तगत किया जाता है। 1925 के पश्चात से आर्थिक प्रावैगिकी का महत्व दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है। यद्यपि यह भी उल्लेखनीय है कि आर्थिक समस्याओं के क्रमबद्ध व वैज्ञानिक विश्लेषण के लिए दोनों विधियाँ आवश्यक है। इसी प्रकार सन्तुलन के सन्दर्भ में स्पष्ट है कि विश्लेषण की दोनो रीतियाँ प्रतियोगी न होकर एक- दूसरे की पूरक है। अर्थव्यवस्था के समस्त चित्र को समझने के लिए जहाँ सामान्य विश्लेषण आवश्यक हैं वहीं निकाय के एक अंग के कार्यकरण को विस्तृत रूप से समझने के लिए आंशिक सन्तुलन आवश्यक है।

अभ्यास प्रश्न-5

1) निम्न कथनों में सत्य / असत्य को स्पष्ट कीजिए-

   A. अर्थशास्त्र में सन्तुलन का अभिप्राय गति की अनुपस्थिति नहीं बल्कि गति की दर में परिवर्तन की अनुपस्थिति होती है।(सत्य/असत्य)

   B. सन्तुलन या साम्य एक लक्ष्य या उद्देश्य को व्यक्त करता है जिसे प्राप्त करने के लिए आर्थिक इकाईर्या गतिशील रहती है।(सत्य / असत्य)

   C. सामान्य सन्तुलन विश्लेषण सम्पूर्ण अर्थव्यवसथा का एक साथ चित्रण नहीं करता है।(सत्य/असत्य)

   D. सामान्य सन्तुलन विश्लेषण अर्थव्यवस्था के विभिन्न अंगो की परस्पर निर्भरता से मुक्त रहता है।(सत्य/असत्य)

   E. सामान्य सन्तुलन विश्लेषण अर्थशास्त्र की एक जटिल प्रणाली है।(सत्य / असत्य) vi. सामान्य सन्तुलन विश्लेषण का सर्वप्रथम प्रयोग वालरस ने किया था।(सत्य / असत्य)

2.6. संन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- Dwivedi, D. N.(2008: Micro Economics 7th edition vikas Publish House New Delhi.
- Koutsiyanniesa,A-(1997) -MicroeconomicsAnalysis New Delhi.
- Mishra S.K & Puri V. K.(2003) - Modern micro economic theory Himalaya Publishing House.
- Sethi T. T(2006) - Principlesa of Economics' Lakshmi NarayanAgrawalAgra

- Ahuza,H.L(2010) – “Principlesa of Microeconomics”, S.Chand Publishing House,New Delhi.
- Seth, M.L.(2007), 'Microeconomics' Lakshmi NarayanAgrawal,Agra
- Uttarakhand open University, BAEC 101, Micro Economics.

2.7. उपयोगी/सहायक ग्रन्थ

- आहूजा, एच. एल.(2003) उच्चतर आर्थिक सिद्वात(व्यष्टि परक आर्थिक विश्लेषण) एस चन्द पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली
- सिन्हा, वी. सी.(1999) व्यष्टि अर्थशास्त्र, प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद
- आहूजा, एच. एल.(1999) उच्चतर समष्टि अर्थशास्त्र, एस० चन्द पब्लिशिंग हाऊस
- जैन, के. पी.(1987) व्यष्टि अर्थशास्त्र साहित्य भवन, आगरा
- लाल, एस. एन.(2005) व्यष्टिभावी आर्थिक विश्लेषण शिव पब्लिशिंग हाऊस, इलाहाबाद
- सिंह, देव नारायण(2004) व्यष्टि अर्थशास्त्र - अध्ययन पब्लिशिंग, नई दिल्ली

इकाई 03 : साम्य की अवधारणा THE CONCEPT OF EQUILIBRIUM

इकाई की रूपरेखा

3.0. उद्देश्य

3.1. प्रस्तावना

3.2. अर्थ(Meaning)

3.3. Partial EquilibriumAnalysis आंशिक संतुलन विश्लेषण

3.4. General EquilibriumAnalysis सामान्य संतुलन विश्लेषण

3.5. स्थिर बना हुआ संतुलन और अस्थिर बना हुआ संतुलन Stable equilibriumAnd unstable equilibrium

3.6. तटस्थ संतुलन NEUTRAL EQUILIBRIUM

3.7. आंशिक संतुलन PARTIAL EQUILIBRIUM

3.8. धारणाएँAssumptions

3.9. इसके लाभ Its benefits

3.10. सीमाएँ LIMITATIONS

3.11. सामान्य संतुलन General Equilibrium

3.12. वालरेशियन सामान्य संतुलन मॉडल The Walrasian general equilibrium model

3.12.1 धारणाएँAssumptions

3.12.2. मॉडल Model

3.12.3. वालरेशियन मॉडल की आलोचना Criticism of the Walrasian model

3.12.4. वालरेशियन मॉडल के उपयोग Uses of The Walrasian Model

3.13. अभ्यास प्रश्न

3.0. उद्देश्य

यह अध्याय आर्थिक सिद्धांत में संतुलन की महत्वपूर्णता और इसके प्रकारों के परिप्रेक्ष्य में है। यह अध्याय छात्रों को संतुलन की महत्वपूर्णता समझने में मदद करता है जो आर्थिक विचार में एक महत्वपूर्ण अवधारणा है। संतुलन के प्रकार और संतुलन के अनुसार अनुशासन का आदर्श समझाने के लिए उदाहरणों के साथ प्रस्तुत किया जाता है।

इस अध्याय में छात्रों को आर्थिक सिद्धांत के माध्यम से व्यापारिक संतुलन की प्रासंगिकता के बारे में समझाया जाता है, जो व्यापारिक निर्णयों की महत्वपूर्ण विधियों में से एक है। यह अध्याय उन्हें आर्थिक विश्लेषण में विभिन्न प्रक्रियाओं के साथ संतुलन की महत्वपूर्ण भूमिका को समझने में मदद करता है।

इसके अलावा, यह अध्याय विभिन्न प्रकार के संतुलन, जैसे कि स्थिर संतुलन और गतिशील संतुलन, की व्याख्या के साथ उनके प्रायोगिकता में मदद करता है। यह अध्याय आर्थिक सिद्धांत में एक महत्वपूर्ण अवधारणा को समझने और उसके अनुसार क्रियान्वयन करने की क्षमता को विकसित करने में मदद करता है।

इसके साथ ही, यह अध्याय छात्रों को आर्थिक सिद्धांत में संतुलन के महत्वपूर्ण प्रयोगों की जानकारी देता है, जैसे कि आर्थिक प्रणाली के काम की समझ, बाजार में परिवर्तनों के परिणाम की पूर्वानुमानी, और विभिन्न आर्थिक समस्याओं के समाधान के लिए संतुलन

का उपयोग।

इस अध्याय के माध्यम से, छात्रों को संतुलन की महत्वपूर्ण अवधारणा और उसके व्यापारिक, आर्थिक और वास्तविक प्रयोग को समझने में मदद मिलती है, जिससे वे आर्थिक अध्ययन के विभिन्न पहलुओं को समझ सकते हैं।

3.1. प्रस्तावना

यह अध्याय आर्थिक सिद्धांत के महत्वपूर्ण और आवश्यक अवधारणा 'संतुलन' के बारे में है। संतुलन एक ऐसी महत्वपूर्ण अवधारणा है जो आर्थिक विचार में विभिन्न पहलुओं की समझ में मदद करती है और व्यापारिक निर्णयों के पीछे की भूमिका को समझने में महत्वपूर्ण होती है। यह अध्याय संतुलन की अवधारणा को विभिन्न प्रकार के उदाहरणों के साथ स्पष्टीकरण करता है और छात्रों को यह सिखाने में मदद करता है कि संतुलन कैसे आर्थिक विचार के बिना संभव नहीं है।

यह अध्याय छात्रों को संतुलन की अवधारणा के प्रकार, जैसे कि स्थिर संतुलन और गतिशील संतुलन, के बारे में विस्तारपूर्ण जानकारी प्रदान करता है। छात्रों को समझाया जाता है कि ये संतुलन कैसे संतुलन की महत्वपूर्ण अवधारणा की बिभिन्न दृष्टियों में प्रयोग करते हैं और उनकी आर्थिक विचारधारा को कैसे प्रभावित करते हैं।

इसके अतिरिक्त, यह अध्याय छात्रों को आर्थिक सिद्धांत में संतुलन के महत्वपूर्ण प्रयोगों की जानकारी देता है, जैसे कि आर्थिक प्रणाली के काम की समझ, बाजार में परिवर्तनों के परिणाम की पूर्वानुमानी, और विभिन्न आर्थिक समस्याओं के समाधान के लिए संतुलन का उपयोग।

इस अध्याय के माध्यम से, छात्रों को संतुलन की महत्वपूर्ण अवधारणा और उसके व्यापारिक, आर्थिक और वास्तविक प्रयोग को समझने की क्षमता प्राप्त होती है, जिससे वे आर्थिक अध्ययन के विभिन्न पहलुओं को समझ सकते हैं।

यह अध्याय आर्थिक सिद्धांत में संतुलन की महत्वपूर्णता को समझाने और इसके महत्वपूर्ण प्रयोगों की स्थापना करने का प्रयास करता है। संतुलन एक ऐसी आवश्यक अवधारणा है जो हमें आर्थिक प्रक्रियाओं की समझ में मदद करती है, समय-समय पर होने वाले आर्थिक निर्णयों की समझ में मदद करती है, और व्यापारिक निर्णयों की बुनाई में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

यह अध्याय छात्रों को संतुलन की विभिन्न प्रकारों की समझ में मदद करता है, जैसे स्थिर संतुलन और गतिशील संतुलन, और उनके विभिन्न प्रयोगों की समझ में। यह अध्याय छात्रों को यह बताने में मदद करता है कि संतुलन कैसे आर्थिक प्रक्रियाओं के समझने के लिए महत्वपूर्ण है और उसके विभिन्न पहलुओं का कैसे उपयोग किया जा सकता है।

इसके साथ ही, यह अध्याय छात्रों को आर्थिक सिद्धांत में संतुलन के प्रयोगों की भूमिका को समझाने में मदद करता है, जैसे कि आर्थिक प्रणाली के काम की समझ, बाजार में परिवर्तनों के परिणाम की पूर्वानुमानी, और विभिन्न आर्थिक समस्याओं के समाधान के लिए संतुलन का उपयोग।

इस अध्याय के माध्यम से, छात्रों को संतुलन की महत्वपूर्ण अवधारणा और उसके व्यापारिक, आर्थिक और वास्तविक प्रयोग को समझने में मदद मिलती है, जिससे वे आर्थिक अध्ययन के विभिन्न पहलुओं को समझने में सक्षम हो सकते हैं।

3.2. अर्थ(Meaning)

शब्द "संतुलन" लैटिन शब्द "एक्युलब्रियम" से लिया गया है, जिसका अर्थ है समान संतुलन। इसका उपयोग अर्थशास्त्र में भौतिकी से आया है। भौतिकी में, इसका अर्थ एक ऐसी स्थिति है जिसमें विरोधी बल या प्रवृत्तियाँ एक दूसरे को बेअसर कर देती हैं। प्रोफेसर स्टिग्लर इस अर्थ में संतुलन को इन शब्दों में परिभाषित करते हैं: "एक संतुलन एक ऐसी स्थिति है जिसमें विरोधी बल या प्रवृत्तियाँ एक दूसरे को बेअसर कर देती हैं। प्रोफेसर स्टिग्लर इस अर्थ में संतुलन को इन शब्दों में परिभाषित करते हैं: "एक संतुलन एक स्थिति है जिससे कोई शुद्ध प्रवृत्ति नहीं है। हम शुद्ध प्रवृत्ति को इस तथ्य पर जोर देने के लिए कहते हैं कि यह अनिवार्य रूप से अचानक जड़ता की स्थिति नहीं है, बल्कि शक्ति बलों के निरसन का प्रतिनिधित्व कर सकती है।"

अर्थशास्त्र में, संतुलन एक स्थिति को निरूपित करता है जो परिवर्तन की अनुपस्थिति से characterized है। यह एक ऐसी स्थिति है जहां विभिन्न बाजार के प्रतिभागियों की आर्थिक योजनाओं में पूर्ण सहमति है ताकि किसी को भी अपनी निर्णय को संशोधित या बदलने की प्रवृत्ति न हो। प्रोफेसर मेहता के शब्दों में: "अर्थशास्त्र में संतुलन गति में परिवर्तन की अनुपस्थिति को दर्शाता है।" दूसरे शब्दों में, यह एक

बाजार की स्थिति है जहां सभी निर्णय प्रतिभागियों द्वारा एक दूसरे के साथ एकता में हैं। जैसा कि स्किटोवस्की कहते हैं: "एक बाजार, या एक अर्थव्यवस्था, या किसी अन्य समूह के व्यक्ति और फर्म संतुलन में होते हैं जब उनमें से कोई भी अपनी व्यवहार को बदलने के लिए बाध्य नहीं महसूस करता है। इसलिए, एक समूह के लिए संतुलन में होना आवश्यक है कि सभी सदस्य संतुलन में हों; और प्रत्येक सदस्य का संतुलन व्यवहार सभी अन्य सदस्यों के संतुलन व्यवहार के साथ संगत होना चाहिए।"

मान लीजिए कि प्रतिदिन बाजार में मछली की एक निरंतर और निरंतर आपूर्ति आती है जो संभावित खरीदारों द्वारा समान उत्साह के साथ खरीदी जाती है। इसके लिए बाजार मूल्य ऐसा होना चाहिए जो मछली की मांग और आपूर्ति को बराबर करे। जब मांग और आपूर्ति किसी विशेष मूल्य पर बराबर होती है, तो यह संतुलन की स्थिति होती है। मछली जिस कीमत पर खरीदी जाती है, वह संतुलन मूल्य है। और बेचे जाने वाले मूल्य को संतुलन मूल्य कहा जाता है और उस मूल्य पर खरीदे और बेचे जाने वाली मछली की मात्रा संतुलन मात्रा कहलाती है। संतुलन मूल्य पर न तो खरीददारों को खरीदने का प्रेरणा होता है और न बेचने का प्रेरणा होता है। उपमा के रूप में, चित्र 9.1 में, आपूर्ति वक्र S मांग वक्र D को बिंदु E पर काटती है, जो संतुलन बिंदु है, और OP और OQ संतुलन मूल्य-मात्रा संयोजन को प्रस्तुत करते हैं। यदि किसी कारणवश, मूल्य संतुलन मूल्य से कम होकर OP_2 पर पहुँच जाता है, तो मांग की मात्रा बढ़ेगी और आपूर्ति की मात्रा कम होगी, अर्थात् $P_2d > P_2s$ हो जाएगा। बल प्रवृत्त होगी जो मूल्य को वापस संतुलन स्थिति E की ओर धकेलने की प्रवृत्ति करेगी। उसी तरह, संतुलन स्तर से ऊपर मूल्य बढ़ने से OP_1 पर आपूर्ति बढ़ेगी और मांग कम होगी $P_1s_1 > P_1d_1$, और यह तुरंत E पर लौट आएगा।

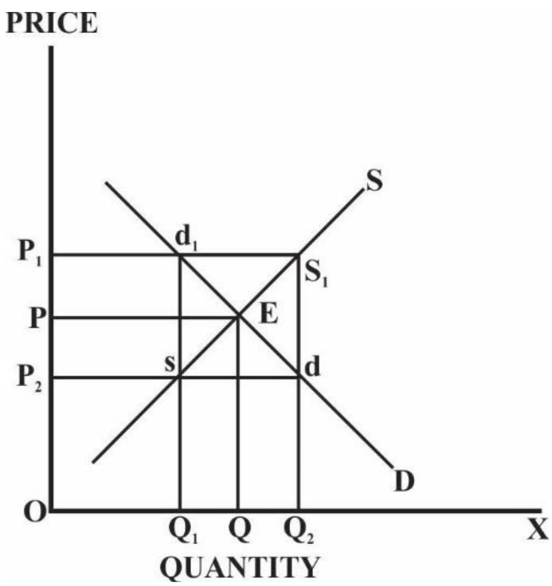

चित्र 9.1

आपने व्यावसायिकता में संतुलन के अवधारणा का व्याख्यान प्रस्तुत किया है। संतुलन वास्तव में प्रत्येक आर्थिक सिद्धांत और क्षेत्रों में उपयोग में है। अवस्था संतुलन का अर्थ होता है एक स्थिति जहां दो विपरीत बलों का परिणामस्वरूप एक वस्तु स्थिर रूप से बिना किसी परिवर्तन की प्रवृत्ति के पास होती है। दूसरे शब्दों में, जब एक वस्तु किसी विपरीत दिशा में काम करने वाले बलों के दबाव के तहत होती है और उसकी कोई प्रवृत्ति किसी दिशा में नहीं होती, तो वस्तु संतुलन में होती है। इस प्रकार, एक प्रणाली संतुलन में होती है जब उसमें महत्वपूर्ण चरम परिवर्तन दिखाई नहीं देते हैं, और जब कोई दबाव या बल दिखाई नहीं देते हैं जो महत्वपूर्ण परिवर्तन की मूल्यों में कोई परिवर्तन करने का कारण बनाएगे। इस प्रकार, उपभोक्ता के संतुलन में, वाणिज्यिक व्यक्ति ने पैसे के खर्च को विभिन्न सामग्रियों में विभाजित करने की स्थिति तक पहुँच ली है जहाँ पर उसकी पैसे के खर्च को नए विभागन पर पुनर्विभाजित करने की कोई प्रवृत्ति नहीं होती। उसी तरह, एक उद्यम संतुलन में होता है जब उसकी उत्पादन स्तर में कोई परिवर्तन करने की प्रवृत्ति नहीं होती, अर्थात जब उसकी उत्पादन स्तर को बढ़ाने या कम करने की कोई प्रवृत्ति नहीं होती।

चाहे वह मूल्य, आय का स्तर हो या रोजगार, समाधान हमेशा संतुलन मूल्य में ही होता है। इस प्रकार, माइक्रोआर्थिक्स में महत्वपूर्ण विषय है कि वस्तुओं की मूल्यों का निर्धारण कैसे किया जाता है और मूल्य संतुलन में रहते हैं जब वस्तु की मांग और परिपूर्णता की मात्रा समान होती है। जहां मांग और परिपूर्णता की मात्रा समान होती है, उस बाजार मूल्य पर, खरीददार और विक्रेता दोनों संतुष्ट होंगे। इसलिए, उस मूल्य को आखिरकार बाजार में तय किया जाएगा और उसमें किसी भी परिवर्तन की प्रवृत्ति नहीं होगी जब तक कि मांग और

परिपूर्णता के निर्धारण शर्तों में कुछ परिवर्तन नहीं होते हैं। उसी तरह, उन्नत पूंजीवादी देशों में आय और रोजगार के स्तर को उनके संतुलन स्तरों पर निर्धारित किया जाता है, जहां आपूर्ति और मांग का योग समान होता है।

हालांकि, यह संभावना है कि आर्थिक गतिविधियों में संतुलन कभी वास्तविक अभ्यास में पूरा नहीं हो सकता। लेकिन संतुलन विश्लेषण की महत्वपूर्णता इस तथ्य में होती है कि अगर अन्य चीजें एक समान रहती हैं, तो अर्थव्यवस्था संतुलन मूल्यों की ओर प्रवृत्ति करेगी। क्या होता है वह यह कि आखिरकार अंतिम संतुलन तक पहुँचने से पहले परिवर्तन परिस्थितियों में बदलाव होता है, ताकि प्रणाली नए परिवर्तित स्थितियों के लिए नए संतुलन मूल्य की ओर प्रवृत्ति करे।

3.3 Partial EquilibriumAnalysis आंशिक संतुलन विश्लेषण

दो प्रकार के संतुलन किये गए हैं:(1) आंशिक संतुलन और(2) सामान्य संतुलन। मूल्य निर्धारण के आंशिक संतुलन दृष्टिकोण में, हम किसी वस्तु के मूल्य निर्धारण की व्याख्या करते हैं, अन्य वस्तुओं के मूल्यों को स्थिर रखते हुए और मानते हुए कि विभिन्न वस्तुओं की मांग एक-दूसरे पर निर्भर नहीं है। पांशुल आंशिक संतुलन दृष्टिकोण की व्याख्या में मार्शल लिखते हैं: "इसके बावजूद, जिन बलों का सामना किया जाना है, वे इतने संख्यात हैं कि एक साथ कई का विश्लेषण करने के लिए उपयुक्त होता है और हमारे प्रमुख अध्ययन के उपकरण के रूप में कई आंशिक हल का कार्य करते हैं। इस प्रकार हम कुछ मुख्यतम सम्बन्धों का विश्लेषण करने के लिए आरंभ करते हैं। इस प्रक्रिया के द्वारा, हम एक विशिष्ट वस्तु के संबंध में आपूर्ति, मांग और मूल्य के प्राथमिक संबंधों को आगे बढ़ाते हैं। हम सभी अन्य बलों को निष्क्रिय करते हैं, वाक्य 'अन्य बातें समान रहने पर' के द्वारा। हम उन्हें अविक्रिय नहीं मानते, लेकिन तब के लिए हम उनकी क्रियावली को उपेक्षा करते हैं। यह वैज्ञानिक डिवाइस विज्ञान से बहुत पुराना है। यह वह तरीका है जिससे जागरूक या अजागरूक बुद्धिमान लोग अपने दिनबद्ध जीवन के हर मुश्किल समस्या का समाधान करते हैं।

इस प्रकार, पूरी द्वाराणिकी के तत्वों के मूल्य निर्धारण के लिए मार्शलियन व्याख्या में परिपूर्ण प्रतिस्थान प्रदान किया जाता है, अन्य वस्तुओं की मूल्यों को स्थिर रखते हुए। वस्तुत: किसी वस्तु की मांग और आपूर्ति वक्रों के परिक्षण के माध्यम से एक वस्तु के मूल्य निर्धारण की व्याख्या मार्शल का आंशिक संतुलन विश्लेषण प्रस्तुत करता है, अन्य वस्तुओं और संसाधनों के मूल्यों को स्थिर रखते हुए। तब मार्शल का आंशिक संतुलन विश्लेषण एकल वस्तु के मूल्य-आपूर्ति संवाद के माध्यम से एकल वस्तु के मूल्य निर्धारण की व्याख्या करता है, अन्य वस्तुओं और संसाधनों की मूल्यों आदि को स्थिर रखते हुए। अर्थात्, प्रणाली के आंशिक दिए गए डेटा को लिया जाता है और समान रखा जाता है और एक वस्तु के मूल्य-आउटपुट संतुलन का निर्धारण किया जाता है। सेटेरिस पैरिबस की मानने की परिकल्पना के दिए जाने के बावजूद यह यह निर्धारित करता है कि एक वस्तु की मूल्य उन सभी वस्तुओं की मूल्यों से अलग रूप से निर्धारित होती है। डेटा में परिवर्तन होने पर, नए मांग और आपूर्ति वक्र बनाए जाएंगे और उनके साथ-साथ, वस्तु की नई मूल्य निर्धारित की जाएगी। इस मूल्य निर्धारण के आंशिक संतुलन विश्लेषण में यह भी अध्ययन करता है कि डेटा में परिवर्तन के परिणामस्वरूप संतुलन मूल्य में कैसे परिवर्तन होता है। हालांकि, स्वतंत्र डेटा की मानने के साथ, आंशिक संतुलन विश्लेषण केवल एक वस्तु के मूल्य निर्धारण की व्याख्या करता है और नहीं विश्लेषण करता कि विभिन्न वस्तुओं की मूल्य कैसे अन्तःसंबंधित और परसंबंधित होती हैं और उन्हें एक साथ कैसे निर्धारित किया जाता है।

यह ध्यान देना चाहिए कि आंशिक संतुलन विश्लेषण इस मानने पर आधारित है कि एक एकल क्षेत्र में होने वाले परिवर्तन अन्य क्षेत्रों पर प्रमुख प्रभाव नहीं डालते। इस प्रकार, आंशिक संतुलन विश्लेषण में, यदि किसी वस्तु की मूल्य में परिवर्तन होता है, तो यह अन्य वस्तुओं की मांग पर प्रभाव नहीं डालेगा। प्रो. लिप्सी सहीत लिखते हैं: "सभी आंशिक संतुलन विश्लेषण विचार के आधार होते हैं, सेटेरिस पैरिबस की परिकल्पना पर। सख्ती से व्याख्यान की गई परिकल्पना यह है कि अर्थव्यवस्था में सभी अन्य चीजें तबदील होने से कोई प्रभावित नहीं होते हैं, जो विचार के तहत क्षेत्र(कहें विभागA) में होते हैं। यह परिकल्पना हमेशा किसी मात्रा में उल्लंघित की जाती है, क्योंकि वहां कुछ भी होता है जो एक क्षेत्र में होता है, उसके कुछ अन्य क्षेत्रों में परिवर्तन को उत्पन्न करना होगा। जो मामला है, वह है कि अर्थव्यवस्था के बाकी हिस्सों में होने वाले परिवर्तन बहुत ही छोटे और फैले हुए होते हैं, ताकि उनका प्रभाव सेक्टरA पर जो प्रभाव पड़ता है, उसे सुरक्षित रूप से अनदेखा किया जा सके।"

3.4. General EquilibriumAnalysis सामान्य संतुलन विश्लेषण

सामान्य संतुलन विश्लेषण में, एक वस्तु की मूल्य का निर्धारण अन्य वस्तुओं की मूल्यों से स्वतंत्र रूप से निर्धारित होने की व्याख्या नहीं की जाती है। क्योंकि वस्तु X की मूल्य में परिवर्तन का प्रभाव अन्य वस्तुओं की मांग की मात्राओं और मूल्यों पर पड़ता है और उसी तरीके से अन्य वस्तुओं की मांग और मात्राएँ वस्तु X की मांग पर प्रभाव पड़ते हैं, सामान्य संतुलन दृष्टिकोण ने सभी वस्तुओं और कारकों

की मूल्यों की परस्पर और समयानुचित निर्धारण की व्याख्या की है। इस प्रकार, सामान्य संतुलन विश्लेषण बहु-बाजार संतुलन की ओर देखता है। यह देखता है कि एक आर्थिक प्रणाली में सभी वस्तुओं की मूल्यों का समयानुचित तरीके से निर्धारण कैसे होता है, प्रत्येक विशेष बाजार में अलग-अलग।

जैसा कि पहले कहा गया है, आंशिक संतुलन दृष्टिकोण मानता है कि एक वस्तु X की मूल्य में परिवर्तन का प्रभाव अर्थव्यवस्था के अन्य हिस्सों में(यानी अन्य सभी वस्तुओं में) इस तरीके से विस्तारित होगा कि अन्य व्यक्तिगत वस्तुओं की मूल्यों और मात्राओं के मूल्यों पर प्रभाव नहीं पड़ेगा। इसलिए, जहां किसी वस्तु की मूल्य में परिवर्तन का प्रभाव किसी अन्य वस्तुओं की मूल्यों और मात्राओं की मांग पर होता है, जैसा कि संबंधित वस्तुओं में होता है, वहां आंशिक संतुलन दृष्टिकोण ऐसे मामलों में वैध रूप से लागू नहीं हो सकता है, और इसलिए सामान्य संतुलन विश्लेषण को लागू करने की आवश्यकता होती है जो उनकी मूल्यों और मात्राओं की परस्पर और समयानुचित निर्धारण की व्याख्या करता है। सामान्य संतुलन विश्लेषण विभिन्न वस्तुओं और कारकों की मूल्यों और मात्राओं के बीच के अंतरसंबंध और परास्परिकता के साथ कैसा संघटित होता है, उसके साथ निपटता है। सामान्य संतुलन तब मौजूद होता है जब जारी मूल्यों पर, प्रत्येक उत्पाद की मांगी गई मात्राएँ और प्रत्येक कारक की अपनी मांगी गई मात्राओं के समान होते हैं। किसी भी वस्तु या कारक की मांग या आपूर्ति में किसी परिवर्तन से सभी वस्तुओं और कारकों की मात्राओं और मूल्यों में परिवर्तन होगा और नए सामान का नया सामान्य संतुलन स्थापित होने तक मांग, आपूर्ति और मूल्यों में समायोजन और पुनर्समायोजन शुरू हो जाएगा। यद्यपि, सामान्य संतुलन विश्लेषण एक समयानुचित समीकरणों की प्रणाली को हल कर रहा है।

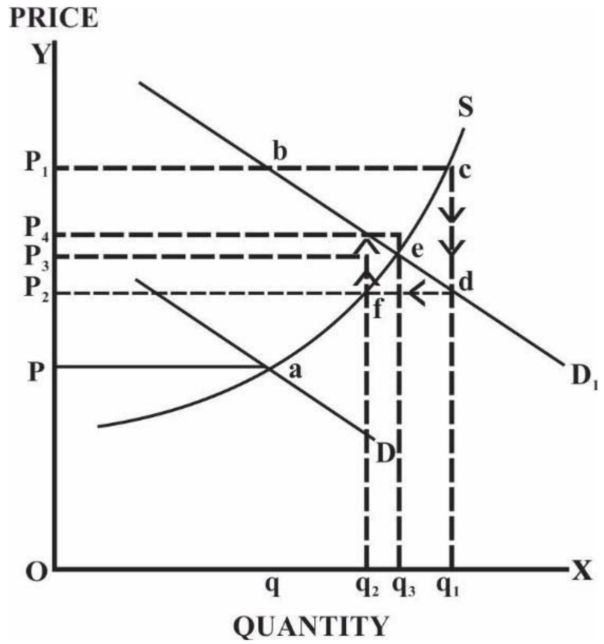

3.5. स्थिर बना हुआ संतुलन और अस्थिर बना हुआ संतुलन Stable equilibriumAnd unstable equilibrium

उपरोक्त संतुलन की विभिन्न स्थितियाँ स्थिर संतुलन से संबंधित हैं। संतुलन में किसी भी विवाद की स्थिति में पुनर्स्थापित होने की स्व-समायोजन होती है, ताकि पुराने संतुलन स्थिति को फिर से स्थापित किया जा सके, जैसा कि चित्र 9.1 में दिखाया गया है। मार्शल के शब्दों में: "जब मांग मूल्य आपूर्ति मूल्य के बराबर होता है, तो उत्पन्न राशि को वृद्धि होने या कम होने की कोई प्रवृत्ति नहीं होती है; यह संतुलन में है। ऐसा स्थिर संतुलन है; अर्थात्, मूल्य, यदि इससे थोड़ा सा भ्रमित हो जाता है, तो वह पुनर्स्थापित होने की प्रवृत्ति दिखाएगा, जैसे कि एक घंटी अपने नीचे के सबसे निचले बिंदु के चारों ओर दौड़ती है।" पीगू के अनुसार, एक भारी किल के साथ जहाज स्थिर संतुलन में है। एक और प्रसिद्ध उपमा है जिसे शुम्पीटर ने दी है, उसमें कटोर बरतन और एक गेंद की तुलना है। एक बरतन में रुकी गेंद स्थिर संतुलन में है क्योंकि अगर उसे विचलित किया जाए, तो आखिरकार वह आपातित स्थिति में वापस आकर आराम से अपने प्रारंभिक स्थान पर आ जाएगी।

विपरीत, संतुलन अस्थिर होता है जब संतुलन स्थिति में कोई भी विवाद आता है जिसके कारण शक्तियाँ आती हैं जो सिस्टम को उससे दूर ले जाती हैं, और फिर कभी वापस नहीं आती। पीगू के शब्दों में, "अगर छोटा विवाद उस स्थिति से और भी विवादक शक्तियों को

बुलाता है जो समुचित रूप से सिस्टम को उसके प्रारंभिक स्थिति से हटाने के लिए काम करती हैं," तो वह अस्थिर संतुलन में है। "जैसे ही कोई अंडा अपने एक सिर पर संतुलित होकर खड़ा होता है, तो छोटी सी हिलकर गिर जाता है, और लम्बाई वाली तरह सो जाता है"(मार्शल)। अगर कटोर में बरतन को उलटा कर दिया जाए और उपर गेंद रखी जाए, तो वह अस्थिर संतुलन में होगी। क्योंकि एक बार गेंद को धकेल दिया जाए, तो वह बरतन के चोटी से नीचे गिर जाएगी और अपने मूल स्थान पर वापस नहीं आएगी।

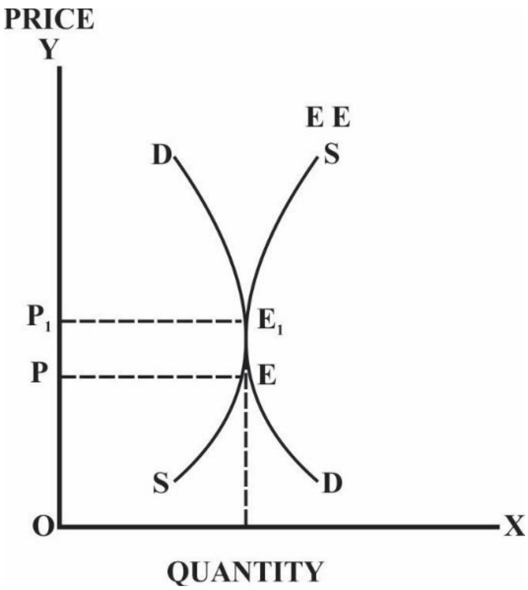

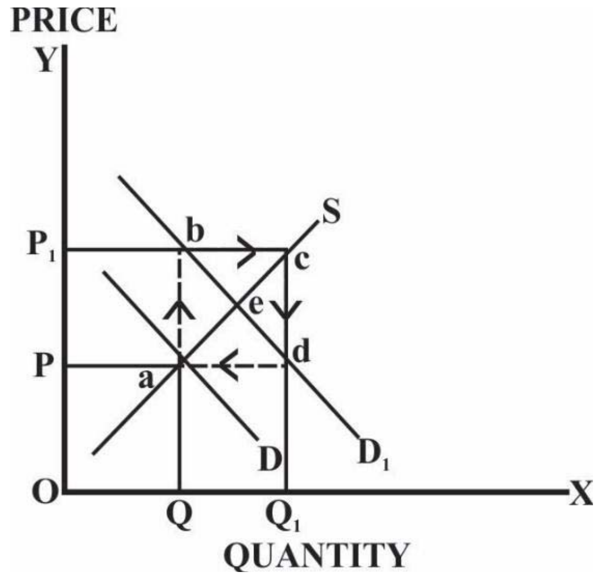

स्थिर और अस्थिर संतुलन के बीच का विभेद प्रोफेसर शेंसाइडर ने इन शब्दों में बेहतर तरीके से समझाया है: "दिए गए डेटा के एक निर्धारित सेट के लिए संतुलन की स्थिति को स्थिर कहा जा सकता है अगर स्थिति की व्यवस्था को हिलाने पर आर्थिक योजनाओं की समीक्षा होती है, और इसके साथ ही व्यक्तिगत आर्थिक इकाइयों की व्यवस्थाओं में परिवर्तन होता है जो समय के साथ पुनर्निर्मित होकर प्रारंभिक संतुलन स्थिति में सिस्टम को वापस ले जाता है। विपरीत, अगर व्यक्ति की आर्थिक योजनाओं का कारण, और उसके परिणामस्वरूप व्यवस्थाओं का, प्रारंभिक संतुलन स्थिति में वापस नहीं जाता है, तो हम कह सकते हैं कि संतुलन अस्थिर है।" स्थिर और अस्थिर संतुलन के अवबोधन का संबंध संतुलन की स्थिरता की समस्या से है जिसे स्थैतिक विश्लेषण और गतिक विश्लेषण में विभाजित किया जाता है।

3.6. तटस्थ संतुलन NEUTRAL EQUILIBRIUM

एक और प्रकार का संतुलन आमतौर पर तटस्थ संतुलन कहलाता है। जब किसी प्रारंभिक संतुलन स्थिति को व्यवस्थित किया जाता है, तो विवाद की शक्तियाँ उसे नए संतुलन स्थान पर ले जाती हैं जहाँ सिस्टम विश्राम करता है। एक बिलियर्ड टेबल पर एक गेंद अगर विचलित की जाए, तो वह उस नए स्थान पर आराम से विश्राम करेगी जहाँ वह जाती है। प्रोफेसर पीगू के अनुसार: "एक अंडा जो अपने सिर पर पड़ा होता है, वह तटस्थ संतुलन में होता है।" स्थैतिक तटस्थ संतुलन की स्थिति चित्र 9.3 में दिखाई गई है और गतिक तटस्थ संतुलन चित्र 9.4 में। चित्र 9.3 में, ई प्रारंभिक संतुलन बिंदु है जहाँ OQ मात्रा मांग की जाती है और OP मूल्य पर आपूर्ति की जाती है। मूल्य OP से बढ़कर, ई नये संतुलन बिंदु बन जाता है लेकिन मांग की जाती है और आपूर्ति मात्रा अब भी एक ही रहती है, अर्थात् OQ। इस प्रकार मूल्य सीमा PP1(=EE) तटस्थ संतुलन को प्रतिनिधित्व करती है। यदि बाजार गतिशील है, तो मांग में वृद्धि से मूल्य OP1(=bQ) की ओर बढ़ने का परिणाम होता है जिससे उत्पादकों को आपूर्ति बढ़ाने की प्रेरणा मिलती है 001 चित्र 9.4 में। लेकिन मांग मूल्य dQ1 सप्लाई मूल्य cQ1 से कम होने के कारण, उत्पादकों को आपूर्ति कम करने की प्रेरणा होती है 00। लेकिन मांग इस स्तर पर आपूर्ति से अधिक है; इससे मूल्य फिर से bQ(-OP1) बढ़ जाएगा। इस तरीके से, मूल्य और मात्राएँ एक स्थिरता बिंदु e के चारों ओर एक स्थिर मानक के चारों ओर स्थिरता बिंदु के चारों ओर वापस आने की स्थिति में केवल स्थिर संतुलन ही व्यापारिक विश्लेषण के लिए उपयुक्त है, जबकि अस्थिर और तटस्थ संतुलन केवल शैक्षिक रुचि होती हैं।

3.7. आंशिक संतुलन PARTIAL EQUILIBRIUM

आंशिक या विशिष्ट संतुलन विश्लेषण, जिसे सूक्ष्म अर्थशास्त्र भी कहा जाता है, व्यक्ति, एक कंपनी, एक उद्योग या उद्योग समूह के संतुलन स्थिति का अध्ययन होता है। यह उत्पाद मूल्यों और कारक मूल्यों का संतुलन निर्धारण की बाजार प्रक्रिया है जिसमें एक या दो

चरित्रिों को चर्चा की जाती है, बाकी सभी को स्थिर रखते हुए। प्रोफेसर स्टिगलर के शब्दों में: "आंशिक संतुलन वह है जिसमें केवल सीमित डेटा के आधार पर है, एक मानक उदाहरण एक ही उत्पाद की कीमत है, विश्लेषण के दौरान अन्य सभी उत्पादों की कीमतें स्थिर रखी जाती हैं।" मार्शलियन अर्थशास्त्र अधिकांशत: आंशिक संतुलन विश्लेषण में अध्ययन किया जाता है। आंशिक विश्लेषण दो प्रकार की आर्थिक समस्याओं से संबंधित है। पहला, वे उन स्थितियों से संबंधित हैं जो केवल किसी व्यक्ति, कंपनी या उद्योग के आर्थिक व्यवहार के विशिष्ट पहलुओं से संबंधित हैं। उदाहरणस्वरूप, यह खुद को केवल एक ही उत्पाद की बाजार में सीमित कर सकता है, जहां उसकी कीमत, उत्पादन की तकनीक और उसके उत्पादन में प्रयुक्त कारक की मात्रा को विचार में लिया जाता है, जबकि इसके सभी अन्य प्रभावों को स्थिर माना जाता है। दूसरा, यह केवल उन आर्थिक घटनाओं के पहले क्रम के परिणामों का अध्ययन करता है। यह उस उत्पाद पर आने वाले अन्य वस्त्रों की कीमतों पर प्रभाव को नजरअंदाज करता है और उसके प्रभाव को विपरीत क्रियाओं पर।

हम एक व्यक्ति, एक कंपनी, एक उद्योग और एक कारक के संतुलन की स्थितियों का संक्षिप्त अध्ययन कर सकते हैं। एक उपभोक्ता संतुलन में होता है जब वह अपनी धन आय का उपयोग विभिन्न माल और सेवाओं पर करता है ताकि वह अधिकतम संतोष प्राप्त करे। यह माना जाता है कि उसकी पसंद और रुचियाँ, धन आय और उन मालों की कीमतें दी गई हैं और स्थिर हैं।

किसी कंपनी का संतुलन तब होता है जब उसमें उसके उत्पाद को बदलने की प्रवृत्ति नहीं होती है। शॉर्ट रन में, यह अपनी मार्जिनल रेवेन्यू को मार्जिनल कॉस्ट के साथ समतुलन करता है और लॉग रन में यह पूर्ण संतुलन की शर्तों को पूरा करता है, जैसे कि MC = MR और LAC न्यूनतम हो। इस प्रकार, यह केवल सामान्य लाभ कमाता है और उद्योग छोड़ने की प्रवृत्ति नहीं होती है। कंपनी के विश्लेषण में दिए गए डेटा उत्पादन की तकनीकें, उसके उत्पादों और कारकों की मूल्यें होती हैं। एक उद्योग संतुलन में होता है जब उसकी सभी कंपनियां सामान्य लाभ कमा रही होती हैं और विद्यमान कंपनियों को छोड़ने या नए कंपनियों को इसमें प्रवेश करने की कोई प्रवृत्ति नहीं होती। एक ही उत्पाद के बाजार में, जैसा कि यह कहलाता है, एक समय में केवल एक मूल्य बाजार में नियमित होता है, जिस पर उपभोक्ताओं की मांग द्वारा खरीदने की इच्छा वास्तविक रूप से विभिन्न कंपनियों द्वारा उत्पन्न की जाने वाली मात्रा के समान होती है। उद्योग की प्रत्येक कंपनी नियमित बाजार मूल्य पर बेचती है और वह उत्पादन के स्तर का उत्पादन करती है, जहां उसका मार्जिनल कॉस्ट मार्जिनल रेवेन्यू के समान होता है। शॉर्ट रन में, यह उसकी औसत उत्पादन लागत से कम मूल्य पर भी उत्पादन कर सकती है, लेकिन लॉग रन में मूल्य को उसकी न्यूनतम औसत उत्पादन लागत के समान होना चाहिए।

एक उत्पादन कारक(भूमि, श्रम, पूंजी या संगठन) संतुलन में होता है जब वह उसी काम के सबसे अधिक मुद्रित रोजगार में नियुक्त होता है ताकि उसकी आय अधिकतम हो। यह एक स्थिति है जहाँ उसकी मूल्य उसके मार्जिनल रेवेन्यू प्रोडक्ट के समान होती है। इस मूल्य पर उसे अपनी सेवा की अधिक या कम पेशेवर करने की प्रोत्साहना नहीं होती है और कहीं और रोजगार की तलाश नहीं करता। इस प्रकार, उस कारक के लिए एक मूल्य होता है जो किसी भी समय बाजार में नियमित होता है। और उस कारक की मात्रा, जिसे उसके मालिक नियमित मूल्य पर बेचने के लिए तैयार हैं, को उस मात्रा के समान होना चाहिए जिसे उद्यमिताएँ किराए पर लेने के लिए तैयार हैं।

3.8. धारणाएँAssumptions

इस बाजार के आंशिक संतुलन विश्लेषण में माना जाता है कि उपभोक्ताओं के लिए उत्पाद की मूल्य दी गई और स्थिर है। उनकी आय, पसंद, आदतें और प्राथमिकताएँ भी स्थिर रहती हैं। कंपनियों के लिए, उत्पाद की उपयोगी संसाधनों की मूल्यें और अन्य संबंधित उत्पादों की मूल्यें जानी और स्थिर होती हैं। उद्योग के उत्पादन की तकनीकों के अनुसार, उत्पादन की तकनीकों के अनुसार, कारकों की आसानी से उपलब्ध हैं, जिनकी मूल्यें जानी और स्थिर हैं। यदि कोई परिवर्तन होता है, उदाहरण के लिए उपभोक्ताओं की पसंद में या उत्पादन की तकनीकों में, तो निर्माता-उपभोक्ता योजनाएँ संशोधित की जाती हैं और संतुलन नए स्तर पर पुनः स्थापित किया जाता है, हालांकि एक नए स्तर पर।

एक कारक के बाजार के विश्लेषण में माना जाता है कि वे उत्पन्न करने में मदद करने वाले उत्पादों की मूल्यें जानी और स्थिर हैं और सभी अन्य कारकों की मूल्यें और मात्राएँ भी जानी और स्थिर हैं। इसके अलावा, उत्पादन के कारक काम करने के बीच पूरी तरह से लचीले होते हैं और जगहों के बीच। शॉर्ट रन में, कारक अपने सीमान्त आय उत्पादन से कम कमाई कर सकता है, लेकिन लॉग रन में उसकी मूल्य उसके सीमान्त आय उत्पादन के समान होनी चाहिए सभी जगहों और सभी रोजगारों में।

उपरोक्त विश्लेषण एक पूरी तरह से प्रतिस्पर्धात्मक बाजार से संबंधित है, जिसे मोनोपॉली, मोनोपोलिस्टिक प्रतिस्पर्धा, ओलिगोपोली और मोनोप्सोनी बाजारों तक विस्तारित किया जा सकता है।

3.9. इसके लाभ Its benefits

आंशिक संतुलन विश्लेषण के कुछ फायदे होते हैं। पहले, यह हमें किसी उत्पाद या सेवा की मूल्य में परिवर्तन के कारणों का विश्लेषण करने में मदद करता है। उसी तरह व्यक्ति, कंपनी या उद्योग के व्यवहार में परिवर्तन के कारणों को भी समझा जा सकता है। दूसरे, यह विधि बाजार प्रतिभागियों के व्यवहार और योजनाओं के परिणामों की पूर्वानुमानी में मदद करती है। राज्य की कार्यनीति में हस्तक्षेप के परिणामों का विश्लेषण भी किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, कपास के वस्त्रों पर उत्पाद करने वाले कपड़ों की कीमतों, उत्पादन, बिक्री और लाभों पर उत्पाद करने वाले कपड़ों पर, उत्पाद करने वाले कपड़ों के उपर दबाव के प्रभाव क्या होते हैं, आदि। तीसरे, यह व्यावसायिक समस्याओं के हल के लिए विश्लेषण का एक अविवाद्य उपकरण है। आर्थिक विषयों की सीमित और संकीर्ण श्रेणी पर ध्यान केंद्रित करके और जांच क्षेत्र को एक या दो चरित्रिों में कम करके, यह आर्थिक समस्याओं को सरल और समझने योग्य बनाता है। अंत में, आर्थिक प्रणाली के सामान्य काम की समझ के लिए जो आर्थिक परिवर्तनों की अभिवादना को शामिल करता है, उसके रूप में आंशिक संतुलन विश्लेषण काम करता है। उसके बिना, हम सामान्य संतुलन विश्लेषण को समझने और विश्लेषण करने में समर्थ नहीं हो सकते हैं।

3.10. सीमाएँ LIMITATIONS

लेकिन आंशिक विश्लेषण की भी सीमाएँ हैं। यह किसी विशिष्ट क्षेत्र से संबंधित होता है, चाहे वह एक व्यक्ति, एक कंपनी या एक उद्योग हो। यदि अयोग्य धारणाएं जो एक विशिष्ट बाजार के अध्ययन को अर्थशास्त्र के अन्य हिस्से से अलग करती हैं, छोड़ दी जाएं, तो आंशिक संतुलन विश्लेषण टूट जाता है। बाजार में आर्थिक उद्विगन्ति के परिणाम संतुलन की शक्तियों को उत्पन्न करते हैं, जो आपूर्ति और मांग के परिवर्तनों के रूप में होते हैं, एक बाजार से दूसरे बाजार में जाते हैं और इस तरह से दूसरे, तीसरे और उच्च क्रम में परिवर्तन की लहरों की शुरुआत करते हैं पूरे अर्थव्यवस्था में। आंशिक विश्लेषण समृद्धि के सभी हिस्सों के आपसी संबंधों का अध्ययन करने की योग्यता नहीं रखता है। आर्थिक प्रक्रिया की सम्पूर्णता की आपसी आवश्यकता को समझने के लिए सामान्य विश्लेषण के अध्ययन की आवश्यकता होती है।

3.11. सामान्य संतुलन General Equilibrium

सामान्य संतुलन विश्लेषण आर्थिक प्रणाली के कामकाज को समग्र रूप से समझने के लिए कई आर्थिक परिमाणियों के बारे में, उनके आपसी संबंधों और आपसी आश्रयों की व्यापक अध्ययन है। यह उपादान और सेवाओं की मात्रा और मात्राओं के मायने और सेवाओं के मायने के परिवर्तनों की कारण-परिणाम अनुक्रमों को एकत्र करता है जो पूरे अर्थव्यवस्था के संदर्भ में होते हैं। एक आर्थिक प्रणाली समग्र संतुलन में हो सकती है केवल जब सभी उपभोक्ताएँ, सभी कंपनियाँ, सभी उद्योग और सभी कारक सेवाएँ एक साथ संतुलन में होते हैं और उन्हें वस्तु और कारक मूल्यों के माध्यम से जोड़ा जाता है। जैसा कि स्टिगलर ने कहा है: "सामान्य संतुलन का सिद्धांत अर्थव्यवस्था के सभी भागों के बीच के संबंधों का सिद्धांत है।" इस प्रकार, आंशिक संतुलन विश्लेषण को सामान्य विश्लेषण में समाहित किया जाता है।

सामान्य संतुलन विश्लेषण के दो प्रकार होते हैं। पहला वालरेशियन मॉडल होता है, जो गणितीय होता है और साथ ही साथ उत्पादों की मूल्यों, कारकों की मूल्यों, उनकी मांगों और आपूर्तियों और लागतों के आपसी संबंधों की समझ में आने वाले परिणामों की व्यापकता को समझाता है, एक सिमलटेनियस समीकरणों की प्रणाली में। दूसरा प्रोफेसर लियोन्टीफ के द्वारा विकसित इनपुट-आउटपुट विश्लेषण होता है। हम पहले एक गैर-गणितिक भाषा में वालरेशियन मॉडल पर ध्यान केंद्रित करते हैं।

3.12. वालरेशियन सामान्य संतुलन मॉडल The Walrasian general equilibrium model

वालरेशियन सामान्य संतुलन प्रणाली स्थिर होती है जिसमें सभी मूल्य संतुलन में होते हैं; प्रत्येक उपभोक्ता अपनी दी गई आय का तरीका बताता है जिससे उसे अधिकतम संतोष प्राप्त होता है; प्रत्येक उद्यमिता समुदाय में सभी मूल्यों और उत्पादों पर संतुलन में होती है; और उत्पादक संसाधनों की आपूर्ति और मांग संतुलन मूल्यों पर समान होती है। वालरेशियन मॉडल की चर्चा करने से पहले, हम उन धारणाओं की सूची देते हैं जिन पर इसका आधारित होता है।

3.12.1 धारणाएँAssumptions

वालरेशियन मॉडल निम्नलिखित धारणाओं पर आधारित होता है।

(1) इस धारणा के अनुसार, उपभोक्ताओं की पसंद और आयें दी गई, जानी और स्थिर होती हैं।

(2) वस्तु बाजार और कारक बाजार दोनों में पूर्ण प्रतिस्पर्धा है।

(3) उत्पादन के कारक विभिन्न व्यवसायों और स्थानों के बीच सहाज रूप से लचीले होते हैं।

(4) नियमित रूप से विस्तार की लागतें होती हैं।

(5) सभी कंपनियाँ विषयसमय लागत की अधिकतम स्थितियों में काम करती हैं।

(6) प्रत्येक उत्पादक सेवा की समान होती है।

(7) उत्पादन की तकनीकों में कोई परिवर्तन नहीं होता है।

(8) श्रम और अन्य संसाधनों का पूरा रोजगार होता है।

3.12.2. द मॉडल The Model

इन धारणाओं के तहत, अर्थव्यवस्था सामान्य संतुलन की स्थिति में होती है जहां प्रत्येक वस्तु और सेवा की मांग उसकी आपूर्ति के बराबर होती है। इससे सभी बाजार प्रतिभागियों द्वारा लिए गए निर्णयों की पूर्ण व्यापकता का संकेत होता है। प्रत्येक उपभोक्ता के लिए प्रत्येक वस्तु की खरीद के निर्णय को सभी कंपनियों के लिए प्रत्येक वस्तु की उत्पादन और बिक्री के निर्णय के साथ पूरी तरह से मेल करने की आवश्यकता होती है। उपभोक्ताओं के लिए प्रत्येक वस्तु की मांग न केवल खुद की मूल्य के आधार पर निर्भर करती है, बल्कि बाजार में उपलब्ध अन्य प्रत्येक वस्तु की मूल्य पर भी। इस प्रकार, प्रत्येक उपभोक्ता अपने उपभोक्ता द्वारा बाजार के नियमित करने वाले मूल्यों के साथ अपनी उपयुक्तता को अधिकतम करता है। उसके लिए, प्रत्येक वस्तु की सीमांत उपयुक्तता उसकी मूल्य के समान होती है। प्रत्येक सीमांत उपयुक्तता(और मूल्य) संबंधित वस्तु की मात्रा(और मूल्यों) पर भी निर्भर करती है और साथ ही अन्य वस्तु की मात्राओं(और मूल्यों) पर भी। यह इस अभिप्रेत करता है कि कमोडिटियों की मार्जिनल उपयुक्ताओं की मात्राएँ उनकी मूल्यों के साथ समानुपातिक हैं।

वालरेशियन मॉडल में प्रत्येक उपभोक्ता का मानना होता है कि वह अपनी पूरी आय का खर्च करता है, इसलिए उसका खर्च उसकी आय के समान होता है। उसकी आय बदलती रहती है और वह उस आय के मूल्यों पर जिन्हें वह अपनी उपयोगी सेवाएँ बेचकर कमाता है, पर निर्भर करती है। अन्य शब्दों में, एक उपभोक्ता उन सेवाओं की मांग के लिए आपने मूल्यों और सेवाओं की मांग के मूल्यों के साथ अपनी मानवता को अधिकतम करने के तरीके पर अपनी आय का खर्च करता है। इस प्रकार, उत्पाद की डिमांड की मांग केवल उसकी मूल्यों और सेवाओं की मांग के मूल्यों पर निर्भर करती है। इस प्रकार, उत्पाद और कारक मूल्य समय समय पर समान होते हैं।

प्रत्येक कमोडिटी की बाजार मांग प्राप्त करने के लिए हम आर्थिक निर्णय लेने वाले सभी उपभोक्ताओं की मांग को संघटित तरीके से जोड़ते हैं। क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति की मांग केवल कमोडिटीज़ और सेवाओं की मांग के मूल्यों पर निर्भर करती है, इसलिए बाजार की मांग भी इन नेटवर्कों के माध्यम से इन मूल्यों पर निर्भर करती है।

अब हम आपूर्ति पक्ष की ओर बढ़ते हैं। बाजार संरचना, प्रौद्योगिकी की स्थिति और कंपनियों के उद्देश्यों के दिए गए, कमोडिटी की मूल्य उसके उत्पादन की लागत पर निर्भर करता है। उत्पादन की लागत उन सभी उत्पादक सेवाओं की मात्राओं पर निर्भर करती है।

शब्दों में, प्रत्येक उत्पादक का मानना होता है कि वह उस कमोडिटी की मांग के लिए वह उत्पादन करेगा और बेचेगा जिस परिमाण का आवश्यकता मूलभूत औसत लागत और मार्जिनल लागत दोनों के समान होता है। प्रत्येक उत्पादक समर्थन मूल्यों के साथ अपने मार्जिनल राजस्व उत्पादनाओं के प्रति समानुपात में और मात्राओं की मूल्यों के समानुपात में विभिन्न उत्पादक सेवाओं का उपयोग करके अपने लाभ को अधिकतम करता है। इस प्रकार, बाजार में कमोडिटी की कुल आपूर्ति की लागत किस्में की हैं और उनकी मात्राओं की मूल्यों और मात्राओं की मात्राओं के प्रति उपयुक्तियों की मात्राओं की मूल्यों पर निर्भरता है।

कमोडिटी की मांग और आपूर्ति की समानता की तरह, उत्पादक सेवाओं की मांग और आपूर्ति की समानता वालरेशियन सामान्य संतुलन प्रणाली के लिए भी आवश्यक है। प्रोड्यूसरों की तरफ से उत्पन्न होने वाली उत्पादक सेवाओं की मांग प्राप्त होती है और उपभोक्ताओं की तरफ से उपलब्ध होती है। प्रोड्यूसरों की स्थिति और उद्देश्यों की दी गई स्थिति के अनुसार, किसी कमोडिटी को उत्पन्न करने में उपयोग की जाने वाली सेवा की मात्रा उस सेवा की मूल्य और सभी अन्य सेवाओं की मूल्यों के बीच के संबंध पर निर्भर करती है। दूसरी तरफ, प्रत्येक प्रोडक्टिव सेवा के मालिक की दृष्टि, उस सेवा की मात्रा जिसे वह बेचता है, उस सेवा की मूल्यों और सभी अन्य सेवाओं

की मूल्यों और कमोडिटी की मूल्यों के बीच के संबंध पर निर्भर करती है। क्योंकि अर्थव्यवस्था में पूर्ण रोजगार है, प्रोडक्टिव सेवाओं के बाजार संतुलन में होने चाहिए। इसका मतलब है कि प्रोडक्टिव सेवाओं की कुल मात्राएँ प्रस्तुत की जाती हैं और कुल मात्राओं का उपयोग किया जाता है।

इस प्रकार, जब कमोडिटी मूल्य उपभोक्ताओं की मांग को उसकी आपूर्ति के समान बनाते हैं, तो सेवा मूल्यें प्रत्येक उत्पादक सेवा की मांग को उसकी आपूर्ति के समान बनाते हैं, ताकि सभी कमोडिटी बाजार और सेवा बाजार संतुलन में हों। यह इसका भी मतलब होता है कि अर्थव्यवस्था के सभी उपभोक्ता और निर्माता संतुलन में होते हैं। इस प्रकार, वालरेशियन संतुलन एक दोहरे सेट की स्थितियों से प्राप्त होगा:

(1) "एक भावनात्मक स्थिति जिसमें प्रत्येक व्यक्ति अधिकतम संतोष पर पूर्णरूप से आग्रह कर रहा है," और

(2) "एक वस्तुत: स्थिति जिसमें हर बाजार के लिए मांग और आपूर्ति के संतुलन के माध्यम से सुनिश्चित किया गया है कि प्रत्येक व्यक्ति द्वारा प्राप्त की गई श्रेष्ठ स्थिति उसके द्वारा सभी अन्यों द्वारा प्राप्त की गई स्थिति के साथ संगमित है।"

लेकिन कैसे कमोडिटीज़ और सेवाओं की मांग और आपूर्ति के बीच समानताएँ आती हैं? वालरेशियन ने 'समूहीकरण' के सिद्धांत से इस समस्या को हल किया। मान लें कि सभी खरीदार और विक्रेता घोषित मूल्यों पर खरीदने और बेचने की मात्राएँ घोषित करते हैं। यदि नकारात्मक अधिशेष मांग हो, तो विक्रेताओं द्वारा कम मूल्य दिए जाते हैं और जब सकारात्मक अधिशेष मांग हो, तो खरीदार उच्च मूल्य देते हैं। वे ऐसी घोषणाएँ जारी रखते हैं, जब तक वे ऐसा मूल्य नहीं पाते जिससे सामान्य बाजार में संतुलन आ जाए। प्रोडक्टिव सेवाओं की खरीद और बेचने के लिए, वालरेशियन ने माना कि निर्माताओं ने "तिकट" प्रदान किए जिनसे वे घोषित मूल्यों पर निर्दिष्ट मात्राओं को खरीद सकते हैं। ये तिकट उपभोक्ताओं(निर्माता) को और सेवाओं(उपभोक्ताओं जो मालिक होते हैं) को प्रोडक्टिव सेवाओं के निर्माता(निर्माता) और आपूर्तिकर्ताओं(उपभोक्ताओं) की बीच संबंधित करते हैं। यह तब होता है जब इन अनुबंधित मूल्यों के साथ संविदा मूल्य ऐसा होता है जहाँ सेवाओं की मांग और आपूर्ति के लिए संतुलन हो, पूरे प्रणाली के लिए संतुलन मूल्य स्थापित होगा। इस प्रकार, वालरेशियन मॉडल निर्धारित करने की साथ ही सामान्य बाजार संतुलन की स्थिरता दिखाता है।

3.12.3. वालरेशियन मॉडल की आलोचना Criticism of the Walrasian model

अर्थव्यवस्था के सामान्य संतुलन के वालरेशियन मॉडल की कई सीमाएँ हैं।

- पहले, यह कई अवास्तविक मानदंडों पर आधारित है जो विश्व में मौजूद वास्तविक स्थितियों के विपरीत हैं। पूर्ण प्रतिस्पर्धा, मॉडल का आधार, एक मिथक है।
- दूसरे, यह एक स्थैतिक मॉडल है। मॉडल में सभी उपभोक्ताओं और निर्माताओं को दिन-रात एक ही प्रकार के उत्पाद का सेवन करना होता है, बिना किसी समय लग के। उनकी पसंद, पसंद और उद्देश्य समान होते हैं, और उनके आर्थिक निर्णय एक दूसरे के साथ पूरी तरह से मेल खाते हैं। वास्तविकता में, ऐसा कुछ भी नहीं होता है। निर्माता और उपभोक्ताओं कभी भी एक ही प्रकार से काम नहीं करते और सोचते हैं। पसंद और पसंद में लगातार बदलाव हो रहे हैं। स्थान से संबंधित प्रोडक्टिव सेवाओं की कोई स्थिर रिटर्न नहीं होती है और कोई भी दो उपादान सेवाएं समान होती नहीं हैं। इस प्रकार, लागत की स्थितियाँ निर्माता से निर्माता तक भिन्न होती हैं। क्योंकि दिए गए वालरेशियन स्थितियाँ लगातार बदल रही होती हैं, सामान्य संतुलन की दिशा में चलने की कोशिश कभी भी बाधित होती है और इसकी प्राप्ति कभी भी एक इच्छाशक्ति साबित होती है।

आखिरकार, मॉडल की पूरी वालरेशियन मॉडल की सभी परिस्थितिकियों के लिए हटाना संभव नहीं है, जिन्हें एक समय में समतुल्य समीकरण में टूटता है। इस प्रकार, यह मॉडल उनकी आवश्यकताओं के सेट के रूप में बना है जो बिना उपस्थिति में टूट जाते हैं। इस प्रकार, यह मॉडल पर समूचे सेट के उत्तरदायित्व और स्थिरता दिखाता है। समस्याओं का उलझने का कारण बनते हैं।

3.12.4. वालरेशियन मॉडल के उपयोग Uses of The Walrasian Model

वालरेशियन के सामान्य संतुलन विश्लेषण में कुछ महत्वपूर्ण उपयोग भी हैं।

- **अर्थव्यवस्था के संतुलन का एक चित्र।A picture of the equilibrium of the economy.**

यह एक निजी उद्यमिता अर्थव्यवस्था की संतुलन में एक चित्र प्रस्तुत करता है, जहाँ उपभोक्ताएँ अधिकतम संतोष की स्थिति में समर्पित हैं

और निर्माताएँ अधिकतम लाभ की स्थिति में। संसाधनों का कोई अपव्यय नहीं होता। सभी पूरी तरह से रोजगार में होते हैं। आर्थिक कुशलता अधिकतम होती है, ताकि समुदाय की आर्थिक कल्याण में वृद्धि हो। इस प्रकार, यह अर्थव्यवस्था के पैटर्न के निर्धारकों को समझने में मदद करता है।

- **आर्थिक प्रणाली की कामना को समझने के लिए। To understand the desire of the economic system.** इस सिद्धांत के अलावा, सिद्धांत एक स्थिति के स्केमैटिक बिंदु से भी अर्थिक प्रणाली के वास्तविक कामना को समझने के लिए प्रारंभ के बिंदु के रूप में है। हम जान सकते हैं कि क्या अर्थव्यवस्था कार्यकुशलता से काम कर रही है, या क्या इसके सहमत नहीं होने का कोई असंगतता है। संतुलनहीनता की समस्या और संतुलन को पुनर्स्थापित करने की कामना को इस विश्लेषण की मदद से किया जा सकता है।

- **बाजार की जटिल समस्याओं को समझने के लिए। To understand the complex problems of the market.** सामान्य संतुलन विश्लेषण और भी आत्मनिर्भर आर्थिक घटना के परिणामों की पूर्वानुमानित करने में भी मदद करता है। मान लीजिए कि कॉमोडिटीA की मांग बढ़ जाती है जिससे इसकी मूल्य में वृद्धि हो सकती है। इसका परिणामस्वरूप, इसके सहायकों की कीमतों को कम कर दिया जाता है और पूरकों की कीमतों को बढ़ा दिया जाता है। इनमें से कुछ मात्रा में ए के लिए मांग कम हो सकती है।A की मांग को इसके लिए और भी प्रभावित किया जा सकता है अगर प्रोडक्टिव सर्विसेज की कीमतें भी वृद्धि की दिशा में होती हैं। इस प्रकार, सामान्य संतुलन विश्लेषण बाजार की जटिल रिश्तों की प्रकृति को कदम-कदम पर समझने में मदद करता है।

- **मूल्य प्रक्रिया के काम को समझने के लिए। To understand the working of the value process.** सामान्य संतुलन विश्लेषण भी अर्थव्यवस्था में मूल्यों के कार्यों की समझाने में सहायक है। जैसे ही संबंधित मूल्यों में परिवर्तन होता है, तीन मुख्य निर्णय पूरी अर्थव्यवस्था के लिए बनाए जाते हैं: क्या प्रोड्यूस करना है और कितना प्रोड्यूस करना है, कैसे प्रोड्यूस करना है, और जब वस्तु का उत्पादन हो तो कौन उन्हें खरीदेगा। ये निर्णय व्यक्तिगत निर्माताओं और उपभोक्ताओं द्वारा लिए जाते हैं क्योंकि प्रत्येक कॉमोडिटी और सेवा जिन्हें वे प्रोड्यूस करना, बेचना और खरीदना चाहते हैं, उनकी मांग और आपूर्ति में परिवर्तनों के प्रति प्रतिक्रिया करती है। सामान्य संतुलन विश्लेषण मूल्य परिवर्तनों के प्रभावित करने वाले व्यक्तिगत निर्णयों की विभिन्न श्रेणियों को एकत्र करने में मदद करता है।

- **इनपुट-आउटपुट विश्लेषण को समझने के लिए। To understand input-outputAnalysis.** सामान्य संतुलन विश्लेषण की प्रमुख महत्वपूर्णता इसमें है जो प्रोफेसर लियोनटीफ ने विकसित किया है। इस विश्लेषण को सामान्य संतुलन विश्लेषण के एक प्रमुख प्रकार के रूप में माना जाता है, जहाँ घरेलूओं और उद्योगों को अर्थव्यवस्था की इनपुट और आउटपुट की अदृश्य आपसी आवश्यकता के सिस्टम में जोड़ा जाता है। यह विश्लेषण पिछड़े क्षेत्रों और देशों के आर्थिक विकास की योजना बनाने के लिए अधिकतर उपयोग किया जा रहा है।

- **आधुनिक मौद्रिक और कल्याण अर्थशास्त्र के आधार। The foundations of modern monetaryAnd welfare economics.** हाल के वर्षों में, सामान्य संतुलन विश्लेषण को मौद्रिक सिद्धांत और कल्याण अर्थशास्त्र में भी विस्तारित किया गया है, जिससे उन्हें अर्थशास्त्र के और वास्तविक क्षेत्रों में बेहतर अध्ययन का आधार मिलता है।

3.13. अभ्यास प्रश्न

1. आर्थिक सिद्धांत में संतुलन के अवश्यकता की महत्वपूर्णता पर चर्चा करें।
2. गतिशील संतुलन की परिभाषा दें। उपयुक्त डायग्रामों के साथ साबित करें कि संतुलन समय-समय पर वास्तव में प्राप्त होता है।
3. संतुलन की परिभाषा दें और कॉबवेब सिद्धांत की मदद से दिखाएं कि दिए गए स्थितियों के तहत संतुलन वास्तव में प्राप्त किया जा सकता है।
    (a) संतुलन की परिभाषा दें और स्थिर और गतिशील संतुलन के बीच अंतर की व्याख्या करें।
    (b) साबित करें कि संतुलन समय-समय पर वास्तव में प्राप्त किया जा सकता है।
    (c) संतुलन के अवधारणा के वास्तविक प्रयोग की दिखाएं।

4. "संतुलन की अवधारणा आधुनिक आर्थिक विश्लेषण में अत्यंत महत्वपूर्ण है।" इस पर चर्चा करें।

5. आर्थिक विश्लेषण से संतुलन की अवधारणा का व्याख्यान करें।

6. आर्थिक में आंशिक और सामान्य संतुलन दृष्टिकोण की तुलना करें।

इकाई 04 : आर्थिक प्रणालीया : पूंजीवाद, समाजवादी तथा मिश्रित अर्थव्यवस्थाएं

इकाई की रूपरेखा

4.0. उद्देश्य

4.1. प्रस्तावना

4.2. आर्थिक प्रणाली का अर्थ एवं परिभाषा

4.3. आर्थिक प्रणाली की प्रमुख विशेषताएँ

4.4. पूंजीवादी आर्थिक प्रणाली

4.4.1. पूँजीवादी आर्थिक प्रणाली के लक्षण

4.4.2. पूँजीवादी आर्थिक प्रणाली के गुण

4.4.3. पूँजीवादी आर्थिक प्रणाली के दोष

4.5. समाजवादी आर्थिक प्रणाली

4.5.1. समाजवादी आर्थिक प्रणाली के लक्षण

4.5.2. समाजवादी आर्थिक प्रणाली के गुण

4.5.3. समाजवादी आर्थिक प्रणाली के दोष

4.6. मिश्रित आर्थिक प्रणाली

4.6.1. मिश्रित आर्थिक प्रणाली के लक्षण

4.6.2. मिश्रित आर्थिक प्रणाली के गुण

4.6.3. मिश्रित आर्थिक प्रणाली के दोष

4.7. शब्दावली

4.8. सरांश

4.9. संदर्भ ग्रन्थ सूची

4.0. उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात हम-

1. विभिन्न आर्थिक प्रणालियों को समझ सकेंगे।
2. विभिन्न आर्थिक प्रणालियों के मध्य अंतर स्पष्ट कर सकेंगे।
3. आर्थिक प्रणालियों के गुण एवं दोषों की पहचान कर सकेंगे।

4.1. प्रस्तावना

प्रत्येक देश या उसकी अर्थव्यवस्था को कुछ मुख्य समस्याओं को हल करना होता है, जैसे कौन-कौन सी - वस्तुओं का उत्पादन किया जाए, वस्तुओं का उत्पादन किस प्रकार किया जाए, उत्पादन किसके लिए किया जाए आदि। इन समस्याओं को हल करने के लिए सरकार को निर्णय लेना होते हैं। सरकार द्वारा लिए गए निर्णयों के आधार पर ही न केवल आर्थिक समस्याएँ हल होती हैं, वरन् उस देश के निवासी अपना जीवनयापन करते हैं और सम्पूर्ण आर्थिक गतिविधियों का संचालन होता है।

यदि हम विभिन्न देशों की अर्थव्यवस्थाओं का अध्ययन करें तो प्रतीत होगा कि विश्व के कुछ देशों में उत्पादन एवं वितरण का कार्य सरकार के द्वारा किया जाता हैं। इन देशों में उत्पत्ति के लिए साधनों पर सरकार का स्वामित्व होता है। ऐसे देशों में क्या उत्पादन किया जाए? किन-किन वस्तुओं का उत्पादन किया जाए? उत्पादन किसके लिए किया जाए? आदि विभिन्न समस्याओं का हल सरकार के द्वारा किया जाता है। ऐसी व्यवस्था को समाजवाद का नाम दिया जाता है।

इसके विपरीत अनेक ऐसे देश भी है जहाँ सरकार का हस्तक्षेप बहुत कम होता है। अर्थव्यवस्था की सभी समस्याओं का हल बाजार शक्तियों के द्वारा होता है। उत्पत्ति के साधनों पर सरकार का स्वामित्व न होकर व्यक्तियों का होता है। ये व्यक्ति बाजार की माँग के आधार पर वस्तुओं का उत्पादन करते हैं। उत्पादन उन्हीं के लिए किया जाता है जिनके पास उन वस्तुओं को खरीदने की क्षमता या धन होता है। इस प्रकार की व्यवस्था को पूंजीवाद के नाम से जाना जाता है।

इसके साथ ही विश्व में अनेक देश ऐसे भी हैं जहाँ पर मिली जुली पद्धत्ति को अपनाया जाता है। ऐसे- देशों में जहाँ कुछ साधनों पर सरकार का स्वामित्व होता है तो वहीं अनेक साधनों का स्वामित्व व्यक्तियों के पास होता है। अर्थव्यवस्था की मुख्य समस्याओं का निर्णय सरकार एवं निजी व्यक्तियों के द्वारा मिल जुलकर लिया जाता है। ऐसी अर्थव्यवस्थाओं में मिली-जुली या मिश्रित प्रक्रिया को अपनाया जाता है।

4.2 आर्थिक प्रणाली का अर्थ एवं परिभाषा

किसी देश में आर्थिक क्रियाओं का संचालन जिस व्यवस्था से होता है उसे आर्थिक प्रणाली कहा जाता है। समाज द्वारा निर्धारित इस व्यवस्था के द्वारा ही अर्थव्यवस्था से सम्बन्धित सभी निर्णय लिए जाते हैं, जैसे किन-किन वस्तुओं का उत्पादन किया जाना है? उत्पादन कैसे किया जाना है? उत्पादन किसके लिए किया जाना है? आदि। इन्हीं निर्णयों के आधार पर ही अर्थव्यवस्था में उपभोग, उत्पादन, विनिमय एवं वितरण का निर्धारण होता है। देश के निवासियों का जन-जीवन इन्हीं निर्णयों पर निर्भर करता है। इस प्रकार आर्थिक प्रणाली को निम्न प्रकार से परिभाषित किया जाता है-

प्रो. ए. जे. ब्राउन के शब्दों में, "आर्थिक प्रणाली एक माध्यम है जिसके द्वारा लोग अपनी जीविका का उपार्जन करते हैं।"

प्रो. एम. गोटालिक के अनुसार, "आर्थिक प्रणाली मनुष्य के जटिल सम्बन्धों के उन तरीकों का अध्ययन है जिसके द्वारा अनेक निजी व सार्वजनिक आवश्यकताओं की सन्तुष्टि के लिए सीमित साधनों का उपयोग किया जाता है।"

इस प्रकार स्पष्ट है कि आर्थिक प्रणाली से आशय उस संस्थागत ढाँचे से है जिसके अन्तर्गत मानव का जीवन संचालित होता है। यह एक व्यापक धारणा है और समय तथा परिस्थितियों के अनुसार इसके स्वरुप में परिवर्तन होता रहता है।

4.3 आर्थिक प्रणाली की प्रमुख विशेषताएँ

संक्षेप में आर्थिक प्रणाली की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं-

1. आर्थिक प्रणाली का मुख्य उद्देश्य आर्थिक समस्याओं को हल करना है।
2. अर्थव्यवस्था की मुख्य समस्याएँ है क्या उत्पादन किया जाए, उत्पादन किसके लिए किया जाए और उत्पादन कैसे किए जाए।
3. अर्थव्यवस्था में मानवीय आवश्यकताओं को सन्तुष्ट करने वाले साधन सीमित मात्रा में होते हैं।
4. आर्थिक प्रणाली के द्वारा मानवीय आवश्यकताओं की सन्तुष्टि के लिए साधनों के प्रयोग के तरीकों का चुनाव किया जाता है।
5. आर्थिक प्रणाली संस्थाओं का समूह है।
6. आर्थिक प्रणाली का सम्बन्ध एक देश या देशों के समूह से होता है।
7. आर्थिक प्रणाली परिवर्तनशील होती है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि अर्थव्यवस्था से सम्बन्धित विभिन्न समस्याओं को हल करने के लिए विश्व में मुख्यतः तीन प्रकार की आर्थिक प्रणालियाँ पाई जाती हैं, यथा पूँजीवाद, समाजवाद और मिश्रित इन तीनों प्रणालियों के मध्य बुनियादी अन्तर का आधार यह है कि उत्पत्ति के साधनों का स्वामित्व किसके पास है और इन साधनों का उपयोग किस प्रकार से होता है। इन तीनों प्रणालियों का विस्तृत विवरण निम्नानुसार हैं-

4.4 पूँजीवादी आर्थिक प्रणाली

विश्व के अनेक देशों यथा- अमरीका, इंग्लैण्ड, फ्रांस, इटली, जापान, आस्ट्रेलिया आदि में पूँजीवादी आर्थिक प्रणाली विद्यमान है। पूँजीवादी अर्थव्यवस्था को अनेक नामों से जाना जाता है, जैसे बाजार अर्थव्यवस्था, निर्बाधावादी अर्थव्यवस्था, अनियोजित अर्थव्यवस्था आदि। पूँजीवाद को निम्न प्रकार से परिभाषित किया जाता है- प्रो. लूक्स एवं छूट "पूँजीवाद वह अर्थव्यवस्था है जिसमें निजी स्वामित्व और मनुष्यकृत या प्राकृतिक साधनों को निजी लाभ के लिए उपयोग किया जाता है।"

प्रो. जॉन स्ट्रेची कहते हैं कि पूँजीवाद शब्द से आशय उस आर्थिक प्रणाली से है जिसमें कारखानों एवं खेतों पर व्यक्तियों का स्वामित्व होता है। पूँजीवाद में संसार प्रेम या स्नेह से नहीं वरन् लाभ के उद्देश्य से कार्य करता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि पूँजीवाद में वस्तुओं के उत्पादन एवं वितरण पर निजी व्यक्तियों का अधिकार होता है तथा वे संग्रहित पूँजी का उपयोग अपने लाभ कमाने के लिए करते हैं।

4.4.1 पूँजीवादी आर्थिक प्रणाली के लक्षण

पूँजीवादी आर्थिक प्रणाली के प्रमुख लक्षण निम्नलिखित हैं-

1. **उत्पत्ति के साधनों पर निजी स्वामित्व**: इसमें उत्पत्ति के सभी साधनों पर निजी व्यक्तियों का स्वामित्व होता है। इस प्रकार पूँजीवादी अर्थव्यवस्था में धन कमाने और उसका अपनी इच्छा के अनुसार उपयोग करने का अधिकार होता है।
2. **आर्थिक स्वतंत्रता:** पूँजीवादी अर्थव्यवस्था में कोई भी व्यवसाय चुनने और उसे इच्छानुसार चलाने की स्वतंत्रता रहती है। उपभोक्ताओं को भी अपनी रुचि एवं आदत के अनुसार वस्तुओं को चुनने की स्वतंत्रता रहती है।
3. **लाभ की भावना:** इस प्रणाली में लाभ की भावना का सर्वोच्च स्थान है। यही कारण है कि लाभ को पूँजीवादी प्रणाली का हृदय कहा जाता है। पूँजीवाद में सभी गतिविधियों का संचालन लाभ के लिए किया जाता है। उद्यमियों का मुख्य लक्ष्य अपने लाभ को बढ़ाना होता है।
4. **शोषण पर आधारित**: पूँजीवादी व्यवस्था में दो वर्ग होते हैं, यथा- पूँजीपति वर्ग और श्रमिक वर्ग। पूँजीपति वर्ग अपने लाभ को बढ़ाने के लिए बहुत कम मजदूरी देता है। इससे श्रमिकों का शोषण होता है। इसीलिए कहा जाता है कि पूँजीवादी आर्थिक प्रणाली शोषण पर आधारित रहती है।
5. **मूल्य यंत्र(Price Mechanism)**: पूँजीवादी अर्थव्यवस्था का संचालन 'मूल्य यंत्र' के द्वारा होता है। मूल्य यंत्र से आशय अर्थव्यवस्था में विद्यमान माँग एवं पूर्ति की शक्तियों से है। उदाहरणार्थ जब किसी वस्तु के मूल्य में वृद्धि होती है, तब उत्पादक उस वस्तु के उत्पादन में वृद्धि करते हैं। इससे उत्पादक के लाभ में भी वृद्धि होती है। इसके विपरीत, जब माँग की तुलना में पूर्ति अधिक हो जाती है, तब मूल्य में कमी होने लगती है। मूल्य में कमी होने की स्थिति में उत्पादक को हानि होने लगती है जिससे वह उत्पादन कम कर देता है। इस प्रकार मूल्य यंत्र माँग एवं पूर्ति के माध्यम से सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था का संचालन होता है।
6. **प्रतियोगिता**: पूँजीवादी आर्थिक प्रणाली के अन्तर्गत उत्पादकों में आपस में कम मूल्य पर अधिक वस्तुएँ बेचने की प्रतियोगिता होती है। उपभोक्ता भी कम से कम मूल्य पर अच्छी वस्तुएँ खरीदने का प्रयास करते हैं। उत्पादकों में परस्पर प्रतियोगिता होने से अकुशल उत्पादक प्रतियोगिता से हट जाते हैं। इस प्रकार प्रतियोगिता से अर्थव्यवस्था की कार्यक्षमता बढ़ती है। इससे उपभोक्ताओं को सस्ती एवं अच्छी वस्तुएँ प्राप्त होती हैं।
7. **अनियोजित अर्थव्यवस्था नियोजित अर्थव्यवस्था:** में सभी निर्णय केन्द्रीय सत्ता या सरकार द्वारा लिए जाते हैं। किन्तु, पूँजीवाद में अर्थव्यवस्था अनियोजित होती है तथा निर्णय मूल्य यंत्र या माँग और पूर्ति की बाजार शक्तियों के द्वारा लिए जाते हैं। सरकारी हस्तक्षेप नहीं होता।
8. **व्यापार चक्रों का होना:** पूँजीवादी आर्थिक प्रणाली में उत्पादक एवं उपभोक्ताओं के मध्य समन्वय नहीं होता है। फलतः व्यापार चक्र क्रियाशील होते हैं। व्यापार चक्र से आशय अर्थव्यवस्था में तेजी एवं मन्दी की पुनरावृत्ति से है। अति उत्पादन से मन्दी की और कम उत्पादन से तेजी की स्थिति निर्मित होती है।
9. **उपभोक्ता की प्रभुसत्ता:** पूँजीवाद में उत्पादन से सम्बन्धित सभी निर्णय उपभोक्ता की इच्छा के आधार पर लिए जाते हैं। इसीलिए उसे राजा कहा जाता है। उत्पादक उन्हीं वस्तुओं का उत्पादन करता है जिनकी माँग उपभोक्ताओं द्वारा की जाती है। इसी कारण

उपभोक्ता को प्रभुसत्ता सम्पन्न माना जाता है।

4.4.2. पूँजीवादी आर्थिक प्रणाली के गुण

पूँजीवादी आर्थिक प्रणाली में पाए जाने वाले प्रमुख गुण निम्नलिखित हैं-

1. **स्व-संचालित प्रणाली:** इस प्रणाली में सरकारी हस्तक्षेप नहीं होता। सभी आर्थिक गतिविधियों का संचालन 'मूल्य यंत्र' अथवा बाजार शक्तियों के आधार पर होता है। फलत: इस प्रणाली को स्वसंचालित प्रणाली कहा जाता है।

2. **उत्पादन एवं आय में वृद्धि**: पूँजीवादी प्रणाली के द्वारा पश्चिमी देशों में तेजी से प्रगति हुई है। - इन देशों में लाभ की भावना एवं निजी सम्पत्ति के लालच में तेजी से विकास हुआ है। इस प्रणाली में प्रतियोगिता की भावना से तकनीकी स्तर में सुधार होता है। फलतः पूँजीवादी व्यवस्था में उत्पादन तथा आय में तेजी से वृद्धि होती है।

3. **परिवर्तनशीलता पूँजीवाद:** में परिस्थितियों के अनुसार कार्य करने का गुण है। परिस्थितियों के - अनुसार सरकार की नीतियों एवं कार्यक्रमों में परिवर्तन होते है। औद्योगिक नीति, कृषि नीति, व्यापार नीति, श्रम नीति आदि में देश की परिस्थितियों के अनुसार बदलाव होता रहता है, किन्तु पूँजीवादी प्रणाली अपने मूल दर्शन, यथा लाभ कमाना के अनुसार संचालित होती रहती है।

4. **व्यक्तिगत स्वतंत्रता:** इस प्रणाली में व्यक्ति अपनी इच्छानुसार व्यवसाय का चुनाव कर सकता है। उपभोक्ता भी अपनी पसन्द के अनुसार वस्तुएँ चुन सकता है। धन कमाने और उसे खर्च करने की भी पूर्ण स्वतंत्रता रहती है। संक्षेप में, पूँजीवाद के अन्तर्गत आर्थिक क्रियाओं के सम्बन्ध में पूर्ण स्वतंत्रता होती है।

5. **संसाधनों का कुशलतम उपयोग:** पूँजीवाद के अन्तर्गत उत्पादक कम से कम साधनों के द्वारा अधिक से अधिक उत्पादन करने का प्रयास करता है। अपने लाभ को बढ़ाने के उद्देश्य से संसाधनों की फिजूलखर्ची को नियंत्रित रखता है। प्रतियोगिता के कारण भी उत्पत्ति के साधनों का कुशलतम उपयोग होता है।

6. **योग्यतानुसार प्रतिफल**: इस प्रणाली में व्यक्ति की योग्यता समुचित रुप से पुरस्कृत होती है । प्रत्येक व्यक्ति को अपनी कुशलता एवं योग्यता प्रदर्शित करने का अवसर मिलता है। संक्षेप में, पूँजीवादी प्रणाली में प्रतिफल योग्यता के अनुसार प्राप्त होता है।

7. **प्रजातांत्रिक स्वरुप:** पूँजीवाद का एक महत्वपूर्ण गुण यह है कि इसका स्वरुप प्रजातांत्रिक होता है। सभी प्रमुख निर्णय सरकार द्वारा बहुमत के आधार पर किए जाते हैं। यही कारण है कि इस प्रणाली में उपभोक्ता की इच्छा और रुचि के अनुसार ही वस्तुओं का उत्पादन होता है। इस प्रकार पूँजीवाद में उपभोक्ताओं के बहुमत का पालन किया जाता है और सभी आर्थिक क्रियाएँ इसी मूल भावना के आधार पर संचालित होती हैं।

8. **आर्थिक विकास की तीव्र गति**: विश्व के विकसित देशों का इतिहास यह बताता है कि पूँजीवादी देशों में विकास की दर अधिक रही है। लाभ की भावना पर आधारित होने के कारण इस प्रणाली में विनियोग एवं पूँजीनिर्माण की दर भी अधिक रहती है। उत्पादक वर्ग जोखिम उठाकर नई-नई तकनीकी का विकास करते है। फलतः आर्थिक विकास की दर अधिक रहती है।

4.4.3. पूँजीवादी आर्थिक प्रणाली के दोष

1. **आय एवं धन की असमानता:** पूँजीवादी प्रणाली का सबसे बड़ा दोष यह है कि देश की सम्पत्ति कुछ मुट्ठी भर लोगों के पास जमा हो जाती है और अधिकांश लोग गरीबी एवं बेरोजगारी का जीवन व्यतीत करते हैं। इससे समाज में आय एवं धन की असमानताएँ बढ़ती हैं।

2. **वर्ग संघर्ष का जन्म:** इस प्रणाली में पूँजीपति वर्ग तथा श्रमिक वर्ग दोनों में टकराव होने लगता है। इससे अर्थ-व्यवस्था में हड़ताल, तालाबन्दी तथा तोड़फोड़ आदि देखने को मिलती है। इस प्रकार समाज में वर्ग संघर्ष का जन्म होता है।

3. **आर्थिक अस्थिरता**: पूँजीवादी आर्थिक प्रणाली का संचालन मूल्य यंत्र के द्वारा होता है। अर्थव्यवस्था को नियंत्रित करने के लिए कोई केन्द्रीय सत्ता नहीं होती। परिणामस्वरुप अर्थव्यवस्था में तेजी एवं मन्दी की स्थिति निर्मित होती है। फलतः अर्थव्यवस्था में अस्थिरता पैदा होती है और व्यापार चक्र क्रियाशील होते हैं।

4. **बेरोजगारी**: इस प्रणाली में पूँजीपति वर्ग अपने लाभ को बढ़ाने के लिए मशीनों का उपयोग करता है। इससे श्रमिकों की माँग में

कमी आती है तथा बेरोजगारी बढ़ जाती है। मन्दी की स्थिति में तो बेरोजगारी की समस्या अत्यधिक भयावह हो जाती है ।

5. **शोषण आधारित व्यवस्था**: पूँजीवादी आर्थिक प्रणाली में उत्पादक वर्ग अपने लाभ को अधिकतम करने के उद्देश्य से श्रमिकों को बहुत कम मजदूरी देते हैं। श्रमिकों से काम भी अधिक लिया जाता है। स्त्रियों एवं बच्चों को काम में लगाया जाता है, किन्तु उन्हें समुचित मजदूरी नहीं दी जाती। अतः यह कहा जाता है कि यह प्रणाली शोषण पर आधारित है।

6. **मानवीय कल्याण की उपेक्षा**: पूँजीवाद में उत्पादन उन्हीं लोगों के लिए किया जाता है जिनके पास खरीदने की क्षमता होती है। परिणामस्वरूप गरीब लोगों की जरुरतों की वस्तुओं का कम तथा विलासिता की वस्तुओं का अधिक उत्पादन होता है। सरकार का कार्यक्षेत्र सीमित होता है जिससे गरीब वर्ग के कल्याण की ओर ध्यान नहीं दिया जाता। फलतः इस प्रणाली में मानवीय कल्याण की उपेक्षा होती है।

7. **क्षेत्रीय असमानताएँ:** पूँजीवादी उत्पादन प्रणाली में केवल कुछ ही क्षेत्रों का विकास होता है तथा शेष पिछड़े रह जाते हैं। कारण यह है कि पूंजीपति उन्ही स्थानों पर उद्योग लगाते हैं जहाँ उन्हें अधिक लाभ होता है। इससे आर्थिक विकास का लाभ भी कुछ ही लोगों को मिल पाता है। फलतः क्षेत्रीय विषमताएँ बढ़ती हैं तथा लोगों में असन्तोष पैदा होता है।

8. **सामाजिक परिजीविता**: पूँजीवाद में उत्तराधिकारी प्रथा के कारण पूँजीपतियों को अपार सम्पत्ति - बिना किसी मेहनत के पूर्वजों से प्राप्त हो जाती है। यह वर्ग बिना किसी मेहनत के पूर्वजों की सम्पत्ति का उपभोग करता है। इसी को सामाजिक परिजीविता कहा जाता है। संक्षेप में, पूँजीवादी व्यवस्था में समाज का एक वर्ग बिना किसी मेहनत के दूसरों द्वारा अर्जित धन पर जीवित रहता है। समाजवादियों के अनुसार यह एक बुराई है।

4.5. समाजवादी आर्थिक प्रणाली

समाजवाद का जन्म पूँजीवादी प्रणाली के दोषों को दूर करने के लिए हुआ है। कार्ल मार्क्स को समाजवाद का जनक माना जाता है। इस आर्थिक प्रणाली में उत्पत्ति के साधनों पर व्यक्तिगत स्वामित्व न होकर सामाजिक स्वामित्व होता है। समाजवाद को परिभाषित करते हुए प्रो. डिकिन्सन ने लिखा है, "समाजवाद समाज की एक ऐसी आर्थिक प्रणाली है जिसमें उत्पत्ति के भौतिक साधनों पर सामाजिक स्वामित्व होता है तथा उनका संचालन एक सामान्य योजना के अन्तर्गत, सम्पूर्ण समाज के प्रतिनिधि एवं उसके प्रति उत्तरदायी संस्थाओं द्वारा किया जाता है। समाज के सभी सदस्य समान अधिकारों के आधार पर ऐसे नियोजन एवं समाजीकृत उत्पादन के लाभों के अधिकारी होते हैं।"

4.5.1. समाजवादी आर्थिक प्रणाली के लक्षण

समाजवादी आर्तढ़ीक प्रणाली के मुख्य लक्षण निम्नलिखित हैं-

1. **उत्पादन के साधनों पर सामाजिक स्वामित्व**: समाजवादी आर्थिक प्रणाली में उत्पत्ति के साधनों का प्रयोग सामाजिक कल्याण के लिए किया जाता है। इसमें व्यक्तिगत लाभ की भावना शून्य रहती है। चूँकि इस प्रणाली में उत्पत्ति के साधनों का स्वामित्व, सरकार या समाज के पास होता है। फलतः इस प्रणाली में आर्थिक शोषण की कोई सम्भावना नहीं रहती तथा सामाजिक कल्याण में वृद्धि होती है।

2. **आर्थिक नियोजन:** समाजवादी प्रणाली एक नियोजित प्रणाली होती है। इसमें केन्द्रीय नियोजन का महत्वपूर्ण स्थान होता है। उत्पादन से सम्बन्धित सभी निर्णय केन्द्रीय नियोजन तंत्र द्वारा लिये जाते हैं। फलतः आर्थिक विकास भी तेजी से होता है।

3. **आर्थिक समानता:** इस प्रणाली में उत्पादन के साधनों पर राज्य का नियंत्रण होता है और साधनों का प्रयोग समाज के हित के लिए किया जाता है। इस प्रणाली में व्यक्तिगत लाभ का कोई स्थान नहीं होता। फलत: समाज में आर्थिक समानता पाई जाती है।

4. **शोषण की समाप्ति:** समाजवादी आर्थिक प्रणाली में उत्पादन एवं वितरण पर सरकार का स्वामित्व एवं नियंत्रण होता है। फलतः शोषण का प्रश्न ही नहीं उठता। श्रमिकों को उनके श्रम का समुचित प्रतिफल दिया जाता है। उत्पादन में श्रमिकों की भागीदारी होती है और उन्हें लाभ में से पर्याप्त हिस्सा प्राप्त होता है। अत: इस प्रणाली में शोषण समाप्त हो जाता है।

5. **जीवन निर्वाह के लिए श्रम की आवश्यकता:** इस प्रणाली में प्रत्येक व्यक्ति को अपने जीवन यापन हेतु श्रम करना होता है। इससे दूसरों की आय पर जीवन यापन करने वाला वर्ग समाप्त हो जाता है। प्रत्येक व्यक्ति अपनी योग्यता के अनुसार कार्य करता है और बदले में उसे अपनी आवश्यकतानुसार प्रतिफल प्राप्त होता है।

6. **पूर्ण रोजगार की प्राप्ति:** समाजवाद में उपलब्ध श्रमिकों के अनुसार आर्थिक गतिविधियों का - संचालन होता है। इससे श्रमशक्ति के समुचित उपयोग पर पूर्ण ध्यान दिया जाता है। आर्थिक तेजी एवं मन्दी भी पैदा नहीं होती। फलतः बेरोजगारी की समस्या पैदा नहीं होती।

7. **आर्थिक स्थायित्व**: इस प्रणाली में आर्थिक गतिविधियों का संचालन नियोजित ढंग से किया जाता - है। इससे तेजी एवं मन्दी की समस्या पैदा नहीं होती। इस व्यवस्था में वस्तुओं का उत्पादन उनकी माँग के अनुसार किया जाता है जिससे अर्थव्यवस्था में स्थायित्व बना रहता है। फलतः व्यापार चक्र जैसी समस्या पैदा नहीं होती।

8. **कीमत- तंत्र की समाप्ति**: समाजवाद में वस्तुओं की कीमतों का निर्धारण सरकार द्वारा किया जाता है। इससे बाजार की शक्तियों का स्थान गौण हो जाता है तथा मूल्य तंत्र भी कार्यशील नहीं रहता। उत्पादकों में होने वाली परस्पर प्रतियोगिता भी समाप्त हो जाती है। विज्ञापन एवं प्रचार प्रसार पर होने वाला व्यय भी समाप्त हो जाता है।

4.5.2. समाजवादी आर्थिक प्रणाली के गुण

समाजवादी आर्थिक प्रणाली के प्रमुख गुण निम्नलिखित हैं-

1. **संसाधनों का अनुकूलतम प्रयोग:** समाजवादी प्रणाली में केन्द्रीय नियोजन होने के कारण उत्पत्ति के साधनों का अनुकूलतम प्रयोग सम्भव होता है। नियोजन के द्वारा संसाधनों को कम उत्पादकता वाले क्षेत्र से हटाकर अधिक उत्पादकता वाले क्षेत्र में प्रयोग किया जाता है। साथ ही इसमें अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों की आर्थिक क्रियाओं में सामंजस्य स्थापित किया जाता है। इससे साधनों का अनुकूलतम उपयोग होता है।

2. **आर्थिक स्थायित्व:** समाजवादी प्रणाली में केन्द्रीय नियोजन के कारण उपभोग तथा उत्पादन दोनों - क्षेत्रों में पारस्पारिक समन्वय पाया जाता है जिसके कारण अर्थव्यवस्था में अति उत्पादन या कम उत्पादन की स्थिति उत्पन्न नहीं होती। परिणामस्वरूप अर्थ-व्यवस्था में आर्थिक स्थायित्व बना रहता है।

3. **आर्थिक समानता:** समाजवादी प्रणाली में निजी संपत्ति, उत्तराधिकार के नियम एवं लाभ कमाने की प्रवृत्ति का कोई स्थान नहीं होता। संपत्ति एवं साधनों पर राज्य का अधिकार होता है। लोगों को उनकी योग्यता एवं क्षमता के अनुसार कार्य दिया जाता है। अतः इसमें आर्थिक समानता पाई जाती है।

4. **वर्ग संघर्ष की समाप्ति:** समाजवाद में उत्पत्ति के साधनों पर सरकारी स्वामित्व होने के कारण सम्पत्ति एवं धन के आधार पर समाज का विभाजन नहीं पाया जाता। इसमें केवल एक ही वर्ग 'श्रमिक वर्ग' होता है। जिससे समाज में वर्ग संघर्ष की कोई सम्भावना नहीं होती है।

5. **शोषण की समाप्ति:** समाजवाद में न कोई पूँजीपति होता है और न कोई मजदूर। इसमें सभी लोगों को सरकार द्वारा उनकी योग्यता के आधार पर काम दिया जाता है तथा लोगों को उनकी आवश्यकता के अनुसार वस्तुएँ दी जाती हैं। फलतः शोषण की प्रवृत्ति समाप्त हो जाती है।

6. **बेरोजगारी का अन्त:** समाजवादी प्रणाली में नियोजन द्वारा यह सुनिश्चित किया जाता है कि देश - में उपलब्ध श्रम-शक्ति का पूर्ण उपयोग हो। इससे सभी व्यक्तियों को उनकी योग्यता के अनुसार काम प्राप्त हो जाता है। फलतः बेरोजगारी की समस्या पैदा नहीं होती।

7. **एकाधिकार की समाप्ति:** समाजवाद में सभी उत्पत्ति के साधनों पर सरकारी नियंत्रण होता है इससे - धन एवं उत्पत्ति के साधनों का किसी व्यक्ति या वर्ग के हाथों में केन्द्रीयकरण नहीं होता है। फलतः एकाधिकारी शक्तियों का जन्म ही नहीं होता है।

8. **सामाजिक सुरक्षा**: समाजवादी व्यवस्था में बुढ़ापे की पेंशन, बेरोजगारों को भत्ता, बीमारों को चिकित्सा, बच्चों की शिक्षा, आदि की व्यवस्था सरकार द्वारा की जाती है। अतः इस प्रणाली में लोग अपने को अधिक सुरक्षित अनुभव करते हैं।

4.5.3. समाजवादी आर्थिक प्रणाली के दोष

समाजवादी आर्थिक प्रणाली के प्रमुख दोष निम्नलिखित हैं-

1. **उपभोक्ता की संप्रभुता का अन्त:** समाजवादी प्रणाली में उपभोक्ता अपनी पंसद से वस्तुओं का उपभोग नहीं कर सकता। इसके अन्तर्गत उपभोक्ता उन्हीं वस्तुओं और उतनी ही मात्रा का उपभोग करता है, जो राज्य उन्हें देता है। अतः समाज में उपभोक्ता की संप्रभुता समाप्त हो जाती है।

2. **सत्ता का केन्द्रीयकरण**: समाजवादी आर्थिक प्रणाली में शक्तियों का केन्द्रीयकरण हो जाता है। कारण यह है कि सभी आर्थिक क्रियाओं का संचालन सरकार के द्वारा होता है। सभी स्तरों पर सरकारी आदेशों को क्रियान्वित किया जाता है। अतः इस प्रणाली में सत्ता का पूर्णतः सरकार के हाथों में केन्द्रीकरण हो जाता है तथा व्यक्तिगत स्वतंत्रता का कोई स्थान नहीं रहता।

3. **उत्पादन कार्य में प्रेरणा का अभाव:** समाजवाद में उत्पादन कार्यों पर सरकार का नियंत्रण होता है तथा व्यक्तिगत लाभ का कोई भी स्थान नहीं होता। ऐसी स्थिति में श्रमिकों को अधिक कार्य करने की कोई प्रेरणा नहीं मिलती। नवीन आविष्कार, शोध एवं उत्पादन की तकनीकी आदि के प्रयोग की भी प्रेरणा नहीं मिलती।

4. **व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का अभाव**: समाजवादी अर्थव्यवस्था में सभी महत्वपूर्ण कार्य, जैसे उत्पादन की मात्रा, वितरण का आधार वस्तु की कीमत आदि सरकार द्वारा किए जाते हैं। इस व्यवस्था में व्यक्ति की इच्छा का कोई स्थान नहीं होता। अतः समाजवाद में व्यक्तिगत स्वतंत्रता समाप्त हो जाती है।

5. **उत्पत्ति के साधनों का अविवेकपूर्ण उपयोग**: समाजवाद में उत्पादन एवं वितरण से सम्बन्धित सभी कार्य सरकार द्वारा किए जाते हैं। किन्तु इन कार्यों में अधिकारियों और कर्मचारियों को कोई व्यक्तिगत लाभ नहीं होता। फलत: त्वरित निर्णय नहीं लिए जाते। अनेक बार निर्णय गलत भी हो जाते हैं जिससे उत्पत्ति के साधनों का उचित उपयोग नहीं हो पाता।

4.6. मिश्रित आर्थिक प्रणाली

मिश्रित अर्थव्यवस्था एक ऐसी आर्थिक प्रणाली है जिसमें सार्वजनिक एवं निजी दोनों क्षेत्र साथ-साथ कार्य करते हैं। इन दोनों क्षेत्रों की भूमिका अर्थव्यवस्था में इस प्रकार निर्धारित की जाती है जिससे समाज के सभी वर्गों के आर्थिक कल्याण में वृद्धि हो सके। भारतीय योजना आयोग के अनुसार, "मिश्रित अर्थव्यवस्था में निजी एवं सार्वजनिक क्षेत्र घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित होते हैं तथा दोनों एक इकाई के दो घटकों के रूप में कार्य करते हैं।"

मिश्रित अर्थव्यवस्था में सार्वजनिक क्षेत्र में स्थापित उद्योगों का स्वामित्व, नियंत्रण एवं निर्देशन सरकार के हाथों में होता है। इसके विपरीत निजी क्षेत्र में स्थापित उद्योगों का स्वामित्व, नियंत्रण एवं निर्देशन निजी उद्योगपतियों के हाथ में होता है। इन दोनों क्षेत्रों के अतिरिक्त मिश्रित अर्थव्यवस्था में 'संयुक्त क्षेत्र' भी होता है। इसका संचालन सरकार एवं निजी उद्योगपतियों, दोनों के द्वारा मिलकर किया जाता है। इन क्षेत्रों का मुख्य उद्देश्य तीव्र गति से आर्थिक विकास करके लोगों के कल्याण में वृद्धि करना होता है। भारत में मिश्रित अर्थव्यवस्था को अपनाया गया है।

4.6.1. मिश्रित आर्थिक प्रणाली के लक्षण

मिश्रित आर्थिक प्रणाली के प्रमुख लक्षण निम्नलिखित हैं-

1. **सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्रों का सहअस्तित्व:** मिश्रित अर्थव्यवस्था की सबसे प्रमुख विशेषता यह है कि इसमें सार्वजनिक एवं निजी दोनों क्षेत्र विद्यमान रहते हैं। इन दोनों क्षेत्रों के बीच कार्यों का स्पष्ट विभाजन रहता है।

2. **लोकतान्त्रिक व्यवस्था**: मिश्रित अर्थव्यवस्था में आर्थिक क्रियाओं का निजी एवं सार्वजनिक क्षेत्र में विभाजन, नीतियों का निर्धारण, लक्ष्यों एवं उद्देश्यों का निर्धारण, संसाधनों का आबंटन आदि सभी बातों पर निर्णय जन प्रतिनिधियों द्वारा लिया जाता है। इस प्रकार मिश्रित अर्थव्यवस्था का संचालन लोकतान्त्रिक पद्धति द्वारा किया जाता है और इसमें एकाधिकारी एवं तानाशाही की प्रवृत्तियाँ नहीं पायी जाती हैं।

3. **आर्थिक नियोजन:** इस में देश के आर्थिक विकास हेतु आर्थिक नियोजन को अपनाया जाता है। इसके अन्तर्गत सरकार निजी एवं सार्वजनिक क्षेत्रों के लिए भौतिक एवं वित्तीय लक्ष्य निर्धारित करती है। दोनों ही क्षेत्र अपने निर्धारित लक्ष्यों को पूरा करने के लिए कार्य करते हैं।

4. **आर्थिक स्वतन्त्रता:** मिश्रित अर्थव्यवस्था में आर्थिक स्वतन्त्रता तो होती है, किन्तु पूँजीवाद की तुलना में कम होती है। इस

व्यवस्था में सामाजिक हित एवं कल्याण को ध्यान में रखकर व्यक्तिगत उद्यमियों को सीमित आर्थिक स्वतन्त्रता प्रदान की जाती हैं। मिश्रित अर्थव्यवस्था में पूँजीवाद की तरह उपभोक्ता की संप्रभुता तो नहीं होती परन्तु फिर भी जनता द्वारा निर्वाचित सदस्यों द्वारा आर्थिक नियोजन का स्वरूप निर्धारण होने के कारण व्यक्तिगत स्वतन्त्रता पूर्णतः समाप्त नहीं होती।

5. **मूल्य-यंत्र पर नियन्त्रण**: मिश्रित अर्थव्यवस्था में 'मूल्य यंत्र' के संचालन को सरकार जन कल्याण - की दृष्टि से अपनी कीमत नीति द्वारा नियन्त्रित करती है। इस व्यवस्था में एक सीमित सीमा तक मूल्य तंत्र क्रियाशील रहता है।

6. **लाभ उद्देश्य**: मिश्रित अर्थव्यवस्था में निजी क्षेत्र की महत्पूर्ण भूमिका रहती है। निजी क्षेत्र द्वारा अपनी आर्थिक क्रियाओं का संचालन लाभ के उद्देश्य से किया जाता है। अर्थव्यवस्था में साधनों का आवंटन इसी लाभ उद्देश्य के आधार पर किए जाते हैं।

7. **आर्थिक समानता एवं सामाजिक न्याय**: मिश्रित अर्थव्यवस्था में निजी सम्पत्ति, उत्तराधिकार तथा - अन्य स्वतन्त्रताएँ पायी जाती है, किन्तु सरकार आर्थिक विषमताओं को कम करने के लिए धनी व्यक्तियों पर कर लगाकर, उससे प्राप्त आय को गरीबों के कल्याण के लिए खर्च करती है।

8. **सामाजिक सुरक्षा**: मिश्रित अर्थव्यवस्था में सरकार सामाजिक सुरक्षा पर विशेष ध्यान देती है। सरकार वृद्धावस्था पेंशन, बेरोजगारी भत्ता, दुर्घटना एवं मृत्यु बीमा आदि के द्वारा सामाजिक सुरक्षा प्रदान करती है।

4.6.2. मिश्रित आर्थिक प्रणाली के गुण

मिश्रित आर्थिक प्रणाली के प्रमुख गुण निम्नलिखित हैं-

1. **आर्थिक विकास में तेजी:** इस प्रणाली में निजी एवं सार्वजनिक दोनों क्षेत्र एक साथ मिलकर अर्थव्यवस्था में विकास की दर में वृद्धि का प्रयास करते हैं। आर्थिक नियोजन अपनाकर साधनों का अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में अनुकूलतम आवंटन किया जाता है। इस प्रकार संसाधनों का सर्वश्रेष्ठ प्रयोग कर आर्थिक विकास की दर को तेज किया जाता है।

2. **धन के केन्द्रीयकरण एवं एकाधिकार पर रोक:** मिश्रित अर्थव्यवस्था में सरकार का निजी एवं सार्वजनिक दोनों क्षेत्रों पर पूर्ण नियन्त्रण होता है। सरकार निजी क्षेत्र की क्रियाओं को सामाजिक हित को ध्यान में रखकर नियंत्रित करती है। इसके साथ ही जनहित के लिए आवश्यक क्षेत्रों का राष्ट्रीयकरण करके एकाधिकार को समाप्त करने का प्रयास किया जाता है।

3. **स्वतन्त्रता एवं प्रेरणा की उपस्थिति**: मिश्रित अर्थव्यवस्था में व्यक्तिगत लाभ एवं स्वामित्व का - अधिकार होने के कारण उत्पादकों एवं व्यक्तियो को कार्य करने की पर्याप्त प्रेरणा मिलती है। इसमें उपभोक्ता को अपनी आय अर्जित करने और उसे व्यय करने की पर्याप्त स्वतन्त्रता होती है।

4. **सामाजिक कल्याण में वृद्धि**: इस प्रणाली में सरकार द्वारा सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था का नियन्त्रण एवं - संचालन सामाजिक कल्याण के उद्देश्य को ध्यान में रखकर किया जाता है। सरकार स्वयं कल्याणकारी नीतियों को क्रियान्वित करती है।

5. **आर्थिक विषमताओं में कमी**: इस प्रणाली में सरकार आर्थिक विषमता को कम करने के लिए - धनी व्यक्तियों पर कर लगाकर आय प्राप्त करती है तथा इस प्रकार प्राप्त आय को गरीब व्यक्तियों को सुविधायें उपलब्ध कराने पर व्यय करती है। इससे समाज में धन के वितरण की विषमता नियन्त्रण में रहती है।

6. **औद्योगिक शान्ति एवं सामाजिक सुरक्षा**: मिश्रित अर्थव्यवस्था में श्रमिकों के हितों को ध्यान में - रखकर अनेक कानून बनाए जाते हैं। सरकार द्वारा न्यूनतम मजदूरी, कार्य की दशाएँ तथा कार्य के घण्टे निर्धारित किए जाते हैं। इससे हड़ताल एवं तालाबन्दी जैसी समस्याएँ कम होती हैं। इसके साथ ही वृद्धावस्था पेंशन, दुर्घटना बीमा, बेरोजगारी भत्ता आदि की भी व्यवस्था होती है। इस प्रकार मिश्रित आर्थिक प्रणाली में सामाजिक सुरक्षा की व्यवस्था सरकार द्वारा की जाती है।

7. **मानव संसाधनों का समुचित उपयोग**: मिश्रित अर्थव्यवस्था में सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्र मिलकर आर्थिक गतिविधियों का संचालन करते हैं। सरकार द्वारा रोजगार के विशेष कार्यक्रम भी क्रियान्वित किए जाते हैं। बेरोजगारी की स्थिति में युवाओं को भत्ता भी दिया जाता है। सरकार का प्रयास यह रहता है कि मानव संसाधनों का समुचित उपयोग हो।

4.6.3. मिश्रित आर्थिक प्रणाली के दोष

मिश्रित आर्थिक प्रणाली के प्रमुख दोष निम्नलिखित हैं-

1. **दुर्बल एवं अकुशल प्रणाली:** मिश्रित अर्थव्यवस्था में पाये जाने वाले सार्वजनिक क्षेत्र एवं निजी क्षेत्र पूर्णत: विपरीत पद्धति से कार्य करने वाले क्षेत्र हैं जिसके कारण इनमें उचित सामंजस्य स्थापित नहीं हो पाता। परिणामस्वरूप अर्थव्यवस्था का कुशल संचालन नहीं हो पाता और दोनों क्षेत्र परस्पर पूरक न बनकर प्रतिस्पर्धी बन जाते हैं। अतः इसे एक दुर्बल और अकुशल प्रणाली माना जाता है।

2. **राष्ट्रीयकरण का भय:** मिश्रित प्रणाली में निजी क्षेत्र को सदैव राष्ट्रीयकरण का भय बना रहता है। इस भय के कारण उद्यमियों में विनियोग के प्रति विशेष रुचि एवं प्रेरणा उत्पन्न नहीं हो पाती। राष्ट्रीयकरण के भय के कारण विदेशी उद्यमी भी इन देशों में अपनी पूँजी का निवेश नहीं करते। प्रजातांत्रिक देशों में चुनाव के बाद सरकारें बदलती रहती हैं। इससे सरकारी नीतियों एवं कार्यक्रमों में परिवर्तन हो जाता है। इससे आर्थिक विकास की गति प्रभावित होती है।

3. **अकुशलता**: मिश्रित अर्थव्यवस्था में पूँजीवाद एवं समाजवाद दोनों के दोष विद्यमान रहते हैं। इस प्रणाली में न तो नियोजन तंत्र ठीक ढंग से कार्य कर पाता है और न ही बाजार तंत्र क्रियाशील हो पाता है। इससे अर्थव्यवस्था में अकुशलता फैल जाती है।

4. **निजी क्षेत्र को प्रोत्साहन नहीं:** इस प्रणाली में सरकार सार्वजनिक क्षेत्र को अधिक महत्व देती है। फलत: निजी क्षेत्र की उपेक्षा होती है। सरकारी नीतियाँ एवं कार्यालय भी निजी क्षेत्र के हित में नहीं होते। फलतः निजी क्षेत्र का समुचित विकास नहीं होता।

5. **विदेशी पूँजी का आगमन**: सार्वजनिक क्षेत्र के विस्तार हेतु सरकार विदेशी पूँजी को आमंत्रित करती है। इससे देश में विदेशी शक्तियों का प्रभाव बढ़ जाता है। विदेशी शक्तियाँ देश की राजनैतिक व्यवस्था को भी प्रभावित करती हैं।

6. **व्यावहारिकता का अभाव:** मिश्रित आर्थिक प्रणाली में निजी तथा सार्वजनिक क्षेत्र दोनों साथ-साथ कार्य करते हैं। इससे एक पक्ष को जो नीतियाँ लाभदायक होती है, वे दूसरे पक्ष के लिए हानिप्रद हो सकती हैं। निजी एवं सार्वजनिक क्षेत्रों में समन्वय के अभाव में परस्पर प्रतियोगिता हो जाती है। परिणामस्वरुप अर्थव्यवस्था पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

4.7. सारांश

4.8. शब्दावली

बाजार शक्तियाँ: बाजार का संचालन माँग एवं पूर्ति की शक्तियों के द्वारा होता है। इन्हीं शक्तियों से अर्थव्यवस्था में उत्पादन, उपभोग, वितरण आदि से आर्थिक क्रियाओं का निर्धारण होता है।

निर्बाधावादी अर्थव्यवस्था: वह अर्थव्यवस्था जो सरकारी हस्तक्षेप एवं नियंत्रण से पूर्णतः मुक्त रहती है, निर्बाधावादी अर्थव्यस्था कहलाती है।

मूल्य तंत्र: पूँजीवाद के अन्तर्गत किसी भी वस्तु का मूल्य उनकी माँग एवं पूर्ति की शक्तियों के द्वारा निर्धारित होता है। मूल्य निर्धारण की इस प्रक्रिया को मूल्य तंत्र कहा जाता है।

तेजी एवं मन्दी: वस्तुओं की कीमतों में क्रमशः वृद्धि को तेजी एवं कीमतों में कमी को मन्दी कहा जाता है। तेजीकाल में कीमतों में वृद्धि के परिणामस्वरूप उत्पादन, रोजगार एवं आय में वृद्धि होती है। इसके विपरीत मन्दीकाल में उत्पादन घटता है तथा बेरोजगारी बढ़ती है।

अनियोजित अर्थव्यस्था: जिस अर्थव्यवस्था में नियोजन नहीं अपनाया जाता, उसे अनियोजित अर्थव्यवस्था कहा जाता है।

स्वसंचालित प्रणाली: वह प्रणाली जसमें सरकार का कोई भी हस्तक्षेप नहीं होता। अर्थव्यवस्था का संचालन मूल्य यंत्र के द्वारा होता है।

व्यापार चक्र: तेजी एवं मन्दी काल की पुनरावृत्ति होने की प्रवृत्ति को व्यापार चक्र कहा जाता है।

परिजीविता: ऐसे व्यक्ति जो बिना श्रम किए किसी दूसरे की संपत्ति के द्वारा अपना जीवनयापन करते हैं, परिजीवी कहलाता हैं।

अभ्यास प्रश्न-6

1. सही विकल्प चुनिए

A. पूँजीवादी अर्थव्यवस्था में साधनों पर स्वामित्व होता है-

(i) सरकार का(ii) निजी व्यक्तियों का(iii) दोनों का(iv) उपरोक्त में से कोई नहीं

2. पूँजीवादी में आर्थिक शक्तियों का संचालक होता है -

(i) लोकतंत्र(ii) मूल्य यंत्र(iii) राजतंत्र(iv) उपर्युक्त सभी

3. समाजवाद में उपभोक्ता की संप्रभुता-

(i) बढ़ जाती है(ii) स्थिर रहती है(iii) अप्रभावित रहती है(iv) समाप्त हो जाती है

4. व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का अभाव पाया जाता है-

(i) पूँजीवाद में(ii) मिश्रित अर्थव्यवस्था में(iii) समाजवाद में(iv) उपर्युक्त सभी में

5. भारतीय अर्थव्यवस्था में किस प्रणाली को अपनाया है-

(i) पूँजीवादी प्रणाली(ii) समाजवादी प्रणाली(iii) मिश्रित अर्थव्यवस्था प्रणाली(iv) उपर्युक्त में से कोई नहीं

6. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

(i) पूँजीवाद में उत्पादन के साधनों पर ....का अधिकार होता है।

(ii) ....को समाजवाद का जनक माना जाता है।

(iii) 'संयुक्त क्षेत्र' का संचालन सरकार एवं .... दोनों द्वारा मिलकर किया जाता है।

(iv) समाजवाद में उत्पत्ति के साधनों पर स्वामित्व...................होता है।

(v) भारत में................अर्थव्यवस्था को अपनाया गया है।

7. अति लघुउत्तरीय प्रश्न-

(i) पूँजीवाद में आर्थिक प्रणाली का संचालन किस तंत्र द्वारा होता है?

(ii) समाजवाद में उत्पत्ति के साधनों पर किसका अधिकार होता है?

(iii) मिश्रित अर्थव्यवस्था किन दो आर्थिक प्रणालियों का मिश्रण है?

(iv) भारत में कौन सी प्रणाली अपनाई गई है?

(v) मिश्रित अर्थव्यवस्था में उत्पत्ति के साधनों पर किसका अधिकार होता है?

8. लघुउत्तरीय प्रश्न-

(i) पूँजीवाद व समाजवाद किसे कहते हैं, लिखिए।

(ii) पूँजीवादी आर्थिक प्रणाली की विशेषताएँ बताइए।

(iii) मिश्रित अर्थव्यवस्था से आप क्या समझते हैं एवं मिश्रित अर्थव्यवस्था के दोष बताइए।

9. दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

(i) आर्थिक प्रणाली का अर्थ बताते हुए। इसकी विशेषतायें लिखिए।

(ii) पूँजीवाद का अर्थ बताइए तथा इसके लक्षण लिखिए।

(iii) मिश्रित अर्थव्यवस्था किसे कहते हैं एवं इस प्रणाली की क्या विशेषताएँ हैं?

(iv) पूँजीवाद के गुण एवं दोषों की व्याख्या कीजिए।

(v) समाजवादी आर्थिक प्रणाली क्या है? इसकी विशेषताओं की व्याख्या कीजिए।

4.9. संदर्भ ग्रन्थ सूची

- Singh Ramesh(2020), BhartiyArthvyavastha, McGraw Hill Education(India) Private Limited.
- Mishra Dr. J. P.(2015), Indian Economic Structure, Sahitya Bhavan Publication,Agara.
- Mishra S.K & Puri V.K.(2003), Modern micro economic theory Himalaya Publishing House.
- India 2022.

इकाई 05 : कीमत मेकनिज़म तंत्र : मेकैनिज्म की भूमिका The role of price mechanism

इकाई की रूपरेखा

5.0. उद्देश्य

5.1. प्रस्तावना

5.2. मूल्य प्रणाली

5.3. मूल्यों की भूमिका या मूल्य प्रणाली की भूमिका The role of prices or the role of price systems

5.4. निष्कर्ष

5.5. मिश्रित पूंजीवादी अर्थव्यवस्था में मूल्य तंत्र

5.6. मूल्य प्रणाली पर बाधाएँ

5.7. अभ्यास प्रश्न

5.0. उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात हम-

4. विभिन्न आर्थिक प्रणालियों को समझ सकेंगे।
5. विभिन्न आर्थिक प्रणालियों के मध्य अंतर स्पष्ट कर सकेंगे।
6. आर्थिक प्रणालियों के गुण एवं दोषों की पहचान कर सकेंगे।

5.1. प्रस्तावना

प्रत्येक देश या उसकी अर्थव्यवस्था को कुछ मुख्य समस्याओं को हल करना होता है, जैसे कौन-कौन सी - वस्तुओं का उत्पादन किया जाए, वस्तुओं का उत्पादन किस प्रकार किया जाए, उत्पादन किसके लिए किया जाए आदि। इन समस्याओं को हल करने के लिए सरकार को निर्णय लेना होते हैं। सरकार द्वारा लिए गए निर्णयों के आधार पर ही न केवल आर्थिक समस्याएँ हल होती हैं, वरन् उस देश के निवासी अपना जीवनयापन करते हैं और सम्पूर्ण आर्थिक गतिविधियों का संचालन होता है।

यदि हम विभिन्न देशों की अर्थव्यवस्थाओं का अध्ययन करें तो प्रतीत होगा कि विश्व के कुछ देशों में उत्पादन एवं वितरण का कार्य सरकार के द्वारा किया जाता हैं। इन देशों में उत्पत्ति के लिए साधनों पर सरकार का स्वामित्व होता है। ऐसे देशों में क्या उत्पादन किया जाए? किन-किन वस्तुओं का उत्पादन किया जाए? उत्पादन किसके लिए किया जाए? आदि विभिन्न समस्याओं का हल सरकार के द्वारा किया जाता है। ऐसी व्यवस्था को समाजवाद का नाम दिया जाता है।

इसके विपरीत अनेक ऐसे देश भी है जहाँ सरकार का हस्तक्षेप बहुत कम होता है। अर्थव्यवस्था की सभी समस्याओं का हल बाजार शक्तियों के द्वारा होता है। उत्पत्ति के साधनों पर सरकार का स्वामित्व न होकर व्यक्तियों का होता है। ये व्यक्ति बाजार की माँग के आधार पर वस्तुओं का उत्पादन करते हैं। उत्पादन उन्हीं के लिए किया जाता है जिनके पास उन वस्तुओं को खरीदने की क्षमता या धन होता है। इस प्रकार की व्यवस्था को पूंजीवाद के नाम से जाना जाता है।

इसके साथ ही विश्व में अनेक देश ऐसे भी हैं जहाँ पर मिली जुली पद्धत्ति को अपनाया जाता है। ऐसे- देशों में जहाँ कुछ साधनों पर सरकार का स्वामित्व होता है तो वहीं अनेक साधनों का स्वामित्व व्यक्तियों के पास होता है। अर्थव्यवस्था की मुख्य समस्याओं का निर्णय सरकार एवं निजी व्यक्तियों के द्वारा मिल जुलकर लिया जाता है। ऐसी अर्थव्यवस्थाओं में मिली-जुली या मिश्रित प्रक्रिया को अपनाया जाता है।

1.2. मूल्य प्रणाली

मूल्य सिद्धांत काम मूल्य प्रणाली या मूल्य तंत्र में कार्य करता है। लेकिन मूल्य प्रणाली क्या है? मूल्य प्रणाली एक आर्थिक संगठन की प्रणाली है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति अपने पूर्वानुमान के अनुसार उपभोक्ता, उत्पादक और संसाधन स्वामी के रूप में आर्थिक गतिविधि में लगा होता है। हर समाज में कानूनी और सामाजिक संस्थाएँ होती हैं। व्यक्तिगत आर्थिक क्रियाएँ उनके साथ मेल मिलान करनी चाहिए। मूल्य प्रणाली मुख्य रूप से एक स्वतंत्र उद्यम अर्थव्यवस्था से संबंधित है, जिसमें उत्पादन के कारक निजी स्वामित्व में होते हैं। कच्चे माल, मशीनें, कारखाने और खेत मालिकों की यही प्रमुख होती हैं, और उनका विवादशील कार्रवाई करने का अधिकार होता है जो विद्यमान देश के प्रचलित कानूनों के अनुसार होते हैं। इसका मतलब है कि व्यक्तियों को संपत्ति प्राप्त करने, उसे बेचने या किराये पर देने का अधिकार होता है। उनका हक होता है कि वे किसी भी व्यवसाय में प्रवेश करें, किसी से भी सामान और सेवाएँ खरीदने और बेचने का अधिकार होता है जो सामंजस्यिक लाभ पर आधारित है। इस प्रकार मूल्य प्रणाली एक परस्पर विनिमय और समन्वय की प्रणाली होती है जो आर्थिक गतिविधियों को कुशलता से निर्देशित और संगठित करती है, और संसाधनों की कुशल आवंटन कराती है।

मूल्य प्रणाली के पास सीमितताएँ होती हैं। मांग और परिपूर्णता की शक्तियों में स्थानांतरण हो रहे होते हैं, तो हमेशा अनिश्चितता का तत्व होता है। समायोजन की प्रक्रिया कई बार दुखद और महंगी हो सकती है। गलतियाँ आ सकती हैं। अक्सर आर्थिक प्रक्रियाओं में मुद्रास्फीति या मुद्रास्फीति की प्रक्रियाओं में समस्या होती है। यदि उदाहरण स्वरुप संसाधनों की आपूर्ति उनकी मांग से अधिक होती है, समायोजन में अवसरों का अभाव हो सकता है और संसाधनों का अवांछित उपयोग हो सकता है। दूसरी ओर, यदि संसाधनों की मांग उनकी आपूर्ति से अधिक होती है, तो यह मुद्रास्फीति और उपलब्ध संसाधनों पर अत्यधिक दबाव डाल सकता है।

हालांकि, इन सीमितताओं के बावजूद, मूल्य प्रणाली एक शक्तिशाली मेकेनिज्म रहती है जो एक बाजार अर्थव्यवस्था में आर्थिक गतिविधियों को समन्वयित करती है। यह मांग और परिपूर्णता की शक्तियों के माध्यम से काम करती है, जहां मूल्य उनके निर्णयों को मार्गदर्शन करने के रूप में काम करते हैं। जब कोई वस्तु या सेवा की मांग बढ़ती है, तो उसकी मूल्य बढ़ने की प्रवृत्ति होती है, जिससे उत्पादकों को संकेत मिलता है कि अधिक मांग है और उन्हें अधिक उत्पादन करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। विपरीत रूप से, यदि किसी वस्तु की आपूर्ति बढ़ती है, तो उसकी मूल्य कम हो सकती है, जिससे उत्पादकों को उत्पादन को कम करने के लिए संकेत मिलता है।

मूल्य प्रणाली उपयोग की प्रमुख नियमों के साथ संचालन करती है, जिनमें सरकारी नीतियों, बाजार की अद्यापन और बाहरी प्रभाव शामिल हैं। इन प्रभावों के कारण कभी-कभी बाजार में विफलताएँ हो सकती हैं, जहां मूल्य प्रणाली संसाधनों की सर्वोत्तम आवंटन में अक्षम होती है।

निष्कर्ष के रूप में, मूल्य प्रणाली एक बाजार आधारित अर्थव्यवस्था के काम करने की मौलिक मेकेनिज्म है। यह अस्त्र की प्राथमिक मांग की आवंटन को सुखद करने में मदद करती है, आर्थिक निर्णयों का मार्गदर्शन करती है, और उपभोक्ताओं, उत्पादकों और संसाधन स्वामियों के कार्रवाइयों को समन्वित करने में मदद करती है।

1.3. मूल्यों की भूमिका या मूल्य प्रणाली की भूमिका The role of prices or the role of price systems

मूल्य प्रणाली मूल्यों के माध्यम से काम करती है, चाहे वो सामान या सेवाएँ हों। मूल्यों के माध्यम से अनगिनत सामानों और सेवाओं की उत्पादन की प्रक्रिया को निर्धारित किया जाता है। ये उत्पादन को संरचित करते हैं और सामानों और सेवाओं का वितरण सहायता करते हैं; सामानों की आपूर्ति को बाँटते हैं, और आर्थिक विकास के लिए प्रावधान करते हैं। मूल्य प्रणाली मूल रूप से एक अर्थव्यवस्था की मुख्य समस्याओं का समाधान करती है:

(1) **क्या और कितना उत्पादित करना है।** मूल्यों का पहला कार्य है कि उत्पादित करने और कितनी मात्रा में करने की समस्या को सुलझाना। आधुनिक अर्थव्यवस्था की विशेषता है कि विविध प्रकार की इच्छाएँ और संसाधनों की कमी होती है। इसके परिणामस्वरूप, सभी इच्छाएँ पूरी नहीं की जा सकती। इसलिए, उपभोक्ताओं को उन्हें प्रस्तुत किए गए अनगिनत सामानों की विशाल विविधता से चुनने की आवश्यकता होती है। कुछ सामानों की आपातकालीन इच्छा का मतलब है कि उपभोक्ताएँ उनके लिए अधिक पैसे और अधिक मूल्य का भुगतान करने को तैयार हैं। इसका मतलब उत्पादकों को भी इन वस्तुओं की अधिक मात्रा में उत्पादन करने के लिए प्रोत्साहित करने का है। यदि उपभोक्ताएँ किसी सामान की कम आपूर्ति की इच्छा करती हैं, तो यह उनकी मूल्य मानसिकता में कम मूल्य का सूचक होगा। विपरीत रूप से, एक छोटी सी आपूर्ति, उपभोक्ताओं की मानसिकता में उस सामान के प्रति प्रतिष्ठा बढ़ाती है और वे उसके लिए अधिक मूल्य चुकते हैं। इस तरह उपभोक्ताओं ने उन वस्तुओं और सेवाओं की मुकाबलीय मूल्यों का आकलन किया है जो उनके लिए अधिक महत्वपूर्ण हैं।

मूल्यों में उपभोक्ताओं की पसंदों और रुचियों में भी परिवर्तन होता है। उपभोक्ताएँ अपनी पसंद की सामानों के प्रति मूल्य चुकाकर उनकी पसंद का आदान-प्रदान करती हैं और उनकी अरुचि का आदान-प्रदान करके उनकी अरुचि का पता लगाती हैं। यदि उपभोक्ताएँ ऑटो-रिक्शा और टैक्सी की पसंद करती हैं जबकि साइकिल-रिक्शा और तोंगा की जगह, तो वे तोंगा के लिए कम मूल्य प्रस्तुत करेंगी। तोंगा में लगे व्यक्तियों में से कुछ लोग अन्य व्यवसायों में काम करने की तलाश करेंगे या फिर उनके पास आवश्यक साधन होने पर वे ऑटो-रिक्शा और टैक्सी की प्रेरणा लेंगे, या अगर उनके पास आवश्यक साधन है, तो कार्यशालाएँ खोलेंगे। इस प्रकार, उपभोक्ताओं की पसंद और प्राथमिकताएँ भी सामानों और सेवाओं की मूल्यों में प्रतिबिंबित होती हैं।

इस प्रकार, उपभोक्ता ही साम्राज्यी हैं। वह मूल्य तय करता है, और उत्पादक वह सामान बनाते हैं जिन्हें वह अधिक चाहता है। जितना अधिक उत्पादक उत्पादन करेंगे, उतना ही अधिक लाभ उन्हें मिलेगा और इसी तरह से संसाधन स्वामियों को भी। उत्पादक का भविष्य तय हो जाता है यदि उपभोक्ता उसके उत्पाद के प्रति आकर्षण नहीं रखता और कम मूल्य प्रस्तुत करता है। उत्पादक, इसलिए, तुरंत क्रियाशील होता है जब उपभोक्ता क्रियाशील होता है और संसाधन आपूर्ति की पूरी प्रक्रिया उत्पादन के साथ होती है।

(2) कैसे उत्पादित करना है। मूल्यों का अगला कार्य है कि लेनदेन की तकनीकों को निर्धारित करना। कारक सेवाओं की मूल्यें उनके द्वारा प्राप्त की जाती हैं। मजदूरी की मूल्य श्रम की सेवा के लिए है, किराया भूमि की सेवा के लिए है, ब्याज पूंजी की सेवा के लिए है और मुनाफा उद्यमिता की सेवा के लिए है। इस प्रकार, मजदूरी, किराया, ब्याज और मुनाफा उपभोक्ता के द्वारा प्राप्त करने वाली कीमतें होती हैं जो उत्पादन के लागतों का हिस्सा बनाती हैं।

प्रत्येक उत्पादक का लक्ष्य सबसे कुशल उत्पादन प्रक्रिया का उपयोग करना होता है। एक आर्थिक रूप से कुशल उत्पादन प्रक्रिया वो होती है जिसमें लागत की न्यूनतम मात्रा के साथ सामान उत्पन्न होता है। उत्पादन प्रक्रिया की चुनौती तब उत्पादन के मात्राओं की उपभोक्ताओं की मानसिकता में सर्वाधिक मूल्य होने पर निर्भर करेगी और उत्पादित की जाने वाली मात्राओं की होगी।

एक उत्पादक महंगी आपूर्ति सेवाओं की अधिक मात्रा का उपयोग कम मात्रा में करता है और सस्ते संसाधनों को महंगे संसाधनों के साथ प्रतिस्थापित करता है। उत्पादन की लागत को कम करने के लिए उपभोक्ता सेवाओं की तुलना में सस्ते संसाधनों को प्रयुक्त करके उपयोग करता है। यदि पूंजी मजदूरी की तुलना में सस्ती है, तो उत्पादक पूंजीप्रधान उत्पादन प्रक्रिया का उपयोग करेगा। विपरीत, यदि मजदूरी पूंजी की तुलना में सस्ती है, तो श्रमप्रधान उत्पादन प्रक्रियाएँ उपयोग की जाएँगी। विकसित देशों में जहां मजदूरी सस्ती है, तमाम अर्थव्यवस्थाओं में मजदूरी का अधिक प्रयोग कम लागतों के साथ महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है; वहीं अपने सस्ते मजदूरों को कम से कम लागतों के साथ कुशलता के साथ मिलाते हैं। क्योंकि एक ही सामान के लिए एक ही मूल्य एक स्वतंत्र उद्यमिता अर्थव्यवस्था में मान्य होता है, केवल आर्थिक रूप से प्रभावी उत्पादक ही उद्योग में जारी रह सकते हैं। वे जिनके पास संसाधनों को उनकी न्यूनतम मान्यता(मूल्य) देने की सामर्थ्य नहीं है, वे या तो बंद हो जाएंगे या किसी अन्य सामान के निर्माण में स्थानांतरित हो जाएंगे।

(3) आय का वितरण तय करने के लिए। मूल्यों का एक और कार्य है कि आय के वितरण को तय करने में सहायक होते हैं। एक स्वतंत्र उद्यमिता अर्थव्यवस्था में उत्पादन का वितरण और आय का वितरण एक-दूसरे के परस्पर संबंधित होते हैं। यह एक परस्पर विनिमय की प्रणाली होती है जिसमें उत्पादक और उपभोक्ता अधिकांशतः एक ही लोग होते हैं। कारकों के मालिक सेवाएं पैसे के बदले में बेचते हैं और फिर उन पैसों का खर्च उन सामानों को खरीदने में करते हैं जिन्हें सेवाएं प्रदान करती हैं। उत्पादक उपभोक्ताओं को पैसे में सामान और सेवाएं बेचते हैं और उपभोक्ताएँ कारक सेवाओं के मालिक के रूप में आय प्राप्त करती हैं। इस प्रकार, आय संसाधन मालिकों(उपभोक्ताओं) से उत्पादकों की ओर और फिर फिर उपभोक्ताओं की ओर फिरती है। मूल्यों का इस आय प्रवाह में महत्वपूर्ण भूमिका होता है। जब उपभोक्ताएँ सामान खरीदते हैं, तो यह उनकी जीवन की लागत होती है। जब उत्पादक सामान बेचते हैं, तो यह उनके व्यापारिक आय होती है। जब उपभोक्ता संसाधनों के मालिक के रूप में पैसे प्राप्त करते हैं, तो यह उनकी व्यक्तिगत आय होती है और जब उत्पादक संसाधनों के लिए पैसे देते हैं, तो यह उत्पादन की लागत होती है।

इससे परिमाणित होता है कि किसी व्यक्ति की आय उसके द्वारा प्रोसेस किए गए संसाधनों की मात्रा पर और उपभोक्ताओं की मानसिकता में उनकी मूल्यांकन की आधारित है। जो लोग अधिक मात्रा में संसाधनों की स्वामित्व में हैं, उनकी आय अधिक होती है और/या वे वह सामान बनाने में अधिक योगदान करते हैं जिन्हें उपभोक्ताओं को अधिक महत्वपूर्ण होता है। विपरीत रूप से, उपभोक्ताओं के पास संसाधनों की अल्प मात्रा होने पर उनकी आय कम होती है और/या वे उन सामानों के निर्माण में कम योगदान करते हैं जिनसे उपभोक्ता संतोष को आवश्यकता होती है। ऐसे आय विभिन्निताएं होती हैं, हालांकि, ये स्वयं सुधारण करने के योग्य होती हैं। कोई व्यक्ति दीर्घकाल तक कम आय प्राप्त करने की सामर्थ्य नहीं रख सकता। इस प्रकार, कम आय वाले श्रेणी के कामकाजियों का वह उद्योग जिसमें अधिक मजदूरी

मिलती है, उसमें उच्च मजदूरी देने वाले उद्योग में रोजगार की तलाश करेंगे। मजदूरी की आपूर्ति में कमी से उत्पन्न वर्तमान और उच्च आपूर्ति में वृद्धि होगी। आपूर्ति में कमी से वस्त्र की मूल्य बढ़ेगा, उत्पादक के मुनाफे और कर्मचारियों की आय बढ़ेगी। विपरीत रूप से, दूसरे सामान की आपूर्ति में वृद्धि, उसकी मूल्य को कम करेगी, मुनाफे को कम करेगी, साथ ही कर्मचारियों की आय को भी कम करेगी। यह प्रक्रिया तब तक जारी रहेगी जब तक कि आय विभिन्नताएँ पूरी तरह से गायब न हो जाएं। इस प्रकार, मूल्यों द्वारा न केवल आय वितरण को निर्धारित किया जाता है, बल्कि उसके समानता को भी लाता है।

इस तरीके से मूल्यों द्वारा आय वितरण को निर्धारित किया जाता है और उसके साथ ही उसकी समानता भी प्राप्त होती है।

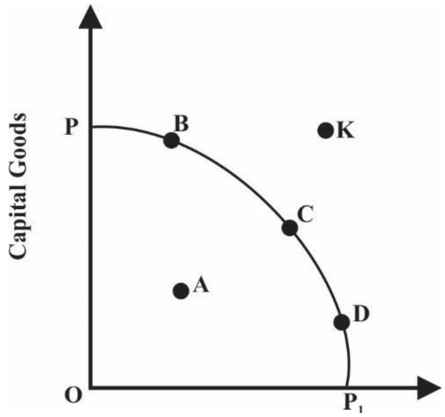

(4) संसाधनों का पूरी तरह से उपयोग करने के लिए। मूल्य मेकनिज़्म एक अर्थव्यवस्था के संसाधनों का पूरी तरह से उपयोग करने में भी मदद करता है। संसाधनों का पूरी तरह से उपयोग करना उनका पूर्ण रोजगार करना माना जाता है। यह आय की वृद्धि के लिए बड़े निवेश के माध्यम से होता है, और आखिरकार बचत और निवेश की समानता तक पहुंचता है। एक बढ़ती अर्थव्यवस्था में बचत और निवेश के बीच समानता को बढ़ती रेटों के माध्यम से परिपूर्ण किया जाता है। जब अर्थव्यवस्था संसाधनों के कुशल उपयोग से पूर्ण रोजगार के स्तर के पास पहुंचती है, तो आय तेजी से बढ़ती है, और उसी तरह से बचत भी। लेकिन निवेश पीछे रह जाता है, जिसे ब्याज दरों में कटौती के माध्यम से बढ़ाया जा सकता है। इस प्रकार ब्याज दर एक समतुल्यन मैकेनिज़म की भूमिका निभाती है। हालांकि, ब्याज दर को संबंधित उद्योग में पूरी रूप से भरोसे के रूप में नहीं रखा जा सकता है जब अर्थव्यवस्था पूरी तरह से रोजगार की दिशा में आ रही हो। इसलिए, मौद्रिक और वित्तीय मापांक तथा भौतिक नियंत्रण भी उपभोक्ताओं और निर्माताओं के निर्णयों को प्रभावित करने के लिए आवश्यक होते हैं, जो बचत और निवेश के संबंध में होते हैं।

(5) विकास के लिए प्रोत्साहन प्रदान करने के लिए। आखिरकार, मूल्य व्यवस्था के माध्यम से आर्थिक विकास के लिए महत्वपूर्ण कारक होते हैं। सुधार, नवाचार और विकास के लिए प्रेरणा मूल्य मेकनिज़म के माध्यम से होती है। उच्च मूल्य और मुनाफा उच्च उद्योगिक संघों को बेहतर तकनीकों को सुधारने और विकसित करने के लिए बड़ी राशि खर्च करने के लिए प्रोत्साहित करते हैं। आर्थिक प्रगति की दिशा में आर्थिक मूल्य मेकनिज़म के माध्यम से अर्थव्यवस्था को सुधारने के लिए मूल्य नहीं बल्कि भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

इस तरीके से मूल्य मेकनिज़म, एक नि: शुल्क उद्यमिता अर्थव्यवस्था में आपूर्ति और मांग के माध्यम से कार्य करते हुए, प्रमुख संगठन बल के रूप में कार्य करता है। यह निर्धारित करता है कि क्या और कितना पैदा करना है और कितना पैदा करना है। यह कारक सेवाओं की मूल वेतनों की मूल्यों को निर्धारित करता है। यह संसाधनों का न्यायसमान वितरण लाने में मदद करता है और वर्तमान सामान की पूरी आपूर्ति को श्रेणी बनाने में मदद करता है, उन्हें पूरी तरह से उपयोग करने में। यह निर्धारित करता है कि किसी भी सामान को कितने पैदा किया जाना चाहिए और उसके फैक्टर सेवाओं का पुरस्कार कितना होना चाहिए। यह उपभोक्ताओं को उन वस्त्रों का चयन करने के लिए प्राप्त होता है जिन्हें योजनाकारों द्वारा निर्मित किया जाता है और प्रस्तुत किया जाता है।

4. समाजवादी अर्थव्यवस्था में मूल्य तंत्र

समाजवादी अर्थव्यवस्था में मूल्य तंत्र की बहुत कम प्रासंगिकता है क्योंकि इसे मुक्त बाजार अर्थव्यवस्था की एक विशिष्ट विशेषता माना जाता है। समाजवादी अर्थव्यवस्था में मूल्य तंत्र के विभिन्न तत्व-लागत, लाभ और कीमतें-सभी योजना प्राधिकरण द्वारा योजना के उद्देश्यों और लक्ष्यों के अनुसार नियोजित और गणना की जाती हैं। इस प्रकार समाजवादी या केंद्रीकृत योजनाबद्ध अर्थव्यवस्था में संसाधनों का तर्कसंगत आर्थिक गणना या आवंटन संभव नहीं है। आइए जानें कि एक समाजवादी समाज किसी अर्थव्यवस्था की केंद्रीय समस्याओं को

कैसे हल करता है, क्या, कैसे और किसके लिए उत्पादन करना है।

समाजवादी राज्य में, यह केंद्रीय योजना प्राधिकरण है जो बाजार के कार्य करता है। चूँकि उत्पादन के सभी भौतिक साधनों का स्वामित्व, नियंत्रण और निर्देशन सरकार द्वारा किया जाता है, इसलिए क्या उत्पादन करना है इसके बारे में निर्णय एक केंद्रीय योजना के ढांचे के भीतर लिए जाते हैं। उत्पादित की जाने वाली वस्तुओं की प्रकृति और उनकी मात्रा के संबंध में निर्णय, केंद्रीय योजना प्राधिकरण द्वारा निर्धारित उद्देश्यों, लक्ष्यों और प्राथमिकताओं पर निर्भर करते हैं। विभिन्न वस्तुओं की कीमतें भी इसी प्राधिकरण द्वारा तय की जाती हैं। कीमतें आम आदमी की सामाजिक प्राथमिकताओं को दर्शाती हैं। उपभोक्ताओं की पसंद केवल उन वस्तुओं तक ही सीमित है जिन्हें योजनाकार उत्पादित और पेश करने का निर्णय लेते हैं।

उत्पादन कैसे किया जाए इसकी समस्या भी केंद्रीय योजना प्राधिकरण द्वारा तय की जाती है। "यह उत्पादन के कारकों के संयोजन और किसी संयंत्र के उत्पादन के पैमाने को चुनने, किसी उद्योग के उत्पादन को निर्धारित करने, संसाधनों के आवंटन और लेखांकन में कीमतों के पैरामीट्रिक उपयोग के लिए नियम स्थापित करता है।" केंद्रीय नियोजन प्राधिकरण संयंत्र प्रबंधकों के मार्गदर्शन के लिए दो नियम बनाता है। एक, प्रत्येक प्रबंधक को उत्पादक वस्तुओं और सेवाओं को इस तरह से संयोजित करना चाहिए कि किसी दिए गए आउटपुट के उत्पादन की औसत लागत न्यूनतम हो। दो, प्रत्येक प्रबंधक को उत्पादन का वह पैमाना चुनना चाहिए जो सीमांत लागत को कीमत के बराबर करता हो। चूँकि अर्थव्यवस्था में सभी संसाधनों का स्वामित्व और विनियमन सरकार द्वारा किया जाता है, कच्चे माल, मशीनें और अन्य इनपुट भी उन कीमतों पर बेचे जाते हैं जो उनके उत्पादन की सीमांत लागत के बराबर होती हैं। यदि किसी वस्तु की कीमत उसकी औसत लागत से ऊपर होती है, तो संयंत्र प्रबंधक मुनाफा कमाएंगे, और यदि यह उत्पादन की औसत लागत से कम होती है, तो उन्हें घाटा होगा। पहले मामले में, उद्योग का विस्तार होगा और दूसरे मामले में यह उत्पादन में कटौती करेगा, और अंततः परीक्षण और त्रुटि की प्रक्रिया द्वारा संतुलन की स्थिति तक पहुंचा जाएगा। हालाँकि, परीक्षण और त्रुटि की प्रक्रिया ऐतिहासिक रूप से दी गई कीमतों के आधार पर आगे बढ़ेगी जिसके लिए समय-समय पर कीमतों में अपेक्षाकृत छोटे समायोजन की आवश्यकता होगी। इस प्रकार "सार्वजनिक स्वामित्व में उत्पादन और उत्पादक संसाधनों के प्रबंधकों के सभी निर्णय और उपभोक्ताओं के रूप में और श्रम के आपूर्तिकर्ताओं के रूप में व्यक्तियों के सभी निर्णय इन कीमतों के आधार पर किए जाते हैं। इन निर्णयों के परिणामस्वरूप मांग की गई मात्रा और प्रत्येक वस्तु की आपूर्ति निर्धारित की जाती है। यदि किसी वस्तु की मांग की मात्रा आपूर्ति की मात्रा के बराबर नहीं है, तो उस वस्तु की कीमत बदलनी होगी। यदि मांग आपूर्ति से अधिक है तो इसे संशोधित करना होगा और यदि विपरीत स्थिति हो तो कम करना होगा .इस प्रकार केंद्रीय योजना बोर्ड कीमतों का एक नया सेट तय करता है जो नए निर्णयों के लिए आधार के रूप में कार्य करता है, और जिसके परिणामस्वरूप मांग और आपूर्ति की मात्रा का एक नया सेट होता है।"

समाजवादी अर्थव्यवस्था में यह समस्या भी राज्य द्वारा हल की जाती है कि किसके लिए उत्पादन किया जाए। योजना के समग्र उद्देश्यों के अनुरूप क्या और कितना उत्पादन करना है, यह तय करते समय केंद्रीय नियोजन प्राधिकरण यह निर्णय लेता है। यह निर्णय लेने में सामाजिक प्राथमिकताओं को महत्व दिया जाता है। दूसरे शब्दों में, विलासिता की वस्तुओं की तुलना में उन वस्तुओं और सेवाओं के उत्पादन को अधिक महत्व दिया जाता है जिनकी अधिकांश लोगों को आवश्यकता होती है। ये लोगों की न्यूनतम ज़रूरतों पर आधारित होते हैं और सरकारी दुकानों के माध्यम से निश्चित कीमतों पर बेचे जाते हैं। चूंकि सामान मांग की प्रत्याशा में उत्पादित किया जाता है, मांग में वृद्धि कमी लाती है और इससे राशनिंग होती है।

इस प्रकार समाजवादी समाज में आय वितरण की समस्या स्वतः ही हल हो जाती है क्योंकि सभी संसाधनों पर राज्य का स्वामित्व होता है। और उनके पुरस्कार भी राज्य द्वारा तय और भुगतान किए जाते हैं। आर्थिक अधिशेष जानबूझकर पूंजी संचय और विकास के लिए बनाया और उपयोग किया जाता है।

1.4. निष्कर्ष

मूल्य तंत्र समाजवादी अर्थव्यवस्था में उस तरह काम नहीं करता है, जिस तरह यह एक मुक्त बाजार अर्थव्यवस्था में काम करता है क्योंकि राज्य अर्थव्यवस्था के भीतर उत्पादन और वितरण के साधनों का स्वामित्व, नियंत्रण और विनियमन करता है। लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि कीमतें कोई भूमिका नहीं निभाती हैं। बल्कि इनका उपयोग उत्पादन कैसे करें की समस्या को हल करने के लिए किया जाता है।

1.5. मिश्रित पूंजीवादी अर्थव्यवस्था में मूल्य तंत्र

मिश्रित पूंजीवादी अर्थव्यवस्था में मूल्य तंत्र दो तरीकों से संचालित होता है: "एक ओर बाजार तंत्र और मूल्य प्रणाली को संसाधनों के

आवंटन और आय के वितरण को प्रभावित करने के लिए पर्याप्त स्वतंत्रता दी जाती है; दूसरी ओर केंद्रीय अधिकारियों को कई अलग-अलग तरीकों से हस्तक्षेप करें और बाजार के कामकाज पर पर्याप्त प्रभाव डालें।" पत्र करों और सब्सिडी, क्रेडिट नियंत्रण, लाइसेंसिंग व्यवस्था और प्रशासनिक नियंत्रण और निर्देशों द्वारा मुक्त बाजार लेनदेन को संशोधित, विनियमित या प्रतिस्थापित करता है। "निजी क्षेत्र एक व्यवस्थित तरीके से काम करता है, उचित रूप से स्थिर कीमतें और मौद्रिक और राजकोषीय नीतियों के माध्यम से पर्याप्त समग्र मांग सुनिश्चित की जाती है।" आइए हम विश्लेषण करें कि एक मिश्रित पूंजीवादी अर्थव्यवस्था "क्या, कैसे और किसके लिए उत्पादन किया जाए" की तीन केंद्रीय समस्याओं को कैसे हल करती है।

क्या उत्पादन करना है और कितनी मात्रा में करना है, इसकी समस्या को निजी क्षेत्र और सरकार दोनों द्वारा अलग-अलग हल किया जाता है। उत्पादित की जाने वाली वस्तुओं की प्रकृति और मात्रा के बारे में निजी क्षेत्र के निर्णय बाजार शक्तियों, यानी मांग और आपूर्ति के कामकाज पर आधारित होते हैं। उन सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों में जो निजी क्षेत्र के साथ प्रतिस्पर्धा करते हैं, निर्मित किए जाने वाले उत्पादों के प्रकार और मात्रा का निर्धारण भी बाजार तंत्र के आधार पर किया जाता है। "हर साल हजारों बाजारों में लाखों बदलावों के लिए लाखों अनुकूलन की आवश्यकता होती है, और इनका अनुमान लगाना और उनके लिए केंद्रीय रूप से योजना बनाना एक कठिन कार्य होगा। क्या हमें पीली टोपी या हरी टोपी, या दोनों का उत्पादन करना चाहिए, और यदि दोनों , किस अनुपात में? ऐसे मामले... बाजार द्वारा तय किए जाने के लिए छोड़ दिए जाने चाहिए।"

लेकिन जिन क्षेत्रों में सार्वजनिक क्षेत्र का एकाधिकार है, वहां किस प्रकार की वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन किया जाना है और कितनी मात्रा में इसका निर्णय केंद्रीय अधिकारियों द्वारा किया जाता है। ऐसी वस्तुओं और सेवाओं को आम तौर पर आवश्यकताओं की सामूहिक संतुष्टि के लिए सरकार द्वारा नियंत्रित और विनियमित किया जाता है। सार्वजनिक उपयोगिताओं, जैसे परिवहन, गैस, बिजली, टेलीफोन, टेलीग्राफ, आदि के मामले में, राज्य "यातायात क्या वहन करेगा" के सिद्धांत पर निश्चित कीमतों या दरों पर इन सेवाओं की आपूर्ति कर सकता है? आमतौर पर, ऐसी सेवाएँ उन दरों या कीमतों पर प्रदान की जाती हैं जो नो-प्रॉफिट नो-लॉस पर आधारित होती हैं। हालाँकि, उपभोक्ता वस्तुओं और कोयला, इस्पात, दवाओं, जहाजों आदि जैसी पूंजीगत वस्तुओं का निर्माण करने वाले एकाधिकारवादी सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम सीमांत-लागत मूल्य निर्धारण के सिद्धांत पर कीमतें तय करते हैं और निजी उद्यमों की तरह मुनाफा कमाते हैं।

उत्पादन कैसे किया जाए इसकी दूसरी समस्या भी निजी क्षेत्र के साथ-साथ केंद्रीय अधिकारियों द्वारा भी तय की जाती है। खेती में, लघु उद्योग में, और बड़े पैमाने के उद्योग में, निर्णय आम तौर पर निजी उद्यम द्वारा अपने मुनाफे को अधिकतम करने के सिद्धांत के आधार पर लिए जाते हैं। हालाँकि, राज्य अक्सर आर्थिक विकास और लोक कल्याण के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए हस्तक्षेप करता है। यह उत्पादकों और उत्पादकों को उत्पादन की विशेष तकनीकों को अपनाने के लिए प्रोत्साहन प्रदान कर सकता है जो लागत को कम कर सकता है और आउटपुट को अधिकतम कर सकता है। यह कर रियायतें, सब्सिडी, ऋण सुविधाएं दे सकता है और लाइसेंस जारी कर सकता है ताकि ऐसी लागत कम करने वाली और आउटपुट बढ़ाने वाली तकनीकों को अपनाया जा सके।

1.6. मूल्य प्रणाली पर बाधाएँ

मूल्य तंत्र स्वतंत्र रूप से कार्य नहीं करता है। यह सरकार द्वारा लगाए गए कुछ प्रतिबंधों के तहत कार्य करता है। इन प्रतिबंधों ने मूल्य प्रणाली की कार्यप्रणाली को संशोधित करने की प्रवृत्ति दिखाई है। वे इस प्रकार हैं:

(1) सरकार उत्पादकों को विभिन्न प्रकार और निश्चित मात्रा में सामान बनाने के निर्देश जारी करती है जो सामाजिक जरूरतों को पूरा करने के लिए आवश्यक हैं

(2) प्रशासनिक नियंत्रण लगाना, वस्तुओं की आपूर्ति को विनियमित करना, वस्तुओं की राशनिंग, लाइसेंस जारी करना, कोटा तय करना आदि कुछ ऐसे उपकरण हैं जो स्वचालित मूल्य प्रणाली के कामकाज को संशोधित करते हैं।

(3) यहां तक कि संसाधन मालिकों को भी स्वतंत्र रूप से कार्य करने की अनुमति नहीं है। यदि सरकार चाहती है कि निजी और सार्वजनिक क्षेत्र भविष्य के लिए अधिक उत्पादन करें, तो संसाधनों को पूंजीगत सामान क्षेत्र की ओर पुनः आवंटित किया जाएगा। लोगों को वर्तमान में अधिक बचत करने और कम उपभोग करने के लिए भी कहा जा सकता है।

(4) जब सरकार वस्तुओं और सेवाओं, जैसे चीनी, कपड़ा, स्टील आदि की कीमतें और श्रमिकों की मजदूरी तय करती है, तो ये मुक्त बाजार तंत्र के काम में बाधा के रूप में कार्य करती हैं।

(5) प्रगतिशील आय और धन कर, सामाजिक सुरक्षा के लिए प्रावधान, मूल्य समर्थन कार्यक्रम, सब्सिडी देना, ऋण सुविधाएं आदि जैसे उपाय भी मूल्य प्रणाली के कामकाज में हस्तक्षेप करते हैं।

(6) व्यापार, परिवहन, उद्योग, खदानों, बैंकों आदि के राष्ट्रीयकरण और सार्वजनिक उद्यमों की शुरुआत के उद्देश्य से किए गए उपाय भी लोकतांत्रिक समाजवाद या मिश्रित अर्थव्यवस्था के पक्ष में मूल्य प्रणाली को संशोधित करते हैं।

ये सभी बाधाएं उपभोक्ताओं की संप्रभुता, उत्पादकों के लाभ को अधिकतम करने, संसाधन-मालिकों की आय को अधिकतम करने और संपत्ति-मालिकों के संपत्ति के अधिकार को कमजोर करती हैं।

1.7. अभ्यास प्रश्न

1. आर्थिक विश्लेषण में मूल्य निर्धारण के महत्व पर प्रकाश डालिए।

2. स्पष्ट करें कि मुक्त बाजार अर्थव्यवस्था में संसाधनों का आवंटन कैसे किया जाता है।

3. मूल्य सिद्धांत के मुख्य उपयोग क्या हैं? इसकी धारणाएं क्या हैं?

4. समाजवादी अर्थव्यवस्था क्या है? ऐसी अर्थव्यवस्था में कीमतें क्या भूमिका निभाती हैं और संतुलन कीमतें कैसे पहुंचती हैं?

5. मिश्रित अर्थव्यवस्था में मूल्य तंत्र की भूमिका पर चर्चा करें।

6. प्रतिस्पर्धी अर्थव्यवस्था में मूल्य तंत्र की भूमिका की व्याख्या करें।

7. चर्चा करें कि मुक्त उद्यम अर्थव्यवस्था में किसी अर्थव्यवस्था की केंद्रीय समस्याओं का समाधान कैसे किया जाता है।

8. चर्चा करें कि पूंजीवादी अर्थव्यवस्था की बुनियादी समस्याएं समाजवादी अर्थव्यवस्था से किस प्रकार भिन्न हैं।

9. मूल्य तंत्र से आप क्या समझते हैं? किसी अर्थव्यवस्था में इसकी भूमिका पर चर्चा करें।

10. वर्णन करें कि मूल्य प्रणाली आपूर्ति और मांग की शक्तियों के माध्यम से अर्थव्यवस्था की मूलभूत समस्याओं को कैसे हल करती है।

इकाई 06 : आधुनिक नव बाज़ारवाद Modern New Marketism

इकाई की रूपरेखा

6.0. उद्देश्य

6.1. प्रस्तावना

6.2. अर्थ

6.3. आधुनिक नव बाजारवाद के कुछ मुख्य आलोच्य प्रावधान हैं:

6.4. नवउदारवाद,

6.5. पूंजीवाद की विशेषताएं पूंजीवाद की प्रमुख विशेषताओं की चर्चा नीचे की गई है।

6.6. अभ्यास प्रश्न

6.0. उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात हम- "आधुनिक नव बाजारवाद" का अध्ययन करने से हम कुछ मुख्य बातें सिख सकते हैं:

1. आर्थिक स्वतंत्रता की महत्ता: हम यह सिख सकते हैं कि आर्थिक स्वतंत्रता कैसे व्यक्तिगत और आर्थिक विकास के प्रति महत्त्वपूर्ण है।
2. व्यापारिकीकरण और निजीकरण का अध्ययन: हम यह समझ सकते हैं कि व्यापारिकीकरण और निजीकरण कैसे आर्थिक प्रक्रियाओं पर प्रभाव डाल सकते हैं, और उनके फायदे और नुकसान क्या हो सकते हैं।
3. समाजवाद और नव बाजारवाद के बीच तुलना: हम यह समझ सकते हैं कि आधुनिक नव बाजारवाद के विचारों को समाजवाद से कैसे तुलना किया जा सकता है और इन दो दृष्टिकोणों के बीच की मुख्य विशेषताएँ क्या हैं।
4. सामाजिक और आर्थिक प्रभाव: हम यह समझ सकते हैं कि आधुनिक नव बाजारवाद कैसे समाजिक और आर्थिक प्रभाव पैदा कर सकता है और कैसे यह आर्थिक विकास को प्रोत्साहित कर सकता है।
5. सामाजिक और आर्थिक न्याय का विचार: हम यह जान सकते हैं कि आधुनिक नव बाजारवाद कैसे सामाजिक और आर्थिक न्याय को ओर प्रोत्साहित कर सकता है, और कैसे यह अधिक न्यायसंगत आर्थिक प्रबंधन को संभव बना सकता है।

इन विचारों को समझने के माध्यम से हम आधुनिक नव बाजारवाद की विशेषताओं को और इसके आर्थिक और सामाजिक प्रभाव को समझ सकते हैं, और इसे व्यक्तिगत और समाजिक संदर्भ में समझने में मदद मिल सकती है।

6.1. प्रस्तावना

प्रत्येक देश या उसकी अर्थव्यवस्था को कुछ मुख्य समस्याओं को हल करना होता है, जैसे कौन-कौन सी – वस्तुओं का उत्पादन किया जाए, वस्तुओं का उत्पादन किस प्रकार किया जाए, उत्पादन किसके लिए किया जाए आदि। इन समस्याओं को हल करने के लिए सरकार को निर्णय लेने होते हैं। सरकार द्वारा लिए गए निर्णयों के आधार पर ही न केवल आर्थिक समस्याएँ हल होती हैं, वरन् उस देश के निवासी अपना जीवनयापन करते हैं और सम्पूर्ण आर्थिक गतिविधियों का संचालन होता है।

6.2. अर्थ

“आधुनिक नव बाज़ारवाद”(Modern Neoliberalism) एक आर्थिक और राजनीतिक दारिद्र्य और मुक्ति की प्राप्ति के सिद्धांत पर आधारित एक विचारशील दृष्टिकोण है, जिसका उद्भव और विकास बीसवीं सदी के दशकों में हुआ है। यह विचारशीलता और नीति का एक विशेष प्रकार है जो मुख्य रूप से मुक्त बाजार की ओर प्रेरित है, जिसमें सरकार के हस्पतालों की सुविधाओं का निजीकरण और वित्तीकरण, विनिवेश और विपणन में कम संरक्षण, और सरकार के सेवाओं के उपकरणों के नियमित पुनर्विपणन की ओर प्रेरित होता है।

6.3. आधुनिक नव बाजारवाद के कुछ मुख्य आलोच्य प्रावधान हैं:

- मुक्त बाजार: आधुनिक नव बाजारवाद विश्वास करता है कि मुक्त बाजार किसी भी आर्थिक समस्या का समाधान है और निजी व्यक्तियों को अपनी स्वतंत्रता बाजार में बिना सरकारी हस्पतालों की मदद के अपने आप समस्याओं का समाधान तय करने की अनुमति देनी चाहिए।

- निजीकरण: इसमें सरकारी संस्थानों के सरकारी मोनोपोली को हटाने और निजी कंपनियों को सार्वजनिक सेवाओं के लिए उपकरण प्रदान करने की ओर प्रेरित होता है।

- न्यूनतम सरकारी अस्पताल यह नव बाजारवाद न्यूनतम सरकारी अस्पताल और निजी स्वास्थ्य देखभाल की ओर प्रेरित करता है, जिसमें लोग अपने स्वास्थ्य की देखभाल के लिए स्वतंत्रता का आनंद लेते हैं और उन्हें अपनी पसंदीदा स्वास्थ्य देखभाल प्रदाता का चयन करने की स्वतंत्रता मिलती है।

- स्वतंत्र निवेश: यह विचारशीलता निवेश में स्वतंत्रता की ओर प्रेरित करती है और निवेश को सरकारी प्रतिबंधों और प्रतिबंधों से मुक्त करने की ओर प्रेरित होती है, ताकि व्यक्तिगत और व्यवसायिक निवेश की स्वतंत्रता हो सके।

- समय से पहले जानकारी: इस दृष्टिकोण के अनुसार, सरकार के द्वारा नियमित अद्यतन और विशिष्ट निर्णय बजार की वर्तमान पूरी तरह से जानने के लिए उपकरण उपलब्ध कराए जाते हैं, जिससे निजीकरण की समस्याओं का समाधान किया जा सकता है।

"आधुनिक नव बाजारवाद" के प्रति विभिन्न राजनीतिक और आर्थिक दृष्टिकोण होते हैं, और इसकी व्यापक अनुमतियों और प्रयोगों को लेकर विवाद हो सकता है। इसे अच्छी तरह से समझने और मूल्यांकन करने के लिए, व्यक्तिगत दृष्टिकोण और सामाजिक आर्थिक प्रतिबद्धता को ध्यान में रखना महत्वपूर्ण है।

"आधुनिक नव बाजारवाद" एक आर्थिक सिद्धांत है जिसमें व्यक्तिगत और सामाजिक आर्थिक विकास की प्राथमिकता होती है। यह सिद्धांत मानता है कि एक स्वतंत्र बाजार प्रणाली के माध्यम से आर्थिक न्याय, निष्क्रियता, और आर्थिक विकास संभव है। इसका उद्देश्य आर्थिक स्वतंत्रता और आर्थिक विकास को साधना है।

इस सिद्धांत के अनुसार, व्यक्तिगत और सामाजिक स्तर पर आर्थिक स्वतंत्रता और आर्थिक स्वाधीनता के माध्यम से ही समृद्धि और सामाजिक न्याय संभव हैं। इसका परिणाम होता है व्यक्तिगत और समाजिक स्तर पर आर्थिक विकास का बेहतर प्रबंधन और सुनिश्चित रूप से होना।

6.4. नवउदारवाद,

विचारधारा और नीति मॉडल जो मुक्त बाजार प्रतिस्पर्धा के मूल्य पर जोर देता है । यद्यपि नवउदारवादी विचार और व्यवहार की परिभाषित विशेषताओं के रूप में काफी बहस है, यह आमतौर पर लाइज़-फे यर अर्थशास्त्र से जुड़ा हुआ है। विशेष रूप से, नवउदारवाद को अक्सर मानव प्रगित प्राप्त करने के साधन के रूप में निरंतर आर्थिक विकास में अपने विश्वास के संदर्भ में विशेषता है, संसाधनों के सबसे कु शल आवंटन के रूप में मुक्त बाजारों में इसका विश्वास, आर्थिक और सामाजिक मामलों में न्यूनतम राज्य हस्तक्षेप पर इसका जोर, और व्यापार और पूंजी की स्वतंत्रता के लिए इसकी प्रतिबद्धता ।

यद्यपि शब्द समान हैं, नवउदारवाद आधुनिक उदारवाद से अलग है। दोनों की वैचारिक जड़ें 19वीं सदी के शास्त्रीय उदारवाद में हैं, जिसने सरकार की अतयिधक शिक्त के खिलाफ आर्थिक उदारवाद और वयिक्तयों की स्वतंत्रता(या स्वतंत्रता) का समर्थन किया। उदारवाद का वह संस्करण अक्सर अर्थशास्त्री एडम स्मिथ से जुड़ा होता है, जिन्होंने द वेल्थ ऑफ नेशंस*(1776) में तर्क दिया* था कि बाजार एक "अदृश्य हाथ" द्वारा शासित होते हैं और इस प्रकार न्यूनतम सरकारी हस्तक्षेप के अधीन होना चाहिए। लेकिन उदारवाद समय के साथ कई अलग-अलग(और अक्सर प्रतिस्पर्धी) परंपराओं में विकिसत हुआ। आधुनिक उदारवाद सामाजिक-उदारवादी परंपरा से विकिसत हुआ, जिसने वयिक्तगत स्वतंत्रता के लिए बाधाओं पर ध्यान कें द्रित किया - जिसमें गरीबी और असमानता, बीमारी, भेदभाव और अज्ञानता शामिल है -जो निरंकु श पूंजीवाद द्वारा बनाई गई थी या बढ़ा दी गई थी और के वल प्रत्यक्ष राज्य हस्तक्षेप के माध्यम से सुधार किया जा सकता था । इस तरह के उपाय 19 वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में श्रमिकों की मुआवजा योजनाओं, स्कूलों और अस्पतालों के सार्वजिनक वित्त पोषण और

काम के घंटों और स्थितयों पर नियमों के साथ शुरू हुए और अंततः, 20 वीं शताब्दी के मध्य तक, तथाथित कल्याणकारी राज्य की सामाजिक सेवाओं और लाभों की व्यापक श्रृंखला को शामिल किया।

1970 के दशक तक, हालांकि, आर्थिक ठहराव और बढ़ते सार्वजिनक ऋण ने कु छ अर्थशास्त्रियों को शास्त्रीय उदारवाद की ओर लौटने की वकालत करने के लिए प्रेरित किया, जिसे इसके पुनर्जीवित रूप में नवउदारवाद के रूप में जाना जाने लगा। उस पुनरुद्धार की बौद्धिक नींव मुख्य रूप से ऑस्ट्रियाई मूल के ब्रिटिश अर्थशास्त्री फ्रेडरिक वॉन हायेक काम था, जिन्होंने तर्क दिया कि धन के पुनर्वितरण के उद्देश्य से हस्तक्षेपवादी उपाय अनिवार्य रूप से अधिनायकवाद की ओर ले जाते हैं, और अमेरिकी अर्थशास्त्री मिल्टन फ्रीडमैन, जिन्होंने व्यापार चक्र को प्रभावित करने के साधन के रूप में सरकारी राजकोषीय नीति को खारिज कर दिया (*मुद्रीकरण* भी देखें)। उनके विचारों को ब्रिटेन और संयुक्त राज्य अमेरिका में प्रमुख रूढ़िवादी राजनीतिक दलों द्वारा उत्साहपूर्वक अपनाया गया था, जिन्होंने ब्रिटिश प्रधान मंत्री मार्गरेट थैचर(1979-90) और अमेरिकी राष्ट्रपित रोनाल्ड रीगन(1981-89) के लंबे प्रशासन के साथ सत्ता हासिल की।

नवउदारवादी विचारधारा और नीतियां तेजी से प्रभावशाली हो गईं, जैसा कि ब्रिटिश लेबर पार्टी द्वारा 1995 में "उत्पादन के साधनों के सामान्य स्वामित्व" के प्रति अपनी प्रतिबद्धता के आधिकारिक परित्याग और लेबर पार्टी और अमेरिका की सावधानीपूर्वक व्यावहारिक नीतियों द्वारा चित्रत किया गया है। 1990 के दशक से डेमोक्रे टिक पार्टी जैसा कि आर्थिक वैश्वीकरण के नए युग में राष्ट्रीय अर्थव्यवस्थाएं अधिक अन्योन्याश्रित हो गईं, नवउदारवादी ने भी मुक्त-व्यापार नीतियों और अंतर्राष्ट्रीय पूंजी के मुक्त आंदोलन को बढ़ावा दिया (*देखें* नवउदारवादी वैश्वीकरण)। नवउदारवाद के नए महत्व का सबसे स्पष्ट संकेत, हालांकि, एक राजनीतिक शिक्त के रूप में स्वतंत्रतावाद का उद्भव था, जैसा कि संयुक्त राज्य अमेरिका में लिबर्टेरियन पार्टी की बढ़ती प्रमुखता और विभन्न देशों में मिश्रत थिंक टैंक के निर्माण से स्पष्ट है , जिसने बाजारों के मुक्तिवादी आदर्श और तेजी से सीमित सरकारों को बढ़ावा देने की मांग की।

2007 की शुरुआत में, संयुक्त राज्य अमेरिका और पिश्चमी यूरोप में वित्तीय संकट और महान मंदी ने कुछ अर्थशास्त्रियों और राजनीतिक नेताओं को नवउदारवादी के अधिकतम मुक्त बाजारों के आग्रह को अस्वीकार करने और इसके बजाय वित्तीय और बैंकिंग उद्योगों के अधिक सरकारी विनयमन का आह्वान करने के लिए प्रेरित किया।

3. पूंजीवाद या मुक्त उद्यम अर्थव्यवस्था

   पूंजीवाद एक आर्थिक व्यवस्था है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति उपभोक्ता, उत्पादक और संसाधन स्वामी के रूप में बड़ी मात्रा में आर्थिक स्वतंत्रता के साथ आर्थिक गतिविधि में लगा हुआ है। व्यक्तिगत-दोहरी आर्थिक गतिविधियाँ समाज के मौजूदा कानूनी और संस्थागत ढांचे की पुष्टि करती हैं जो निजी संपत्ति, लाभ के उद्देश्य, उद्यम की स्वतंत्रता और उपभोक्ताओं की संप्रभुता की संस्था द्वारा शासित होती है। उत्पादन के सभी कारक निजी तौर पर स्वामित्व और व्यक्तियों द्वारा प्रबंधित होते हैं। कच्चे माल, मशीनों, खेतों और कारखानों का स्वामित्व और प्रबंधन ऐसे व्यक्तियों द्वारा किया जाता है जो देश के प्रचलित कानूनों के तहत उनका निपटान करने के लिए स्वतंत्र हैं।

व्यक्तियों को कोई भी व्यवसाय चुनने और कितनी भी वस्तुएं और सेवाएं खरीदने और बेचने की स्वतंत्रता है।

6.5. पूंजीवाद की विशेषताएं पूंजीवाद की प्रमुख विशेषताओं की चर्चा नीचे की गई है।

(1) निजी संपत्ति. पूंजीवाद निजी संपत्ति की संस्था पर पनपता है। इसका मतलब है कि किसी फर्म या फैक्ट्री या खदान का मालिक अपनी इच्छानुसार इसका उपयोग कर सकता है। वह देश के प्रचलित कानूनों के अनुसार अपनी इच्छानुसार किसी भी संस्था को किराये पर दे सकता है, बेच सकता है या पट्टे पर दे सकता है। "राज्य निजी संपत्ति-मालिकों के अधिकार और शक्तियों को प्रतिबंधित करता है। संपत्ति के मालिक को इसका उपयोग अपने पड़ोसियों या पूरे समुदाय के लिए हानिकारक तरीके से नहीं करना चाहिए। उदाहरण के लिए, उसे जानबूझकर अपने घर को नहीं जलाना चाहिए या प्रदूषित नहीं करना चाहिए नदी या हानिकारक धुएं का उत्पादन; उसे खतरनाक दवाओं का निर्माण या व्यापार करने, सार्वजनिक जुआ स्थान चलाने, अश्लील किताबें या तस्वीरें प्रकाशित करने या वितरित करने से प्रतिबंधित किया जा सकता है ... उसे अपने परिसर को बनाए रखने के लिए आवश्यक कानूनों का पालन करना होगा अच्छी स्वच्छता स्थिति में और अपने कर्मचारियों को दुर्घटना से बचाने के लिए सावधानी बरतें।"

निजी संपत्ति की संस्था उसके मालिक को कड़ी मेहनत करने, अपने व्यवसाय को कुशलतापूर्वक व्यवस्थित करने और अधिक उत्पादन करने के लिए प्रेरित करती है, जिससे न केवल उसे बल्कि बड़े पैमाने पर समुदाय को भी लाभ होता है। यह सब लाभ के उद्देश्य से संचालित होता

है।

(2) लाभ का उद्देश्य। पूंजीवादी व्यवस्था के संचालन के पीछे मुख्य उद्देश्य लाभ का उद्देश्य होता है। व्यवसायियों, किसानों, उत्पादकों सहित वेतनभोगियों के निर्णय लाभ के उद्देश्य पर आधारित होते हैं। "एक वेतनभोगी वह नौकरी चुनेगा जो उसे सबसे अच्छा भुगतान करती है, घंटों और काम करने की स्थिति को ध्यान में रखते हुए। ठीक उसी तरह जैसे एक व्यवसायी वह कोर्स चुनेगा जो उसे सबसे अच्छा भुगतान करता है।" लाभ, लाभ के उद्देश्य से भिन्न है। लाभ परिव्यय और प्राप्ति के बीच का अंतर है; जबकि लाभ का उद्देश्य व्यक्तिगत लाभ की इच्छा का पर्याय है। यह अधिग्रहण की प्रवृत्ति है जो पूंजीवादी अर्थव्यवस्था में व्यक्तिगत पहल और उद्यम के पीछे निहित है।

(3) मूल्य तंत्र। पूंजीवाद के तहत, मूल्य तंत्र केंद्रीय अधिकारियों के किसी निर्देश और नियंत्रण के बिना स्वचालित रूप से संचालित होता है। यह लाभ का उद्देश्य है जो उत्पादन निर्धारित करता है। लाभ परिव्यय और प्राप्ति के बीच का अंतर है, लाभ का आकार कीमतों पर निर्भर करता है। कीमतों और लागत के बीच जितना बड़ा अंतर होगा, लाभ उतना ही अधिक होगा। फिर, कीमतें जितनी अधिक होंगी, विभिन्न मात्रा और प्रकार के उत्पादों का उत्पादन करने के लिए उत्पादकों के प्रयास जितने अधिक होंगे। दूसरी ओर, कीमतें विभिन्न वस्तुओं के उपभोक्ताओं की पसंद पर निर्भर करती हैं। यह उपभोक्ताओं की पसंद है जो यह निर्धारित करती है कि क्या उत्पादन करना है, कितना उत्पादन करना है और कैसे उत्पादन करना है। इस प्रकार पूंजीवाद आपसी आदान-प्रदान की एक प्रणाली है जहां मूल्य-लाभ तंत्र एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

(4) राज्य की भूमिका. 19वीं शताब्दी के दौरान राज्य की भूमिका कानून और व्यवस्था बनाए रखने, बाहरी आक्रमण से सुरक्षा और शैक्षिक और सार्वजनिक स्वास्थ्य सुविधाओं के प्रावधान तक ही सीमित थी। राज्य द्वारा आर्थिक मामलों में गैर-हस्तक्षेप की अहस्तक्षेप की नीति को द्वितीय विश्व युद्ध के बाद पश्चिम की पूंजीवादी अर्थव्यवस्थाओं में छोड़ दिया गया है। अब राज्य को महत्वपूर्ण कार्य पूरे करने हैं। वे हैं:

(ए) समग्र मांग को बनाए रखने के लिए उचित उपाय अपनाना जो न तो बहुत छोटी हो और न ही बहुत बड़ी हो ताकि बेरोजगारी या मुद्रास्फीति से बचा जा सके। इसके लिए स्वस्थ मौद्रिक और ऋण संस्थानों की स्थापना और अर्थव्यवस्था की आर्थिक स्थिति को ध्यान में रखते हुए राजकोषीय उपायों को अपनाने की आवश्यकता है।

(बी) एकाधिकार को रोकने के लिए। एकाधिकार मूल्य प्रणाली को विकृत कर देता है। कीमतें बनाए रखने के लिए आउटपुट को प्रतिबंधित किया जाता है ताकि जहां एकाधिकार कायम हो वहां कम संसाधन नियोजित हों। एकाधिकार और एकाधिकारवादी प्रथाओं की जांच करने के लिए, राज्य एकाधिकार विरोधी उपाय अपनाता है, और यहां तक कि बड़े पैमाने पर समुदाय के लाभ के लिए कुछ एकाधिकार निगमों का राष्ट्रीयकरण भी करता है।

(सी) सांप्रदायिक जरूरतों की संतुष्टि के लिए उपाय अपनाना। ये वे आवश्यकताएं हैं जिनकी संतुष्टि के लिए किसी व्यक्ति से बाजार मूल्य या तो वसूला नहीं जा सकता या वसूला ही नहीं जाना चाहिए।" वे हैं सार्वजनिक स्वास्थ्य उपाय, सार्वजनिक पार्क, सड़कें, पुल, संग्रहालय, चिड़ियाघर, शिक्षा, बाढ़ नियंत्रण उपाय, आदि। इन उपायों को अपनाकर, "राज्य समग्र रूप से समुदाय की सेवा के लिए स्व-हित का उपयोग करने और मूल्य प्रणाली को पूरक करने का प्रयास करता है, साथ ही यह सुनिश्चित करता है कि यह काम करता है कुशलतापूर्वक।"?

(5) उपभोक्ताओं की संप्रभुता। पूंजीवाद के तहत, 'उपभोक्ता ही राजा है।' इसका तात्पर्य उपभोक्ताओं द्वारा पसंद की स्वतंत्रता से है। उपभोक्ता अपनी इच्छानुसार कोई भी वस्तु खरीदने के लिए स्वतंत्र हैं। निर्माता उपभोक्ताओं के स्वाद और प्राथमिकताओं को पूरा करने के लिए विभिन्न प्रकार के सामान का उत्पादन करने का प्रयास करते हैं। इसका तात्पर्य उत्पादन की स्वतंत्रता से भी है, जिसके तहत उत्पादक उपभोक्ता को संतुष्ट करने के लिए विभिन्न प्रकार की वस्तुओं का उत्पादन करने के लिए स्वतंत्र हैं, जो उनमें से विकल्प चुनने में 'राजा' की तरह काम करता है, उसकी दी गई धन आय से। उपभोग और उत्पादन की ये दोहरी स्वतंत्रताएँ पूंजीवादी व्यवस्था के सुचारू संचालन के लिए आवश्यक हैं।

(6) उद्यम की स्वतंत्रता. उद्यम की स्वतंत्रता का अर्थ है कि एक उद्यमी, एक पूंजीपति और एक मजदूर के लिए व्यवसाय का स्वतंत्र विकल्प है। लेकिन यह स्वतंत्रता उनकी क्षमता और प्रशिक्षण के अधीन है। कानूनी प्रतिबंध, और मौजूदा बाज़ार स्थितियाँ। इन सीमाओं के अधीन, एक उद्यमी कोई भी उद्योग स्थापित करने के लिए स्वतंत्र है, एक पूंजीपति अपनी पसंद के किसी भी उद्योग या व्यापार में अपनी पूंजी निवेश कर सकता है, और एक व्यक्ति अपनी पसंद का कोई भी व्यवसाय चुनने के लिए स्वतंत्र है। "अगर कोई सोचता है कि एक नए प्रकार का उत्पाद उपभोक्ताओं को पसंद आएगा, तो वह उद्यम पर अपनी पूंजी जोखिम में डालने के लिए स्वतंत्र है(और दूसरों को जोखिम उठाने के लिए मनाने की कोशिश करने के लिए)। यदि वह सफल होता है, तो जनता के साथ-साथ उसे भी लाभ होगा; यदि वह असफल होता है, तो

नुकसान उसका ही होता है। इसी प्रकार उत्पादन के तरीकों के साथ भी। कोई भी व्यक्ति किसी नए आविष्कार(जब तक कि वह पेटेंट न हो...) या किसी नए विचार को आज़माने के लिए स्वतंत्र है। यदि वह कम लागत पर समान आउटपुट प्राप्त कर सकता है(जिसका अर्थ है कम श्रम और अन्य संसाधनों का उपयोग करके), उसे और समुदाय दोनों को लाभ होता है; वह गलत है, नुकसान उसका है।" उद्यम की स्वतंत्रता की इस महत्वपूर्ण विशेषता की उपस्थिति के कारण ही पूंजीवादी अर्थव्यवस्था को मुक्त उद्यम अर्थव्यवस्था भी कहा जाता है।

7) प्रतियोगिता. प्रतिस्पर्धा पूंजीवादी अर्थव्यवस्था की सबसे महत्वपूर्ण विशेषताओं में से एक है। इसका तात्पर्य बाजार में बड़ी संख्या में खरीदारों और विक्रेताओं के अस्तित्व से है जो स्वार्थ से प्रेरित हैं लेकिन अपने व्यक्तिगत कार्यों से बाजार के निर्णयों को प्रभावित नहीं कर सकते हैं। इसके अलावा, सही प्रतिस्पर्धा में फर्मों के प्रवेश और अस्तित्व की स्वतंत्रता, खरीदारों और विक्रेताओं की ओर से सही ज्ञान, उत्पादन के कारकों की सही गतिशीलता, सजातीय उत्पाद और परिवहन लागत की अनुपस्थिति शामिल है। इन धारणाओं के तहत, उपभोक्ता सबसे कम कीमत पर अधिक खरीदने का प्रयास करते हैं, और निर्माता अधिकतम लाभ प्राप्त करने के लिए गुणवत्तापूर्ण उत्पाद बनाने का प्रयास करते हैं। लाभ का उद्देश्य उत्पादकों को अपनी उत्पादक क्षमता बढ़ाने के लिए प्रेरित करता है। संसाधन मालिक भी उच्च पुरस्कार अर्जित करने के लिए उत्पादन बढ़ाने की पूरी कोशिश करते हैं। पूंजीवाद के तहत पर्याप्त मूल्य लचीलापन होने के कारण, कीमतें मांग में, उत्पादन तकनीकों में और उत्पादन के कारकों की आपूर्ति में बदलाव के अनुसार खुद को समायोजित कर लेती हैं। कीमतों में परिवर्तन, बदले में, उत्पादन, कारक मांग और व्यक्तिगत आय में समायोजन लाता है। इस प्रकार "निजी उद्यम अर्थव्यवस्था में पहल को लगातार सतर्क रखने, उपभोक्ता की रक्षा करने और पर्याप्त लचीली मूल्य प्रणाली बनाए रखने के लिए प्रतिस्पर्धा आवश्यक है।"

6.6. अभ्यास प्रश्न

1. "मैक्रोआर्थिक और माइक्रोआर्थिक नैतिकता के बीच क्या अंतर होता है? क्या यह दोनों आर्थिक तत्वों के बीच संतुलन स्थापित करते हैं?"
2. "आधुनिक नव बाजारवाद के मूल सिद्धांतों में से कुछ मुख्य सिद्धांत बताएं और उनके प्रति अपने विचार दें।"
3. "मुफ्त बाजार और निजी बाजार के बीच क्या अंतर होता है? आधुनिक नव बाजारवाद के सिद्धांतों के साथ इसका क्या संबंध है?"
4. "मुक्त बाजार प्रणाली के आधार पर मूल आर्थिक समस्याओं का समाधान कैसे होता है? मूल आर्थिक समस्याओं का समाधान नामक कैसे काम करता है?"
5. "सामाजिकिकरण का मतलब क्या है और यह कैसे काम करता है? आधुनिक नव बाजारवाद के संदर्भ में इसका महत्व क्या है?"

इकाई–1 फर्म के सिद्धांत : फर्म के उद्देश्य – लाभ अधिकतमीकरण, विक्रय अधिकतमीकरण, अल्पकाल एवं दीर्घकाल में फर्म के उद्देश्य

इकाई की रूपरेखा–

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 फर्म

1.3 फर्म की विशेषताएं

1.4 फर्म के उद्देश्य

    1.4.1 लाभ अधिकतमकरण

    1.4.2 विक्रय अधिकतमकरण

    1.4.3 अल्प एवम् दीर्घकाल में फर्म के उद्देश्य

1.5 सारांश

1.6 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1.7 अभ्यासों के उत्तर

1.0 उद्देश्य

इस इकाई के अन्तर्गत फर्म का सामान्य परिचय समझाने के पश्चात् इसके उद्देश्यों का वर्णन किया गया है जिसके अध्ययन के पश्चात् आप

- फर्म को परिभाषित कर सकेंगे;
- फर्म की विशेषताओं अर्थात् लक्षणों को समझ सकेगे;
- फर्म की अवधारणा एवं विशेषताओं को जान लेने के बाद इसके विभिन्न उद्देश्यों यथा-लाभ अधिकतमकरण, विक्रय अधिकतम करण आदि का आलोचनात्मक अध्ययन करेंगे।
- समझ सकेंगे कि अल्पकाल एवं दीर्घकाल से अर्थशास्त्रियों का क्या अभिप्राय है;
- अल्पकाल में फॅर्म के उद्देश्यों से परिचित हो जाएंगे;
- उन परिस्थितियों को समझ सकेंगे जिनके कारण अल्पकाल में हानि उठाकर भी उत्पादन जारी रखना आवश्यक होता है;
- दीर्घकाल में फॅर्म के उद्देश्यों से परिचित हो जाएगे।

1.1 प्रस्तावना

इस इकाई में आपका परिचय फर्म से कराया जायेगा साथ ही आप इस तथ्य से भी अवगत हो सकेंगे कि ये फर्म किन उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु कार्य करती हैं।

इसमें आपको यह समझाया जायेगा कि एक फर्म सम्पत्ति के स्वामित्व तथा प्रसंविदीय सम्बन्धो का एक वैधानिक स्वरूप होती है तथा जो अपने स्वामियों की सम्पत्ति को बढ़ाने की दृष्टि से वस्तुओं का उत्पादन एवं विक्रय करती है।

इसके अतिरिक्त फर्म की परिभाषा के आधार पर उसकी विशेषताओं की भी विवेचना की जायेगी ताकि आप इकाई के प्रमुख भाग "फर्म के उद्देश्य" को सरलता से समझ सकें।

फर्म के उद्देश्य के सम्बन्ध में आपको इस तथ्य से परिचित कराया जायेगा कि प्रत्येक फर्म के कुछ उद्देश्य होते हैं जिन्हें प्राप्त करना फर्म के लिए सर्वोपरि होता है। फर्म के उद्देश्य का आशय उस लक्ष्य से होता है जिसे प्राप्त करने के लिए फर्म प्रयत्नशील रहती है।

इस इकाई में आपको इस बात का भी बोध कराया जायेगा कि यद्यपि फर्म के पारम्परिक सिद्धान्त में फर्म का एक मात्र उद्देश्य अधिकतम लाभ कमाना हैं। परन्तु प्रयोग सिद्ध प्रमाणों से व्यावसायिक फर्मो के अन्य अद्देश्यों यथा अधिकतम विक्रय, अधिकतम विकास इत्यादि को भी प्राप्त करना है।

1.2 फर्म

अर्थशास्त्र में, एक फर्म महत्वपूर्ण स्थान रखती है क्योंकि फर्म स्तर पर प्रबंधकीय निर्णय लिए जाते हैं। सामान्य भाषा में एक फर्म को माल के उत्पादन में लगी एक विनिर्माण इकाई माना जाता है। अर्थशास्त्र में फर्म शब्द का दायरा व्यापक है। यह किसी भी व्यावसायिक संगठन को विरासत में मिली सेवा और कृषि संगठन का भी प्रतिनिधित्व करता है।

प्रसिद्ध अर्थशास्त्रियों द्वारा दी गई फर्म की कुछ परिभाषाएँ नीचे दी गई हैं–

1. फर्म उत्पादन की एक इकाई है जो प्रौद्योगिकी की दी गई स्थिति के तहत वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन करने के लिए उत्पादन के कारकों(या इनपुट) को नियोजित करती है।
2. यह एक स्वतंत्र रूप से प्रशासित व्यावसायिक इकाई है - हैन्सन।
3. यह नियंत्रण का एक केंद्र है जहां क्या उत्पादन करना है और कैसे उत्पादन करना है इसके बारे में निर्णय लिए जाते हैं।
4. यह एक व्यावसायिक इकाई है जो वस्तुओं और सेवाओं के उत्पादन के उद्देश्य से उत्पादक संसाधनों को किराए पर लेती है।
5. एक फर्म एक स्वतंत्र संगठन है जिसका भाग्य कुल भुगतान के परिमाण से निर्धारित होता है और जिसमें कुल भुगतान वस्तुओं या सेवाओं के उत्पादन और बिक्री से होता है(हार्वे लीबेंस्टीन)।

1.3 फर्म की विशेषताएं

फर्म का आशय स्पष्ट हो जाने पर हम विशेषताओं का अध्ययन भली प्रकार कर सकेंगे, क्योंकि ये सभी परिभाषाएँ अलग-अलग समय अवधि के दौरान विकसित हुई हैं। वे फर्मों के सामने आने वाली विभिन्न आर्थिक समस्याओं पर जोर देने का प्रयास करते हैं। विभिन्न परिभाषाओं से फर्म की विभिन्न विशेषताएँ सामने आती हैं जो नीचे सूचीबद्ध हैं–

1. यह एक ऐसी जगह है जहां उत्पादन से संबंधित सभी निर्णय लिए जाते हैं जैसे कि क्या, कहां और कितना उत्पादन करना है।
2. यह वह स्थान है जहां उत्पादन के लिए जनशक्ति को काम पर रखा जाता है।
3. यह एक ऐसा स्थान है जहां उत्पादन के सभी संसाधनों को एक साथ लाया जाता है, उत्पादन किया जाता है और साथ ही निर्मित उत्पाद की बिक्री और वितरण भी किया जाता है।
4. प्रौद्योगिकी की स्थिति फर्म के उत्पादन कार्य द्वारा परिभाषित की जाती है।

1.4 फर्म के उद्देश्य

एक फर्म को एक ही समय में उत्पादन और विपणन से संबंधित सभी विविध कार्य करने की आवश्यकता होती है। लाभ अर्जित करते समय, एक उत्पादन इकाई के रूप में फर्म उपभोक्ता की मांग के अनुसार सामान का निर्माण या सेवा प्रदान करने का प्रयास करती है। किसी भी फर्म का मुख्य उद्देश्य अधिकतम लाभ कमाना होता है। परंपरागत रूप से यह माना जाता था कि कंपनी प्रत्येक समय अवधि में अधिकतम लाभ कमाने का प्रयास करती है। लेकिन अब यह महसूस किया गया है कि फर्म का उद्देश्य अल्पावधि में लाभ या हानि की परवाह किए बिना लंबी अवधि में अधिकतम लाभ प्राप्त करना होना चाहिए।

1.4.1 लाभ अधिकतमीकरण–

इसे फर्म का परंपरावादी सिद्धांत, फर्म का नव क्लासिकल सिद्धांत या सीमांतवादी सिद्धांत के नाम, से भी जाना जाता है| फर्म के परंपरावादी सिद्धांत के अनुसार – "किसी फर्म का उद्देश्य अपने लाभ को अधिकतम करना होता है|" लाभ को अधिकतम करने के कारण इस सिद्धांत को "लाभ अधिकतमीकरण सिद्धांत" भी कहा जाता है|

लाभ = कुल आगम – कुल लागत

फर्म के नव क्लासिकल सिद्धांत में प्रबंधक अथवा स्वामी का मुख्य उद्देश्य लाभ(TT) को अधिकतम करना होता है, इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए कुल आगम में वृद्धि की जाती है, अथवा कुल लागतों में कमी लाने का प्रयास किया जाता है|

मान्यताएं

1. साहसी ही फर्म का स्वामी होता है, अर्थात् स्वामी और साहसी में कोई भेद नहीं है|
2. फर्म का एकमात्र उद्देश्य अपने लाभ को अधिकतम करना होता है|
3. लाभ अधिकतम करने के लिए सीमांतवादी सिद्धांत का पालन किया जाता है|
4. साहसी को बाजार एवम् उद्योग के संबंध में पूर्ण जानकारी होती है
5. बाजार में पूर्ण प्रतियोगिता की दशा विद्यमान हैं|
6. नयी फर्म का प्रवेश नव क्लासिकल सिद्धांत के वास्तविक मॉडल पर निर्भर करता है|

इन मान्यताओं को देने के पश्चात फर्म द्वारा लाभ को अधिकतम करने की अवधारणा को दो विधियों द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता है–

(अ) कुल आगम, कुल लागत विधि–

बिजली की तार इस विधि के अनुसार किसी फर्म का लाभ उस समय अधिकतम होता है जब कुल लागत और कुल आगम के बीच सर्वाधिक अंतर पाया जाता है। इस विधि को निम्न प्रकार से प्रदर्शित किया जा सकता है–

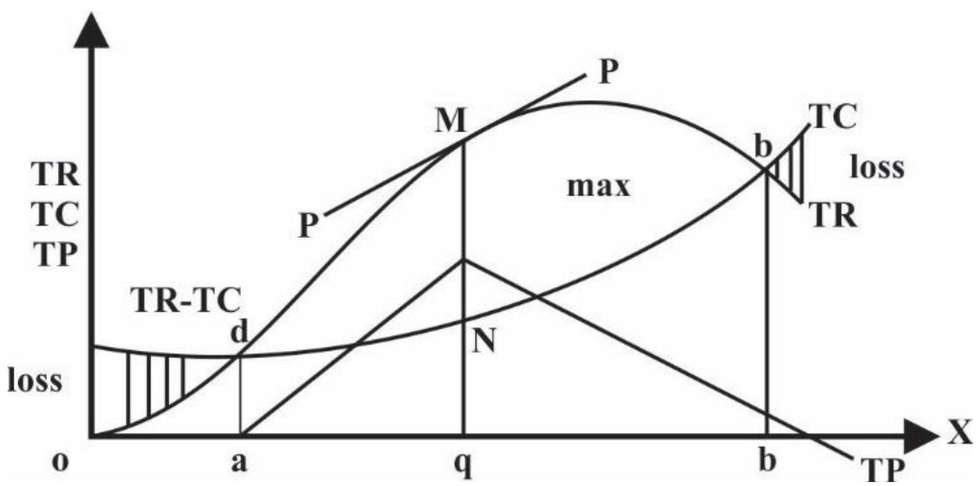

उपरोक्त चित्र में TR,TC और TP Y–अक्ष पर और उत्पादन की मात्रा को X–अक्ष पर प्रदर्शित किया गया है। बिंदुA और b पर लाभ का स्तर शून्य है, क्योंकि कुल अगम, कुल लागत के बराबर है। जब फर्म द्वारा OQ मात्रा का उत्पादन किया जाता है, तो TR और TC के बीच सर्वाधिक अंतर पाया जाता है, जिसे MN द्वारा प्रदर्शित किया गया है। यही पर फर्म का संतुलन होगा।

उत्पादन के इस बिंदु पर TP वक्र सर्वाधिक उच्च होगा।

यद्यपि आमतौर पर चित्र के द्वारा अधिकतम लाभ को प्रदर्शित किया जाता है परंतु इस विधि में मुख्यतः दो कठिनाइयां आती हैं –

1. एक ही दृष्टि में कुल लागत एवम् कुल आगम में अधिकतम अंतर मालूम करना सरल नही है।

2. इसी प्रकार एक ही दृष्टि में प्रति इकाई वस्तु का मूल्य ज्ञात करना संभव नहीं है।

(ब) सीमांत आगम एवम् सीमांत लागत विधि –

फर्म द्वारा लाभ को अधिकतम करने की दूसरी विधि सीमांतवादी विधि कहलाती है। इस विधि के अनुसार फर्म का लाभ अधिकतम होने के लिए दो शर्तों का पालन होना या किया जाना अनिवार्य होता है–

- सीमांत आगम सीमांत लागत के बराबर होनी चाहिए।

  MR = MC

- सीमांत लागत वक्र की ढाल सीमांत आगम वक्र की ढाल से अधिक होनी चाहिए।

  d(MR)/dQ. < d(MC)/dQ

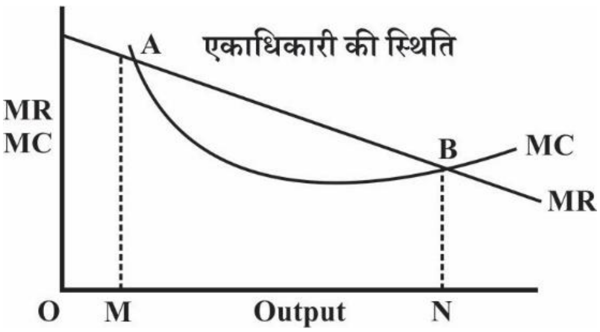

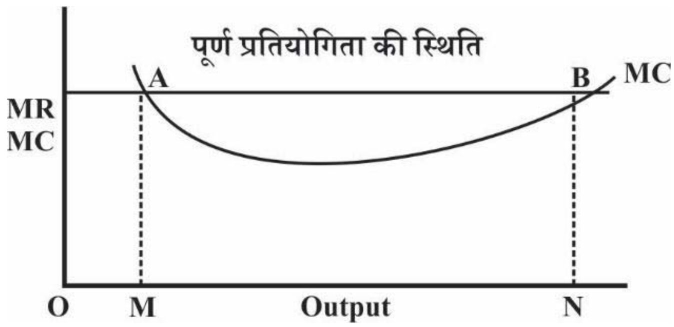

यहां चित्र संख्या 2, 3 MC वक्र MR वक्र को दो बिंदुओंA तथा B पर कटता है। इन दोनो बिंदुओं पर सीमांत आगम, सीमांत लागत के बराबर है। यद्यपि सीमांत लागत और सीमांत आगम का बराबर होना फर्म के अधिकतम लाभ की अनिवार्य शर्त है, किंतु यह शर्त अकेले पर्याप्त नहीं है। इसके लिए एक दूसरी शर्त का भी पूरा होना आवश्यक है। और वह यह है कि सीमांत लागत रेखा सीमांत आगम रेखा को नीचे से काटे यदि यह दूसरी सर्च पूरी नहीं होगी तो फर्म अधिकतम लाभ प्राप्त नहीं कर सकती। बिंदुA पर MR वक्र की ढाल MC वक्र की ढाल से अधिक है, जो संतुलन का बिंदु नहीं कहलाएगा। बिंदु B पर जहां MC वक्र MR वक्र को नीचे से काट रहा है, संतुलन का बिंदु होगा। क्योंकि इस बिंदु पर MR=MC है, और एमसी वक्र की ढाल MR वक्र की ढाल से अधिक है, बिंदु B पर फर्म को मिलने वाला लाभ सर्वाधिक होगा।

गणितीय विधि द्वारा व्याख्या–

$$\text{लाभ}(\pi) = \text{कुल आगम}(TR) - \text{कुल लागत}(TC)$$

दोनो पक्षों को ‘Q’ के सापेक्ष अवकलन करने पर–

$$d(\pi)/dQ = d(TR)/dQ - d(TC)/dQ$$

चूंकि अधिकतम मान(उच्चिष्ठ) के लिए प्रथम अवकलज का मान शून्य के बराबर रखा जाता है–

$$0 = MR - MC$$

$$\text{या } MR = MC$$

पुनः द्वितीय अवकलज करने पर–

लाभ अधिकतम की दशा के लिए MC वक्र का ढाल MR वक्र की ढाल से अधिक होना चाहिए या MC वक्र MR वक्र को नीचे से काटना चाहिए। इसे निम्न प्रकार से प्रदर्शित किया जा सकता है–

$$d^2\Pi/dQ < 0$$

$$\text{या } d^2MR/dQ - d^2MC/dQ < 0$$

$$\text{या } d^2MR/dQ < d^2MC/dQ$$

या MR वक्र का ढाल < MC वक्र का ढाल

अर्थात MR वक्र को MC वक्र नीचे से कटता है।

इस प्रकार किसी फर्म के लाभ अधिकतम करने की दो आवश्यक शर्त – 1. MR=MC, एवम् 2. MR को MC वक्र नीचे से काटे।

आलोचना –

1. फर्म के परंपरागत सिद्धांत में यह मान्यता दी गई है कि प्रबंधक तथा स्वामी एक ही व्यक्ति होता है, अर्थात साहसी और पानी में भेद नहीं पाया जाता। यह व्यक्ति सभी प्रकार के निर्णय लेता है तथा इसके पास असीमित सूचनाएं और असीमित क्षमता होती है।

   यद्यपि स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि यह मान्यता अवास्तविक है, क्योंकि आधुनिक समय में फर्मों का आकार जटिल होता है तथा प्रबंधक और स्वामी वर्ग में भिन्नता पाई जाती है। और इसलिए प्रबंधक लाभ को अधिकतम करने का प्रयास नहीं करता है।

2. फर्म के नाम क्लासिकल सिद्धांत की आलोचना उसके लाभ अधिकतम करने के उद्देश्य के कारण भी हुई, जिसके लिए दो तर्क प्रस्तुत किए गए–

   - इस संबंध में पहला तर्क दिया जाता है कि फर्म द्वारा लाभ अधिकतम इसलिए नहीं किया जा सकता क्योंकि उनके पास पर्याप्त जानकारी और सूचना का अभाव होता था। उन्हें अपनी सीमांत लागत और सीमांत आगम की भी सही जानकारी नहीं होती है और इसलिए एमआर = एमसी के सिद्धांत को लागू नहीं किया जा सकता है।

   - दूसरा तर्क अर्थशास्त्रियों द्वारा प्रस्तुत किया गया कि यदि फर्म लागत को अधिकतम करने के लिए सक्षम हो तब भी वह उसे अधिकतम नहीं करना चाहती। क्योंकि किसी फर्म के कई उद्देश्य होते हैं, तथा एक को अधिकतम करना उसमें से एक मात्र उद्देश्य होता है।

3. कुछ अर्थशास्त्रियों के अनुसार फर्म का सबसे प्रमुख उद्देश्य दीर्घकाल तक बाजार में बने रहना होता है। ऐसे में प्रबंधकों द्वारा उन निर्णयों को लिया जाता है, जिससे फर्म के स्तर को बनाए रखते हुए दीर्घकाल में लाभ अर्जित किया जा सके।

4. फर्म के नव क्लासिकल सिद्धांत मैं यह मान्यता दी गई कि फर्मों को लागत उनकी मांग और बाजार के वातावरण के संबंध में पूर्ण जानकारी होती है। परंतु यह नहीं बताया गया कि यह जानकारी उन्हें कैसे प्राप्त होती है।

5. यह भी तर्क दिया गया कि बाजार संबंधी संपूर्ण ज्ञान के लिए साथी को अत्यधिक मात्रा में जानकारियां सूचनाओं और गणना करने की योग्यता की आवश्यकता होती है, जो निश्चित रूप से उसके पास नहीं पाई जाती है।

6. कर्मों के नाम क्लासिकल सिद्धांत में यह माना गया कि अपने लाभ को अधिकतम करने के लिए फर्मों द्वारा MR=MC नियम का पालन किया जाता है। परंतु इस सिद्धांत की आलोचना इस आधार पर की गई कि यह नियम अल्पकाल में प्रभावी होता है। जबकि फलों का उद्देश्य अपने दीर्घकालिक लाभ को अधिकतम करना होता है।

बोध प्रश्न 1

अपना उत्तर लिखने के लिए प्रत्येक प्रश्न के सामने छोड़ी गयी खाली जगह का इस्तेमाल करें।

• इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान करें।

1. किसी फर्म का प्रमुख उद्देश्य क्या है? लाभ अधिकतमकरण की स्थिति को किस प्रकार से स्पष्ट किया जा सकता है ?

लाभ अधिकतमकरण के आलोचकों द्वारा इस अवधारणा के अनेक विकल्प प्रस्तुत किये गये हैं। जिनमें से कुछ प्रमुख विकल्पों का अध्ययन

हम यहां पर करेंगे।

1.4.2 विक्रय अधिकतमकरण–

अर्थशास्त्री डब्ल्यू जे बॉमल ने फर्म के संदर्भ में जिस सिद्धांत का प्रतिपादन किया मुझे "अधिकतम विक्रय आय मॉडल" के नाम से जाना जाता है। बामल द्वारा प्रस्तुत यह सिद्धांत फर्म के प्रबंध के सिद्धांत के अनुसार फर्म, प्रबंधको, श्रमिकों, अंशधारियों, आपूर्तिकर्ताओं इत्यादि का एक समूह होता है। जिसके सदस्यों के उद्देश्य एक दूसरे से भिन्न होते हैं। प्रबंधक निश्चित रूप से इस संगठन का सबसे महत्वपूर्ण भाग होता है, क्योंकि निर्णय लेने का अधिकार केवल प्रबंधक के पास होता है।

प्रो• बामल ने विक्रय अधिकतमकरण को पारंपरिक लाभ अधिकतमकरण की मान्यता के विकल्प के रूप में प्रस्तुत किया है। उनका मत है कि व्यावहारिक जीवन में एक फर्म का अंतिम उद्देश्य अपने कुल विक्रय आय को अधिकतम करना होता है ना कि कुल लाभ को। इनका विचार है कि फर्म अपने विक्रय को ना केवल इसलिए बढ़ाना चाहती है कि वह अपने परिचालन कुशलता के उद्देश्यों को प्राप्त करना चाहती है अपितु उसके लिए विक्रय से तात्पर्य वस्तु को बेचने से प्राप्त कुल आय से हैं। अतः प्रो बॉमेल ने अपनी इस परिकल्पना को विक्रय आय अधिकतमकरण या आय अधिकतमकरण की संज्ञा दी।

प्रो बामल का विचार है कि उसकी इस धारणा का की अल्पाधिकारी का मुख्य उद्देश्य लाभों को नहीं बल्कि बिक्री को अधिकतम करना है, के पक्ष में पर्याप्त शक्तिशाली प्रमाण उपलब्ध हैं। उन्होंने कहा– "स्पष्टतः यह सामान्य अनुभव है कि कोई व्यक्ति किसी बात व्यावसायिक अधिकारी से पूछता है व्यापार कैसा है? तो वह यही बताता है कि बिक्री बढ़(या कम) हो रही है, और यदि वह लाभों का वर्णन भी करता है तो वह बाद में सोचा गया विषय होता है और मुझे बताया गया है कि यंग प्रेसिडेंट ऑर्गेनाइजेशन का सदस्य बनने की दो शर्ते हैं–(i) प्रार्थी 40 वर्ष से कम आयु का हो और(ii) इस कंपनी का वह प्रमुख है उसकी वार्षिक बिक्री दस लाख डॉलर से अधिक की होनी चाहिए। स्पष्ट है कि इस बात का कोई अंतर नहीं पड़ता कि फर्म दिवालियापन के किनारे पर है..... जब कभी भी मुझे लाभ या बिक्री में कोई संघर्ष प्रतीत हुआ तो मेरे साथ काम करने वाले व्यवसायियों ने स्पष्ट शब्दों में अपने विचार बिक्री के पक्ष में प्रकट किए। कई बार ऐसी फर्मे देखने में आती है जो लाभ कमा रही होती है परंतु उनकी बिक्री या कुछ भाग अत्यधिक लाभ हीन होता है..... प्रबंधकों को जब इस प्रकार के उदाहरण को बताया जाता है तो वह इस अत्यधिक लाभहीन बिक्री को छोड़ने के लिए तैयार नहीं होते। व्यवसायी उन गंभीर प्रस्तावों पर विचार करते हैं जिससे इन बिक्रियों पर भी लाभ प्राप्त किया जा सके.... किंतु कोई भी कार्यक्रम जो बिक्री के आसार में कमी करें, लाभ संभावनाएं चाहे कुछ भी हो, कभी भी उद्द्यम कर्ताओं द्वारा पसंद नहीं किया जाता। यह दीर्घ उद्धरण पाठको को यह बताने के लिए दिया गया है कि प्रो बोमेल का दृढ़ विचार है कि बिक्री को अधिकतम करना ही फर्मों का उद्देश्य बन गया है और इसलिए उनकी समस्त शक्तियां विक्रय बढ़ाने तथा अधिकतम करने में लगी रहती हैं।

किंतु प्रो बोमेल ने अपनी बिक्री अधिकतम करने की धारणा को यह बता कर नरम कर दिया है की बिक्री बढ़ाने के अभियान में व्यवसायी उत्पादन लागतों तथा लाभों को एकदम भुला नहीं देते। वह यह स्वीकार करते हैं कि फर्म के बिक्री उद्देश्य तथा इसके लाभ उद्देश्य में कुछ संघर्ष होता है। उनके अनुसार "वास्तविक जगत में व्यापारी बिक्री को बढ़ाने का प्रयत्न करता है परंतु शर्त यह है कि उसको उत्पादन लागत के अतिरिक्त निवेश पर सामान्य दर से लाभ भी प्राप्त होना चाहिए। उनके अनुसार प्रबंधक इससे अधिक लाभ प्राप्त करने की चेष्टा नहीं करता। एक बार जब लाभ स्तर के इस न्यूनतम स्तर को प्राप्त कर लिया जाए तो लाभ के स्थान पर बिक्री ही प्रमुख उद्देश्य बन जाता है।"इस प्रकार प्रो बोमल लिखते हैं कि–"एक सामान्य अल्पाधिकारी के उद्देश्य का वर्णन लगभग इस प्रकार से किया जा सकता है– न्यूनतम लाभ के साथ बिक्री को अधिकतम करना। निश्चित रूप से यह पूर्वधारणा अस्पष्ट मनोवृत्तियों की अति अभिव्यक्ति है परंतु मेरा विश्वास है कि यह सत्य से बहुत दूर नहीं है। जब तक लाभ इतने अधिक हैं कि वह हिस्सेदारों को संतुष्ट रखते हैं और कंपनी के विकास की ठीक प्रकार से वित्त व्यवस्था करते हैं, प्रबंधकों का प्रयत्न लाभों में वृद्धि के स्थान पर बिक्री से आयों को अधिकतम करना होगा।"

वर्तमान समय में प्रमुख के ढांचे पर निम्न प्रकार से दर्शाया जा सकता–

स्वामी और अंशधारी ⟶ निदेशक बोर्ड ⟶ उच्च कोटि के प्रबंधक

प्रो बोमेल के बिक्री अधिकतमकरण सिद्धांत को निम्न रेखा चित्र की सहायता से स्पष्ट किया गया है–

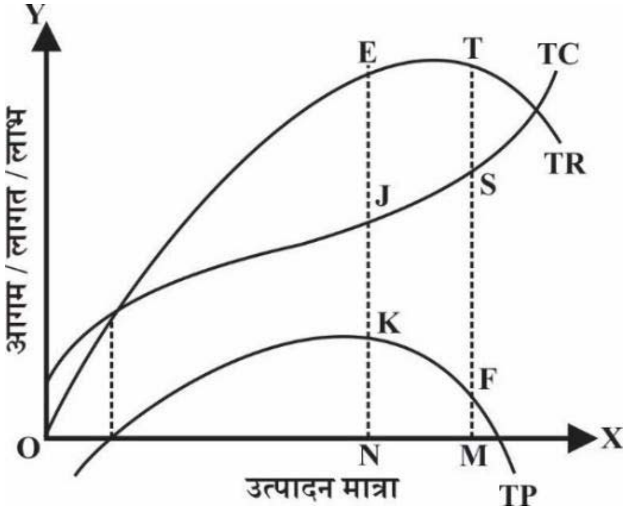

रेखा चित्र की सहायता से स्पष्ट है कि रेखाचित्र में TP(लाभ वक्र) TR(कुल आय वक्र) तथा TC(कुल लागत वक्र) हैं।

- कुल लाभ वक्र TP पर K बिंदु सर्वोच्च बिंदु है। अतः यदि लाभ अधिकतमकरण का लक्ष्य रखा जाए तो फर्म ON उत्पादन मात्रा का निर्धारण करेगी। इसके विपरीत यदि बिक्री अधिकतम करण उद्देश्य हो जैसा की लाभ अधिकतमकरण की मात्रा ON से NM अधिक है।
- OM उत्पादन मात्रा पर कुल आय MT हैं जो की चित्र के अनुसार सर्वाधिक है क्योंकि T कुल आय रेखा TR का सर्वोच्च बिंदु है।
- चित्र अधिकतम लाभ मात्रा को रेखा EJ(=KN) द्वारा प्रदर्शित किया गया है। बिक्री अधिकतम कारण की आकांक्षी फर्म की दृष्टि से सर्वाधिक उपयुक्त उत्पादन मात्रा OM है लेकिन फर्म अपनी उत्पादन मात्रा ON निश्चित करेगी अन्यथा उसे अधिकतम लाभ मात्रा KN उपलब्ध नहीं होगी।
- बिक्री अधिकतम कारण की स्थिति में कीमत = कुल आय/कुल उत्पादन अर्थात् MT/OM निश्चित की जाएगी।
- चित्र में लाभ अधिकतम कारण की उत्पादन मात्रा ON बिक्री अधिकतम कारण की उत्पादन मात्रा OM से NM कम है।
- लाभ अधिकतम करण की स्थिति में सीमांत लागत MC सीमांत आय MR एक दूसरे के बराबर होती हैं। यदि संतुलन बिंदु(सीमांत आय=सीमांत लागत) के उपरांत एक और इकाई का उत्पादन किया जाता है तो लागत और कुल आय दोनो में वृद्धि होती है। यद्यपि लागत में अपेक्षाकृत वृद्धि अधिक होती है। प्रो बोमेल का मत है कि लाभ अधिकतम करण की दशा में जबकि फर्म अधिकतम आवश्यक लाभ मात्रा(चित्र में ON उत्पादन पर KN लाभ) से कम लाभ FM(=TS) प्राप्त करती है तो बिक्री अधिकतमकरण की दृष्टि से यह उचित ही है की वह कीमत कम करके अपनी उत्पादन मात्रा को OM तक बढ़ाले।

समालोचना–

प्रो बोमेल का विक्रय अधिकतम करने की परिकल्पना लाभ अधिकतम करने का सिद्धांत का एक विकल्प है। प्रो फर्गुसन तथा प्रो क्रेप्स, बोमेल के विक्रय अधिकतम परिकल्पना का समर्थन करने के लिए लिखते हैं– "प्रतिपादित किए गए विभिन्न विकल्पों में से बोमल द्वारा प्रतिपादित सिद्धांत को एक बड़ा लाभ प्राप्त है–यह वास्तविकता तथा युक्त संगत होने की दिशा में पुराने मॉडलों का संशोधन करता है तथा साथ ही यह अन्य सैद्धांतिक विश्लेषण को भी संभव बनाता है।" ऊपर हम देख चुके हैं कि लाभ को अधिकतम करने के उद्देश्य की स्थिति की तुलना में बिक्री को अधिकतम करने के उद्देश्य के अंतर्गत उत्पादन अधिक होता है तथा कीमत कम। इसलिए जिस सीमा तक व्यापारिक फर्में बिक्री को अधिकतम करने के उद्देश्य से वास्तव में प्रेरित होती हैं, उस सीमा तक उनकी कीमत तथा उत्पादन नीतियां उपभोक्ताओं के कल्याण अधिकतम करने की स्थिति के निकट होगी। बिक्री अधिकतम करने की प्रेरणाओं से व्यावसायिक फर्में वास्तविक जगत में किस सीमा तक प्रभावित होती हैं इस पर अनुभव गम्य अनुसंधान की आवश्यकता है। अभी तक इस पर अधिक अनुभव गम में अनुसंधान नहीं हुआ है।

बोध प्रश्न 2

• इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान करें।

1. बॉमल के बिक्री अधिकतम कारण के उद्देश्यों को समझाइए।

1.4.3 अल्पकाल एवम् दीर्घकाल में फर्म के उद्देश्य–

(A) अल्पकाल में फर्म के उद्देश्य

एक फॅर्म अपना उत्पादन किस सीमा तक बढ़ाएगी एवं उसकी बाजार में क्या कीमत होगी यह बाजार के रूप पर निर्भर करेगा। इस प्रश्न-पत्र के खण्ड 3 में बाजार के विभिन्न रूपों का विस्तृत विवेचन किया गया है। वास्तविक जीवन में बाजार में अपूर्ण प्रतियोगिता पाई जाती है एवं उपभोक्ताओं द्वारा क्रय की जाने वाली वस्तुएं एक दूसरे की पूर्ण स्थानापन्न नहीं होती । क्रेताओं की कुछ विशेष पसन्द होती है। अतः कीमतें तय करने में फॅर्मों को कुछ सीमा तक स्वतन्त्रता प्राप्त होती है। परन्तु हम प्रस्तुत विवेचन के लिए पूर्ण प्रतियोगिता की मान्यता लेके चलते हैं। इसमें हम यह मानकर चलते हैं कि विभिन्न फॅर्मों द्वारा उत्पादित वस्तुएं समरूप हैं, एवं बाजार में क्रेताओं एवं विक्रेताओं की संख्या अधिक है। कोई भी व्यक्तिगत क्रेता अथवा विक्रेता वस्तु की कीमत अथवा मांग को प्रभावित नहीं कर सकता। इस प्रकार कीमत निर्धारण उद्योग विशेष द्वारा उत्पादित वस्तु की पूर्ति एवं मांग की शक्तियों द्वारा होता है। पूर्ण प्रतियोगिता के ही अनुरूप एकाधिकार भी एक सैद्धान्तिक स्थिति है। ये स्वरूप वास्तविक जीवन में सामान्यतः देखने को नहीं मिलते। परन्तु इनका सैद्धान्तिक महत्व इतना अधिक है कि इनकी विवेचना किये बिना वास्तविक जटिल स्वरूप को नहीं समझा जा सकता। अतः हम यहां एक पूर्ण प्रतियोगी फर्म के अल्पकालीन उद्देश्यों की विवेचना करेगे।

जैसा कि हम जानते है अल्पकाल में फर्म अपने स्थिर संयंत्र का कम अथवा अधिक प्रयोग करके पूर्ति को प्रभावित करती है। फर्म अल्पकाल में उत्पादन का वह स्तर प्राप्त करना चाहती है जहां उसके लाभ अधिकतम हों। लाभ अधिकतम करने के लिये वह उत्पादन के उस स्तर का चयन कर सकती है जहां उसकी कुल आगम एवं लागत रेखाओं का अन्तर सर्वाधिक हो। इस विधि में कुछ व्यावहारिक कठिनाइयां है। इस कारण व्यवहार में इसका उपयोग नहीं किया जाता है। व्यवहार में सीमान्त एवं औसत रेखाओं के प्रयोग से अधिकतम लाभ का बिन्दू ज्ञात किया जाता है। फॅर्म उस समय अधिकतम लाभ प्राप्त करती है, जहां सीमान्त लागत एव सीमान्त आगम बराबर होती है। यह शर्त बाजार के सभी स्वरूपों पर लागू होती है। सन्तुलन की दूसरी शर्त यह है कि सीमान्त लागत वक्र सीमान्त आगम वक्र को नीचे से काटे।

अल्पकाल में उद्योग विशेष में फर्मों की संख्या स्थिर होती है अर्थात् समय इतना पर्याप्त नहीं होता कि नई फर्म स्थापित की जा सकें। परन्तु फर्म अपनी स्थापित क्षमता का पूर्ण उपयोग करके मांग परिवर्तनों के अनुरूप पूर्ति में कुछ सीमा तक परिवर्तन ला सकते है। अतः एक फर्म अल्पकाल में निम्नाकित तीन स्थितियों से गुजर सकती है:-

(1) लाभ की स्थिति

(2) सामान्य लाभ की स्थिति

(3) हानि की स्थिति

(1) **लाभ की स्थिति** एक पूर्ण प्रतियोगी फॅर्म दी हुई कीमत पर उस मात्रा का उत्पादन कर अपने लाभ को अधिकतम कर सकती है जिस पर MR=MC हो। चूंकि फर्म का कीमत पर कोई नियन्त्रन नहीं होता एवं उद्योग द्वारा निर्धारित कीमत पर फर्म अपना सारा उत्पादन बेच सकती है. फॅर्म का MR वक्र एक समानान्तर रेखा होती है। यही फर्म काAR वक्र अथवा माँग भी होता है। इस प्रकार एक पूर्ण प्रतियोगी फर्म का सीमान्त आगम वक्र अथवा मांग वक्र पूर्णतया लोचदार होता है।

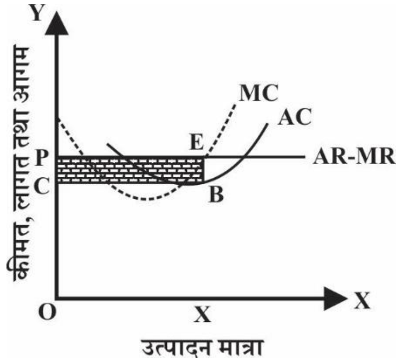

AC तथा MC क्रमशः फॅर्म की औसत लागत तक है। रेखाचित्र 8.1 में E बिन्दु फर्म का साम्य बिन्दु है क्योंकि इस बिन्दु पर उत्पादन निर्धारित करने की मूलभूत शर्त MC = MR लागू होती है। परन्तु यहां यह भी स्पष्ट करना उचित होगा किA बिन्दु पर भी MC MR है, फिर भी यह फर्म का साम्य बिन्दु नहीं माना जा सकता। इसका कारण यह है कि इस बिन्दु के आगे उत्पादन में वृद्धि करने पर फर्म के लाभ में वृद्धि होती है क्योंकि सीमान्त आगम सीमान्त लागत से अधिक होता है। अतः साम्य की स्थिति में MC. वक्र MR रेखा को नीचे से काटता है, अर्थात MC- वक्र बढ़ता हुआ होता है। इसलिए E बिन्दु ही साम्य बिन्दु होगा। इस साम्य की स्थिति में फर्म ox उत्पादन की मात्रा का उत्पादन करती है। इस उत्पादन स्तर पर फॅर्म की प्रति इकाई लागत CC है जो औसत लागत वक्र से निश्चित की जाती है। अतः फॅर्म का प्रति इकाई असामान्य लाभ PC(=CP -OC) है। फर्म के कुल लाभ को ज्ञात करने के लिए PC को कुल उत्पादन Ox से गुणा कर दिया जाता है। अतः संक्षेप में, रेखाचित्र 8.1 से प्राप्त साम्य के निष्कर्षों को निम्न प्रकार व्यक्त किया जा सकता है:-

कीमत = OP

उत्पादन = OX

प्रति इकाई लागत = CC

प्रति इकाई लाभ = PC

कुल लाभ = CPXOX अथवा(PCEB)

(2) **शून्य या सामान्य लाभ की स्थिति** : इस स्थिति को रेखाचित्र 8.2 में स्पष्ट किया गया है। फर्म को CP कीमत उद्योग द्वारा दी हुई होती है। शून्य की स्थिति में फॅर्म द्वारा प्राप्त कीमत उसकी औसत लागत के बराबर होनी चाहिए। अतः फॅर्म का साम्य वहां स्थापित होगा जहां उसकी न्यूनतम औसत लागत उसकी कीमत के बराबर होती है तथा इस स्थिति में MC=MR शर्त भी लागू होगी। रेखाचित्र 8.2 में E बिन्दु फर्म का साम्य बिन्दु है क्योंकि इस बिन्दु पर MC=MR होती है। तथा MC वक्र MR वक्र को नीचे से काटता है। फर्म की औसत लागत EX उसकी कीमत OP के बराबर है। अतः फर्म को केवल सामान्य लाभ ही प्राप्त होता है। रेखाचित्र 8.2 से प्राप्त निष्कर्षों को निम्न प्रकार व्यक्त किया जा सकता है :-

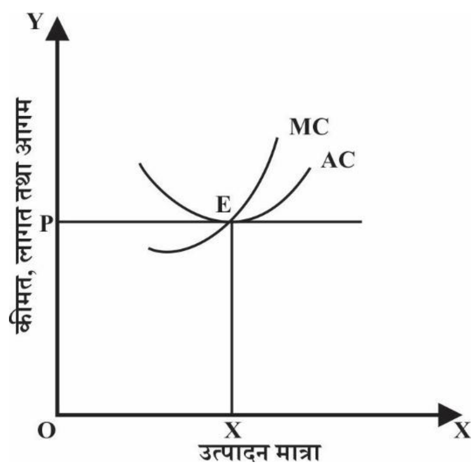

कीमत = OP

लागत = EX= OP "

उत्पादन = OX

लाभ = OP-EX=0

अतः फॅर्म को केवल सामान्य लाभ ही प्राप्त होता है जो उसकी औसत लागत में शामिल होता है।

3. **हानि की स्थिति**– अल्पकाल में फर्म की हानि की स्थिति को रेखाचित्र 8.3 में स्पष्ट किया गया है।

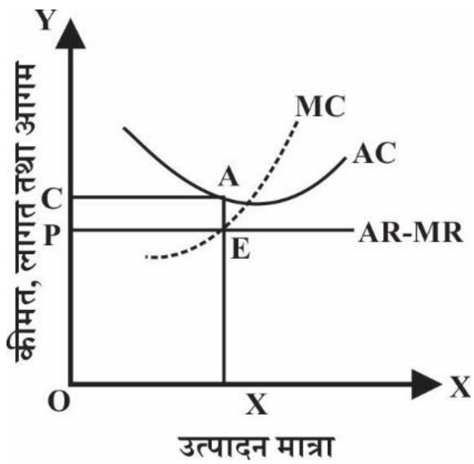

फॅर्म को OP कीमत उद्योग द्वारा दी हुई होती है।AC तथा MC क्रमशः फर्म के औसत लागत वक तथा सीमान्त लागत वक्र है। रेखाचित्र 8.3 से स्पष्ट है कि फर्म को हानि प्राप्त हो रही है। क्योंकि उत्पादन को सभी सम्भव मात्राओं पर वस्तु की कीमत उसकी औसत लागत से कम है। इस स्थिति में भी फॅर्म वस्तु का उत्पादन करना चाहेगी क्योंकि उसका उद्देश्य हानि को कम करना होता है। फॅर्म का साम्य बिन्दु E है जहां MC वक्र MR वक्र को नीचे से काटता है। इस बिन्दु पर फॉर्म JX मात्रा कर उत्पादन करती है। इस उत्पादन स्तर पर फर्म की औसत लागत CC(=AX) के बराबर है। अतः फॅर्म की प्रति इकाई हानि CP है। फर्म हानि CPAE के बराबर है। संक्षेप में,

कीमत = OP

प्रति इकाई उत्पादन लागत = CC

उत्पादन = ox

कुल हानि = CPAE

अल्पकाल में क्या फर्म हानि उठाकर भी उत्पादन जारी रख सकती है?

इस प्रश्न के उत्तर के लिए कुल लागत को परिवर्तनशील लागत तथा स्थिर लागत में विभाजित करना आवश्यक हो जाता है। उत्पादन की परिवर्तनशील लागतों से तात्पर्य उन लागतों से है जो उत्पादन के साथ परिवर्तित होती रहती है तथा उत्पादन के शून्य होने पर ये लागते भी शून्य हो जाती है। इसके विपरीत, स्थिर लागते से लागते है जिनका अल्पकाल में उत्पादन परिवर्तन से कोई सम्बन्ध नहीं होता अर्थात् उत्पादन के शून्य होने पर भी अल्पकाल में इन लागतों का फर्म को भुगतान करना आवश्यक होता है। यदि अल्पकाल में फर्म उत्पादन करना बन्द कर देती है तो उसे समस्त स्थिर लागतों की हानि को उठाना पड़ेगा। अतः अल्पकाल में हानि स्थिति में भी फर्म उत्पादन करना उचित समझती है। यदि उसकी हानि स्थिर लागतों से कम हो जाती है। परन्तु जब कीमत औसत परिवर्तनशील लागत से भी कम हो जाती है अर्थात् फर्म की कुल हानि उसकी कुल स्थिर लागतों से भी अधिक होती है तो फर्म उत्पादन बन्द करके अपनी हानि को न्यूनतम कर सकती है। हानि की विभिन्न स्थितियों को रेखाचित्र 8.4.8.5 तथा 8.6 द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है।

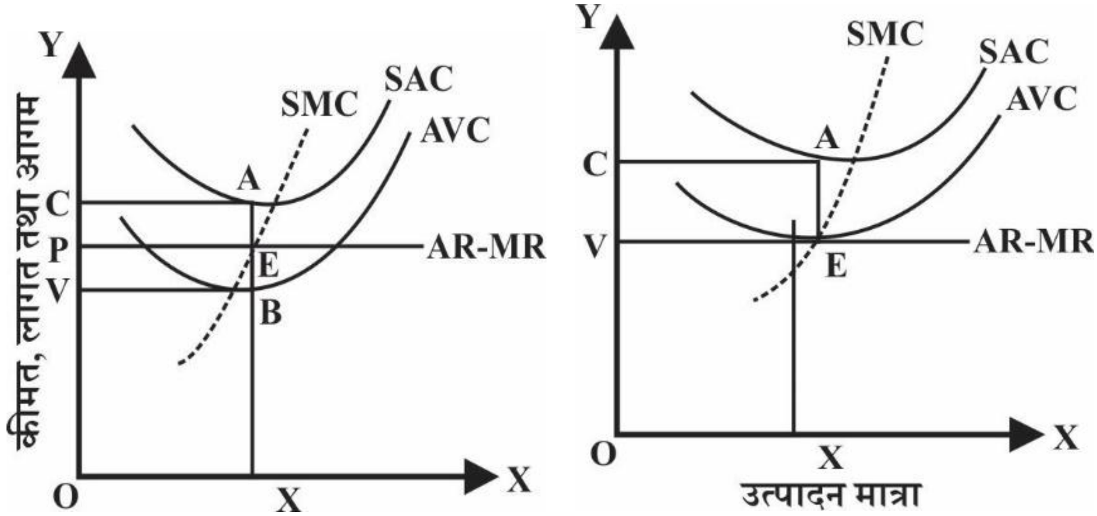

रेखा चित्र 8.4 में फर्म को उत्पादन करने पर स्थिर लागतों से मक की हानि को दिखाया गया है। SAC तथा SMC क्रमशः अल्पकालीन औसत लागत चक्र तथा अल्पकालीन सीमान्त लागत वक है। बिन्दु पर साम्य स्थापित करती है, जहाँ SMC = MR के है। इस साम्य बिन्दु पर फर्म OX मात्रा का उत्पादन करती है। इस उत्पादन स्तर पर फर्म की कुल आय OXEP है तथा उसकी कुल लागत OXAC है। जिसमें OXBV कुल परिवर्तनशील लागत तथा VBAC कुल स्थिर लागत है, अतः उसकी कुल हानि PEAC के बराबर है। यदि फर्म उत्पादन बन्द कर देती है तो उसकी कुल हानि उसकी कुल स्थिर सांगत, अर्थात VBAC(CBEP + PEAC) के बराबर होगी। अतः फॅर्म हॉनि की स्थिति में भी उत्पादन करके साम्य प्राप्त कर सकती है तथा अपनी हानि को न्यूनतम कर सकती है।

रेखाचित्र 8.5 में फर्म की कुल हानि को उसकी कुल स्थिर लागत के बराबर दिखाया है। उद्योग द्वारा फर्म को OP कीमत दी हुई है। यह कीमत फर्म की औसत परिवर्तनशील लागत के बराबर है। अतः इस स्थिति में यदि फर्म उत्पादन करती है तब भी उसकी हानि कुल स्थिर लागत अर्थात् PEAC के बराबर होती है और यदि वह उत्पादन बन्द कर देती है तब भी उसकी हानि इतनी ही होगी। यह स्थिति अनिर्मित बनी रहती है।

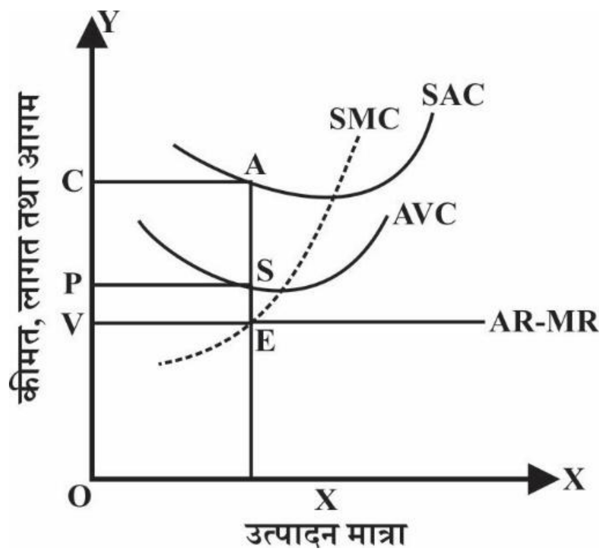

रेखाचित्र 8.6 में ऐसी स्थिति को दिखाया गया है जबकि फॅर्म को उत्पादन करने पर स्थिर लागतों से भी अधिक का हानि होती है, अतः वह ऐसी स्थिति में कभी भी उत्पादन नहीं करेगी। रेखाचित्र 8.6 के अन्तर्गत फर्म को उद्योग द्वारा कीमत दी हुई है। SAC तथाAVC फर्म के क्रमशः अल्पकालीन औसत लागत वक्र तथा परिवर्तनशील औसत लागत वक्र है तथा SMC फर्म का अल्पकालीन सीमान्त लागत वक्र है। रेखाचित्र से स्पष्ट है कि कीमत उत्पादन के प्रत्येक स्तर पर औसत परिवर्तनशील लागत से कम है, अतः यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि फॅर्म उत्पादन नहीं करेगी। यदि यह मान लिया जाये कि फॅर्म E साम्य बिन्दु पर OX मात्रा का उत्पादन करती है तो उसकी कुल हानि

PEAC के बराबर रह जाती है। अतः फॅर्म उत्पादन नहीं करेगी तथा अल्पकाल में भी उस उद्योग को छोड़ देगी।

(B) **दीर्घकाल में फॅर्म का उद्देश्य**

दीर्घकाल में स्थिर लागत तथा परिवर्तनशल लागत का अन्तर समाप्त हो जाता है। दूसरे शब्दों में, सभी प्रकार की उत्पादन लागतें परिवर्तनशील लागतें हो जाती है। फर्म अपने आकार तथा उत्पादन के पैमाने में आवश्यकतानुसार परिवर्तन कर सकती है। अतः दीर्घकाल में फर्म को उसकी औसत लागत के बराबर कीमत प्राप्त होना आवश्यक है। दीर्घकाल में फॅर्म उत्पादन तभी जारी रख सकती है जबकि उसे कीमत करेन की शर्त MCMR के साथ-साथ औसत लागत का भी कीमत के बराबर होना आवश्यक होता है। अतः दीर्घकाल में फर्म को साम्य अवस्था में होने के लिए निम्नलिखित दो शर्तों का एक साथ पूरा होना आवश्यक है:-

MC = M —-------------------------------(1)

P =AR + Minimum ofAC —--------(2)

चूंकि पूर्ण प्रतियोगिता की स्थिति में फर्म के लिएAR = MR होता है, अतः उपर्युक्त शर्तों को निम्न प्रकार भी व्यक्त किया जा सकता है।

MC =MR = P =AR= Minimum ofAC

पुनः,AC की न्यूनतम स्थिति उस समय ही हो सकती है जबकि फर्म का आकार अनुकूल(Optimum) हो। अल्पकाल में पूर्ण प्रतियोगिता से यह सम्भव हो सकता है कि कुछ नोंक अधिक लाभ प्राप्त हो तथा कुछ को कम था कुछ को हानि भी हो सकती है। परन्तु दीर्घकाल में यह स्थिति नहीं पाई जाती। दीर्घकाल में प्रत्येक फर्म को केवल सामान्य लाभ ही प्राप्त होगा। इस स्थिति को हम रेखाचित्र 8.7 की सहायता से स्पष्ट कर सकते है।

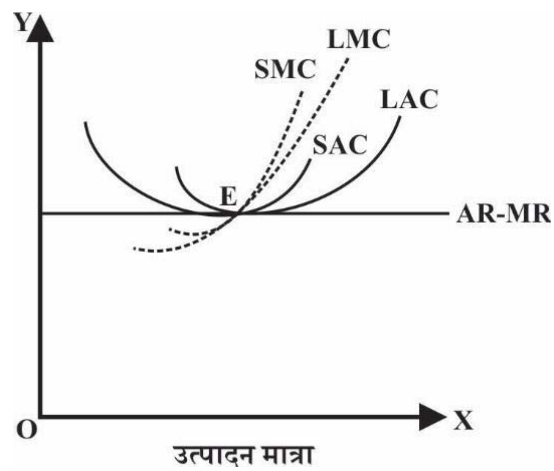

रेखाचित्र 8.7 से स्पष्ट है कि फॅर्म दीर्घकाल में भी उद्योग मांग एवं पूर्ति की शक्तियों द्वारा निर्धारित कीमतों को दिया हुआ मानकर चलती है। अर्थात फॅर्म के लिये कीमत दी हुई है। इस कीमत पर फर्म दीर्घकालीन औसत लागत दीर्घकालीन सीमान्त लागत, सीमान्त आगम एवं औसत आगम के बराबर होने पर संतुलन में होती है। रेखाचित्र में यह स्थिति E बिन्दु द्वारा प्रदर्शित की गई है। फर्म सामान्य लाभ ही प्राप्त कर सकती है।

बोध प्रश्न 3

प्रश्नों का उत्तर लिखने के लिये प्रत्येक प्रश्न के सामने छोड़ी गई खाली जगह का प्रयोग करें। इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने का मिलान करें।

(1) क्या लाभ अधिकतमकरण की आवश्यक दशाए अल्पकाल एवं दीर्घकाल में भिन्न-भिन्न होती है? संतुलन की शर्तों का उल्लेख कीजिए।

1.5 सारांश

एक व्यावसायिक फर्म उस तकनीकी आर्थिक इकाई को कहते हैं, जो किसी वस्तु या वस्तुओं एवं सेवाओं का उत्पादन अथवा विक्रय दोनों

करती है।

इस प्रकार कोई भी फर्म एकल स्वामित्व, भागिता सार्थ, संयुक्त स्कन्ध प्रमण्डल या निगम या अन्य किसी भी प्रकार की हो सकती है। इसका आकार उत्पत्तियों विक्रय के पैमाने पर निर्भर करता है। इसके अतिरिक्त एक फर्म की भूमिका उत्पादन या विक्रेता अथवा दोनों ही स्थिति में क्रेता की आवश्यकता होती है।

फर्म के पारम्परिक सिद्धान्त के अनुसार लाभ अधिकतमकरण उसका प्रमुख उद्देश्य है।

सामान्यतः फर्म के अधिकतम लाभ की स्थिति को निम्न दो प्रकार से प्रदर्शित किया जा सकता है-

(1) कुल लागत तथा आगम रेखाओं द्वारा

इसके अन्तर्गत उत्पादन की जिस मात्रा पर कुल आगम तथा कुल लागत का अन्तर सबसे अधिकतम होता है उस बिन्द पर फर्म का लाभ अधिकतम होता है।

(2) सीमांत तथा औसत रेखाओं द्वारा

इनके अन्तर्गत उत्पादन की जिस मात्रा पर सीमान्त लागत तथा सीमान्त आगत बराबर होते है उत्पादन की वह मात्रा अधिकतम लाभ प्रदान करती है। किन्तु यह शर्त अकेले पर्याप्त नहीं है। इसके लिए एक दूसरी शर्त कि सीमान्त लागत रेखा सीमान्त आगम आगम रेखा को नीचे से काटे, का भी पूरा होना आवश्यक है।

अल्पकाल एवं दीर्घकाल की परिभाषा कलेण्डर समय के आधार पर नहीं की जाती। मांग एवं पूर्ति की आपसी समानता को मत निर्धारण के लिए आवश्यक शर्त है। यदि मांग में हुई वृद्धि(कमी) के अनुरूप उत्पादक पूर्ति में वृद्धि(कमी) करने में समर्थ नहीं हो एवं कीमतों पर मांग का प्रभाव अधिक हो तो ऐसी समयावधि को अल्पकाल कहेंगे। इसमें उत्पादक उपलब्ध माल तालिकाओं में परिवर्तन करके कुछ सीमा तक बढ़ी हुई मांग अथवा घटी हुई मांग के अनुरूप पूर्ति में परिवर्तित ला सकत है। दीर्घकाल वह समयावधि है जिसमें उत्पादन के सभी साधनों को परिवर्तित किया जा सकता है एवं पूर्ति में इच्छानुसार परिवर्तन किया जा सकता है।

पूर्ण प्रतियोगिता की दशा मे एक फॅर्म दी हुई कीमत पर अपने उत्पादन के स्वर का इस प्रकार चयन करेगी कि उसका लाभ अधिकतम हो सके। परन्तु अल्पकाल में उसे लाभ के अतिरिक्त सामान्य लाभ एवं हानि की स्थितियों का लाभ सामना करना पड़ सकता है। क्या अल्पकाल में हानि उठाकर भी एक फर्म को औसत परिवर्तनशील लागत के बराबर मूल्य मिल जाये तो फर्म उत्पादन जारी रखगी। यदि फर्म को P =AVC भी न मिले तो उत्पादन जारी नहीं रखा जायेगा। दीर्घकाल में स्वतंत्र प्रवेश एवं बहिर्गमन के कारण एवं उत्पादन के सभी साधनों के परिवर्तनशील हो जाने के कारण उत्पादन तभी किया जायेगा जबकि सभी फॅर्मो को सामान्य लाभ मिलता रहे। फर्म का उद्देश्य दीर्घकाल में अपनी उत्पादनक्षमता का पूरा-पूरा उपयोग कर लागत को न्यूनतम करना होता है जिससे लाभ अधिकतम हो सके।

1.6 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र, डा० एम० एल० शर्मा एवं बी० के० केसरीवाल, साहित्य भवन, आगरा।
- व्यक्तिगत आर्थिक सिद्धांत, एच०एल० आहुजा एवं के० के ड्यूवेट, एस० चन्द एण्ड कम्पनी प्रा० लि० रामनगर, नई दिल्ली।
- व्यावसायिक एवं प्रबंधकीय अर्थशास्त्र, वी०सी० सिन्हा एवं पुष्पा सिन्हा, नेशनल पब्लिसिंग हाउस, नई दिल्ली.
- Managerial Economics Habib-Ur Rahman, Himalaya Publishing House, Bombay
- A Study of Managerial Economics-& Gopala Krishna, Himalaya, Publishing House Bombay
- EconomicsAnalysis- K. P. M Sundhram, E.N. Sundhram, Sultan Chand & Sons, New Delhi
- उच्च आर्थिक सिद्धान्त, एम. एल. झिंगन,(नवीनतम संस्करण) कोणार्क पब्लिशर्स प्रा० लि०, दिल्ली
- उच्चतर व्यष्टिगत अर्थशास्त्र, सी.एस. बरला, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली।

- Micro Economics Theory J.P GouldAnd C.E Fergulson,All India Iravedler Book Sellers, Delhi.
- माडर्न माइक्रो इकानमिक्स, ए. काटसोयिआनिस, द मैकमिलन प्रेस लिमिटेड, हांगकांग।
- उच्च आर्थिक सिद्धान्त, एम. एल. झिंगन,(नवीनतम संस्करण) कोणार्क पब्लिशर्स प्रा० लि,

1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न- 1

फर्म के पारम्परिक सिद्धान्त के अनुसार लाभ अधिकतमकरण उसका प्रमुख उद्देश्य है। अधिकतम लाभ की स्थिति को दो प्रकार से प्रदर्शित किया जा सकता है-

1. कुल लागत तथा आगम रेखाओं द्वारा जहां पर कुल आगम तथा लागत का अंतर अधिकतम होता है वहीं लाभ सर्वाधिक होता है।
2. सीमांत तथा औसत रेखाओं द्वारा जहां पर MC=MR होते हैं तथा MC,MR को नीचे से काटती है वही पर लाभ अधिकतम होगा।

बोध प्रश्न 2

"बॉमोल" के अनुसार व्यवहारिक जीवन में फर्म का अंतिम उद्देश्य अपने कुल विक्रय या आय को अधिकतम करना होता है न कि कुल लाभ को । यद्यपि वे यह मानते है कि फर्म के बिक्री उद्देश्य और लाभ उद्देश्यों में कुछ संघर्ष होता है और इसीलिए वास्तविक जगत में व्यापारी बिक्री में वृद्धि करने का प्रयास करती है परन्तु शर्त यह है कि उसका उत्पादन लागत के अतिरिक्ति विनियोग पर सामान्य दर से लाभ भी प्राप्त होना चाहिए। उनके अनुसार प्रबंधक इससे अधिक लाभ प्राप्त करने की चेष्टा नहीं करता। एक बार लाभ का या न्यूनतम स्वर प्राप्त हो जाता है तो विक्रय(न कि लाभ) प्रमुख उद्देश्य हो जाता है।

बोध - प्रश्न 3

(1) नहीं। संतुलन की दो शर्ते है

(2) MR = MC, एवं(b) MC वक्र MR को नीचे से काटे।(3) यदि कीमत औसत परिवर्तनशील लागत से कम होगी तो अल्पकाल में उत्पादन जारी नहीं रखा जाएगा।

इकाई–2 उत्पादन फलन, परिवर्तनशील अनुपातो का नियम

इकाई की रूपरेखा–

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 उत्पादन फलन का अर्थ

2.2.1 कुल उत्पाद

2.2.2 औसत उत्पाद

2.2.3 सीमांत उत्पाद

2.3 काल या समय की अवधारणा तथा साधनों का स्वभाव

2.4 मार्शल तथा ह्रासमान प्रतिफल नियम

2.5 परिवर्तनीय अनुपात का नियम(आधुनिक दृष्टिकोण)

2.5.1 उत्पादन की विभिन्न अवस्थाएं एवं अनुकूलतम अवस्था

2.6 सारांश

2.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

2.8 अभ्यासों के उत्तर

2.0 उद्देश्य

- इस इकाई के अध्ययन के बाद आप
- जान सकेंगे कि उत्पादन- फलन किसे कहते हैं।
- अल्पकाल में उत्पादन- फलन के स्वरूप को समझ सकेंगे एवं इस आधार पर किसी उद्योग में उत्पादन की विभिन्न अवस्थाओं की व्याख्या कर सकेंगे; एवं
- आप जान पाएंगे कि परिवर्तनशील अनुपातों का नियम कया है? एक उत्पादक उत्पादन की विभिन्न स्थितियों में से किस अवस्था में रहकर अपना लाभ अधिकतम कर सकता है?

2.1 प्रस्तावना

किसी भी ठोस भौतिक वस्तु का उत्पादन करने के लिए हमें कुछ उत्पादन के साधनों की आवश्यकता पड़ती है। जिन साधनों का प्रयोग उत्पादन प्रक्रिया में किया जाता है उन्हें आदा(input) कहा जाता है। उत्पादन पक्रिया में जो वस्तु उत्पादित होती है उसे प्रदा(output) कहा जाता है। उत्पादन प्रक्रिया में विभिन्न साधनों को विभिन्न अनुपातों में लगाया जा सकता है एवं इन अनुपातों में परिवर्तन भी किया जा सकता है। किसी फर्म की भौतिक आदाओं एवं भौतिक प्रदाओं के बीच सम्बध ही उत्पादन- फलन है।

2.2 उत्पादन फलन का अर्थ

उत्पादन की क्रिया को पूरा करने के लिए एक उत्पादक श्रम, पूंजी, भूमि, संगठन तथा साहस की मात्रा लगता है पर कोई भी उत्पादन क्रिया केवल इन्ही साधनों के सहयोग से पूरी नहीं की जा सकती है। कुछ अन्य साधनों की भी आवश्यकता पड़ती है जैसे पंखे के उत्पादन के लिए स्टील की आवश्यकता, स्टील के उत्पादन के लिए कच्चे लोहे, कोयले आदि की आवश्यकता है। यह सभी साधन जिन के

सहयोग से उत्पादन की क्रिया पूरी की जाती है 'आगत' कहलाते हैं तथा इनके सहयोग से जिस वस्तु का उत्पादन किया जाता है उसे 'निर्गत' कहा जाता है। उल्लेखनीय है की भूमि, श्रम, पूंजी तथा साहसी जो उत्पादन क्रिया में प्रयुक्त होते हैं उन्हें हम उत्पादन का साधन कहते हैं। जे एस मिल तथा सिडनी चेपमैन उत्पादन के दो साधनों–भूमि तथा श्रम की बात की, एडम स्मिथ ने उत्पादन के तीन साधनों– भूमि, श्रम तथा पूंजी की बात की जबकि मार्शल ने चार साधनों– भूमि, श्रम, पूंजी तथा संगठन की बात की।वान बीजर ने - प्रयोग की विशिष्टता के आधार पर केवल दो साधनों की बात की विशिष्ट तथा अविशिष्ट साधन। जिस प्रकार से कोई विवेकपूर्ण उपभोक्ता अपने सीमित साधनों के द्वारा अपनी सन्तुष्टि को अधिकतम करने का प्रयास करता है उसी प्रकार एक विवेकपूर्ण उत्पादक भी यह प्रयास करता है कि या तो आगतों की एक निश्चित मात्रा के द्वारा निर्गतों की अधिकतम मात्रा प्राप्त करे अथवा निर्गतों की किसी दी हुयी मात्रा को न्यूनतम लागत पर प्राप्त करे। ये दोनों ही उद्देश्य उत्पादन में प्रयोग में आने वाले विभिन्न साधनों के अनुकूलतम प्रयोग(Optimum utilisation of factors of production) से सम्बन्धित हैं। इस प्रकार उत्पादन की प्रमुख समस्या साधनों के अनुकूलतम प्रयोग की है जिससे एक उत्पादक न्यूनतम लागत के द्वारा अधिकतम उत्पादन प्राप्त कर सके। इस अनुकूलतम प्रयोग की सीमा के बाद, उन्हीं साधनों के द्वारा, उत्पादक और अधिक उत्पादन अथवा निर्गत की प्राप्ति नहीं कर सकता है। **इस प्रकार स्पष्ट है कि आगतों तथा निर्गतों के बीच एक तकनीकी सम्बन्ध होता है जो यह स्पष्ट करता है कि उत्पादक आगतों की एक निश्चित मात्रा से अधिक से अधिक कितना उत्पादन प्राप्त कर सकता है। इस तकनीकी सम्बन्ध को ही 'उत्पादन फलन'(Production Function) कहते हैं।** उत्पादन के साधनों के मूल्य तथा उत्पादों के मूल्य को उत्पादन फलन में सम्मिलित नहीं किया जाता। यदि श्रम को L, पूंजी को K तथा साहसी को E तथा उत्पादन को Q से व्यक्त किया जाय तो हम उत्पादन फलन इस रूप में व्यक्त कर सकते हैं।

$$Q = f(L,K,E)$$

अर्थात् निर्गत(Q) L. K, E आगतों का फलन है। निर्गतों की Q मात्रा आगतों की L. K.E मात्रा पर निर्भर है। प्रो० लिवास्की के अनुसार 'किसी भी फर्म का उत्पादन उत्पत्ति के साधनों का फलन है और यदि इसे गणितीय रूप में व्यक्त किया जाय तो इसे उत्पादन फलन कहते हैं। प्रो० सेमुएलसन के अनुसार "उत्पादन फलन वह प्राविधिक सम्बन्ध है जो यह बतलाता है कि आगतों के प्रत्येक विशेष संयोग के द्वारा कितना उत्पादन किया जा सकता है।' अब तक की व्याख्या का सारांश यह है कि एक दी हुई समयावधि में एक दी हुयी प्रविधि की स्थिति में उत्पादन फलन, आगतों तथा निर्गतों के बीच ऐसा सम्बन्ध है जो यह स्पष्ट करता है कि विभिन्न आगतों की एक निश्चित मात्रा से निर्गतों की कितनी अधिकतम मात्रा प्राप्त की जा सकती है अथवा यह विभिन्न आगतों की वह न्यूनतम मात्रा प्रदर्शित करता है जो निर्गतों की एक निश्चित मात्रा के उत्पादन के लिए आवश्यक है।

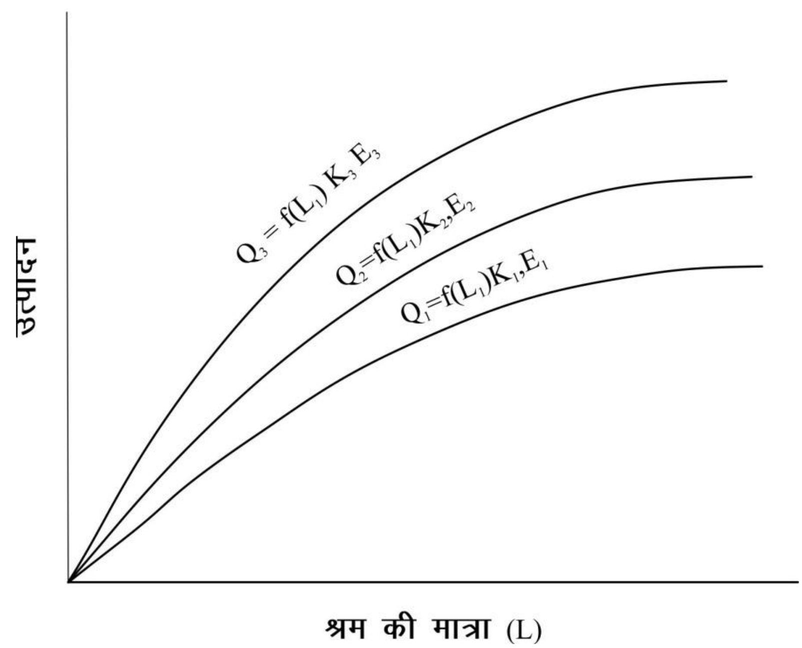

चित्र सं0 1.1

दिये गये चित्र सं० 1: 1 में उत्पादन फलनों के सम्भावित स्वरूपों को दर्शाया गया है। चित्र सं०(1:1) में Q1 =f(L_1, K_1, E_1) आगत L_1

और निर्गत Q_1 के बीच सम्बन्ध को दर्शाता है जबकि अन्य आगतों जैसे K1 और E1 को स्थिर मान लिया गया है। ऐसी दशा में यदि केवल L_1 की मात्रा में परिवर्तन हो तो उत्पादक इसी वक्र पर बाँये से दाँये या दाँये से बाँये चला जायेगा। जो यह प्रदर्शित करेगा कि यदि केवल परिवर्तनीय साधन L_1 में परिवर्तन हो तो उसका क्या प्रभाव उत्पादन पर पड़ेगा। परन्तु इसी उत्पादन फलन के लिए यदि K_1 में वृद्धि हो तो उत्पादक उसी वक्र पर न रहकर अन्य वक्रों पर चला जायेगा।जैसे यदि K_1 की मात्रा में वृद्धि कर दी जाय जैसे K_2 हो जाय तो उत्पादन फलन ऊपर की ओर खिसक जायेगा।

आगत तथा निर्गत के बीच का सम्बन्ध तो उत्पादन फलन कहलाता है पर उत्पादन- फलन की प्रकृति अथवा किस प्रकार से साधनों के संयोगों में परिवर्तन से उत्पादन प्रभावित होता है, इस बात का कथन(Statement) उत्पादन का नियम कहलाता है। उत्पादन का नियम यह बताता है कि निर्गत की मात्रा में होने वाले परिवर्तन तथा आगत में होने वाले परिवर्तन के बीच क्या सम्बन्ध है। यह बताता है कि आगत के परिवर्तन के बाद निर्गत में जो परिवर्तन हो रहा है वह उसी अनुपात में हो रहा है, अधिक हो रहा है, या कम हो रहा है, जिस अनुपात के आगत में वृद्धि की जा रही है। मानलीजिए मूल उत्पादन फलन Q = f(L, K) है। अब यदि आगत मेंA गुनी तथा निर्गत में b गुनी वृद्धि होती है तो उत्पादन फलन इस प्रकार व्यक्त होगा -

$$b. Q = fa,(L, K)$$

उत्पादन का नियमA तथा b के बीच सम्बन्ध व्यक्त करता है। यदि

(i) यदि $b>a$ अर्थात् निर्गत में वृद्धि आगत में वृद्धि के अनुपात से अधिक हो तो इसे उत्पादन वृद्धि नियम(Law of Increasing return) कहेंगे।

(ii) यदि b =A तो उत्पादन समता नियम(Law of Constant return) होगा।

(iii) यदि $b<a$ तो उत्पादन ह्रास नियम(Law of diminshing return) क्रियाशील होगा।

इस प्रकार उत्पादन फलन तथा उत्पादन के नियम की व्याख्या के अन्तर्गत हम आगत-निर्गत सम्बन्ध की व्याख्या करते हैं और यह व्याख्या दो प्रकार से की जा सकती है-

(1) जब विभिन्न आगतों में से किसी एक की मात्रा स्थिर हो तथा अन्य परिवर्तनशील हो अथवा एक साधन परिवर्तनशील हो पर अन्य स्थिर हों तो इस प्रकार के उत्पादन- फलन अथवा आगत एवं निर्गत के बीच सम्बन्ध का अध्ययन हम 'परिवर्तनीय अनुपात के नियम'(Law of Variable proportions) अथवा उत्पादन के परिवर्तनीय साधन का प्रतिफल(Returns toA variable factor of production) के अन्तर्गत करते हैं। चूँकि कुछ साधन अल्पकाल में स्थिर होंगे, इसलिए इसे हम **अल्पकालीन उत्पादन फलन** भी कहते हैं।

(2) जब हम सभी आगतों को परिवर्तित करते हैं तथा इसके निर्गत के ऊपर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन करते हैं, इस स्थिति का अध्ययन हम 'पैमाने का प्रतिफल'(Returns to Scale) नियम के अन्तर्गत करते हैं। इसे हम **दीर्घकालीन उत्पादन फलन** कहते हैं।

जब हम उत्पादन फलन तथा उत्पादन के नियम की बात करतें हैं, तो चाहे यह व्याख्या अल्पकालीन उत्पादन फलन से सम्बन्धित हो या दीर्घकाल से हम यह जानने का प्रयास करते हैं कि आगतों में परिवर्तन का क्या प्रभाव कुल उत्पाद(Total product –TP) औसत उत्पाद(Average Product–AP) तथा सीमान्त उत्पाद(Marginal Product -MP) पर पड़ता है। इसलिए इसके पूर्व की हम अल्पकालीन तथा दीर्घकालीन उत्पादन फलन की व्याख्या शुरू करें, यह उचित लगता है कि हम इन धारणाओं तथा उत्पादन- फलन से सम्बन्धित कुछ अन्य धारणाओं से आपको परिचित करा दें जिससे आगे व्याख्या समझने में आपको कोई परेशानी नहीं हो।

2.2.1 कुल उत्पाद(Total Product)- उत्पादन क्रिया में प्रयुक्त आगतों के प्रयोग के परिणाम स्वरूप हमें जो निर्गत प्राप्त होते हैं, इनका योग ही कुल उत्पाद होगा। जैसे यदि श्रम की विभिन्न इकाइयों के प्रयोग से हमें 20, 25, 35 तथा 40 इकाइयों का उत्पादन प्राप्त हो तो 20+25+35+40= 120 इकाइयों श्रम की 4 इकाइयों से प्राप्त कुल उत्पादन होगा।

2.2.2 औसत उत्पाद(Averge Product-AP)- कुल उत्पाद को यदि उस साधन की मात्रा से भाग दे दें जिसे हम परिवर्तित कर रहे हैं तो यह उस परिवर्तनीय साधन का औसत उत्पाद होगा। उदाहरण के लिए यदि पूँजी की एक स्थिर मात्रा के साथ श्रम की 10 इकाइयों के प्रयोग के कारण कुल उत्पाद 120 रहा तो श्रम का औसत उत्पाद 120/10 = 12 होगा।

हम यह भी कह सकते हैं कि श्रम का औसत उत्पाद(AP_L) = TP/L. या sigma Q/L

2.2.3सीमान्त उत्पाद(Marginal Product)- साधन की मात्रा में एक अतिरिक्त इकाई की वृद्धि के परिणामस्वरूप कुल उत्पाद में जो परिवर्तन होता है उसे हम उस साधन की इकाई का सीमान्त उत्पाद कहेंगे। उदाहरण के लिए श्रम की 10 इकाई से प्राप्त उत्पाद 120 है, अब यदि श्रम की 11वीं इकाई लगायी जाय और कुल उत्पाद बढ़कर 135 हो जायें तो 11वीं इकाई का सीमान्त उत्पाद 135-120 = 15 इकाई होगा। इसे हम इस रूप में भी लिख सकते हैं-

इकाई होगा। इसे हम इस रूप में भी लिख सकते हैं-

श्रम की 11वीं इकाई का सीमान्त उत्पाद = $\dfrac{= \text{(श्रम की 11 इकाई का कुल उत्पाद - श्रम की(11–1) 10 इकाई का}}{\text{श्रम की 11वीं इकाई का सीमान्त उत्पाद कुल उत्पाद} =(135–120) = 15}$

इसका सामान्यीकरण हम इस रूप में कर सकते हैं-

श्रम की nवीं इकाई का सीमान्त उत्पाद(MP_n) =(TP_n-TP_{n-1})

बोध प्रश्न

अपना उत्तर लिखने के लिए प्रत्येक प्रश्न के सामने छोड़ी गयी खाली जगह का प्रयोग करें। इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान करें।

(1) उत्पादन-फलन किसे कहते है। क्या यह फलन तकनीकी श्रेष्ठता की मान्मता लेकर चलता है?

(2) अल्पकालीन एवं दीर्घकालीन उत्पादन-फलन में क्या अन्तर है?

2.3 काल या समय की धारणा(Cancept of Time) तथा साधनों का स्वभाव' –

अर्थशास्त्र में समय से आशय उस अवधि से है जो मांग में परिवर्तन के अनुसार पूर्ति को समायोजित करने में उत्पादक को लगता है। समय तीन प्रकार का हो सकता है– अति अल्पकाल जिसमें पूर्ति में कोई परिवर्तन नहीं हो सके अर्थात् सभी साधन स्थिर स्वभाव के हो, अल्पकाल जिसमें उत्पादन में कुछ परिवर्तन लाया जा सके, ऐसी स्थिति में कुछ साधन ऐसे होंगे जिनमें बिल्कुल परिवर्तन नहीं लाया जा सके, उन्हें हम स्थिर साधन कहते हैं तथा कुछ ऐसे होंगे जिसमें परिवर्तन लाया जा सकता है, इन्हें हम परिवर्तनीय साधन(Variable factor) कहते हैं। जैसे प्लाण्ट तथा मशीन उत्पादन में प्रयुक्त होने वाले अल्पकाल में स्थिर साधन होंगे जबकि श्रम परिवर्तनीय साधन होगा। दीर्घकाल वह काल होगा जिसमें सभी साधनों में परिवर्तन लाया जा सके, इसलिए दीर्घकाल में कोई साधन स्थिर साधन नहीं होगा।

काल	साधनों का स्वाभाव	उत्पादन में परिवर्तन
अति अल्प काल	सभी साधन स्थिर	कोई परिवर्तन नहीं
अल्प काल	कुछ साधन स्थिर कुछ साधन परिवर्तनीय	परिवर्तनीय साधनों में परिवर्तन के कारण परिवर्तन
दीर्घ काल	सभी साधन परिवर्तनीय	सभी साधनों के परिवर्तन के परिणामस्वरूप परिवर्तन

उत्पादन फलन की अल्पकालीन व्याख्या(परिवर्तनीय अनुपात का नियम या परिवर्तनीय साधन का प्रतिफल) एक साधन के स्थिर होने पर निर्गत के व्यवहार की व्याख्या

हम पहले देख चुके हैं कि अल्पकाल में उत्पादन के साधनों को दो वर्गों में रखा जा सकता है। इसलिए उत्पादन की वृद्धि करने के लिए स्थिर साधन जैसे मशीन तथा प्लाण्ट की स्थिर मात्रा के साथ परिवर्तनीय साधन जैसे श्रम में वृद्धि की जाती है। स्पष्ट है उत्पादन में जो वृद्धि होगी वह परिवर्तनीय साधन का प्रतिफल होगा और इसीलिए अल्पकालीन उत्पादन फलन इस रूप में व्यक्त होगा-

Q = f(L) K(अर्थात् उत्पादन की मात्रा श्रम की मात्रा पर निर्भर करेगी, पूँजी स्थिर है)

Q में होने वाली वृद्धि L में वृद्धि के कारण होगी और इसीलिए इसे 'परिवर्तनीय साधन का प्रतिफल' नियम कहते हैं और चूँकि K की स्थिर मात्रा के साथ जैसे जैसे L में वृद्धि होती जाती है, वैसे-वैसे L तथा K का अनुपात परिवर्तित होता जाता है, Q में होने वाला परिवर्तन, इस अनुपात में परिवर्तन का परिणाम है और इसीलिए, आधुनिक अर्थशास्त्री अल्पकालीन उत्पादन फलन को 'परिवर्तनीय अनुपात के नियम' कहते हैं।

अथ मानलीजिए श्रम(L) मेंA गुनी वृद्धि होती है तो इसके परिणामस्वरूप उत्पादन(Q) में भी वृद्धि होगी, मानलीजिए, Q में b गुनी वृद्धि होती है तो उत्पादन फलन को निम्नरूप में व्यक्त किया जा. सकता है-

$$b. Q = f(a.L) K$$

अब हमA तथा b के तुलनात्मक अध्ययन के बाद उत्पादन फलन के स्वभाव पर प्रकाश डाल सकते हैं, तीन स्थितियां हो सकती हैं–

(i) b का मानA से अधिक(b>A) अर्थात् श्रम(L) में होने वाली वृद्धि की तुलना में उत्पादन(Q) में अधिक वृद्धि हो रही है. इस स्थिति में क्रमागत उत्पादन वृद्धि नियम क्रियाशील होगा।

(ii) यदि b का मानA के बराबर हो(b=a) अर्थात् उत्पादन में वृद्धि उसी अनुपात में हो रही है जिस अनुपात में श्रम में वृद्धि हो रही है जैसे यदि श्रम को तिगुना कर दिया जाय तो उत्पादन भी तिगुना ही हो। इस स्थिति में उत्पादन समता नियम लागू होगा।

(iii) यदि b का मानA से कम हो(b <a) अर्थात् जिस अनुपात में श्रम में वृद्धि हो रही है. उत्पादन में वृद्धि उस अनुपात से कम हो रही है जैसे यदि श्रम को तिगुना करने पर उत्पादन में दो गुना ही वृद्धि हो। इस स्थिति में उत्पादन ह्रास नियम क्रियाशील होगा। यदि श्रम की मात्रा दो गुनी हो जाय तो उत्पादन दो गुना से अधिक 2.5 गुना या तिगुना हो जाय।

उत्पादन क्रिया में प्रयुक्त होने वाले साधनों में से यदि एक साधन को स्थिर रखा जाय तथा अन्य में वृद्धि किया जाय तो प्रारम्भ में आगतों में वृद्धि की तुलना में उत्पादन की मात्रा में अधिक वृद्धि हो सकती है परन्तु एक सीमा के बाद आगतों में वृद्धि उत्पादन में उसी अनुपात में वृद्धि नहीं लायेगी। आगत तथा निर्गत का यह सम्बन्ध परिवर्तनीय अनुपात के नियम के नाम से जाना जाता है। यह नियम 'ह्रासमान प्रतिफल नियम का संशोधित, विस्तृत तथा आधुनिक रूप है। यह नियम अर्थशास्त्र के उन महत्त्वपूर्ण नियमों में से एक है जो सर्वत्र सत्य तथा निश्चितता के सन्दर्भ में प्राकृतिक नियमों के समान है। यहाँ पर उल्लेखनीय है कि चाहे एक साधन स्थिर हो तथा अन्य परिवर्तनीय हों अथवा एक परिवर्तनीय हो और अन्य स्थिर हीं, दोनों से मिलने वाले सामान्य निष्कर्ष में अन्तर नहीं होगा। अतएव हम पहले इसकी व्याख्या हासमान प्रतिफल नियम के रूप में करेंगे जैसा प्रो० मार्शल ने की फिर बाद में परिवर्तनीय अनुपात के रूप में करेंगे।

2.4 मार्शल तथा हासमान प्रतिफल नियम-

उत्पादन हास नियम का प्रथम उल्लेख 1815 में सर एडवर्डवेस्ट द्वारा एक लेख में किया गया यद्यपि यह माना जाता है कि प्रकृतिवादी अर्थशास्त्रियों(Physiocrats) ने विशेषरूप से टरगॉट(Turgot) ने सर्वप्रथम इसकी व्याख्या की। ये अर्थशास्त्री प्रकृति की उदारता में अधिक विश्वास रखते थे। फलस्वरूप वे इस विचार के थे कि भूमि हमें बीज का कई गुना उत्पादन के रूप में देती है। इनके अनुसार उत्पादन- डास-नियम गैर कृषि उत्पादनों में ही क्रियाशील होता है. कृषि के क्षेत्र में उत्पादन वृद्धि नियम लागू होगा। क्लासिकल अर्थशास्त्री तथा निओक्लासिकल अर्थशास्त्री प्रो० मार्शल ने कृषि के ही क्षेत्र में इस नियम को प्रतिपादित किया तथा यह मत व्यक्त किया कि कृषि के क्षेत्र में उत्पादन वृद्धि नियम नहीं बल्कि उत्पादन हास नियम लागू होता है। एडमस्मिथ ने तो इस नियम के ऊपर विशेष प्रकाश नहीं डाला पर माल्थस ने इस नियम की व्याख्या की तथा इसे अपने जनसंख्या सिद्धान्त का आधार बनाया। रिकार्डो का लगान सिद्धान्त भी इसी नियम पर आधारित है। प्रो० मार्शल ने इस नियम का कुछ क्रमवद्ध तथा विकसित स्वरूप सामने रखा। मार्शल ने इसकी व्याख्या इस प्रकार से की 'यदि कृषि की तकनीक में कोई सुधार नहीं हो तो भूमि पर उपयोग की जाने वाली श्रम एवं पूँजी की मात्रा में वृद्धि करने से कुल उपज में सामान्यतः अनुपात से कम वृद्धि होती है। "

मार्शल के इस कथन से स्पष्ट है कि वे कृषि में उत्पादन-हास-नियम की व्याख्या करते हैं तथा इस दृष्टिकोण के हैं कि यदि कृषि में प्रयुक्त कृषि-विधि में सुधार न लाया जाय तो भूमि के एक निश्चित टुकड़े पर यदि श्रम एवं पूँजी की मात्रा लगायी जाय तो इस वृद्धि के अनुपात से उपज में कम वृद्धि होगी। मार्शल के इस दृष्टिकोण का आधार यह था कि भूमि के टुकड़े की उर्वराशक्ति(Fertility) की ऊपरी सीमा है और

यदि कृषि कला में परिवर्तन के द्वारा इसमें वृद्धि न लायी जाय तो इस सीमा के बाद श्रम एवं पूंजी की मात्रा में जो वृद्धि लायी जायेगी वह उत्पादन में उसी अनुपात में वृद्धि नहीं लायेगी। मार्शल का यह सिद्धान्त इस मान्यता पर आधारित है कि कृषि कला में कोई सुधार नहीं हो तथा खेत की उत्पादन क्षमता का पूर्ण उपयोग हो गया है। यदि ऐसा नहीं हुआ हो तो उत्पादन की मात्रा में वृद्धि हो सकती है पर पूर्ण उपयोग के बाद उत्पादन में निश्चित रूप से कमी होगी। इस प्रकार अल्पकाल में यह नियम भले ही लागू न हो पर दीर्घकाल में निश्चितरूप से लागू होगा। कृषि के अतिरिक्त अन्य क्षेत्र में जहाँ तक इस नियम के लागू होने का प्रश्न है, मार्शल इस मत के थे कि यह नियम मछली पकड़ने तथा खानों के सम्बन्ध में भी लागू होता है। कारण स्पष्ट है जैसे जैसे खान से कोयला निकलता जायेगा श्रम एवं पूँजी की बढ़ती हुई इकाइयों से अपेक्षाकृत कम कोयला खान से प्राप्त होगा तथा इसी प्रकार यदि किसी तालाब से मछलियाँ पकड़ी जायें तो मछलियों की संख्या कम हो जाने पर श्रम एवं पूँजी की अधिक इकाइयों से पहले की अपेक्षा कम मछलियाँ मिलेंगी। विकस्टीड ने घटते प्रतिफल के नियम को उतना ही सार्वभौमिक माना जितना जीवन का नियम।

2.5 परिवर्तनीय अनुपात का नियम(आधुनिक दृष्टिकोण)

अनेक आधुनिक अर्थशास्त्री जैसे श्रीमती जोन रॉविन्सन, वेन्हम, स्टिगलर आदि ने मार्शल के इस दृष्टिकोण की आलोचना की तथा यह आरोप लगाया कि मार्शल ने उत्पादन- ह्रास-नियम के व्यापक स्वरूप को कृषि तक ही सीमित करके, इसके क्षेत्र को अत्यन्त ही सीमित कर दिया है। आधुनिक अर्थशास्त्रियों का यह मत है कि आगतों अथवा उत्पादन के साधनों में से किसी एक को यदि स्थिर कर दिया जाय तथा अन्य साधनों की मात्रा में वृद्धि लायी जाय तो यह नियम उत्पादन के अन्य क्षेत्रों में भी उसी प्रकार से क्रियाशील होगा जिस प्रकार मार्शल का नियम कृषि क्षेत्र में भूमि की मात्रा स्थिर करने पर लागू होता. है। इसे आधुनिक अर्थशास्त्रियों ने परिवर्तनीय अनुपात का नियम कहा। इस नियम के अनुसार उत्पादन क्रिया में प्रयोग में आने वाले किसी भी एक साधन की मात्रा यदि स्थिर कर दी जाय तथा अन्य साधनों की मात्रा में वृद्धि लायी जाय तो इस प्रकार की वृद्धि के कारण कुछ समय तक उत्पादन में वृद्धि साधन की वृद्धि के अनुपात से अधिक वृद्धि हो सकती है, पर अन्त में निश्चित रूप से परिवर्तनीय साधनों की मात्रा वृद्धि उत्पादन में कमी लायेगी। कहने का अर्थ यह है कि शुरू में उत्पादन की वृद्धि दर जिसे हम सीमान्त उत्पादन कहते हैं बढ़ती हुयी दर से हो पर अन्ततोगत्वा उसकी वृद्धि दर में कमी आयेगी। आधुनिक अर्थशास्त्रियों का यह दृष्टिकोण इस तथ्य पर आधारित है कि किसी वस्तु के उत्पादन में लगे हुए साधनों का एक निश्चित तथा आदर्श अनुपात है और जब एक साधन को स्थिर रख कर अन्य साधनों की मात्रा बढ़ायी जाय(जैसा अल्पकाल में आवश्यक रूप से होगा) तो इस अनुपात(स्थिर साधन तथा परिवर्तनीय साधनों के बीच का अनुपात) में ही परिवर्तन आ जाता है। जैसे जैसे परिवर्तनीय साधनों की मात्रा बढ़ायी जाती है स्थिर साधन के साथ लगे हुए परिवर्तनीय साधनों का अनुपात बढ़ता जाता है, जैसे मान लीजिए। मशीन(पूँजी) पर 100 श्रमिक काम कर रहे हैं। अथ यदि मशीन को स्थिर कर दिया जाय एवं श्रमिकों की संख्या 100 से 150 फिर 200 कर दी जाय तो मशीन तथा मशीन पर लगे श्रमिकों का अनुपात बढ़ता जायेगा, पर इस प्रकार के अनुपात की एक आदर्श सीमा होगी। जैसे यदि यह मान लिया जाय कि एक मशीन पर अधिक से अधिक 300 व्यक्ति काम कर सकते हैं तो इस सीमा के बाद यदि श्रमिकों की मात्रा बढ़ायी गयी तो निश्चित रूप से श्रमिकों की वृद्धि उत्पादन में श्रम की वृद्धि के अनुपात से कम वृद्धि लायेगी। इस प्रकार इस नियम में हम साधनों के अनुपात में परिवर्तन के कारण उत्पादन पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करते हैं। इस नियम की व्याख्या करते हुए प्रो० बेन्हम ने यह कहा कि "साधनों के संयोग में जब एक साधन के अनुपात में वृद्धि की जाती है तो एक विन्दु के बाद इस साधन की वृद्धि के कारण सीमान्त तथा औसत उत्पादन घटने लगेगा।"" श्रीमती जोन रॉबिन्सन ने इससे कुछ भिन्न ढंग से इस नियम की व्याख्या की है। उनके अनुसार "उत्पादन हास नियम यह बतलाता है कि किसी एक उत्पादन के साधन की मात्रा पूर्ववत रखने पर एक विन्दु के बाद प्रत्येक अगली वृद्धि से उत्पादन में घटती हुई दर से वृद्धि होगी। येन्हम तथा श्रीमती रॉबिन्सन की परिभाषाओं को देखने से उनके दृष्टिकोणों में अन्तर स्पष्ट हो जाता है। श्रीमती राविन्सन उत्पादन के किसी एक साधन को स्थिर रख कर अन्य साधनों के बढ़ाने की बात करती हैं जब कि वेन्हम अन्य साधनों को स्थिर रखकर एक साधन के बढ़ाने की बात करते हैं। पर इस प्रकार के अन्तर का नियम के क्रियाशीलन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। दोनों परिभाषाओं में एक आधारभूत अन्तर है जिसका उल्लेख आवश्यक है। श्रीमती रॉबिन्सन के अनुसार सीमान्त उत्पादन के घटने के साथ-साथ उत्पादन- हास- नियम लागू होना आरम्भ हो जाता है पर बेन्हम के अनुसार यह नियम उस समय लागू होना आरम्भ होता है जिस समय सीमान्त उत्पादन के साथ-साथ औसत उत्पादन भी घटने लगे। इसका स्पष्टीकरण तथा उत्पादन की नीतियों पर इसके प्रभाव की व्याख्या रेखाचित्र नं० 1:2 में की गई है।

प्रो० स्टिगलर तथा प्रो० सेमुएलसन के भी मत इस नियम के सम्बन्ध में उल्लेखनीय हैं। सेमुएलसन के शब्दों में "तुलनात्मक रूप से अन्य स्थिर आगतों के साथ कुछ आगतों की मात्रा में वृद्धि उत्पादन में वृद्धि लायेगी, पर एक बिन्दु के बाद उस आगत की वृद्धि से क्रमशः कम ही उत्पादन प्राप्त होगा।" तथा जी० स्टिगलर ने इसे इस रूप में व्यक्त किया। उनके मत में "जब एक आगत की मात्रा में बराबर वृद्धि की जाती

है(अन्य उत्पादक आगतों की सेवाओं को यदि स्थिर रखा जाय तो एक सीमा के बाद उत्पादन में होने वाली वृद्धि में कमी होगी अर्थात् सीमान्त उत्पादन में कमी होगी।"

ह्रासमान प्रतिफल के कारण- कृषि के सन्दर्भ में इस नियम की व्याख्या करते हुए प्रो० मार्शल ने यह मत व्यक्त किया कि भूमि के एक निश्चित टुकड़े पर जब श्रम एवं पूंजी की इकाइयों में उत्तरोत्तर वृद्धि लायी जाती है तो जब तक भूमि की उर्वराशक्ति का पूर्ण प्रयोग नहीं हो जाता है तब तक तो उत्पादन बढ़ेगा पर इसके बाद इसमें कमी दृष्टिगोचर होगी। आधुनिक अर्थशास्त्री इस सिद्धान्त के क्रियाशीलन को कृषि तक ही सीमित नहीं रखते तथा उनके अनुसार उत्पादन ह्रास की स्थिति प्रत्येक उत्पादन क्रिया में दिखलायी पड़ेगी, यदि किसी एक साधन को स्थिर रख कर अन्य साधनों की मात्रा में परिवर्तन लाया जाय।

2.5.1 उत्पादन की विभिन्न अवस्थाएं एवं अनुकूलतम अवस्था

प्रारम्भ में जब तक स्थिर साधन का पूर्ण तथा अधिक कुशल प्रयोग नहीं हुआ रहता(क्योंकि ऐसा करने के लिए परिवर्तनीय साधनों की मात्रा पर्याप्त नहीं रहती) तब तक तो परिवर्तनीय साधनों में वृद्धि उत्पादन में वृद्धि लायेगी पर इसके बाद जब ऐसी स्थिति प्राप्त हो जाय कि परिवर्तनीय साधनों की मात्रा इतनी पर्याप्त हो जाय कि स्थिर साधन का पूर्ण कुशल प्रयोग सम्भव हो सके तो इसके बाद परिवर्तनीय साधन में और अधिक वृद्धि सीमान्त तथा औसत उत्पादन में कमी लायेगी क्योंकि ऐसी स्थिति में परिवर्तनीय साधनों की तुलना में स्थिर साधन की मात्रा अपर्याप्त हो जाती है। वस्तुस्थिति यह है कि उत्पादन-क्रिया में उत्पादन के विभिन्न साधनों का एक आदर्श अनुपात होता है और जब एक साधन को स्थिर करके अन्य साधनों की मात्रा इस आदर्श अनुपात के बाद बढ़ायी जाती है तो उत्पादन में कमी दिखलायी पड़ेगी। उदाहरण के लिए यदि कपड़ा बुनने की एक मशीन की आदर्श क्षमता तक प्रयोग के लिए 100 श्रमिकों की आवश्यकता पड़ती हो तो जैसे-जैसे श्रमिकों की मात्रा 100 से अधिक होती जायेगी वैसे-वैसे एक श्रमिक को मिलने वाली मशीन की मात्रा(जितनी उसे काम के लिए आवश्यक है) कम होती जायेगी फलस्वरूप उत्पादन में कमी दृष्टिगोचर होगी।

श्रीमती जोन रॉबिन्सन के मत में इस नियम के लागू होने का कारण यह है कि उत्पादन-क्रिया में प्रयुक्त उत्पादन के साधन एक ओर तो दुर्लभ(scarce) हैं अथवा सीमित पूर्ति वाले हैं दूसरी ओर एक सीमा के बाद एक साधन के स्थान पर दूसरे को प्रतिस्थापित नहीं किया जा सकता है अर्थात् उत्पादन-क्रिया में एक साधन की कमी की दूसरे साधन की वृद्धि के द्वारा पूरा नहीं किया जा सकता है। जब तक एक साधन की कमी की पूर्ति दूसरे साधन की वृद्धि के द्वारा हो सकेगी तब तक तो उत्पादन बढ़ेगा पर प्रतिस्थापन की इस सीमा के बाद उत्पादन में कमी दिखलायी पड़ेगी। श्रीमती जोन रॉबिन्सन के ही शब्दों में उत्पादन ह्रास-नियम वस्तुतः यह बतलाता है कि एक निश्चित सीमा तक ही एक साधन का प्रतिस्थापन दूसरे साधन से हो सकता है। अथवा दूसरे शब्दों में उत्पादन के साधनों के प्रतिस्थापित करने की लोच असीमित नहीं होती है। इस प्रकार स्पष्ट है कि एक साधन के स्थान पर दूसरे साधन को प्रतिस्थापित करने की लोच जितनी ही अधिक होगी उत्पादन में हास की स्थिति उतनी ही देर में दृष्टिगोचर होगी। इस विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि उत्पादन ह्रास-नियम इसलिए लागू नहीं होता है कि साधनों के बीच अनुपात परिवर्तित होता है, बल्कि इसलिए होता है कि साधनों के बीच अनुपात के परिवर्तन की एक सीमा है जिसके बाद यह परिवर्तन लाभप्रद नहीं होता है। **परिवर्तनीय अनुपात का नियम निम्नाङ्कित मान्यताओं पर आधारित है-**

(1) इस नियम के क्रियाशीलन के लिए प्रथम मान्यता यह है कि प्रविधि के स्तर(state of technology) में कोई परिवर्तन नहीं होगा। यदि प्रविधि के स्तर में उन्नति हो जाय तो सीमान्त तथा औसत उत्पादन में वृद्धि हो सकती है।

(2) आगतों में से कोई न कोई आगत ऐसा अवश्य होना चाहिए जिसकी मात्रा को स्थिर रखा जा सके। ऐसी अवस्था में ही हम साधनों के अनुपात में परिवर्तन के द्वारा उत्पादन के ऊपर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन कर सकते हैं।

(3) यह नियम उन उत्पादनों के सम्बन्ध में लागू होगा जहाँ उत्पादन को प्राप्त करने के लिए साधनों का एक निश्चित अनुपात में संयोग आवश्यक हो ।

नियम की व्याख्या चित्र नं० 1:2 में एक उदाहरण के माध्यम से की गयी है। यह मान लिया गया है कि पूँजी की एक स्थिर मात्रा(K) है। जिसके साथ श्रम की उत्तरोत्तर इकाइयों का प्रयोग किया गया है। इस प्रकार श्रम की उत्तरोत्तर इकाइयों की वृद्धि से जो उत्पादन प्राप्त होता है उसे सारणी 1 में दिखाया गया है–

सारणी 1

पूंजी की स्थिर मात्रा में साथ परिवर्तनीय साधन(श्रम) तथा उत्पादन के बीच सम्बन्ध

साधनों की मात्रा		उत्पादन			उत्पादन की अवस्था	TP,AP तथा MP के बीच सम्बन्ध
श्रम	पूँजी(स्थिर)	TP	AP	MP		
0 1 2 3 4	5 5 5 5 5	0 10 26 48 64	0 10 13 16 16	0 10 16 22 16	प्रथम अवस्था (I) परिवर्तनीय साधन (श्रम) का वर्धमान प्रतिफल	(i) TP,AP तथा MP धनात्मक (ii) TP,AP बढ़ रहे है. MP में गिरावट शुरू
5 6 7 8 9 10 11	5 5 5 5 5 5 5	75 84 91 96 99 100 100	15 14 13 12 11 10 9.1	11 9 7 5 3 1 0	द्रितीय अवस्था(II) परिवर्तनीय साधन (श्रम) का हासमान प्रतिफल	(i) TP,AP तथा MP धनात्मक (ii) TP बढ़ रही है पर घटते दर से (iii)AP तथा MP घट रहे हैं पर MP तेजी से घट रही है.
12	5	96	8	-4	तृतीय अवस्था (iii) हासमान प्रतिफल	(i) TP में गिरावट पर धनात्मक (ii)AP में गिरावट पर धनात्मक (iii) MP ऋणात्मक

सारिणी नं० 1 में पूँजी की एक निश्चित मात्रा के साथ श्रम की उत्तरोत्तर इकाइयाँ लगायी गयी हैं। सारिणी पर ध्यानपूर्वक विचार करने पर निम्नाङ्कित तथ्य सामने आते हैं-

(1) पूँजी की स्थिर मात्रा के साथ श्रम की उत्तरोत्तर इकाइयों से कुल उत्पादन में वृद्धि जिसे हम सीमान्त उत्पादन कहते हैं, क्रमशः घटती जाती है जैसा सारिणी के खाना नं0 5 से स्पष्ट है। प्रारम्भ में कुछ सीमा तक सम्भवतः उस सीमा तक जब तक कि पूँजी की पूर्ण उत्पादन क्षमता का प्रयोग नहीं हुआ रहता, तब तक सीमान्त उत्पादन बढ़ता है, फिर उसके बाद गिरने लगता है।

(2) खाना नं0 4 से स्पष्ट है कि प्रारम्भ में वृद्धि के बाद औसत उत्पादन में भी घटने की प्रवृत्ति है पर सीमान्त उत्पाद की अपेक्षा इसमें घटने की दर कम है।

(3) खाना नं० 3 से स्पष्ट है कि कुल उत्पाद उत्तरोत्तर बढ़ता गया है पर इसमें बढ़ने की दर प्रारम्भ से अधिक है पर बाद में यह दर कम है। दूसरे शब्दों में प्रारम्भ में यह बढ़ती हुई दर से बढ़ता है पर बाद में यह घटती हुई दर से बढ़ता है। कुल उत्पाद उस समय अधिकतम होकर स्थिर हो जाता है जब सीमान्त उत्पाद शून्य हो जाता है तथा जब सीमान्त उत्पाद ऋणात्मक हो जाता है उसके बाद कुल उत्पाद में भी घटने की प्रवृत्ति प्रारम्भ हो जाती है।

(4) पूरी सारिणी तीन अवस्थाओं में विभक्त है। पहली अवस्था वह है जिसमें कुल उत्पाद, सीमान्त उत्पाद तथा औसत उत्पाद तीनों बढ़ रहे

हैं। इसमें कुल उत्पाद बढ़ती हुई दर से बढ़ रहा है। इस अवस्था की अन्तिम सीमा वहाँ है जहाँ औसत उत्पाद सीमान्त उत्पाद के बरावर है, इस अवस्था के अन्त के पहले सीमान्त उत्पाद में घटने की प्रवृत्ति प्रारम्भ हो गयी है, जबकि औसत उत्पाद में घटने की प्रवृत्ति उस अवस्था के बाद प्रारम्भ होती है। दूसरी अवस्था वहाँ से प्रारम्भ होती है जहाँ से औसत उत्पाद भी घटने लगे तथा इसका अन्त वहाँ होता है जहाँ सीमान्त उत्पाद शून्य हो जाता है तथा कुल उत्पाद अधिकतम हो जाता है। दूसरी अवस्था के दौरान औसत तथा सीमान्त उत्पाद दोनों गिरते हैं, कुल उत्पाद बढ़ता है। पर घटती हुई दर से। तीसरी अवस्था वह है जिसमें सीमान्त उत्पाद ऋणात्मक हो जाता है तथा कुल उत्पाद में भी गिरने की प्रवृत्ति प्रारम्भ हो जाती है।

अधिक स्पष्ट करने के लिए हम सारिणी । में ही दिये गये तथ्यों को रेखाचित्र के रूप में प्रदर्शित कर रहे हैं-

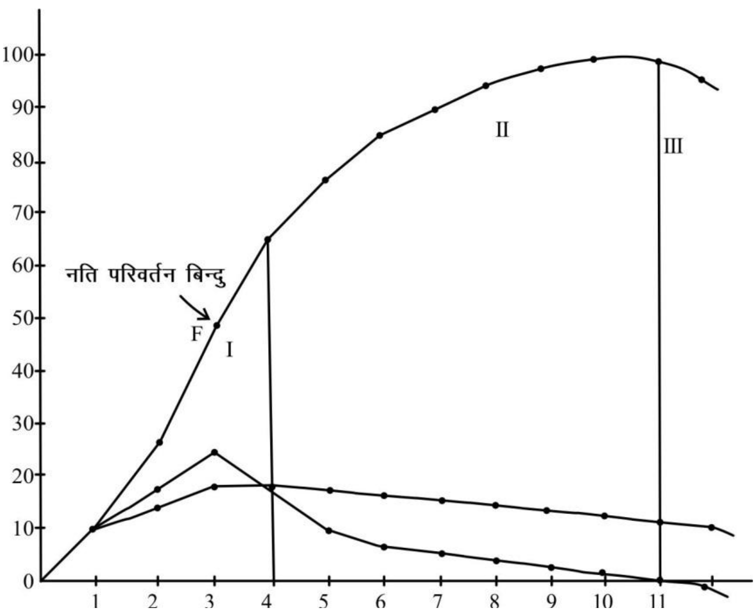

चित्र सं0 1.2

कुल उत्पाद(TP), औसत उत्पाद(AP) तथा सीमान्त उत्पाद(MP) के बीच सम्बन्ध का विश्लेषण वैसे हम इनके बीच सम्बन्ध की व्याख्या चित्र 1:2 के ही आधार पर कर सकते हैं पर सुविधा के लिए हम चित्र 1:3 ले रहे हैं, जो मूलतः चित्र 1:2 ही है। रेखाचित्र नं० 1:3 में पूँजी की स्थिर मात्रा K के साय श्रम की मात्रा बढ़ाकर उत्पादन के ऊपर पड़ने वाले प्रभाव को प्रदर्शित किया गया है। जैसे जैसे श्रम की बढ़ती हुई इकाइयाँ लगायी गयी हैं कुल उत्पादन निरन्तर बढ़ता गया है, इसमें वृद्धि की दर F बिन्दु तक अपेक्षाकृत अधिक है। कुल उत्पाद अथवा TP वक्र G बिन्दु पर अधिकतम स्थिति को प्राप्त है जहाँ से यह नीचे की ओर गिरने लगता है। सीमान्त उत्पाद तथा औसत उत्पाद वक्रें भी पहले ऊपर उठे हैं। पर बाद में उनमें भी गिरने की प्रवृत्ति दृष्टिगोचर है। सीमान्त उत्पादन में घटने की प्रवृत्ति औसत उत्पादन की अपेक्षा पहले प्रारम्भ हो जाती है। रेखाचित्र से यह भी स्पष्ट है कि नतिपरिवर्तन बिन्दु F पर सीमान्त उत्पादन अधिकतम है तथा N बिन्दु पर जहाँ O से खींची गयी OU रेखा स्पर्श करती है, सीमान्त तथा औसत उत्पादन बराबर है। इससे भी प्रमुख विशेषता यह है कि इस बिन्दु पर औसत उत्पादन अधिकतम है। TP पर G बिन्दु ऐसा है जहाँ कुल उत्पादन अधिकतम है, इस बिन्दु पर सीमान्त उत्पादन शून्य है तथा MP वक्र क्षैतिज अक्ष को M बिन्दु पर काटता है। सम्पूर्ण रेखाचित्र तीन भागों में विभक्त है। N बिन्दु तक प्रथम अवस्था जहाँ औसत उत्पादन सीमान्त उत्पादन के बराबर है, N से G तक दूसरी अवस्था तथा G के बाद की अवस्था तीसरी है। अब हम इन विभिन्न अवस्थाओं का अध्ययन करेंगे।

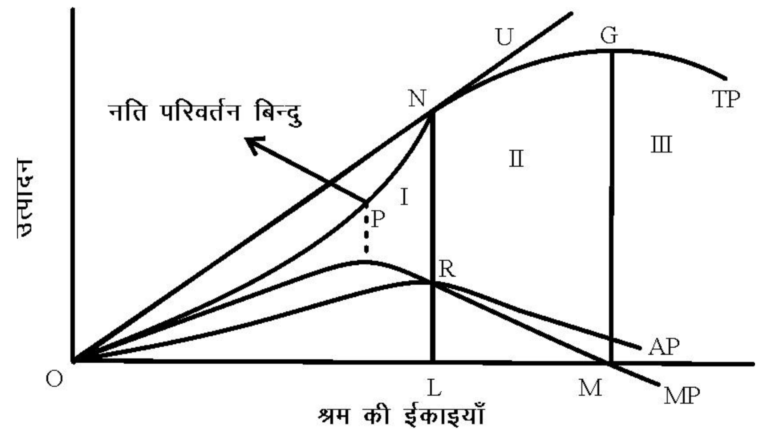

चित्र सं0 1.3

प्रथम अवस्था(उत्पादन वृद्धि नियम का क्रियाशीलन)- हम पहले ही स्पष्ट कर चुके हैं और जैसा रेखाचित्र नं० 1:3 से स्पष्ट है कि इस अवस्था में P बिन्दु तक तो TP वक्र का ढाल बढ़ रहा है अर्थात् इस बिन्दु तक कुल उत्पादन बढ़ती हुई दर से बढ़ रहा है। जिसका आशय यह है कि सीमान्त उत्पादन बढ़ रहा है। P बिन्दु से ऊपर N बिन्दु तक जहाँ प्रथम अवस्था समाप्त होती है, कुल उत्पादन बढ़ता जा रहा है पर उसका ढाल क्रमशः कम होता जा रहा है जिसका अर्थ यह हुआ कि कुल उत्पादन गिरती हुई दर से बढ़ रहा है। यदि हम ध्यान से देखें तो पायेंगे कि इस अवस्था में सीमान्त उत्पादन अधिकतम स्थति को प्राप्त करने के बाद गिरने लगा है, पर प्रथम अवस्था में प्रत्येक स्थान पर यह औसत उत्पादन(AP) से ऊपर है। जहाँ तक औसत उत्पादन का प्रश्न है, यह पूरी प्रथम अवस्था में ऊपर ही उठ रहा है और इसीलिए प्रथम अवस्था को 'उत्पादन वृद्धि नियम की अवस्था'(State of Increasing Return) कहा जाता है।

प्रश्न यह उठता है कि प्रथम अवस्था में उत्पादन वृद्धि की स्थिति क्यों प्राप्त होती है? उत्पादन वृद्धि नियम के क्रियाशील होने के प्रमुख रूप से निम्नांकित कारण हो सकते हैं-

(क) यदि परिवर्तनीय साधनों की मात्रा इतनी कम हो कि स्थिर साधन का पूर्ण प्रयोग नहीं हो सके: ऐसी स्थिति में जैसे-जैसे उत्पादन किया में परिवर्तनीय साधनों की मात्रा बढ़ती जायेगी. स्थिर साधन का पूर्ण प्रयोग सम्भव हो सकेगा और उत्पादन में वृद्धि की स्थिति दृष्टिगोचर होगी। ऐसा सामान्यतया देखा जाता है जैसे एक मशीन जिसके पूर्ण प्रयोग के लिए 100 श्रमिकों की आवश्यकता हो, और प्रारम्भ में यदि 10 ही श्रमिकों को प्रयोग में लाया जाय तो इसका पूर्ण प्रयोग नहीं हो सकेगा। ऐसी स्थिति में परिवर्तनीय साधन(श्रम) की मात्रा में वृद्धि के फलस्वरूप मशीन का पूर्ण प्रयोग सम्भव हो सकेगा तथा इसके कारण उत्पादन वृद्धि की स्थिति होगी। ऐसा होने का कारण यह है कि स्थिर साधन अधिकतर पूर्णतया विभाजन योग्य नहीं होता है, यदि ऐसा होता तो परिवर्तनीय साधन के ही अनुसार, उसे विभाजित करके प्रयोग किया जाता।

(ख) प्रथम अवस्था में उत्पादन-वृद्धि की स्थिति प्राप्त होने का दूसरा कारण यह हो सकता है कि जैसे-जैसे परिवर्तनीय साधनों की अधिक मात्रा उपयोग में लायी जाये तो स्वयं परिवर्तनीय साधन की उत्पादन की क्षमता में वृद्धि हो जाय। जैसे परिवर्तनीय साधन की वृद्धि के फलस्वरूप श्रम विभाजन तथा विशिष्टीकरण की सुविधा प्राप्त हो सकती है, फलस्वरूप उत्पादन में वृद्धि हो सकती है।

दूसरी अवस्था दूसरी अवस्था यहाँ से प्रारम्भ होती है जहाँ औसत उत्पादन वक्र(AP) अधिकतम स्थिति को प्राप्त कर लेता है तथा यह सीमान्त उत्पादन वक्र के बराबर है। दूसरी अवस्था के दौरान दोनों ही सीमान्त तथा औसत उत्पादन घट रहे हैं। पर औसत तथा सीमान्त दोनों ही उत्पादनों की मात्रा धनात्मक है। इस अवस्था के अन्त में सीमान्त उत्पादन शून्य हो जाता है तथा इसके बाद कुल उत्पादन में भी कमी दृष्टिगोचर होने लगती है। इस अवस्था को 'उत्पादन ह्रास नियम की अवस्था' कहा जाता है। ऐसा क्यों होगा? इसकी व्याख्या पहले की जा चुकी है।

तीसरी अवस्था- तीसरी अवस्था रेखाचित्र में G बिन्दु से प्रारम्भ होती है जहाँ से कुल उत्पादन वक्र(TP) नीचे गिरने लगता है। इस अवस्था में सीमान्त उत्पादन ऋणात्मक हो जाता है और इसीलिए TP में गिरावट होती है, क्योंकि यदि सीमान्त उत्पादन का मूल्य धनात्मक रहता है तो कुल उत्पादन में गिरावट की स्थिति नहीं दृष्टिगोचर होती। इसीलिए इस अवस्था को ऋणात्मक उत्पादन की अवस्था भी कहा जाता है। जब एक साधन की मात्रा को स्थिर करके परिवर्तनीय साधन की मात्रा बढ़ायी जाती है तो एक ऐसी अवस्था आ जाती है जहाँ सीमान्त

उत्पादन ऋणात्मक हो जाता है और कुल उत्पादन में भी कमी दिखलायी पड़ने लगती है। इसका प्रमुख कारण यह है कि इस अवस्था में स्थिर साधन की तुलना में परिवर्तनीय साधन की मात्रा इतनी अधिक हो जाती है कि परिवर्तनीय साधन से ऋणात्मक उत्पादन प्राप्त होने लगता है, स्थिर साधन का तो आदर्श स्तर तक प्रयोग हो ही गया रहता है।

अब हम इस महत्त्वपूर्ण प्रश्न पर विचार करेंगे कि कोई विवेक पूर्ण उत्पादक उपरोक्त तीनों अवस्थाओं में से किस अवस्था में उत्पादन करेगा? दूसरे शब्दों में पूँजी की एक स्थिर मात्रा K के साथ श्रम की मात्रा किस सीमा तक लगायेगा? कोई भी विवेक पूर्ण उत्पादक उस अवस्था में उत्पादन करेगा, जहाँ स्थिर तथा परिवर्तनीय साधनों दोनों का उसने पूर्ण शोषण या पूर्ण प्रयोग कर लिया हो और इस प्रकार कुल उत्पादन अधिकतम कर लिया हो।

इस आधार पर वह पहली अवस्था में उत्पादन नहीं करेगा। इस स्थिति में श्रम का सीमान्त उत्पादन ऊपर उठ रहा है तथा N विन्दु या OL श्रमिक पर औसत उत्पादन अधिकतम है। स्थिर साधन पूँजी का पूर्ण प्रयोग N बिन्दु पर ही होगा क्योंकि फरगुशन के अनुसार N बिन्दु पर पूँजी की सीमान्त उत्पादकता शून्य होगी। क्योंकि जब तक स्थिर साधन की उत्पादकता शून्य से अधिक थी तब तक तो श्रम का औसत उत्पाद बढ़ा, उसके बाद उसमें गिरावट प्रारम्भ होती है। इस प्रकार कुल उत्पाद बक्र का N बिन्दु एक ऐसी सीमा निर्धारित करेगा जहाँ स्थिर साधन का पूर्ण प्रयोग हो चुका है पर अब भी परिवर्तनीय साधन का पूर्ण प्रयोग नहीं हुआ है क्योंकि कुल उत्पादन अब भी बढ़ रहा है और G बिन्दु ऐसा है जहाँ कुल उत्पादन अधिकतम है तथा श्रम का सीमान्त उत्पादन शून्य है। इस प्रकार N तथा G दो सीमायें हैं, जिसके भीतर ही उत्पादन होगा। इस प्रकार दूसरी अवस्था में ही उत्पादक उत्पादन करेगा। तीसरी अवस्था में उत्पादन का प्रश्न ही नहीं उठता क्योंकि श्रम की सीमान्त उत्पादकता ऋणात्मक है। इस प्रकार वह OM से अधिक श्रम की इकाइयों नहीं लगायेगा। इस निष्कर्ष की पुष्टि हम एक दूसरे आधार पर भी कर सकते हैं। वितरण के सीमान्त उत्पादकता सिद्धान्त की व्याख्या करते समय हम आगे देखेंगे कि साधन बाजार में पूर्ण प्रतियोगिता की स्थिति में मजदूर की मजदूरी उसके सीमान्त उत्पादन के बराबर दी जाती हैं। यदि ऐसा हो तो पूरी प्रथम अवस्था में जबकि सीमान्त उत्पादन औसत उत्पादन से अधिक है मजदूर को दी जाने वाली कुल मजदूरी उनसे प्राप्त कुल उत्पादन से अधिक होगी। इस स्थिति में श्रम से प्राप्त उत्पादन $=AP_L \times L$ जबकि श्रम को दी जाने वाली मजदूरी $= MP_L \times L$ पर प्राप्त उत्पादन$(AP_L \times L) < (MP_L \times L)$ क्योंकि$AP_L < MP_L$ | इस प्रकार श्रम से प्राप्त उत्पादन, मजदूरी के रूप में बाँटे गये उत्पादन से कम होगा। वह L बिन्दु पर भी उत्पादन नहीं करेगा क्योंकि जितना श्रम से उत्पादन प्राप्त होगा वह सभी उनके बीच बंट जायेगा। इस स्थिति में प्राप्त उत्पादन$AP_L \times L$, श्रम को मजदूरी के रूप में दिया गया उत्पादन $MP_L \times L$ पर$AP_L \times L = MP_L \times L$ क्योंकि$AP_L = MP_L$I इस स्थिति में अन्य साधनों के प्रतिफल के भुगतान के लिए कुछ भी नहीं शेष बचेगा। तीसरी अवस्था में चूंकि MP ऋणात्मक है इसलिए कोई श्रमिक उत्पादन क्रिया में भाग नहीं लेगा क्योंकि इस स्थिति में मजदूरी ऋणात्मक होगी।

इस प्रकार स्पष्ट है, कोई भी उत्पादक न तो प्रथम अवस्था में और न ही तीसरी अवस्था में उत्पादन करेगा, L तथा M के बीच ही उत्पादन करेगा। जैसा हम देख चुके हैं L ऐसा बिन्दु है जिस पर पूंजी की सीमान्त उत्पादकता शून्य है तथा M ऐसा बिन्दु है जिस पर श्रम की सीमान्त उत्पादकता शून्य है। ये दोनों उत्पादन की प्राविधिक सीमायें हैं।

2.6 सारांश

उत्पादन प्रक्रिया में विभिन्न साधनों को विभिन्न अनुपातों में लगाया जा सकता है एवं इन अनुपातों में परिवर्तन भी किया जा सकता है। किसी फर्म की भौतिक आदाओं एवं भौतिक प्रदाओं के बीच सम्बन्ध ही उत्पादन- फलन है। गणितीय भाषा में, $Q = f(K, L, N...)$ इसका अभिप्राय है कि Q = उत्पादन अथवा प्रदा, उत्पादन प्रक्रिया में प्रयुक्त पूँजी, श्रम एवं अन्य साधनों पर(अथवा आदाओं पर) निर्भर है। उत्पादन फलन किसी निश्चित समयावधि, स्थिर तकनीकी एवं साधनों को विभाज्य माना जाता है।

यदि उत्पादन- फलन में अन्य साधनों की मात्रा को स्थिर रखकर किसी एक आदा की मात्रश बढ़ायी जाती है तो परिवर्तनशील अनुपातों का नियम क्रियाशील हो जाता है। इससे स्पष्ट है कि यदि किसी परिवर्तनशील साधन को स्थिर साधनों के साथ अधिकाधिक मिलाया जाएगा तो एक सीमा के बाद परिवर्तनशील साधन की सीमान्त एवं औसत उत्पन्ति घटने लगेगी। प्रत्येक फर्म उत्पादन की तीन विभिन्न स्थितियों से गुजरती है। प्रथम स्थिति में फर्म का औसत उत्पादन बढ़ता हुआ होता है। द्वितीय स्थिति में फर्म का औसत उत्पादन घटने लगता है एवं एक सीमा के बाद सीमान्त उत्पादन शून्य हो जाता है। यहाँ उत्पादन की दूसरी अवस्था समाप्त हो जाती है। कुल उत्पादन उस बिन्दु पर अधिकतम होता है जिस बिन्दु पर सीमान्त उत्पादन शून्य हो जाता हैं। उत्पादन की तृतीय अवस्था ऋणात्मक सीमान्त उत्पादन की अवस्था है। अत यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि उत्पादक किस अवस्था पर रुकना पसन्द करेगा। कोई भी विवेकशील उत्पादक अपना

उत्पादन दूसरी अवस्था में किसी बिन्दू पर तय करेगा।

2.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- माइक्रो अर्थशास्त्र, एम.एल.सेठ, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा(नवीनतम संस्करण) अध्याय 15
- Walter Nichalson, Micro Economic Theory-Basic PrinciplesAnd Extensions 3rd ed. 1986 The Dryden Press, Chapter.7
- James M HandersonAnd Richard E Quandt Microeconomic TheoryA Mathemati- calApproach, Chapter-3.

2.8 अभ्यासों के उत्तर

(1) किसी फर्म की भौतिक आदाओं एवं भौतिक प्रदाओं के मध्य तकनीकी सम्बन्ध को उत्पादन-फलन कहते हैं। हॉ, श्रेष्ठ तकनीकी की मान्यता इसमें अन्तर्निहित है।

(2) अल्पकालीन उत्पादन- फलन में अन्य साधनों को स्थिर रखकर कियसी एक साधन को परिवर्तित किया जाता है इससे साधनों का अनुपात बदलता है जबकि दीर्घकालीन उत्पादन- फलन में उत्पादन के सभी साधन परिवर्तित किए जा सकते है। अतः साधनों का अनुपात बदले बिना उत्पादन का पैमाना बदला जा सकता है।

इकाई–3 उत्पादन फलन : सम-उत्पाद वक्र(Production FunctionAnd Iso Product Curves)

इकाई की रूपरेखा–

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 सम उत्पाद वक्र

3.3 सम उत्पाद वक्र तथा अनाधिमान वक्र में अंतर

3.4 सम उत्पाद वक्रों की विशेषताएं

3.5 विकुंचित सम उत्पाद

3.6 सारांश

3.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

3.8 अभ्यासों के उत्तर

3.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप

- समोत्पाद वक्र की अवधारणा को समझ सकेंगे
- उनकी विशेषताओं के बारे में समझ सकते हैं
- सम उत्पाद वक्र एवम् अनधिमान वक्र के मध्य अंतर को स्पष्ट कर सकेंगे

3.1 प्रस्तावना

पिछले अध्याय में हम लोगों ने अल्पकालीन उत्पादन फलन की व्याख्या की, जब कोई एक आगत स्थिर था। इसे हम लोगों ने 'परिवर्तनीय साधन प्रतिफल कहा। अब हम मुख्य रूप से दीर्घकालीन उत्पादन फलन की व्याख्या करेंगे जिसमें सभी साधन परिवर्तित होते हैं तथा जिसे पैमाने का प्रतिफल कहते हैं। पैमाने के प्रतिफल की व्याख्या आगे अलग अध्याय में की गयी है। आगत तथा निर्गत के बीच दीर्घकालीन प्राविधिक सम्बन्ध को सामान्यतया सम उत्पाद वक्रों के माध्यम से व्यक्त किया जाता है तथा जिनका प्रयोग हम दीर्घकालीन उत्पादन फलन की व्याख्या के लिए करेंगे। इसलिए इस अध्याय में हम सम उत्पाद वक्रों की व्याख्या करेंगे। सम उत्पाद वक्र को विकसित करने का श्रेय क्रिश स्नाइडर, हिक्स कार्लसन तथा बोल्डिंग को दिया जाता है।

3.2 सम उत्पाद वक्र(Iso Product Curves)

जिस प्रकार अनधिमान वक्र दो वस्तुओं के उन सभी संयोगों को प्रदर्शित करते हैं जो उपभोक्ता को समान सन्तुष्टि प्रदान करते हैं, उसी प्रकार सम उत्पाद-वक्र उत्पादन के दो साधनों(यह मान कर कि एक वस्तु के उत्पादन में दो ही साधन प्रयोग में लाये जायेंगे) के उन सम्भावित संयोगो(Combinations) को प्रदर्शित करते हैं जिनके प्रयोग से उत्पादक को समान उत्पादन प्राप्त होता है। इन चक्रों को सममात्रा(Iso Quants) वक्र भी कहते हैं। और चूंकि एक सम उत्पादन वक्र दो आगतों की उन भिन्न-भिन्न मात्राओं को बताता है जिनसे समान निर्गत की प्राप्ति हो सके, इसलिए इनके बीच चुनाव करने में उत्पादक तटस्थ होगा और इसीलिए इन वक्रों को उत्पादन तटस्थता वक्र(Production Indifference Curves) भी कहा जाता है।

सम-उत्पाद वक्र का स्पष्टीकरण सारिणी नं० । में किया गया है। यह मान लिया गया है कि एक फर्म द्वारा कलम के बनाने में दो उत्पादन के साधन- पूँजी तथा श्रम-प्रयोग में लाये जाते हैं। आइये हम यह भी मान लें कि यह फर्म 100 कलम का निर्माण पूँजी तथा श्रम के निम्नांकित

संयोगों में से किसी एक संयोग द्वारा कर सकती है-

सारिणी नं० 1

100 कलम की इकाइयों को प्राप्त करने के लिए पूँजी तथा श्रम के विभिन्न संयोग

संयोग	श्रम की इकाइयों (साधन L.)	पूँजी की इकाइयों (साधन K)	श्रम तथा पूंजी के बीच तकनीकी प्रतिस्थापन की सीमान्त दर
A	1	15	
B	2	8	1:7
C	3	5	1:3
D	4	3	1:2
E	5	2	1:1

सारिणी नं० 1 से स्पष्ट है कि कलम की 100 इकाइयों को प्राप्त करने के लिए फर्म। एक श्रम तथा 15. पूँजी, 2 श्रम, तथा 8 पूँजी, 3 श्रम तथा 5 पूँजी, 4 श्रम एवं 3 पूँजी अथवा 5 श्रम तथा 2 पूँजी की इकाइयाँ लगा सकती हैं। इन विभिन्न संयोगों को यदि हम रेखाचित्र के माध्यम से प्रदर्शित करें तो एक वक्र पायेंगे जैसा रेखाचित्र नं० 2:1 में दिखाया गया है और यह वक्र ही सम उत्पाद वक्र कहलाता है।

रेखाचित्र नं० 2:1 में सारिणी नं० में दिये गये संयोगों को प्रदर्शित किया गया है। विन्दुA यह प्रदर्शित करता है कि उत्पादक 100 कलम की मात्रा को पूँजी की 15 इकाई तथा श्रम की एक इकाई से उत्पादित कर सकता है, तथा कलम की यही मात्रा B. बिन्दु पर पूँजी की 8 तथा श्रम की 2 इकाई, C बिन्दु पर पूँजी की 5 तथा श्रम की 3 मात्रा D बिन्दु पर पूँजी की 3 तथा श्रम की 4 इकाई तथा E बिन्दु पर पूँजी की 2 एवं श्रम 5 इकाई से क्रमशः उत्पादित की जा सकती है। इन सभी बिन्दुओंA, B, C, D तथा E से होकर जाने वाला वक्र श्रम तथा पूंजी के उन सम्भावित संयोगों को बतायेगा जिनसे 100 कलम का उत्पादन प्राप्त किया जा सके।

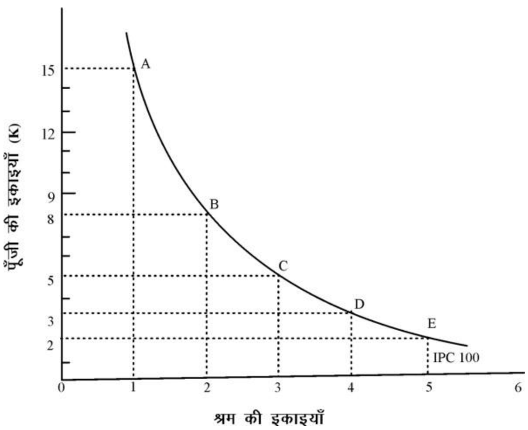

चित्र 2:1

इस वक्र को सम उत्पाद वक्र 100(Iso Product Curve 100) कहते हैं। इस प्रकार सम-उत्पाद चक्र दो साधनों के उन संयोगों को बताता है जिनसे उत्पादक को समान उत्पादन प्राप्त हो(यदि उत्पादन में दो ही साधन प्रयुक्त हों तथा दोनों परस्पर पूर्णतया स्थानापन्न हों)

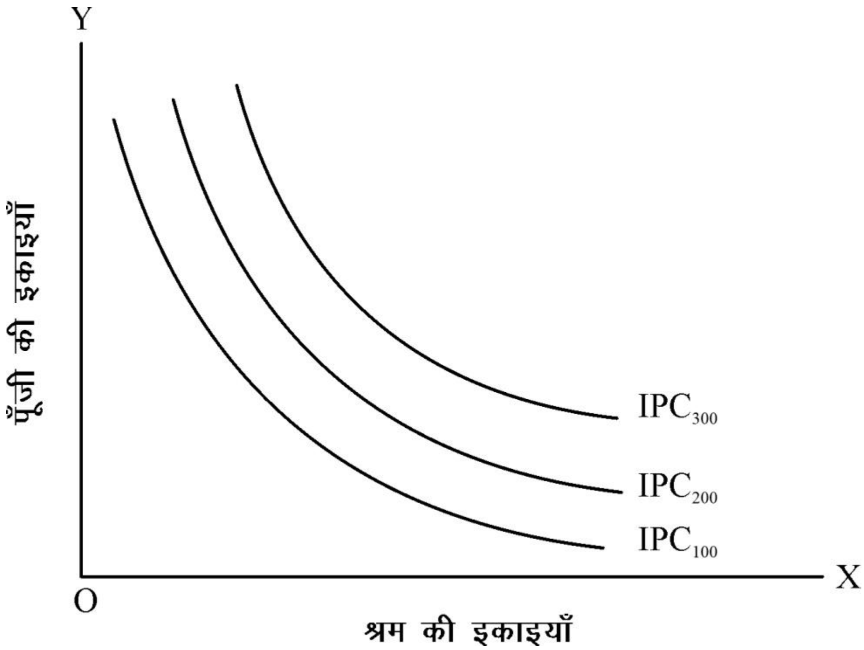

चित्र 2:2

अनधिमान वक्रों की तरह दो उत्पादन के साधनों के सम्भावित संयोगों से एक से अधिक सम उत्पाद वक्रों का निर्माण किया जा सकता है। एक से अधिक सम उत्पादन वक्रों के समूह को प्रदर्शित करने वाला चित्र सम उत्पाद वक्र- मानचित्र'(Iso Product Map) कहलाता है। इसे रेखाचित्र नं० 2:2 में दिखाया गया है-

इस रेखाचित्र से स्पष्ट है कि हम जैसे-जैसे O बिन्दु से दाहिनी ओर ऊपर बढ़ते जाते हैं, उच्चतर - सम-उत्पाद वक्र प्राप्त करते जाते हैं अर्थात् ऐसे सम उत्पादन वक्र प्राप्त करते हैं जो दोनों साधनों के ऐसे संयोगों को प्रदर्शित करते हैं जिनसे कलम की अधिक मात्रा का उत्पादन किया जा सके।

प्राविधिक प्रतिस्थापन की सीमान्त दर(Marginal Rate of Technical Substitution) अनधिमान वक्रों की व्याख्या के सन्दर्भ में हम लोगों ने 'प्रतिस्थापन की सीमान्त दर की चर्चा की। उत्पादन के सम्बन्ध में 'प्राविधिक प्रतिस्थापन की सीमान्त दर इससे भिन्न नहीं है। प्राविधिक प्रतिस्थापन की सीमान्त दर वह दर स्पष्ट करती है जिस पर बिना उत्पादन के स्तर में परिवर्तन किये हुए साधनों में प्रतिस्थापन किया जा सके। इस प्रकार यदि उत्पादन में केवल दो साधनों L एवं K का प्रयोग किया जा रहा हो तो K साधन के लिए L साधन की प्राविधिक प्रतिस्थापन की दर K की वह मात्रा है. जो L साधन की एक इकाई के द्वारा प्रतिस्थापित की जा सकती है, यदि उत्पादन के स्तर में किसी प्रकार को परिवर्तन हो। इसका स्पष्टीकरण सारिणी नं० 1 से हो जाता है। सारिणी के अन्तिम खाने से स्पष्ट हैं कि एक ही उत्पादन के स्तर पर बने रहने की स्थिति में प्रतिस्थापन की दर क्रमशः घटती गयी है।A से B संयोग की स्थिति में L की 1 इकाई K की 7 इकाई को प्रतिस्थापित करती है जबकि C पर L की 1 इकाई की वृद्धि केवल 3 K. D पर केवल 2K तथा E पर K की 1 ही इकाई प्रतिस्थापित करती है। इसका मतलब यह हुआ कि किसी बिन्दु पर सम उत्पादन वक्र के दाल के द्वारा उस बिन्दु पर प्राविधिक प्रतिस्थापन की सीमान्त दर($MRTS_{Lk}$) ज्ञात की जा सकती है जैसा रेखाचित्र नं० 2.3 में दिखाया गया है–

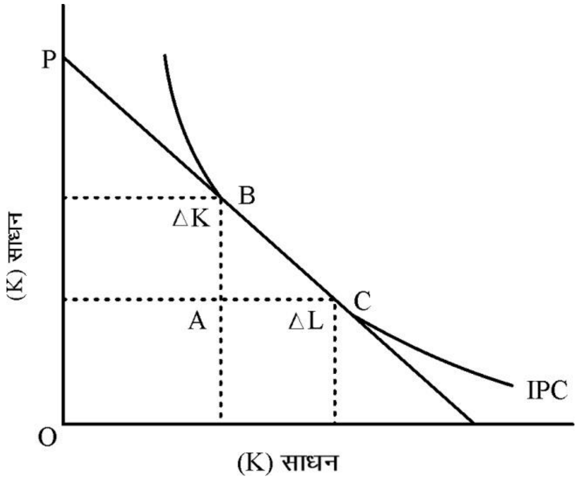

रेखाचित्र में प्रदर्शित 1 वक्र सम-उत्पादन वक्र प्रदर्शित करता है। इसके किसी बिन्दु पर प्राविधिक प्रतिस्थापन की सीमान्त दर ज्ञात करना है। रेखाचित्र में सम-उत्पाद वक्र(IPC) पर नीचे की ओर B से C पर अत्यन्त ही अल्प दूरी तक चलिए जहाँ बिना उत्पादन में किसी हानि के K की ΔK मात्रा L को ΔL मात्रा से प्रतिस्थापित होती है। PL का ढाल या प्राविधिक प्रतिस्थापन की सीमान्त दर. $-\Delta K/\Delta L$ होगा।

चूँकि उत्पादन का स्तर एक ही बना रहता है इसलिए प्राविधिक प्रतिस्थापन की सीमान्त दर दो साधनों L तथा K की सीमान्त उत्पादकताओं के अनुपात को बताती है। जब कोई उत्पादक किसी सम-उत्पादक वक्र के एक बिन्दु से दूसरे बिन्दु पर चलता है जैसे रेखाचित्र नं० 2:3 में उत्पादक B से C बिन्दु को जाता है, तो वह K की कुछ मात्रा को छोड़ता है जिसके कारण उत्पादन में कुछ कमी होगी तथा उसके स्थान पर L की कुछ मात्रा बढ़ाता है जिससे कुल उत्पादन में कुछ वृद्धि होगी पर चूँकि वह एक सम-उत्पाद वक्र पर चलता है अथवा उसके उत्पादन का स्तर एक ही बना रहता है इसलिए यह आवश्यक है कि K की कमी के कारण उत्पादन में कमी निश्चित रूप से L की वृद्धि कारण उत्पादन में हुई वृद्धि के बराबर हो, अन्यथा उत्पादन का एक ही स्तर नहीं बना रहेगा। इस प्रकार K की कमी के कारण उत्पादन में कमी = L की वृद्धि के कारण उत्पादन में वृद्धि | K की कमी के कारण उत्पादन में कमी $=\Delta K \times MP_K$(K की सीमान्त उत्पादकता : MP_K) तथा L की वृद्धि के कारण उत्पादन में वृद्धि $= \Delta L \times MP_L$,

इस प्रकार $\Delta K \times MP_K = \Delta L \times MP_L$ अर्थात् $\Delta K/\Delta L = MP_L / MP_K$

पर इसके पूर्व हम देख चुके हैं कि $\Delta K / \Delta L$ K के लिए L साधन की प्राविधिक प्रतिस्थापन की सीमांत दर है, इसलिए $MRTS_{LK} = -\Delta K/\Delta L = MP_L / MP_K$

अभी हम लोगों ने देखा कि जब एक साधन के द्वारा दूसरे साधन को प्रतिस्थापित किया जाता है तो

प्राविधिक प्रतिस्थापन की सीमान्त दर क्रमशः घटने लगती है। उत्पादन के दो साधनों L तथा K के संयोग में उत्पादन के उसी स्तर पर बने रहने के लिए यह आवश्यक है कि यदि L की मात्रा बढ़ाई जाय तो दूसरे साधन K की मात्रा घटायी जाय। ऐसी स्थिति में साधन L की प्रत्येक इकाई द्वारा साधन K की घटती हुई मात्रा को प्रतिस्थापित किया जायेगा। यही K के लिए L साधन की प्राविधिक प्रतिस्थापन की सीमान्त दर कहा जाता है और यही प्राविधिक प्रतिस्थापन की घटती हुई सीमान्त दर के सिद्धान्त के नाम से माना जाता है। वास्तविकता तो यह है कि प्राविधिक प्रतिस्थापन की घटती हुई सीमान्त दर का सिद्धान्त' क्रमागत उत्पादन-ह्रास-नियम का विस्तार मात्र है। अभी हम लोगों ने देखा कि

$$MRTS_{LK} = \frac{\text{L साधन की सीमांत उत्पादकता}}{\text{K साधन की सीमांत उत्पादकता}}$$

स्पष्ट है कि जब एक ही सम उत्पाद-रेखा पर L की मात्रा बढ़ायी जाती है तथा K की मात्रा घटायी जाती है तो L की सीमान्त उत्पादकता घटती है जबकि K की सीमान्त उत्पादकता बढ़ती है। ऐसी स्थिति में उत्पादन के उसी स्तर पर बने रहने के लिए यह आवश्यक कि L की एक अतिरिक्त इकाई के द्वारा K की क्रमशः कम ही मात्रा प्रतिस्थापित हो। यदि उत्पादन वृद्धि नियम की स्थिति हो तो प्राविधिक प्रतिस्थापन की

सीमान्त दर घटेगी नहीं बल्कि बढ़ेगी।

सम उत्पाद वक्रों को खींचते समय सरलता के लिये यह मान लिया जाता है कि किसी वस्तु के उत्पादन में उत्पादन के दो साधन प्रयोग में लाये जा रहे हैं, दूसरी मान्यता यह है कि प्राविधिक दशायें(Technical Production Conditions) ज्ञात हैं तथा स्थिर हैं। तीसरी मान्यता यह है कि उत्पादन में प्रयुक्त एक साधन को दूसरे से प्रतिस्थापित किया जा सकता है।

कहने का अभिप्राय यह है कि दिया गया समान उत्पादन उत्पादन के साधनों के विभिन्न संयोगो से प्राप्त किया जा सकता है। चौथी मान्यता यह है कि एक निश्चित सीमा के बाद उत्पादन के एक साधन के स्थान पर दूसरे को प्रतिस्थापित नहीं किया जा सकता है। पाँचवी मान्यता यह है कि उत्पादन के साधनों को छोटी-छोटी इकाइयों में बाँटा जा सकता है जिसके कारण हम साधनों के इस प्रकार के प्रयोग में सफल हो पाते हैं कि अधिकतम उत्पादन मिले तथा छठीं मान्यता यह है कि फर्म केवल एक ही वस्तु का उत्पादन करती है तथा अधिकतम उत्पादन प्राप्त करने के उद्देश्य से कार्य करती है।

3.3 सम उत्पाद वक्र तथा अनधिमान वक्र(सम सन्तुष्टि वक्र) में अन्तर

सम-उत्पादन-वक्र का स्वरूप अनधिमान वक्र की ही भाँति होता है। अनधिमान वक्र दो वस्तुओं के सभी सम्भावित संयोगों को प्रदर्शित करता है जिनसे उपभोक्ता को समान सन्तुष्टि मिलती है, सम-उत्पाद-वक्र साधनों के उन सभी सम्भावित संयोगों को दिखाता है जिनसे उत्पादक को समान उत्पादन मिलता है। पर इन समताओं के बावजूद भी दोनों में कुछ मौलिक अन्तर है जो इस प्रकार है-

(1) अनधिमान-वक्र सन्तुष्ठि या उपयोगिता को व्यक्त करता है पर सन्तुष्टि को किसी भौतिक इकाई के माध्यम से व्यक्त नहीं किया जा सकता है। फलस्वरूप अनधिमान वक्र सन्तुष्टि के स्तर को दिखाते हैं. सन्तुष्टि के परिमाणात्मक माप की व्याख्या इनके द्वारा नहीं होती है। इसलिए अनधिमान वकों को प्रथम द्वितीय, तृतीय आदि क्रम से दिखाया जाता है। पर सम-उत्पाद वक्र साधनों के विभिन्न संयोगों से प्राप्त होने वाले उत्पादन को दिखाते हैं जिनका माप भौतिक इकाई के रूप में सम्भव है। इसीलिए सम-उत्पाद-चक्र को हम 200 इकाई, 300 इकाई आदि के रूप से दिखाते हैं।

(2) दो अनधिमान चक्रों के विश्लेषण से यह नहीं बताया जा सकता कि उच्चतर अनधिमान वक्र से मिलने वाली सन्तुष्टि निम्नतर अनधिमान चक्र से मिलने वाली सन्तुष्टि से कितनी अधिक है पर सम-उत्पादन वक्रों के सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि दोनों वक्रों से मिलने वाले उत्पादन में कितना अन्तर है। जैसा रेखाचित्र नं० 2:2 में एक वक्र 200 किंटल गेहूं के सम्बन्ध में उत्पादन के साधनों के विभिन्न संयोगों को प्रदर्शित करता है जबकि उससे ऊपर वाला वक्र 300 किंटल गेहूँ को देने वाले संयोगों को प्रदर्शित करना है। स्पष्ट है कि दोनो के उत्पादन में 100 क्विंटल का अंतर है। इस प्रकार सम उत्पाद वक्रों के माध्यम से परिमाणात्मक तुलना संभव है जो अनाधिमान वक्रों से संभव नहीं है।

बोध प्रश्न 3

इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तरो का मिलान करें।

1. समोत्पाद वक्रों को क्या पूर्ण रूप से उदासीनता वक्रों की भांति समझा जा सकता है? यदि नहीं तो इनमें समानताओं एवं भिन्नताओं का स्पष्ट उल्लेख कीजिए।

3.4 सम-उत्पाद-वक्रों की विशेषतायें

सम-उत्पाद वक्कों का स्वरूप अनधिमान वक्रों की तरह होता है। इसमें अनधिमान वक्रों की सभी विशेषतायें पायी जाती हैं। तटस्थता वक्रों की विशेषताओं की विस्तृत व्याख्या अनाधिमान वक्र के अध्याय में की गई है पर यहाँ हम उत्पादन के सन्दर्भ में सम-उत्पाद वक्रों की विशेषताओं पर संक्षेप में प्रकाश डालेंगे।

(1) अनधिमान वक्र की ही तरह सम-उत्पाद वक्र की पहली विशेषता यह है कि यह नीचे दाहिनी ओर गिरता हुआ होता है। इसके ऐसा होने का विश्लेषण इस तरह किया जा सकता है कि यदि सम उत्पाद वक्र नीचे की ओर नहीं गिरेगा तो या तो वह नीचे से ऊपर की ओर उठेगा अथवा आधार या लम्ब अक्ष के समानान्तर होगा। अब यदि यह ऊपर की ओर उठे जैसा रेखाचित्र नं० 2:4 में दिखाया गया है तो इससे यह स्पष्ट होगा कि चाहे दोनों ही साधनों की मात्रा घटा दी जाय या बढ़ा दी जाय उत्पादन में कोई परिवर्तन नहीं होगा। जैसा रेखाचित्र से स्पष्ट है कि पूँजी की OY_1 मात्रा तथा श्रम की OX_1 मात्रा से उतना ही उत्पादन मिलेगा जितना कि श्रम की OX_2, मात्रा तथा पूँजी की OY_2 मात्रा से पर यह ठीक नहीं। इस प्रकार यह तो निश्चित हुआ कि सम उत्पाद वक्र ऊपर नहीं उठेगा। अब हम देख सकते हैं कि क्या एक सम उत्पाद वक्र

लम्ब अक्ष के समानान्तर हो सकता है जैसा रेखाचित्र नं० 2:5 में प्रदर्शित है। रेखाचित्र से स्पष्ट है कि श्रम की OX^1 मात्रा तथा पूँजी की बढ़ती हुई मात्रा OY_3,. OY_4 तथा OY_5 से एक ही उत्पादन मिलता है जो सम उत्पादन वक्र(I) से प्रदर्शित है। पर यह ठीक नहीं। ऐसी स्थिति में एक ही उत्पादन नहीं मिल सकता है। इसी प्रकार यह भी सिद्ध किया जा सकता है कि सम उत्पादन वक्र आधार के समानान्तर भी नहीं हो सकता है। निष्कर्ष यह निकला कि सम-उत्पाद वक्र नीचे गिरता हुआ होगा जैसा चित्र 2:1 में प्रदर्शित है।

(2) दो सम उत्पाद वक्र एक दूसरे को न तो स्पर्श कर सकते हैं और न तो काट सकते हैं - जिस प्रकार से हम लोगों ने अनधिमान वक्र के सन्दर्भ में यह देखा कि दो अनधिमान वक्र परस्पर स्पर्श नहीं कर सकते हैं उसी प्रकार हम लोग रेखाचित्र नं० 2.6 में यह देखेंगे कि दो सम

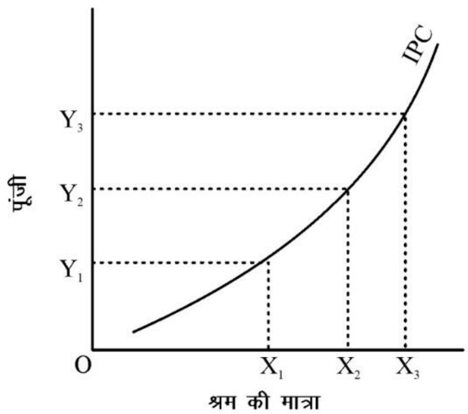

चित्र 2:4

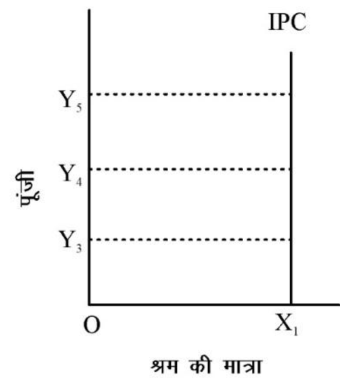

चित्र 2:5

उत्पादन वक्र एक दूसरे को स्पर्श नहीं कर सकते हैं, और न ही काट सकते हैं।

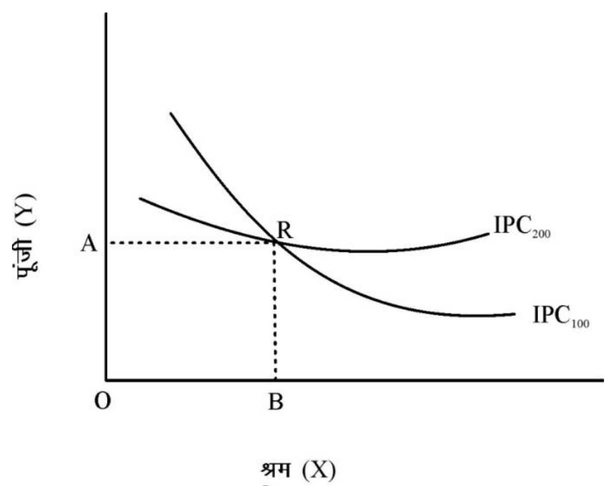

चित्र 2:6

रेखाचित्र नं० 2:6 में यह प्रदर्शित है कि IPC 200 तथा IPC 100 परस्पर एक दूसरे को R बिन्दु पर काटते हैं। आइये यह देखें कि क्या यह सम्भव है? R दोनों ही सम उत्पादन वक्रों पर स्थित है, ऐसी स्थिति में R बिन्दु जब IPC100 पर होगा तो वह OB श्रम तथा OA पूँजी के उस संयोग को प्रदर्शित करेगा जिनसे 100 उत्पादन प्राप्त हो सके, पर जब यही R बिन्दु IPC200 पर हो तो OA पूंजी तथा OB ही श्रम से अब 200 उत्पादन प्राप्त होगा। पर यह कैसे सम्भव है कि एक ही संयोग एक बार R बिन्दु पर 100 तथा दूसरी बार 200 उत्पादन प्रदान करे। फिर एक ही बिन्दु उत्पादन की दो मात्राओं को कैसे प्रदर्शित कर सकता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि दो सम-उत्पादन वक्र परस्पर एक दूसरे को नहीं काटेंगे।

(3) अनधिमान वक्कों की तरह सम उत्पाद वक्र मूल बिन्दु की ओर उन्नतोदर(Convex to the origin) होते हैं। उन्नतोदर होने का आशय यह है कि. जैसे जैसे हम किसी सम उत्पादन वक्र पर बायी ओर से दाहिनी ओर चलते हैं तो उत्पादन के उसी स्तर को बनाये रखने के लिए X साधन की एक निश्चित वृद्धि के द्वारा प्रतिस्थापित की जाने वाली Y की मात्रा क्रमशः कम होती जाती है।' सारिणी न० 1 से भी यह स्पष्ट है

कि जब उत्पादकA संयोग को छोड़कर पूंजी तथा श्रम के अन्य संयोगों को चुनता है तो यहाँ B संयोग में 1 श्रम की इकाई की वृद्धि के लिए पूँजी की 7 इकाइयाँ घटती हैं वहां धीरे-धीरे C पर 3. D पर 2 तथा E पर 1 इकाइयाँ ही छूटती हैं। ऐसा क्यों? सम-उत्पाद चक्र की अब तक की व्याख्या से यह स्पष्ट है कि यह उत्पादन में प्रयुक्त होने वाले X तथा Y दोनों साधनों के सम्भावित संयोगों की बताता है जिससे सम उत्पादन प्राप्त हो सकें। ऐसी स्थिति में यदि हमें उत्पादन का एक स्तर प्राप्त करना हो तो Y साधन की मात्रा में होने वाली कमी के कारण जो उत्पादन में कमी होगी उसे निश्चित रूप से x साधन की वृद्धि के द्वारा पूरा करना होगा। यदि हम यह मान ले कि Y साधन की मात्रा में ΔY की कमी की गयी तो इसकी कमी के कारण कुल उत्पादन में कमी = ΔY X Y की सीमान्त उत्पादकता। पर चूंकि हमें उसी उत्पादन के स्तर पर बने रहना है इसलिए आवश्यक है कि X मात्रा में इतनी वृद्धि की जाय जिससे Y की कमी के कारण जो उत्पादन में कमी हुई है वह पूरी हो सके अन्यथा उत्पादन के उसी स्तर को बनाये नहीं रखा जा सकता है अर्थात् X की मात्रा में इतनी वृद्धि होनी चाहिए जिससे $\Delta Y \times Y$ की उत्पादकता = $\Delta X \times X$ की उत्पादकता

पर प्रश्न यह है कि X की मात्रा में कितनी वृद्धि की जाय अथवा यदि X की मात्रा की वृद्धि निश्चित हो तो ४ में कितनी कमी की जाये जिससे उत्पादन में होने वाली वृद्धि(X के कारण) उत्पादन में होने वाली कमी(Y के कारण) के बराबर हो। यदि उत्पादन में हास नियम क्रियाशील हो तो X की एक निश्चित वृद्धि के द्वारा उत्पादन में हुई कुल वृद्धि को पूरा करने के लिये जिससे उत्पादन का वही स्तर बना रहे, Y की क्रमशः कम मात्रा ही उत्पादन से छोड़ना पड़ेगा। दूसरे शब्दों में हम यह भी कह सकते हैं कि तकनीकी प्रतिस्थापन की सीमान्त दर क्रमशः घट रही है। इस प्रकार स्पष्ट है कि उत्पादन ह्रास नियम की स्थिति में प्रतिस्थापन की सीमान्त दर घटती हुई होगी और सम उत्पादन चक्र मूल बिन्दु की ओर उन्नतोदर होगा। पर यदि उत्पादन में उत्पादन वृद्धि नियम लागू हो तो x की एक निश्चित वृद्धि के द्वारा उत्पादन में होने वाली वृद्धि को पूरा करने के लिए जिससे उत्पादन का वही स्तर बना रहे. Y की अधिक मात्रा छोड़नी पड़ेगी अर्थात् प्रतिस्थापन की सीमान्त दर बढ़ती हुई होगी। इस प्रकार उत्पादन वृद्धि की स्थिति में सम उत्पादन वक्र का स्वरूप मूल बिन्दु की ओर नतोदर(concave) हो सकता है। पर चूँकि वास्तविक संसार में उत्पादन हास नियम की स्थिति अधिक देखी जाती है, यह अधिक उचित तथा व्यावहारिक होगा कि हम यह मानें कि प्रतिस्थापन की सीमान्त दर घटती हुई होगी तथा ऐसी स्थिति में सम उत्पादन वक्र का मूल बिन्दु की ओर उन्नतोदर होना मानना अधिक व्यावहारिक तथा उचित होगा। इसका स्पष्टीकरण रेखाचित्र न० 2.7 में किया गया है।

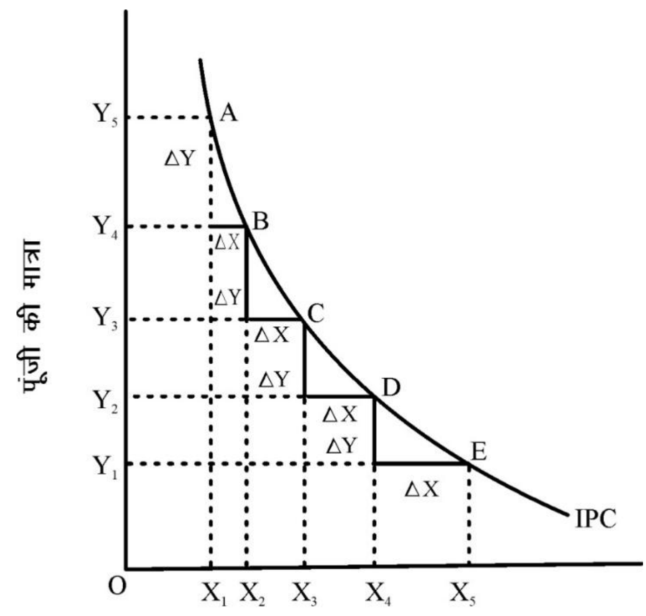

चित्र 2:7

दिए गए रेखाचित्र से स्पष्ट है कि उत्पादक सम उत्पाद बन केA बिन्दु पर है जहाँ उसे उत्पादन की एक निश्चित मात्रा श्रम की OX_1 तथा पूंजी की OY_2 मात्रा से प्राप्त होती है। अब यदि वह श्रम की मात्रा बढ़ाता जाय तो उत्पादन के उसी स्तर को प्राप्त करने के लिए पूँजी की क्रमशः कम मात्रा छोड़ेगा। श्रम को बराबर इकाइयों की वृद्धि के लिए पहले वह Y_4 Y_5 पूँजी की इकाई छोड़ता है पर बाद में Y_4 Y_3 तथा Y_3 Y_2 तथा Y_2 Y_1 छोड़ता है। पूँजी की छोड़ी जाने वाली इकाइयों की मात्रा क्रमशः कम होती गयी हैं।

अब तक हम लोगों ने सम उत्पाद चक्र के स्वरूप पर विचार किया तथा देखा कि सामान्यतया सम उत्पादन वक्र मूल बिन्दु की ओर उन्नतोदर(Convex) होगा। वास्तविकता यह है कि समउत्पाद वक्र के अनेक रूप हो सकते हैं जो उत्पादन के साधनों के बीच प्रतिस्थानापन्नता के अंश(degree of substitutability) पर निर्भर करेगा। दोनों साधनों के बीच पूर्ण प्रतिस्थानापन्नता की स्थिति में समउत्पाद वक्र सीधी रेखा के रूप में होगा, जबकि शून्य प्रतिस्थानापन्नता या पूर्ण पूरकता की स्थिति में समकोणीय स्वरूप का होगा। सामान्य स्वरूप के अतिरिक्त सम-उत्पाद चक्र के निम्नलिखित और स्वरूप हो सकते हैं-

(क) समकोणीय(RightAngle) सम उत्पाद- समकोणीय समउत्पाद उस स्थिति में होगा जबकि उत्पादन के साधनों में पूर्ण पूरकता हो अर्थात् प्रतिस्थानापन्नता शून्य हो। एक वस्तु के उत्पाद के लिए जब एक ही उत्पादन की प्रविधि हो या दूसरे शब्दों में किसी वस्तु के उत्पादन में दोनों साधनों का एक निश्चित अनुपात हो और बिना उस अनुपात के उत्पादन हो ही नहीं सके(जैसे 1 सिलाई मशीन तथा उस पर काम करने वाला एक श्रमिक या एक टाइप राइटर तथा एक टाइप करने वाला) तो इस स्थिति में समउत्पाद वक्र अंग्रेजी के एल(L.) आकार का या समकोणीय होगा। इस प्रकार के वक्र को लियोन्टीफ समउत्पाद(Leontef) या आगत-निर्गत समउत्पाद.(Input-Output Iso Product) कहते हैं। लियोन्टीफ आगत-निर्गत 'विश्लेषण' के प्रतिपादक अर्थशास्त्री हैं। इसे रेखाचित्र नं० 2:8 में दिखाया गया है।

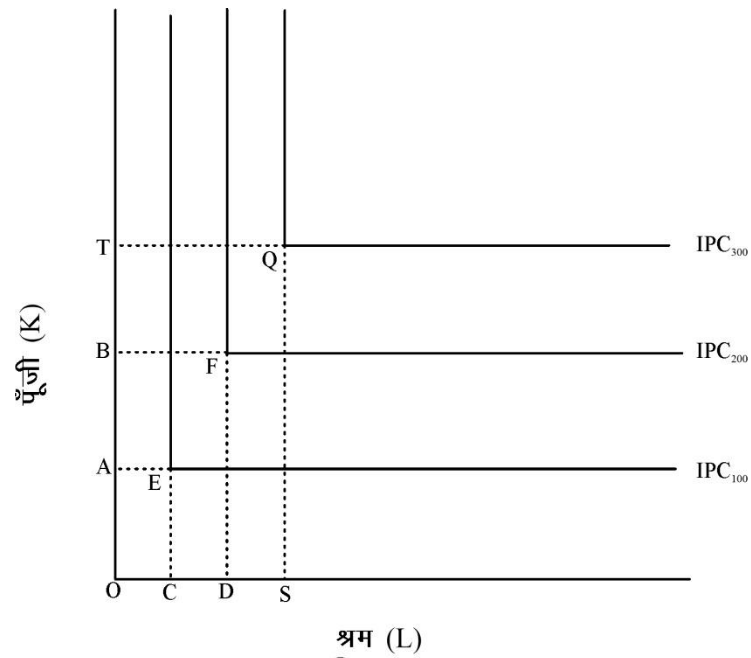

चित्र 2:8

रेखाचित्र 2:8 में जैसा प्रदर्शित है कि 100 इकाई उत्पादन के लिए श्रम की OC मात्रा तथा पूँजी की OA मात्रा चाहिए। पूर्ण पूरकता की मान्यता के कारण श्रम तथा पूँजी के अन्य किसी भी संयोग से 100 उत्पादन की प्राप्त नहीं हो सकती। अब मान लीजिए श्रम की OC मात्रा ही रहे पर पूँजी की मात्रा OB कर दी जाय, तो भी 100 ही उत्पादन प्राप्त होगा, पूँजी कीAB मात्रा बेकार होगी। इसी प्रकार यदि पूँजी की मात्रा OT कर दी जाय तो भी उत्पादन वही रहेगा, अब पूँजी कीAT मात्रा बेकार रहेगी। इसी प्रकार, यदि पूँजी की मात्रा OA रखी जाय, पर श्रम की मात्रा बढ़ायी जाय तो OC के बाद सभी श्रम बेकार होंगे। इस प्रकार IPC वक्र समकोणीय प्राप्त हो जायेगा। पर यदि श्रम तथा पूँजी दोनों की मात्रा उसी वांछित अनुपात में बढ़ा दी जाय तो IPC 200 तथा IPC 300 प्राप्त हो जायेंगे।

(ख) रेखीय सम-उत्पाद(Linear Iso product)- जब उत्पादन में प्रयुक्त दोनों साधन पूर्णतया स्थानापन्न हों, अर्थात् वस्तु की एक निश्चित मात्रा केवल पूँजी के प्रयोग के द्वारा या श्रम के प्रयोग के द्वारा या श्रम एवं पूंजी के अपरमित- संयोग के द्वारा प्राप्त की जा सके तो सम उत्पाद वक्र सीधी रेखा के रूप में होगा जैसा रेखाचित्र नं० 2:9 में प्रदर्शित हैं।

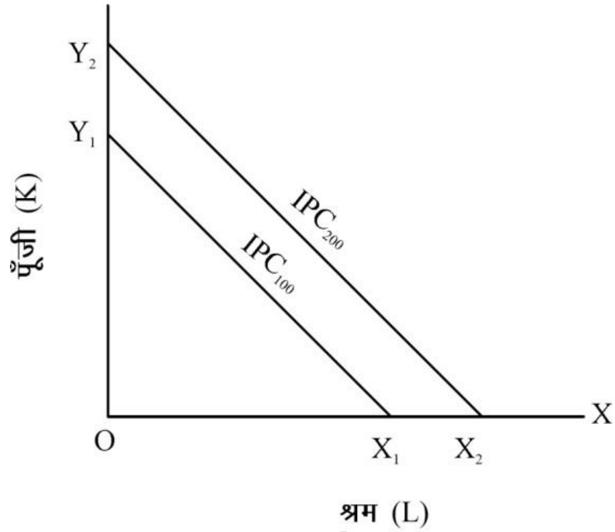

चित्र 2:9

3.5 विकुंचित सम उत्पाद(Kinted isoproduct)

समकोणीय समउत्पाद व स्थिर अनुपात उत्पादन फलन'(fixed proportion production function) पर आधारित होता है अर्थात् इसमें उत्पादन की केवल एक प्रविधि होती है तथा जिसमें श्रम तथा पूँजी एक स्थिर अनुपात में प्रयुक्त होते हैं। इस स्थिति में जैसा हम लोगों ने रेखाचित्र 2:8 में देखा,

यदि उत्पादन की मात्रा दुगुनी करनी हो तो K तथा L की मात्रा भी दुगुनी करनी होगी पर वास्तविक जीवन में ऐसा पाया जाता है कि एक वस्तु की निश्चित मात्रा को प्राप्त करने के अनेक तरीके(अपरमित नहीं) हो सकते हैं, तथा प्रत्येक तरीके में पूँजी तथा श्रम का एक निश्चित अनुपात रहता है। मान लीजिए X वस्तु की 100 इकाई के उत्पादन के लिए चार अलग-अलग प्रविधियाँ उपलब्ध हैं, प्रत्येक प्रविधि में पूँजी(K) तथा श्रम(L) का एक निश्चित अनुपात है, जैसा नीचे सारिणी में दिया गया है-

प्रविधि	पूंजी(K)	श्रम(L)	पूंजी श्रम अनुपात(K/L)
I. OP	100	20	100:20
II. OP_1	60	30	60:30
III. OP_2	40	60	40:60
IV. OP_3	30	100	30:100

इन प्रविधियों को नीचे दिए गये रेखाचित्र 2:10 में प्रदर्शित किया गया है। इस रेखाचित्र में OP एक प्रविधि प्रदर्शित करती है जिस पर निश्चित साधन अनुपात 100:20 का है, इसी प्रकार अन्य OP_1 60:30 OP_2 40:60 तथा OP_3 30:100 निश्चित साधन अनुपात प्रदर्शित करते हैं P P_1 P_2 P_3 को जोड़ने से हमें विकुचित समउत्पाद वक्र प्राप्त हो जायेगा।

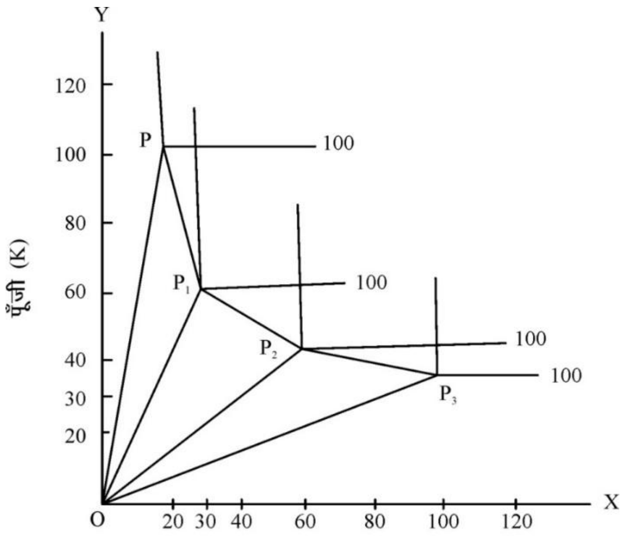

चित्र 2:10

3.6 सारांश

यदि दो आदाएं परिवर्तित हो तो साधनों की स्थानापन्नता की व्याख्या समोत्पाद वक्रों की सहायता से आसानी से की जा सकती है। समोत्पाद वक्र दो साधनों के उन संयोगो को व्यक्त करते है। जिनके समान प्रदा उत्पन्न होती है। उदासीनता वको की भांति समोत्पाद वक्र ऋणात्मक ढालू, एवं मूल बिंदु की ओर उन्नतोदर होते हैं। साधनों की भौतिक मात्रा के अनुपात के आनुपातिक परिवर्तन में उनकी सी.मान्त' भौतिक उत्पादकता के अनुपात में आनुपातिक परिर्तन का भाग देकर प्रतिस्थापन्न की लोच ज्ञात की जाती है। प्रतिस्थापन्न की लोच(6) का ज्ञान हमें समोत्पाद वक्रो के स्वरूप का ज्ञान प्रदान करता है। प्रसिद्ध कॉब-डगलस उत्पादन-फलन में प्रतिस्थापन्न की लोच(6=1) का मान इकाई के बराबर माना गया है।

3.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- माइक्रो अर्थशास्त्र, एम.एल.सेठ, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा(नवीनतम संस्करण) अध्याय 15
- Walter Nichalson, Micro Economic Theory-Basic PrinciplesAnd Extensions 3rd ed. 1986 The Dryden Press, Chapter.7
- James M HandersonAnd Richard E Quandt Microeconomic TheoryA Mathemati- calApproach, Chapter-3.

3.8 अभ्यासों के उत्तर

(1) समोत्पाद वक्र एवं उदासीनता वक्र जैसे दृष्टिगोचर होते है परन्तु इनमें पूर्ण समानता नहीं है। समानताएं

(i) दोनों ऋणात्मक ढालू होते है।

(ii) दोनों मूल बिन्दु के प्रति उन्नतोदर होते है।

(iii) दोनों वक्र के एक दूसरे को काटते नहीं है।

भिन्नताएं

(i) समोत्पाद वक उत्पत्ति के स्तर को व्यक्त करते है जिसे वक के साथ लिखा जाता है जबकि उदासीनता वक्र संतुष्टि के स्तर को बताते हैं जिसे मापा नहीं जा सकता।

(ii) समोत्पाद वक्र कौने मुड़े हुए हो सकते हैं ऐसा तटस्थता वक्रों में नहीं होता।

इकाई–4 पैमाने का प्रतिफल(Returns to Scale)

इकाई की रूपरेखा–

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 उत्पादन फलन की दीर्घकालीन व्याख्या

4.3 पैमाने का वर्धमान प्रतिफल या लागत ह्रास नियम

4.4 पैमाने का सम प्रतिफल या लागत समता नियम

4.5 पैमाने का ह्रासमान प्रतिफल या लागत वृद्धि नियम

4.6 सम उत्पाद वक्र के माध्यम से अल्पकालीन उत्पादन फलन की व्याख्या

4.7 सारांश

4.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

4.9 अभ्यासों के उत्तर

4.0 उद्देश्य

इस खण्ड की नवीं इकाई में अल्पकाल में उत्पादन फलन की चर्चा करने के बाद इस इकाई में हम आपका परिचय दीर्घकाल में उत्पादन-फलन से कराएंगे इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- सभी परिवर्ती आदाओं सहित उत्पादन फलन के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे,
- पैमाने के प्रतिफल से सम्बद्ध वर्द्धमान, स्थिर एवं हासमान अवस्थाओं की क्रियाशीलता के कारणों की व्याख्या कर सकेंगे, एवं
- एक ही उत्पादन- फलन में पैमाने के बदलते हुए प्रतिफल के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

4.1 प्रस्तावना

पैमाने के प्रतिफल का नियम दीर्घकाल में आदाओं और प्रदाओं के सम्बन्धों के स्वभाव से सम्बन्धित है। दीर्घकाल में सभी आदाएं परिवर्ती होती है। दूसरे शब्दों में कोई भी आदा स्थिर नहीं होती और प्रदा को बढ़ाने के लिए फर्म के उत्पादन का पैमाना ही बदल दिया जाता है। अतः पैमाने के प्रतिफल शब्द का प्रयोग उत्पति के समस्त साधनों के साथ-साथ दिये हुए अनुपात में परिवर्तन होने से उत्पादन में होने वाले परिवर्तन से सम्बन्धित है एवं यह केवल दीर्घकाल में ही सम्भव है। इससे पूर्व इकाई में भी स्पष्ट किया जा चुका है कि यदि उत्पादन का कोई साधन स्थिर रहता है। तो वह अल्पकालीन उत्पादन-फलन होगा। ऐसी परिस्थिति में उत्पादन के क्षेत्र उत्पति में उत्पति के नियम(Laws of Returns) लागू होते हैं पैमाने के प्रतिफल(Returns to Scale) नहीं। आपसे यह अपेक्षा की जाती है कि इस अन्तर को भलीभांति समझ लें। इस प्रकार अल्पकाल में कुछ आदाओं के स्थिर रहते उत्पादन परिवर्तनशील अनुपातों के नियम की क्रियाशीलता के अनुरूप परिवर्तित होगा जबकि दीर्घकाल में सभी परिवर्ती आदाओं के कारण उत्पादन पैमाने के प्रतिफल के अनुरूप परिवर्तित होगा। इस इकाई में हम दीर्घकाल में उत्पादन फलन विभिन्न अवस्थाओं के लिए उत्तरदायी तत्वों की विस्तृत व्याख्या करेंगे।

4.2 सभी साधनों के परिवर्तित होने पर निर्गत के व्यवहार की व्याख्या उत्पादन फलन की दीर्घकालीन व्याख्या

अल्पकालीन उत्पादन फलन की व्याख्या हम लोगों ने उत्पादन फलन खण्ड के अध्याय 1 में की जिसमें हम लोगों ने देखा कि स्थिर साधन के साथ जब हम परिवर्तनीय साधन की मात्रा में वृद्धि करते हैं तो इसका प्रभाव उत्पादन के ऊपर पड़ता है। अल्पकालीन उत्पादन फलन का स्वरूप इस प्रकार था $bQ = fa(L), K^{-}$ दीर्घकाल में उत्पाद में वृद्धि उत्पादन के सभी साधनों की वृद्धि के द्वारा लायी जा सकती है क्योंकि दीर्घकाल में सभी साधन परिवर्तनीय होते हैं। सभी साधनों की वृद्धि होने पर उत्पादन का पैमाना ही बड़ा हो जाता है और इसीलिए

इस स्थिति को हम 'पैमाने का प्रतिफल' कहते हैं अर्थात् प्रतिफल या उत्पादन में वृद्धि जो पैमाने में वृद्धि के परिणामस्वरूप हो। इस प्रकार के परिवर्तन दो प्रकार के हो सकते हैं- जब सभी आगत एक ही अनुपात में परिवर्तित हो अर्थात् $Q = f(aL,AK)$ अर्थात् L तथा K दोनों मेंA गुनी वृद्धि हो, दूसरे जबकि आगतों में वृद्धि समान नहीं हो जैसे $Q= f(aL\ ck)$ अर्थात् इस प्रकार परिवर्तन सभी साधनों में इस प्रकार के हो सकते हैं जिससे उनके बीच का अनुपात ही परिवर्तित हो जाय या ऐसा हो सकता है कि सभी साधनों में परिवर्तन के बाद भी अनुपात अपरिवर्तित बना रहे। पर सामान्यतया 'पैमाने के प्रतिफल' से अभिप्राय उत्पादन के साधनों में इस प्रकार के परिवर्तन से है जिससे उनके बीच का अनुपात अपरिवर्तित रहे।

इस प्रकार साधन के प्रतिफल(परिवर्तनीय अनुपात) तथा पैमाने के प्रतिफल के बीच अन्तर स्पष्ट है। जहाँ साधन का प्रतिफल उत्पादन फलन की अल्पकालीन व्याख्या से सम्बन्धित है, पैमाने का प्रतिफल उत्पादन फलन की दीर्घकालीन व्याख्या से सम्बन्धित है। सांधन के प्रतिफल की स्थिति में उत्पादन में प्रयुक्त साधनों में स्थिर साधन में परिवर्तन नहीं होता जबकि पैमाने के प्रतिफल की स्थिति में कोई साधन स्थिर नहीं होता. सभी में परिवर्तन होता है। इस प्रकार साधनों के प्रतिफल की स्थिति में उत्पादन फलन $Q =(L)\ K-$ या क्रियात्मक रूप में $Q = f(L.)$ होगा जबकि दीर्घकालीन उत्पादन फलन $Q_1=f(a\ L,a\ K)$ या $Q= fa(L\ K)$ होगा। या $Q= f(aL, bK)$ होगा।

अब मान लीजिए मूल उत्पादन फलन $Q^0 =f(LK)$ है तथा हम दोनों ही साधनों को एक अनुपातA में बढ़ाते हैं जिसके फलस्वरूप उत्पादन का नया स्तर Q_1 हो जाता है, जो Q_o से अधिक है। उत्पादन के नये स्तर के साथ उत्पादन फलन को इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है

$Q_1 = f(aLA\ K)$ स्पष्ट है-

(i) यदि Q_1 में वृद्धिA के अनुपात में है तो पैमाने का समता नियम लागू हो रहा है।

(ii) यदि Q_1 में वृद्धिA के अनुपात से अधिक है तो पैमाने का वर्धमान प्रतिफल नियम लागू हो रहा है, तथा

(iii) यदि Q में वृद्धिA के अनुपात से कम है तो पैमाने के ह्रासमान प्रतिफल नियम लागू हो रहा है।

यहाँ एक बात और उल्लेखनीय है। मान लीजिए मूल उत्पादन फलन $Q_o= f(L, K)$ है तथा आगतों मेंA गुनी वृद्धि के बाद का का उत्पादन फलन $Q_1= f(aLAK)$ है

अब यदिA दोनों में उभयनिष्ठ हो तथा इसे कोष्ठ से बाहर लिया जा सके तो हम यह भी कह सकते हैं कि उत्पादन का नया स्तर मूल उत्पादन(Q_o) कोA(जिस पर कोई घात(power) हो सकता तथा मूल उत्पादन(Q_o) के रूप में व्यक्त किया जा सकता है-

$Q_1 = f(aL,AK) =Af(L, K)$

$=aQ_o$(क्योंकि संयोग से हमें Q_o प्राप्त होगा L, K के स्थान पर Q_o है)

उल्लेखनीय बात यह है कि यदि आगत में वृद्धि के बाद गुणांक 'a' को कोष्ठक से बाहर निकाला जा सके तो उत्पादन फलन सहजातीय उत्पादन फलन(homogerous production function) कहा जायेगा, और यदि इसे उभयनिष्ठ के रूप में बाहर नहीं निकाला जा सके तो उत्पादन फलन असहजातीय(nonhomogeneous) कहा जायेगा परA लगा हुआ घात v को फलन की सहजातीयता का अंश(degree of homogenity) कहते हैं और यही पैमाने के प्रतिफल की माप होती है:

(i) यदि $V = 1$ तो पैमाने का सम प्रतिफल(Constant returns to scale) होगा जिसे हम 'रैखिक सहजातीय फलन' भी कहते हैं। स्पष्ट है, इस स्थिति में जिस अनुपात(a) में आगत में वृद्धि होगी, निर्गत में भी उसी अनुपात(a) में ही वृद्धि होगी,

(ii) यदि $v<1$ तो घटते हुए पैमाने के प्रतिफल(decreasing returns to scale) की स्थिति होगी,

(iii) यदि $v>1$ तो बढ़ते हुए पैमाने के प्रतिफल(increasing returns to scale) की स्थिति होगी।

कुछ अर्थशास्त्री, विशेष रूप से क्लासिकल अर्थशास्त्री इस मत के हैं कि दीर्घकाल में उत्पादन फलन को आवश्यक रूप से पैमाने का समरूप प्रतिफल' प्रदर्शित करना चाहिये अर्थात् पैमाने का समता नियम ही लागू होना चाहिए। इनका यह मत है कि यदि उत्पादन के साधनों को तिगुना कर दिया जाय तो फिर ऐसी कौन-सी रुकावट है जिसके कारण उत्पादन में तिगुनी वृद्धि नहीं होगी। इन लोगों का यह मत है कि यदि यह सम्भव हो कि उत्पादन में लगे हुए सभी साधनों की मात्रा में आनुपातिक वृद्धि या कमी की जा सके तो निश्चित रूप से पैमाने के सम प्रतिफल की स्थिति पायी जायेगी। ये लोग यह मत रखते हैं कि यदि किसी उत्पादक इकाई में पैमाने के सम प्रतिफल की स्थिति नहीं लागू है

तो इसका कारण यह है कि साधनों की मात्रा में एक ही अनुपात में वृद्धि नहीं हो सकती है।

पर इस दृष्टिकोण की अनेक अर्थशास्त्रियों ने आलोचनायें की हैं। प्रो० चैम्बरलिन ने इस दृष्टिकोण की आलोचना की तथा यह मत व्यक्त किया कि पैमाने का प्रतिफल साधनों की विभाज्यता पर निर्भर नहीं करता है बल्कि विभिन्न साधनों के आकार पर निर्भर करता है। इसलिये यह कहना गलत होगा कि उत्पादन फलन समरूप(homogeneous) होता है अर्थात् अ+ब+स साधनों के संयोग से 10 इकाई का उत्पादन मिलता है तो 2 अ + 2 ब +2 स(प्रत्येक को दूना करने पर) से 20 इकाई तथा अ/2 + ब/2 + स/2 से 5 इकाई का उत्पादन मिलेगा। चैम्बरलिन का यह मत है कि जब उत्पादन के सभी साधनों की मात्रा बढ़ायी जाती है तो उत्पादन का पैमाना बढ़ जाता है साधनों के अधिक मात्रा में प्रयोग से विशिष्टीकरण की सम्भावना तथा अत्यधिक कुशल साधनों, विशेष रूप से उत्तम मशीनों के प्रयोग की सुविधा, उत्पादन के पैमाने में वृद्धि के कारण स्थान विशेष पर कच्चे माल की उपलब्धता, अधोसंरचना का विकास, उत्पादन में होने वाले वेस्ट(waste) के प्रयोग से उपउत्पाद(by product) विकसित होने आदि के कारण लागत में कमी दृष्टिगोचर होती है। इसे मितव्ययितायें या किफायतें(economics) कहते हैं। मितव्ययिता की धारणा के प्रतिपादन का श्रेय मार्शल को है। प्रवन्ध तथा समन्वय(ManagementAnd co-ordination) की कमी, अव्यक्तिगत सम्बन्ध तथा उत्पादन-क्रिया की जटिलता के कारण उत्पादन लागत बढ़ने लगती है। इन्हें उत्पादन की अमितव्यवितायें(diseconomies) कहते हैं। स्पष्ट है कि प्रारम्भिक अवस्था में जब तक बाह्य तथा आन्तरिक मितव्ययितायें(economies) अधिक प्रभावपूर्ण तथा शक्तिशाली रहती हैं तब तक लागत घटती है पर बाद में अमितव्ययितायें(diseconomies) इतनी

अधिक शक्तिशाली हो जाती है कि लागत में बढ़ने की प्रवृत्ति दृष्टिगोचर होने लगती है। इस प्रकार यदि मितव्ययितायें अमितव्ययिताओं से बड़ी हो तो लागत हास नियम, यदि बराबर हो तो लागत समता नियम तथा यदि कम हो तो लागत वृद्धि नियम लागू होगा। इस प्रकार 'पैमाने का बर्द्धमान प्रतिफल तथा पैमाने का ह्रासमान प्रतिफल' दोनों देखा जायेगा।

पैमाने के प्रतिफल का रेखाचित्रीय प्रदर्शन

इसके पूर्व इसी अध्याय के प्रारम्भ में हम लोगों ने उत्पादन फलन के आधार पर समीकरणात्मक रूप में पैमाने के प्रतिफल की व्याख्या की। अध्याय 2 में हम लोगों ने 'सम उत्पादन वक्रों' की व्याख्या की तथा यह देखा कि 'सम उत्पादन वक्र आगत तथा निर्गत के बीच दीर्घकालीन प्राविधिक तथा फलनात्मक सम्बन्ध प्रदर्शित करते हैं। इस प्रकार सम उत्पादन वक्रों से 'उत्पादन फलन सम्बन्ध की व्याख्या हो जाती है, पर इसकी व्याख्या नहीं होती है कि 'उत्पादन में वृद्धि' तथा 'साधनों की वृद्धि' में क्या अनुपात है और जैसा हम ऊपर देख चुके हैं कि पैमाने के प्रतिफल की व्याख्या इसी से सम्बन्धित है। इसके लिए सम उत्पाद वक्रों के साथ 'उत्पादन के विस्तार'(Expansion of outpur) का विश्लेषण आवश्यक है। उत्पाद रेखा उत्पाद विस्तार प्रदर्शित करती है।

उत्पाद रेखा(Product line) या स्केल लाइन– उत्पाद रेखा एक सम उत्पाद वक्र से दूसरे सम उत्पाद वक्र पर जाने की गति(चलने की क्रिया) प्रदर्शित करती है, जब हम सभी साधनों या किसी एक साधन में परिवर्तन लाते हैं। इस प्रकार 'उत्पाद रेखा' उत्पादन के विस्तार' के सम्भावित 'प्राविधिक पथ' प्रदर्शित करती है।

उत्पाद रेखा(क) उस समय मूल बिन्दु से प्रारम्भ होकर जायेगी जबकि दोनों साधन परिवर्तनीय हो तथा(ख) आधार अक्ष या लम्ब अक्ष के किसी बिन्दु से प्रारम्भ होगी, जब कि एक साधन स्थिर हो तथा दूसरा परिवर्तनीय |

(क) उत्पाद रेखा जबकि दोनों साधन, श्रम तथा पूँजी परिवर्तन हो– इस स्थिति में उत्पाद रेखा समउत्पाद मानचित्र पर मूल बिन्दु से प्रारम्भ होगी और इसके प्रत्येक बिन्दु दोनों साधनों के परिवर्तन के अनुपात प्रदर्शित करेंगे जिससे सम्बन्धित उत्पादन का स्तर प्राप्त किया जा सके। इस स्थिति में उत्पाद रेखा का स्पष्टीकरण रेखाचित्र में किया गया है-

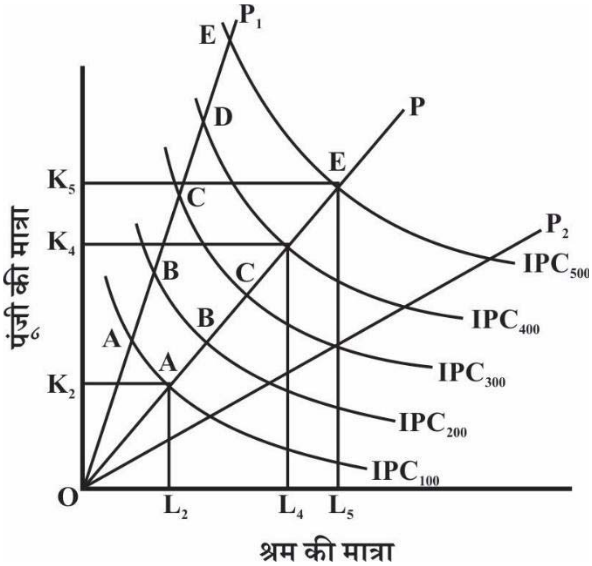

चित्र 3:1

रेखाचित्र में समउत्पाद मानचित्र पर मूल बिन्दु से मूलतः खींची गयी OP रेखा उत्पाद रेखा या पैमाना रेखा(Scale Line) है उत्पाद रेखा OP केA, B, C, D… बिन्दु यह प्रदर्शित करते हैं कि यदिAB के अनुपात में श्रम तथा पूँजी की मात्रा में वृद्धि की जाय तो 100 उत्पादन प्राप्त होगा, इसी प्रकार यदि BC के अनुपात के श्रम तथा पूंजी में वृद्धि की जाय तो 100 उत्पादन की वृद्धि होगी। इसी प्रकार DE यह प्रदर्शित करता है कि यदि DE के अनुपात अर्थात् श्रम में L_4 L_5 तथा K_4 K_5 की वृद्धि की जाय तो 100 उत्पादन की प्राप्ति होगी। OP की ही तरह मूल बिन्दु से प्रारम्भ होती हुई अनेक उत्पाद रेखायें जैसे OP_1, OP_2 आदि खींची जा सकती हैं। उल्लेखनीय यह है कि एक उत्पाद रेखा के सभी बिन्दुओं पर श्रम तथा पूंजी का अनुपात एक ही बना रहेगा, जबकि अलग-अलग उत्पाद रेखाओं पर यह अनुपात अलग-अलग होगा। उदाहरण के लिए OP उत्पाद रेखा केA बिन्दु पर श्रम तथा पूँजी का अनुपात या OL_2 तथा OK_2 के बीच का अनुपात वही होगा जो D पर OL_4 तथा OK_4 के बीच या E बिन्दु पर OL_5 तथा OK_5 के बीच होगा, पर यही अनुपात OP केA, B, C, D, E पर नहीं होगा।

(ख) उत्पाद या पैमाना रेखा जब एक साधन स्थिर हो– यदि उत्पादन में प्रयुक्त कोई साधन स्थिर हो तो उत्पाद रेखा आधार या लम्ब अक्ष के समानान्तर होगी। इस प्रकार की रेखा साधन के परिवर्तनीय साधन के सन्दर्भ में उत्पादन विस्तार प्रदर्शित करेगी जैसा 3:2 में दिखाया गया है।

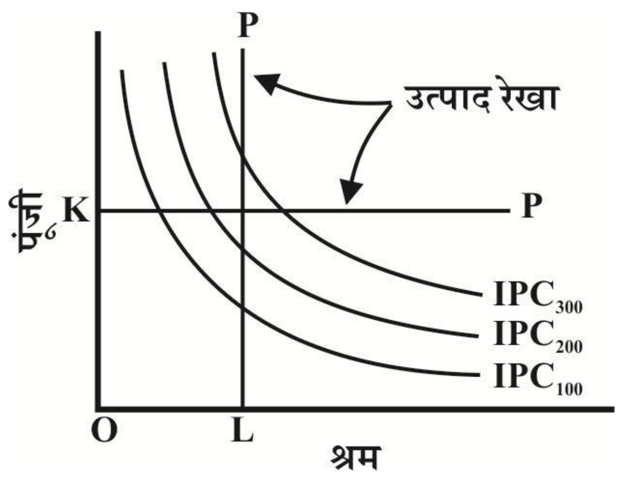

चित्र 3:2

LP उत्पादन रेखा श्रम की स्थिर मात्रा के साथ तथा KP रेखा पूंजी की स्थिर मात्रा के साथ उत्पादन विस्तार प्रदर्शित करती है।

यदि सभी साधन परिवर्तनीय हों तो उत्पाद रेखा मूल बिन्दु से हो कर जायेगी। ऐसी उत्पाद रेखा जो विभिन्न सम उत्पाद रेखाओं के ऐसे बिन्दु से जाय जिनपर साधनों के बीच प्राविधिक प्रतिस्थापन की सीमान्त दर स्थिर हो तो इन सम उत्पाद रेखाओं को

समनतिक(isoclines) कहते हैं। यदि उत्पादन फलन सहजातीय हो तो ऐसी उत्पादन रेखायें मूल बिन्दु से जाने वाली सीधी रेखा के रूप में होगी। किसी एक ऐसी उत्पाद रेखा पर K/L अनुपात तथा साथ ही $MRTS_{LK}$ स्थिर होगा, पर यह अनुपात अलग-अलग उत्पाद रेखाओं पर अलग-अलग होगा जैसा 3:3(क) में प्रदर्शित है। पर यदि उत्पादन फलन असहजातीय हो तो समनतिक उत्पाद रेखायें सीधी रेखा के रूप में नहीं होंगी, यद्यपि मूल बिन्दु से जायेंगी तथा सम उत्पाद वनों के उन बिन्दुओं से जायेंगी जिनपर MRTS स्थिर हैं, पर टेढ़ी मेढ़ी होंगी तथा प्रत्येक उत्पाद रेखा पर K/L. अनुपात परिवर्तित होता रहेगा जैसा 3:3(ख) में प्रदर्शित हैं।

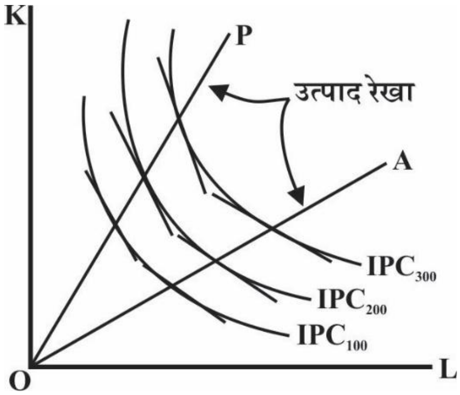

चित्र 3:3

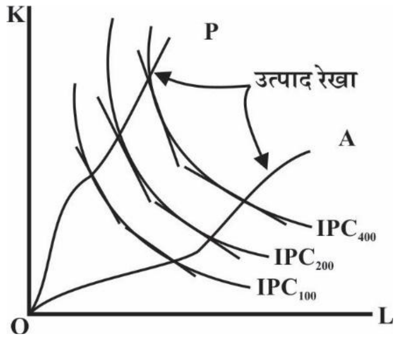

चित्र 3:4

यदि हम उत्पाद रेखाओं के स्वरूप पर ध्यान दें जैसा रेखाचित्र 3:2 तथा 3:3 में प्रदर्शित हैं तो साधन के प्रतिफल तथा पैमाने के बीच अन्तर स्पष्ट हो जाता है। 'साधन के प्रतिफल तथा परिवर्तनीय अनुपात की स्थिति में उत्पाद रेखा 'आधार अक्ष' या 'लम्ब अक्ष' के समानान्तर होगी और उस रेखा पर जैसे जैसे परिवर्तनीय साधन में वृद्धि होती जायेगी स्थिर तथा परिवर्तनीय साधन अनुपात(K/L या LK) कम होता जाता है। पैमाने के प्रतिफल की स्थिति में जबकि उत्पादन फलन सहजातीय हो, उत्पाद रेखा मूल बिन्दु से जायेगी और इसके प्रत्येक बिन्दु पर साधन अनुपात(K/L.) स्थिर होगा। एक उत्पाद रेखा पर तो यह उत्पाद एक ही होगा पर अलग-अलग उत्पाद रेखाओं पर अलग-अलग होगा। सहजातीय उत्पादन फलन की स्थिति में पैमाने के प्रतिफल की स्थिति में व्याख्या आगे की गयी है।

पैमाने के प्रतिफल की रेखाचित्रीय व्याख्या

सम उत्पाद कक्रों की सहायता से पैमाने के प्रतिफल की व्याख्या की जा सकती है। इसकी व्याख्या के दो तरीके हो सकते हैं-

(क) श्रम तथा पूंजी की मात्रा में वृद्धि की जाय तथा देखा जाय कि उससे सम उत्पाद वक्र का कौन सा स्तर प्राप्त होता है, जैसे यदि 1K तथा 1L से IPC 100 का स्तर प्राप्त हो तथा 2K+2L से IPC 250 का स्तर प्राप्त हो तो हम कह सकते हैं 1K+1L की वृद्धि से 150 उत्पादन प्राप्त हुआ। उत्पादन फलन की व्याख्या हम सामान्यतया इसी रूप में करते हैं। हम देखते हैं कि यदि पूँजी तथा श्रम की मात्रा में वृद्धि कर दी जाय तो इसका क्या प्रभाव उत्पादन पर पड़ेगा।

(ख) दूसरा तरीका यह हो सकता है कि हम समउत्पाद वक्रों के स्तर में बराबर मात्रा की वृद्धि करें और देखें कि प्रत्येक वृद्धि के स्तर की प्राप्त करने के लिए श्रम तथा पूँजी में कितनी वृद्धि करनी होगी।

इस प्रकार पहले में हम श्रम तथा पूँजी या आगत में समान वृद्धि करते हैं तथा देखते हैं कि इससे समउत्पाद से क्या वृद्धि दिखायी पड़ती है।

दूसरे में हम सम उत्पाद में बराबर वृद्धि करते हैं और देखते हैं कि इसे प्राप्त करने के लिए श्रम तथा पूंजी की कितनी वृद्धि की आवश्यकता पड़ती है। स्पष्ट है पहली व्याख्या उत्पादन के आधार पर व्याख्या है जबकि दूसरी विधि लागत के आधार पर व्याख्या से सम्बन्धित है। वैसे इनमें से किसी विधि को भी चुना जा सकता है।'

बोध प्रश्न

अपना उत्तर लिखने के लिए प्रत्येक प्रश्न के सामने छोड़ी गई खाली जगह का प्रयोग करें।

(1) दीर्घकालीन उत्पादन फलन किस प्रकार अल्पकालीन उत्पादन फलन से भिन्न होता है।

(2) अनुपात एवं पैमाने में आप किस प्रकार भेद करेंगे ?

(3) उत्पादन पैमाने से सम्बद्ध वर्द्धमान प्रतिफल अवस्था के आधार क्या है?

4.3 पैमाने का वर्धमान प्रतिफल(Increasing Returns to Scale) या लागत ह्रास नियम–

पैमाने के वर्धमान प्रतिफल की स्थिति तब होती है जबकि जिस अनुपात में आगतों में वृद्धि की जाय, उससे अधिक अनुपात में निर्गत में वृद्धि हो। इस स्थिति को रेखाचित्र नं० 3:4 में प्रदर्शित किया गया है-

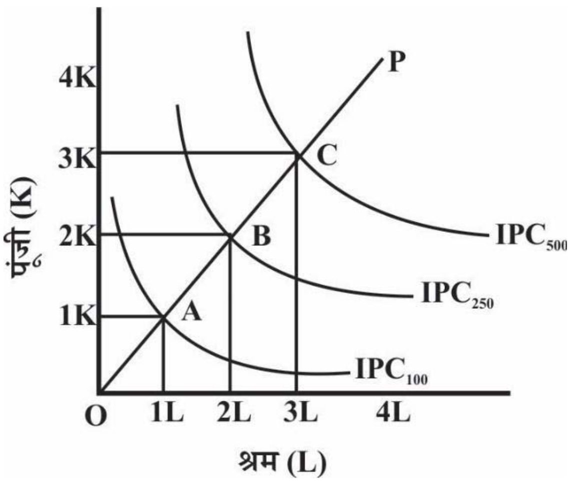

चित्र 3:5

इस रेखाचित्र में OP उत्पाद रेखा है जिस पर स्थितAB, BC श्रम तथा पूँजी के अनुपात प्रदर्शित करतें हैं जिससे विभिन्न उत्पादन के स्तर प्राप्त हो सकतें हैं। शुरू मेंA बिन्दु पर 1K तथा 1L की मात्रा का संयोग प्रदर्शित है जिससे 100- उत्पादन की प्राप्त हो रही है। अब यदि पूंजी की मात्रा 2K तथा श्रम की मात्रा भी 2L अर्थात् दूनी कर दी जाय तो उत्पादन 200 नहीं प्राप्त हो रहा है। बल्कि 250 प्राप्त हो रहा है। अर्थात् आगत में 2 गुनी वृद्धि निर्गत 2.5 गुनी वृद्धि लाती है, तथा जब आगत को तिगुना कर दिया जाता है 3K तथा 3L तो उत्पादन 500 हो जाता है। उत्पाद रेखा या स्केल रेखा OP को यदि देखें तो स्पष्ट हो जायेगाAB = BC अर्थात श्रम तथा पूँजी की वृद्धि का अनुपात बराबर एक ही है, पर पैमाने का वर्धमान प्रतिफल उत्पादन वृद्धि पहले 150 है तब 250 है IPC कुल उत्पादन के स्तर को प्रदर्शित करती है।

इसी स्थिति का प्रदर्शन का हम(ख) विधि(लागत के आधार पर) से भी कर सकते हैं।

रेखाचित्र 3:5 में OP उत्पाद रेखा(Scale Line) है जो यह प्रदर्शित करती है कि शुरू में OL_1(श्रम) तथा OK_1(पूँजी) से 100 उत्पादन प्राप्त होगा।

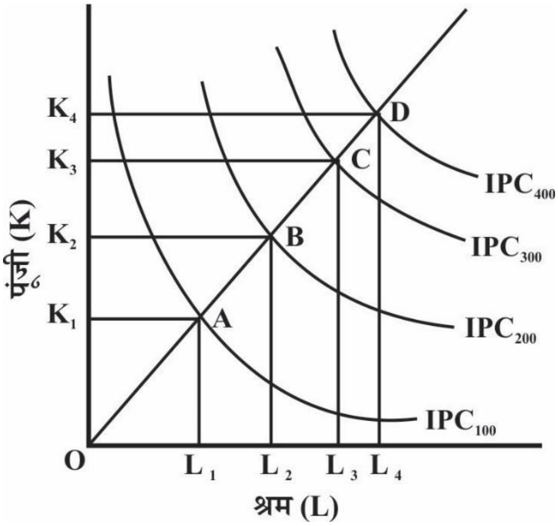

चित्र 3:6

अब मान लीजिए उत्पादन की 100 की इकाई की वृद्धि करनी हो अर्थात् IPC 100 से IPC 200 पर जाना हो तो श्रम तथा पूजी केAB से प्रदर्शित अनुपात में वृद्धि करनी होगी अर्थात् यदि श्रम में L_1 L_2 तथा पूँजी में K_1 K_2 की वृद्धि की जाय तो अतिरिक्त 100 उत्पादन प्राप्त होगा। मानलीजिए उत्पादन में 100 की और वृद्धि करनी है अर्थात् IPC200 से IPC 3100 का स्तर प्राप्त करना है, तो अब BC से प्रदर्शित अनुपात में श्रम तथा पूंजी(L_2 L_3) तथा(K_2 K_3) की वृद्धि करनी होगी, स्पष्ट है कि पहले 100 की प्राप्ति L_1 L_2 तथा K_1 K_2 लगाकर प्राप्त की गयी थी अब वही 100 L2 L3 तथा K_2 K_3 की वृद्धि(पहले की तुलना में अब कम) से ही प्राप्त हो जा रही है। यदि आप OP को देखें तो आप देखेंगे कि 100 ही उत्पादन की वृद्धि के लिए साधनों की वृद्धि प्रदर्शित करने वाली दूरीAB, BC, CD है निरन्तर कम होती गयी है, इसका अर्थ यह हुआ कि कम लागत से उतना ही उत्पादन प्राप्त हो रहा है अर्थात् लागत ह्रास(Diminishing cost) नियम लागू हो रहा है। उत्पादन वृद्धि तथा लागत ह्रास एक ही हैं। लागत ह्रास की स्थिति में प्रति इकाई लागत पर अधिक उत्पादन प्राप्त होगा।

4.4 पैमाने का सम प्रतिफल(Constant Returns to Scale) या लागत समता नियम

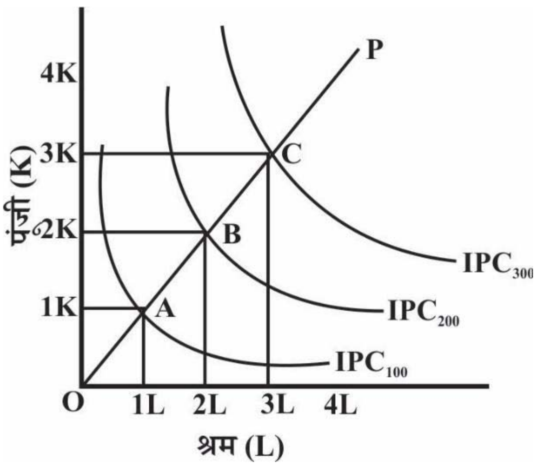

चित्र 3:7

सम प्रतिफल की स्थिति में आगत तथा निर्गत में समान आनुपातिक परिवर्तन होता है। पैमाने के सम प्रतिफल की स्थिति रेखाचित्र न० 3:6 में प्रदर्शित है। इस रेखाचित्र में सम उत्पाद व मानचित्र पर खींची गयी उत्पाद रेखा OP है जो मूल बिन्दु से खींची गयी है। 'उत्पाद रेखा' पर दो सम उत्पाद वक्रों के बीच की दूरी समान प्रदर्शित है अर्थात्AB = BC| रेखाचित्र में देखने से एक बात स्पष्ट है कि जब श्रम तथा पूँजी की मात्रा दुगुनी कर दी जाती है तो उत्पादन दुगुना हो जाता है। उत्पादन 100 से बढ़कर 200 हो जाता है। साधनों को तिगुना करने पर उत्पादन तिगुना हो जाता है। यहाँ यह स्पष्ट है कि जिस अनुपात में आगत में वृद्धि हो रही है उसी अनुपात में निर्गत में वृद्धि हो रही है।

(क) तथा(ख) दोनों ही विधियों से रेखाचित्रीय प्रदर्शन एक ही होगा।AB = BC है तथा उत्पादन की वृद्धि 100 की ही है।

4.5 पैमाने का ह्रासमान प्रतिफल(Decreasing Returns to scale) या लागत वृद्धि नियम

हम देख चुके हैं कि ह्रासमान प्रतिफल की स्थिति में आगत में जिस अनुपात में वृद्धि होती है उससे कम अनुपात से निर्गत में वृद्धि होती है। इस स्थिति को रेखाचित्र नं० 3:7 में प्रदर्शित किया गया है।

रेखाचित्र 3:7 से स्पष्ट है शुरू में 1K तथा 1L से 100 उत्पादन की प्राप्ति होती है। पर जब दोनों साधनों को दुगुना कर दिया जाता है 2K तथा 2L तो उत्पादन का स्तर 180 ही रहता है अर्थात् उत्पादन में 2 गुनी से कम की वृद्धि होती है। तथा 3K तथा 3L से उत्पादन 250 ही प्राप्त होता है, अर्थात् आगत में तिगुनी वृद्धि निर्गत में 2.5 गुनी की वृद्धि लाती है। पैमाने का ह्रासमान प्रतिफल है।

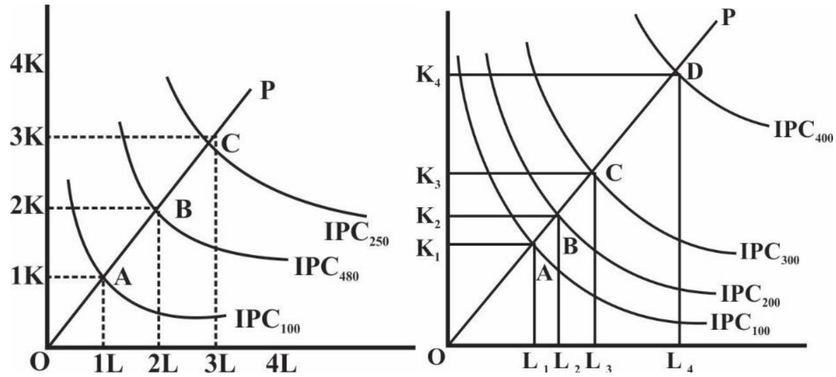

चित्र 3:8

लागत वृद्धि की स्थिति की व्याख्या या(ख) विधि के आधार पर रेखाचित्रीय प्रदर्शन रेखाचित्र के माध्यम से चित्र 3:8 के आधार पर किया जा सकता है।

रेखाचित्र 3:8 की व्याख्या से स्पष्ट है कि उत्पादन की वृद्धि हमेशा 100 इकाई की ही की गयी है, पर श्रम तथा पूँजी की वृद्धि के अनुपात को प्रदर्शित करने वाली दूरीAB, BC, CD... निरन्तर बढ़ती गयी है, अर्थात् पहले की अपेक्षा श्रम तथा पूंजी की अधिक मात्रा लगाने के बाद ही 100 ही उत्पादन की प्राप्ति होती है। लागत वृद्धि की स्थिति दिखाई पड़ रही है।

4.6 सम उत्पाद वक्र के माध्यम से अल्पकालीन उत्पादन फलन की व्याख्या

अल्पकालीन उत्पादन फलन की व्याख्या हम लोगों ने इस खण्ड के अध्याय 1 में की। यहाँ हम सम उत्पाद वक्रों तथा उत्पाद रेखा के आधार पर इसकी व्याख्या करेंगे। स्पष्टीकरण के लिए चित्र 3:9. 3:10, 3:11 दिया गया है। रेखाचित्र से स्पष्ट है, पूँजी(K) की एक स्थिर मात्रा के साथ साधन श्रम(L) में बराबर मात्रा में वृद्धि की गयी है।

रेखाचित्र 3:9 में वर्धमान प्रतिफल, 3:10 में समता प्रतिफल तथा 3:11 में ह्रासमान प्रतिफल नियम प्रदर्शित है। रेखा चित्र 3:9 से स्पष्ट है कि श्रम की मात्रा 2L होने पर उत्पादन में वृद्धि 150 तथा 3L होने पर वृद्धि 250 की प्रदर्शित है, अर्थात् उत्पादन में बढ़ती हुयी दर से वृद्धि हो रही है, चित्र 3:10 में उत्पादन समता की स्थिति है क्योंकि श्रम की मात्रा में बराबर मात्रा में वृद्धि 1L, 2L. 3L होने पर उत्पादन में वृद्धि 100 इकाई की है तथा 3:11 में ह्रासमान की स्थिति में श्रम की मात्रा में बराबर उतनी की ही वृद्धि से उत्पादन में वृद्धि क्रमशः 80 तथा 70 इकाई की होती है,(IPC100 से IPC 180 तथा IPC 180 से IPC 250)।

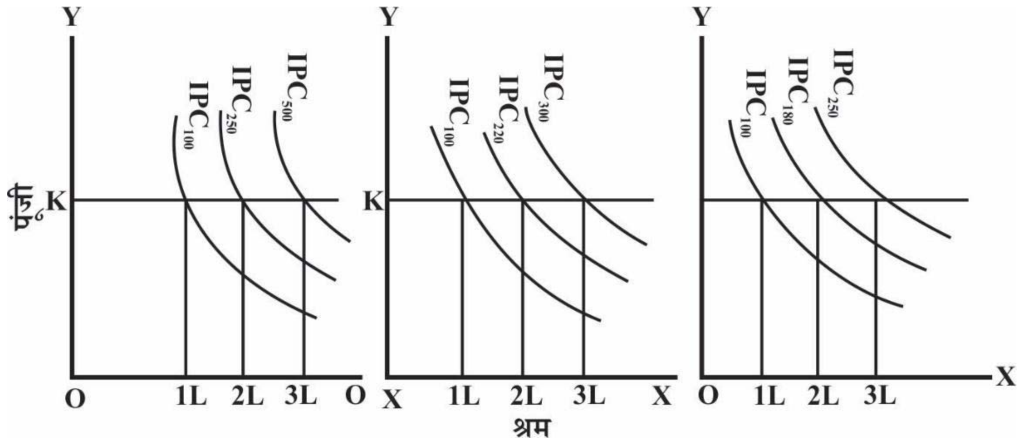

चित्र 3:9

4.7 सारांश

इस इकाई में उत्पादन पैमाने से सम्बन्धित वर्द्धमान, स्थिर एवं हासमान प्रतिफल नियमों एवं इनके कार्यशील होने के लिये उत्तरदायी तत्वों का विवेचन किया गया है। पैमाने के प्रतिफल शब्द का प्रयोग दीर्घकालीन उत्पादन फलन के लिए ही किया जा सकता है जब साधनों के अनुपात को स्थिर रखते हुए फर्म उत्पादन के सभी साधनों को एक ही अनुपात में बढ़ाती अथवा घटाती है। यदि उत्पादन में वृद्धि साधनों के अनुपात से अधिक होती है तो हम यह मानते है कि उत्पादन के वर्द्धमान प्रतिफल मिल रहे हैं। उत्पादन में वृद्धि साधन अनुपात के समान रहे तो उत्पादन के स्थिर प्रतिफल प्राप्त हो रहे हैं। इसके विपरीत यदि उत्पादन में वृद्धि साधन अनुपात में की गई वृद्धि से कम होती है तो उत्पादन के हासमान प्रतिफल नियम क्रियाशील हो रहे हैं। उत्पादन पैमाने से सम्बद्ध विभिन्न प्रतिफल के नियम एक ही उत्पादन फलन में लागू होते हैं।

न्यूनतम लागत संयोग का निर्धारण उस बिन्दु पर होता है जहां सम लागत रेखा समात्पति वक्र को स्पर्श करती है अथवा जहां विभिन्न साधनों की प्रति रुपया सीमान्त भौतिक उपजों का अनुपात बराबर हो।

4.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- A Koutsioyonis, Modern Microeconomics, The Ma Millan Press,
- Alpha C. Chiang Fundamental Methods of Mathematical Economics, MC Graw Hill
- एम. एल. सेठ, माइक्रो अर्थशास्त्र, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा-3

4.9 अभ्यासों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1. दीर्घकालीन उत्पादन फलन में उत्पादन साधनों के अनुपात को अपरिवर्तित रखते हुए साधनों को समान अनुपात में बढ़ाया अथवा घटाया जाता है। जबकि अल्पकालीन उत्पादन फलन में साधनों के अनुपात को परिवर्तित किया जाता है इकसे कुछ साधनों को स्थिर रखकर एक साधन की मात्रा को बढ़ाया अथवा घटाया जाता है अथवा एक साधन को स्थिर रखकर अन्य साधनों की मात्रा को बढ़ाया अथवा घटाया जाता है।
2. 'अनुपात' में एक अथवा कुछ साधन स्थिर रहते हैं। पैमाने में सभी साधनों को बढ़ाया अथवा घटाया जाता है।
3. उत्पादन पैमाने से सम्बद्ध वर्द्धमान प्रतिफल अवस्था के लागू होने के लिए साधनों की अविभाज्यता एवं बड़े पैमाने के उत्पादन से प्राप्त होने वाली मितव्ययताएं जिम्मेदार हैं।

इकाई–5 कॉब–डगलस उत्पादन फलन

इकाई की रूपरेखा–

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 कॉब डगलस उत्पादन फलन

5.3 C-D उत्पादन फलन की विशेषताएँ

5.4 C-D उत्पादन फलन की आलोचनाएँ

5.5 महत्त्व

5.6 सारांश

5.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

5.8 अभ्यासों के उत्तर

5.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप–

- कॉब डगलस उत्पादन फलन की अवधारणा को समझ सकेंगे
- उनकी विशेषताओं के बारे में समझ सकते हैं

5.1 प्रस्तावना

उत्पादन करने के लियें उत्पत्ति के साधनों, जैसे श्रम, भूमि, पूंजी, प्रबन्ध तथा साहस आदि की आवश्यकता होती है। इस प्रकार, उत्पादन उत्पत्ति के साधनों के अनुपात पर निर्भर होता है । इस अध्याय में हम उत्पादन तथा उत्पत्ति के साधनों के पारस्परिक सम्बन्धों के बारे में अध्ययन करेंगे।

वस्तु का उत्पादन उत्पत्ति के विभिन्न साधनों के आदर्श संयोग द्वारा होता है । अर्थशास्त्र की भाषा में जिस वस्तु का उत्पादन किया जाता है, उसे उत्पाद तथा जिन साधनों द्वारा उत्पादन होता है, उन्हें हम पड़त या आदा कहते हैं। इस प्रकार उत्पादन-फलन(प्रकार्य) उत्पादन तथा पड़त के बीच सम्बन्ध को व्यक्त करता है।

5.2 कॉब डगलस उत्पादन फलन

कॉब-डगलस उत्पादन फलन पाल डगलस और सी. कॉब द्वारा अमरीकी निर्माणकारी उद्योग के आनुभविक अध्ययन पर आधारित है। यह रेखीय प्रथम कोटि का उत्पादन फलन है जो निर्माणकारी उद्योग के समस्त उत्पादन के लिए केवल दो आगतों, श्रम और पूँजी, को लेता है। कॉब-डगलस उत्पादन फलन को इस प्रकार व्यक्त किया जाता है,

$$Q = AL^{a}C^{b}$$

जहाँ Q उत्पादन है और L तथा क्रमश: श्रम और पूँजी की आगते हैं।A,A और b धनात्मक प्राचल(positive parameters) हैं। जहाँ$A>0$, $b>0$

समीकरण बताता है कि उत्पादन सीधे तौर से L और C पर निर्भर करता है, और उत्पादन का वह भाग जिसकी व्याख्या L और C द्वारा तय नहीं की जा सकती, उसकीA द्वारा व्याख्या की जाती है जो 'अवशेष'(residual) है जिसे प्रायः तकनीकी परिवर्तन कहा जाता है।

जो उत्पादन फलन कॉब-डगलस ने हल किया उसमें निर्माणकारी उद्योग की वृद्धि में श्रम का भाग 3/4 और पूँजी का भाग 1/4 था, जिससे C-D उत्पादन फलन है,

$$Q = AL^{3/4} C^{1/4}$$

जो पैमाने के स्थिर प्रतिफल दर्शाता है क्योंकि L और C के मूल्यों का जोड़(3/4+1/4) एक के बराबर है, अर्थात्(a+b = 1)

C-D फलन में श्रम का गुणांक(Coefficient)A उत्पादन(Q) में प्रतिशतता वृद्धि को मापता है, जो C को स्थिर रखकर L में एक प्रतिशत वृद्धि से होती है। इसी प्रकार, b उत्पादन में वृद्धि प्रतिशतता है जो C में एक प्रतिशत से होती है, L को स्थिर रखकर।

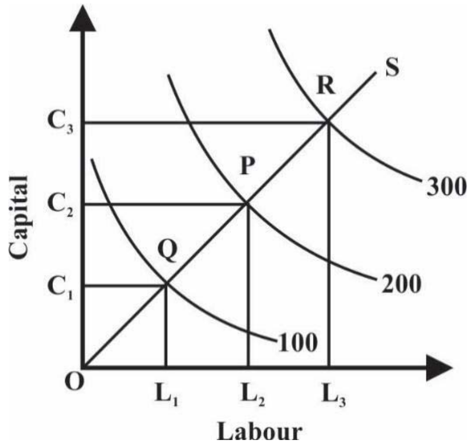

चित्र सं0 32

पैमाने के स्थिर प्रतिफल को दर्शाता C-D उत्पादन फलन चित्र 32 में दिखाया गया है। श्रम आगत को समानान्तर अक्ष पर और पूँजी को अनुलम्ब अक्ष पर लिया गया है। उत्पादन की 100 इकाइयाँ उत्पादित करने के लिए पूँजी की OC_1, इकाइयां और श्रम की OL_1, इकाइयों का प्रयोग किया गया है। यदि उत्पादन को बढ़ाकर 200 इकाइयाँ करना हो तो पूँजी एवं श्रम की दुगनी आगतों की आवश्यकता पड़ेगी। OC_2, बिल्कुल OC_1, का दुगुना है तथा OL_2, दुगुना है OL_1, का। इसी प्रकार उत्पादन की 300 इकाइयाँ उत्पादित करने के लिए श्रम तथा पूंजी की इकाइयां पहले उत्पादन 100 से तीन गुणा होंगी। OC_3, और OL_3, क्रमश: OC_1 तथा OL_1 से तिगुनी है। इसका वर्णन करने का अन्य तरीका यह है कि विस्तार पथ लिया जाय जो Q.P. R संन्तुलन बिन्दुओं को एक रेखा द्वारा मिलाए। OS ऐसी माप रेखा है। यह बताती है कि सममात्रा वक्र 100, 200 तथा 300 एक-दूसरे से सम- अन्तर पर हैं। अतः विस्तार पथ OS पर OQ = OP = PR. जो यह दर्शाता है कि जब पूंजी एवं श्रम आगतों को कुछ मात्राओं में बढ़ाया जाए तो उत्पादन भी उसी अनुपात में बढ़ता है।

5.3 C-D उत्पादन फलन की विशेषताएँ(Properties of C-D Production Function)

C-D उत्पादन फलन की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं।

(1) पैमाने के स्थिर प्रतिफल(Constant returns to scale) - C-D उत्पादन फलन पैमाने के स्थिर प्रतिफल दर्शाती है। उसे सिद्ध करने के लिए L और C की मात्राओं को n गुणा करते हैं। तब बढ़ा हुआ उत्पादन Q*होगा

$$Q^* = A(nL)^{a}(nC)^{b}$$

$$= n^{a+b}(AL^{a} C^{b})$$

$$= n^{a+b} Q. \quad [Q = AL^{a}C^{b}]$$

$$= nQ. \quad [A+b = 1]$$

इस प्रकार मूल उत्पादन Q बढ़कर Q*स्तर हो गया है, जब आगतों को गुणक द्वारा बढ़ाया गया है। इसका अभिप्राय है कि जब आगतें n गुणा बढ़ा दी जाती हैं, तो उत्पादन भी nQ जितना बढ़ता है। यह दर्शाता है कि C-D फलन रेखीय और समरूप प्रथम कोटि का है(a + b = 1) क्योंकि(a + b) का मूल्य ≥ 1 या ≤ 1 भी हो सकता है, इसलिए C-D फलन बताता है कि यदिA+b>1 तो पैमाने के प्रतिफल बढ़ रहे हैं, और

यदिA + b < 1 तो पैमाने के प्रतिफल घट रहे हैं।

(2) साधनों का औसत उत्पादन और सीमांत उत्पाद(APAnd MP of Factors)- C-D उत्पादन फलन बताता है कि साधनोंAP और MP साधनों के अनुपात का फलन है। श्रम के MP को C-D उत्पादन फलन से व्युत्पन्न किया जा सकता है:

$$\begin{aligned} MP_L &= \frac{\partial Q}{\partial L} \alpha A L^{\alpha-1} C^{\beta} \\ &= \alpha(AL^{\alpha}C^{\beta})L^{-1} \\ &= QL^{-1}[\because Q = AL^{\alpha}C^{\beta}] \\ &= \alpha \cdot \frac{Q}{L} = \alpha(AP_L) \end{aligned}$$

AP_L, श्रम का औसत उत्पाद है।

क्योंकि C-D उत्पादन फलन स्थिर मूल्य मानती है,$AP_L = f(C/L)$ | इसका मतलब है कि जितनी देर तक C/L स्थिर रहता है, चाहे उत्पादन में C और L की कितनी ही मात्राएं प्रयोग की जाएं। इसलिए, यही MP_L, पर लागू होता है, क्योंकि - $MP_L = a(AP_L) = f(C/L)$

इसी प्रकार पूँजी के सीमांत उत्पादन(MP_C) के लिए

$MP_C =$ dQ/dL. $b(AP_C) = f(C/L)$

(3) पूँजी और श्रम के बीच स्थानापन्नता की सीमांत दर MRS_{LC}(The Marginal Rate of Substitution between CAnd L) MRS_{LS} को C-D उत्पादन फलन से व्युत्पन्न किया जा सकता है,

$$MRS_{LC} = \frac{\partial Q | \partial L}{\partial Q | \partial C} = \frac{\alpha(Q|L)}{\beta(Q|C)} = \frac{\alpha}{\beta} \cdot \frac{C}{L}$$

(4) साधन स्थानापन्नता की लोच(The Elasticity of factor substitution) - C-D उत्पादन फलन की साधन स्थानापन्नता की लोच एक के बराबर है।

इसका प्रमाण(its Proof) : C और L के बीच स्थानापन्नता की लोच(es) परिभाषित की गई है।

$$es = \frac{d(C|L)|(C|L)}{d(MRS)|(MRS)}$$

ऊपर(3) में दिए गए MRS_{LC} के मूल्य स्थानापन्न करके,

$$es = \frac{d(C|L)|(C|L)}{d\left(\frac{\alpha}{\beta} \cdot \frac{C}{L}\right) | \left(\frac{\alpha}{\beta} \cdot \frac{C}{L}\right)}$$

क्योंकिA/b स्थिर है, यह अवकलज(derivate) को प्रभावित नहीं करता है जिससे

$$es = \frac{d\left(\frac{C}{L}\right)\left(\frac{\alpha}{\beta}\right)}{\left(\frac{\alpha}{\beta}\right) \cdot d\left(\frac{C}{L}\right)} = 1$$

जब स्थानापन्नता की लोच इकाई है, तो उत्पादन फलन एक कोटि का समरूप है, अर्थात् पैमाने के स्थिर प्रतिफल हैं। चित्र 17.11 में TS वक्र पर बिन्दु है,L जो मूल 0 से 45° पर है स्थानापन्नता की इकाई लोच व्यक्त करता है जहाँ MRTS में एक दिया हुआ प्रतिशत परिवर्तन पूंजी श्रम अनुपात(C/L) में समान आनुपातिक परिवर्तन लाता है।

(5) आइलर प्रमेय(Euler's Theorem) — वितरण पर आइलर प्रमेय की व्यवहार्यता C-D उत्पादन फलन की एक महत्वपूर्ण है। यदि उत्पादन फलन Q = f(C/L) एक कोटि का समरूप है, आइलर प्रमेय के अनुसार

$$Q = \frac{\partial Q}{\partial Q}C + \frac{\partial Q}{\partial L}L$$

जहाँ dQ/dC पूंजी का सीमांत उत्पाद है और dQ/dL श्रम का सीमांत उत्पाद है। dQ/dC, C कुल उत्पाद Q में पूंजी का हिस्सा है और dQ/dL कुल उत्पाद Q श्रम का हिस्सा। सिद्ध करने के लिए, मान लीजिए

[A, αAnd βAre constants]

$$Q = f(C.L) = AC^{\alpha}L^{\beta}$$

$$\frac{\partial Q}{\partial C} = A\alpha C^{\alpha-1}L^{\beta}$$

$$\frac{\partial Q}{\partial L} = AC^{\alpha}\beta L^{\beta-1}$$

$$\frac{\partial Q}{\partial C} + \frac{\partial Q}{\partial L}L = C(A\alpha C^{\alpha-1}L^{\beta}) + L(AC^{\alpha}\beta L^{\beta-1})$$

$$= A\alpha C^{\alpha}L^{\beta} + AC^{\alpha}\beta L^{\beta}$$

$$= AC^{\alpha}L^{\beta}(\alpha+\beta)$$

$$= Q(\alpha+\beta) \qquad [\because Q = AC^{\alpha}L^{\beta}]$$

अतः $$\frac{\partial Q}{\partial C}C + \frac{\partial Q}{\partial L} = (\alpha+\beta)Q$$

क्योंकि C-D उत्पादन फलनA + b = 1 है, सभी साधनों का पारितोषक(a+b) Q = Q होने पर कुल उत्पादन पूरी तरह से खप जाता है।

(6) साधन गहनता(Factor Intensity) - C-D उत्पादन फलन मेंA/b अनुपात साधन गहनता को मापता है। जितना अधिक यह अनुपात होगा, उतनी उत्पादन की श्रम गहन तकनीक होगी और जितना यह अनुपात कम होगा, उतनी ही उत्पादन की तकनीक पूँजी गहन होगी।

(7) उत्पादन की दक्षता(The Efficiency of Production) - C-D उत्पादन फलन मेंA गुणांक उत्पादन के साधनों के संगठन में दक्षता को मापने में सहायता करता है। यदि दो फर्मों केA, b, L और C समान हैं, परन्तु वे वस्तु की विभिन्न मात्राएँ उत्पादित करती हैं, तो दूसरी फर्म की अपेक्षा यह अन्तर अधिक दक्ष फर्म के बेहतर संगठन के कारण हो सकता है। अधिक दक्ष फर्म का दूसरी फर्म की तुलना मेंA बड़ा होगा।

(8) गुणात्मक फलन(Multiplicative Function) - C-D उत्पादन फलन गुणात्मक फलन है। इसका अर्थ है कि यदि एक आगत का मूल्य शून्य है, तो उत्पादन भी शून्य होगा। यह विषेशता इस तथ्य को उजागर करती है कि एक फर्म में उत्पादन के लिए सभी आगतें महत्वपूर्ण हैं।

(9) L और C से संबंधितA और b उत्पादन लोचे हैं(aAnd bAre Output Elasticities with respect to LAnd C— C-D उत्पादन फलन में, Cको स्थिर मानते हुए, L से संबंधितA उत्पादन(Q) की आंशिक लोच है; और L को स्थिर मानते हुए.(C) से संबंधित b उत्पादन(Q) की आंशिक लोच है। अतः L और C से संबंधितA और b इकट्ठे उत्पादन की लोच को मापते हैं।

बोध प्रश्न

अपना उत्तर लिखने के लिए प्रत्येक प्रश्न के सामने छोड़ी गयी खाली जगह का प्रयोग करें।

इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान करें।

(1) कॉब डगलस उत्पादन फलन की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

5.4 C-D उत्पादन फलन की आलोचनाएँ(Criticisms of C-D Production Function)

C-D उत्पादन फलन की ऐरो, चेनेरी, मिनहास और सोलो द्वारा आलोचना की गई जिनकी निम्न विवेचना है।

1. C-D उत्पादन फलन केवल दो आगतों श्रम और पूंजी पर विचार करता है तथा कच्चे माल आदि अन्य महत्वपूर्ण आगते जो उत्पादन में प्रयोग की जाती हैं उनकी उपेक्षा करता है। इसलिए फलन को दो से अधिक आगतों के लिए सामान्यीकरण करना संभव नहीं है ।

2. C-D उत्पादन फलन में, पूँजी के माप की समस्या उत्पन्न होती है क्योंकि यह केवल उत्पादन के लिए उपलब्ध पूँजी को मात्रा को लेता है । परन्तु उपलब्ध पूँजी का पूरा प्रयोग केवल पूर्ण रोजगार की अवधियों में ही किया जा सकता है । यह अवास्तविक है क्योंकि कोई भी अर्थव्यवस्था सदैव पूर्ण रोजगार में नहीं होती है।

3. कॉब-डगलस उत्पादन- फलन की आलोचना इस कारण की जाती है कि यह पैमाने के स्थिर प्रतिफल को प्रदर्शित करता है। पैमाने के स्थिर प्रतिफल वास्तविक नहीं हैं. पैमाने के बढ़ते प्रतिफल या घटते प्रतिफल उत्पादन में लागू होते हैं। सभी उद्योगों का उत्पादन में आनुपातिक परिवर्तन लाने के लिए आगतों को परिवर्तित करना सम्भव नहीं। कुछ आगते सीमित मात्राओं में पाई जाती हैं और वे अन्य आगतों के अनुपात में नहीं बढ़ाई जा सकती। दूसरी ओर, मशीनें, उद्यमी जैसे कुछ आगते अविभाज्य होती है। जब उत्पादन बढ़ता है तो अविभाज्य साधनों से उनकी अधिकतम क्षमता तक काम लिया जा सकता है। इससे प्रति इकाई कम लागत होती है क्योंकि उनसे उत्पादन के बड़े पैमाने की किफायतें प्राप्त होती है। अतः जब आगतों की पूर्ति सीमित हो तथा अविभाज्यताएँ विद्यमान हो, तो पैमाने के स्थिर प्रतिफल सम्भव नहीं । व्यावहारिकता में जब भी उत्पादन प्रक्रिया में आगतों को विभिन्न मात्राओं को बढ़ाया जाता है, तो विशेषीकरण तथा पैमाने की किफायतों के कारण बढ़ते पैमाने के प्रतिफल प्राप्त होते हैं। इसके अतिरिक्त कोई भी उद्यमी यह नहीं चाहेगा कि वह आगतों की मात्राओं को केवल इसलिए बढ़ाए कि उससे उत्पादन में आनुपातिक वृद्धि प्राप्त हो। हमेशा उसका प्रयत्न यह होता है कि यह उत्पादन में अनुपात से अधिक वृद्धि प्राप्त करे यद्यपि पैमाने के घटते प्रतिफल के नियम को सम्भावना को भी कम नहीं किया जा सकता।

4. कॉब- डगलस फलन की एक मुख्य कमी समूहन की(aggregation) समस्या है। यह समस्या उस समय पैदा होती है जब इस फलन को एक उद्योग में प्रत्येक फर्म पर तथा समस्त उद्योग पर लागू किया जाता है। इसी अवस्था में नीची या ऊँची समूहन की कोटि के अनेक उत्पादन फलन होंगे। अतः उत्पादन फलन वह नहीं मापता जिसको मापने का यह उद्देश्य रखता है।

5. कॉब- डगलस फलन साधनों की स्थानापन्नता की मान्यता पर आधारित है और साधनों की पूरकता को शामिल नहीं करता है। क्योंकि साधनों की पूरकता अल्पकाल में संभव होती है, इसलिए वह फलन दीर्घकाल के लिए अधिक उपयुक्त है। परन्तु कॉब डगलस फलन स्वयं ही समय–तत्व को नहीं लेता है। यह इसकी सबसे बड़ी कमी है।

6. यह फलन साधन मार्किट में पूर्ण प्रतियोगिता की मान्यता पर आधारित है, जो अवास्तविक है। फिर भी यदि इस मान्यता को न लिया जाए, तोA और b गुणांक साधन हिस्सों को व्यक्त नहीं करते हैं।

निष्कर्ष(Conclusion)- अतः निर्माणकारी उद्योग में कॉब- डगलस उत्पादन फलन की व्यावहारिकता के बारे में संदेह किया जाता है। यह तो कृषि में भी लागू नहीं होता, जहाँ गहन खेती के लिए आगतों की मात्राएँ बढ़ाने से उत्पादन में अनुपात से अधिक वृद्धि होती है। फिर भी इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि पैमाने के स्थिर प्रतिफल किसी भी एक फर्म उद्योग व अर्थ- व्यवस्था के जीवन में एक अवस्था होती है। यह और बात है कि यह अवस्था कुछ देर बाद और थोड़े समय के लिए आए।

5.5 इसका महत्त्व(Its Importance)

इन आलोचनाओं के बावजूद, C-D फलन का निर्माणकारी उद्योगों और अंतर उद्योग तुलनाओं के आनुभविक अध्ययनों में विस्तृत प्रयोग किया गया है। दूसरे, अर्थशास्त्रियों द्वारा कॉब-डगलस फलन, कुल उत्पादन में श्रम एवं पूँजी के सापेक्ष भागों को निर्धारित करने के लिए किया गया है। तीसरे, आइलर प्रमेय को प्रमाणित करने के लिए इसका प्रयोग किया गया है। चौथे, इसके पैरामीटरA और b लोच-गुणांकों(elasticity coefficients) को लक्ष्य करते हैं जो अन्तः क्षेत्रक तुलनाओं में प्रयोग किए जाते है। पाँचवें, यह फलन रेखीय समरूप है जिसका मूल्य एक के बराबर लिया जाता है जो पैमाने के स्थिर प्रतिफल को व्यक्त करता है। यदि यह एक से अधिक हो तो पैमाने के बढ़ते प्रतिफल और यदि एक से कम हो तो पैमाने के घटते प्रतिफल पाए जाते हैं। अन्तिम, अर्थशास्त्रियों ने इस फलन को दो से अधिक चरों पर भी फैलाया है।

5.6 सारांश

इस उत्पादन फलन का प्रतिपादन प्रसिद्ध अर्थशास्त्री पॉल एच डगलस तथा सी.डब्ल्यू.कॉब द्वारा दिया गया है। जो इन्हीं के नाम से कॉब डगलस का उत्पादन फलन कहा जाता है। लेकिन इससे पूर्व भी विभिन्न अर्थशास्त्रियों ने सांख्यिकी विश्लेषण की सहायता से अनेक उत्पादन फलनों का प्रतिपादन किया है। उत्पादन फलन के सम्बन्ध में कॉब एवं डगलस का कहना है कि निर्माणकारी उत्पादन में पूँजी का योगदान 1/2 होता है तथा शेष 3/4 श्रम का। कॉब डगलस उत्पादन फलन रेखीय और सजातीय उत्पादन फलन है, अतः इसका प्रयोग निर्माणकारी उद्योग या सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था के सन्दर्भ में किया जा सकता है क्योंकि इसके फलन के द्वारा निकाले गये निष्कर्ष सत्यता के अत्यन्त निकट होते हैं।

5.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- J.P. GouldAnd C.E. Ferguson "Micro Economic Theorty", 5th ed. Indian reprint, 1988.
- William]. Baumol, "Economic TheoryAnd operationsAnalysis, Prentice Hall Pvt. Ltd. New Delhi,
- G.S. Stiger, "The Theory of Price. "
- J.K. Mehta, "Advanced Economic Theory",
- M.L. Jhingan, "Advanced Economic Theory," 8th ed.. Konark pub., 1989.

5.8 अभ्यासों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

देखें अध्याय का भाग 5.3

इकाई–6 पैमाने की मितव्ययियिताएं

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 बड़े पैमाने पर उत्पादन एवं मितव्ययताएं

6.3 आन्तरिक मितव्ययताएं

6.3.1 आन्तरिक मितव्ययताओं के कारण

6.4 वाह्य मितव्ययताएं

6.5 आन्तरिक तथा वाह्य मितव्ययताओं में सम्बन्ध

6.6 पैमाने की अमितव्ययताएं

6.7 सारांश

6.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

6.9 अभ्यासों के उत्तर

6.0 उद्देश्य

इससे पूर्व की इकाइयों में आप उत्पादन फलन के बारे में अध्ययन कर चुके हैं। इस इकाई में हम मुख्यतया यह देखेंगे कि उत्पत्ति के पैमाने से क्या तात्पर्य है और बड़े पैमाने पर उत्पादन करने से कौन-कौन सी मितव्ययताएं प्राप्त होती है हम इस इकाई में पैमाने की अमितव्ययताओं का भी अध्ययन करेंगे |

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप निम्न बाते जान पाएंगे-

1. बड़े पैमाने के उत्पादन से प्राप्त मितव्ययताएं क्या है.

2. उत्पादन फलन में जो उत्पत्ति के साधन है यदि उन्हें परिवर्तित किया जाये जो उत्पादन पर क्या प्रभाव पड़ेगा, एवम्

3. बड़े पैमाने के उत्पादन से प्राप्त अमितव्ययताएं क्या है?

6.1 प्रस्तावना

इस खंड की ग्यारहवी इकाई में आपने उत्पादन लागत के बारे में अध्ययन किया है। उत्पादन लागत की परिभाषा से ही स्पष्ट है कि उत्पादन लागत एक दिए हुए समय के लिए उत्पादन की मात्रा के बारे में बताता है। उत्पादन लागत जान लेने के बाद आपके मन में निम्न दो प्रश्नों का उठना स्वाभिवक है।(1) उत्पादन किस पैमाने पर किया जाए और अलग-अलग पैमाने से उत्पादन की मात्राओं पर क्या प्रभाव पड़ेगा।(2) एक उद्योग के आकार में वृद्धि करने से मितव्ययता पर क्या प्रभाव पड़ेगा।

पहला प्रश्न उत्पत्ति करने वाली इकाई के आकार से है। मोटे रूप में आकार की दृष्टि से उत्पादन दो प्रकार से किया जा सकता है।(1) बड़े पैमाने पर तथा(2) छोटे पैमाने पर बड़े पैमाने पर उत्पादन करने से जो मितव्ययताएं होती है उसकी चर्चा हम इस इकाई में करेंगे। यह स्वाभाविक है कि अधिक उत्पादन करने के लिए हमें उद्योग के आकार को बढ़ाना पड़ेगा। अब यह प्रश्न उठता है कि उद्योग के विकास करने पर फर्मों की मितव्ययताओं पर क्या असर पड़ेगा। इसका एक सीधा सा उत्तर यह है कि मितव्ययताओं में परिवर्तन होगा, और फर्मों को एक सीमा के बाद अमितव्ययताओं का सामना करना पड़ेगा। इसका समाधान भी इकाई में किया गया है।

6.2 बड़े पैमाने पर उत्पादन एवं मितव्ययताएं

जैसा कि प्रस्तावना में उल्लेख किया है कि मुख्यतया आकार की दृष्टि से उत्पादन या तो बड़े पैमाने पर किया जाता है या छोटे पैमाने पर एक उत्पादनकर्ता पूँजी तकनीकी स्थिति, कच्चे माल की उपलब्धि, श्रम एवं वस्तु की मांग आदि अनेक बातों को ध्यान में रखकर उत्पत्ति के पैमाने के बारे में निर्णय लेता है। अब प्रश्न यह है कि यदि सभी बातें अनुकूल हो तो हर उत्पादनकर्ता छोटे पैमाने की बजाय बड़े पैमाने पर उत्पादन करना क्यों पसंद करता है? यद्यपि आप लाभ एवं लागत के विचारों को आगे आने वाली इकाइयों में पढ़ेंगे लेकिन यहां यह जान लें कि हर उद्यमकर्ता अपने लाभ को अधिक करने के लिए कम से कम लागत पर उत्पादन करना चाहेगा। उत्पादन के पैमाने का उत्पत्ति की प्रति इकाई लागत से गहरा सम्बन्ध होता है। बड़े पैमाने के उत्पादन में प्रति इकाई लागत कम आती है, क्योंकि बड़े पैमाने पर उत्पादन करने से कुछ विशिष्ट मितव्ययताएं प्राप्त होंगी जो कि छोटे पैमाने पर नहीं होती है, वह उत्पत्ति के समस्त सम्बन्धों के सुलभ होने पर बड़े पैमाने पर ही उत्पादन करना पसंद करेगा। इन विशिष्ट मितव्ययताओं की वजह से उत्पादनकर्ता कम लागत पर अधिक उत्पादन प्राप्त कर सकता है।

बड़े पैमाने पर उत्पत्ति का अर्थ:

जब किसी उद्योग में उत्पत्ति के विभिन्न साधनों जैसे पूँजी, श्रम एवं कच्चामाल आदि को बड़ी मात्रा में प्रयोग किया जाता है और जिसके फलस्वरूप उत्पादन इकाइयां बड़े आकार की होती हैं तो उसे बड़े पैमाने पर उत्पादन कहा जाता है। जब किसी उद्योग में उत्पादन के साधनो का प्रयोग बड़ी मात्रा में करने के लिए उत्पादन इकाइयों का आकार बड़ा होता है, तब ऐसे व्यावसायिक संगठन को "बड़े पैमाने पर उत्पादन" कहा जाता है। अतः बड़े पैमाने पर उत्पादन व्यवस्था का आशय-उद्योग या उत्पादन इकाइयों के आकार में विस्तार से है।

जैसा कि ऊपर कहा गया है कि बड़े पैमाने के उत्पादन के कुछ विशिष्ट मितव्ययताएं प्राप्त होती हैं जिन्हें हम दो भागों में बॉट सकते है-

(अ) आन्तरिक मितव्ययताएं एवं(ब) बाह्य मितव्ययताएं प्रो० मार्शल के अनुसार बड़े पैमाने पर उत्पादन आन्तरिक तथा बाह्य मितव्ययताओं के कारण ही संभव हो पाता है। रॉबर्टसन ने भी इन मितव्ययताओं को बड़े पैमाने पर उत्पादन की व्यवस्था का मूल कारण माना है। यहां हम इन दोनों मितव्ययताओं की विस्तृत चर्चा करेंगे।

6.3 आन्तरिक मितव्ययताएं(Internal Economics)

किसी फर्म के लिए आन्तरिक मितव्ययताएं वे मितव्ययताएं है जो कि उनके आन्तरिक संगठन अच्छा होने के कारण उसे प्राप्त होती है। यह आवश्यक नहीं कि इस प्रकार की मितव्ययताएं दूसरी फर्मों को भी प्राप्त हों। ये मितव्ययताएं प्रत्येक फर्म के लिए उसके आकार के अनुसार भिन्न होती हैं। प्रो० केअर्नकास के अनुसार- "आन्तरिक मितव्ययताएं वे है जो एक कारखाने या फर्म को प्राप्त होती है, ये अन्य फर्मो के कार्यों पर आधारित नहीं होती। ये फर्म के उत्पादन के पैमाने में वृद्धि का परिणाम है और इनको तब तक प्राप्त नहीं किया जा सकता जब तक कि उत्पादन में वृद्धि न हो ये मितव्ययताएं किसी फर्म को उस समय प्राप्त होती है जब उत्पादन लागतें कम हो जाती है और उत्पादन बढ़ जाता है। ये किसी एक फर्म को ही प्राप्त होती है और उनका अन्य फर्मो के कार्यों से कोई सम्बन्ध नहीं होता। ये उस फर्म के उत्पादन पैमाने के विस्तार का परिणाम होती है और तब तक उपलब्ध नहीं होती, जब तक कि उत्पादन नहीं बढ़ता। अतः यह स्पष्ट है कि इन मितव्ययताओं को प्राप्त करने के लिए उत्पादन की मात्रा बढ़ाना आवश्यक है।

6.3.1 आन्तरिक मितव्ययताओं के कारण(Causes of Internal Economics)

फर्म का विस्तार होने पर उसे निम्नलिखित कारणों से मितव्ययताएं प्राप्त होती हैं :-

(1) अविभाज्यताएं(Indivisibilities)

हम जानते है कि उत्पत्ति के अधिकांश साधन अविभाज्य होते है। प्रत्येक साधन का एक निम्नतम आकार होता है जिसके नीचे उसको एक छोटे भागों में नहीं बांटा जा सकता। उत्पादन के अनेक नियत साधनों को एक निश्चित न्यूनतम परिणाम में ही प्रयोग करना पड़ता है। स्टोनियर व हेग के अनुसार "उत्पादन के साधन प्रर्याप्त रूप से बड़े उत्पादन में ही अधिकतम दक्षता से काम में लाए जा सकते हैं, लेकिन छोटे पैमाने पर उत्पादन में वे कम दक्षता से काम करते हैं, क्योंकि उन्हें अपेक्षाकृत छोटी इकाइयों में विभाजित नहीं किया जा सकता। "इस प्रकार उत्पादन बढ़ने पर अविभाज्य साधनों की पूर्ण क्षमता का उपयोग किया जा सकता है।

श्रीमती जॉन रोविन्सन, फ्रेक नाइट व निकाल्स कॉलडोर ने भी पैमाने की मितव्ययताओं का सम्बन्ध साधनों की अविभाज्यता से जोड़ा है।

श्रीमती जॉन रॉबिन्सन के अनुसार "यदि उत्पादन के समस्त साधन रेत की भाँति अन्तिम रूप के विभाज्य हो, तो बड़े पैमाने के उत्पादन से प्राप्त होने वाले सभी लाभों के सथ किसी भी वस्तु का कम से कम मात्रा में भी उत्पादन संभव है" कॉलडोर का मत है कि पद्धति की दृष्टि से यह सुविधाजनक होगा कि बड़े पैमाने की सारी मितव्ययताएं "अविभाज्यता" के अन्तगर्त रखी जायें। मशीन, प्रबन्धक बाजार एवम् विज्ञापन, वित्त और अनुसंधान में अविभाज्यताएं का तत्व होता है। जिन फर्मो का आकार बड़ा होता है वे इन अविभाज्य साधनों का पूरा-पूरा प्रयोग करने लगती है जिससे इन्हें आन्तरिक मितव्ययताएं प्राप्त होती है। एक फर्म अपने विस्तार के साथ-साथ बाजार एवम् विज्ञापन, अनुसंधान आदि का बड़ी मात्रा में उपयोग करके प्रति इकाई लागत घटा सकती है।

(2) विशेषीकरण(Specialisation)

आन्तरिक मितव्ययताओं का एक और कारण श्रम का विभाजन है जो विशेषीकरण कहलाता है। प्रो० चेम्बरलिन का कहना है कि "बड़े पैमाने के उत्पादन से प्राप्त लाभ उत्पादन साधनों की अविभाज्यता के कारण नहीं प्राप्त होते, बल्कि विशिष्टीकरण एवं प्राविधिक विधियों का उपयोग बड़े पैमाने के उत्पादन द्वारा संभव होता है।" फर्म का आकार बढ़ने पर उत्पादन के साथ-साथ कच्चे माल एवं श्रमिकों की संख्या भी बढ़ती है। इससे श्रमिकों में विशिष्टता बढ़ती जाती है और विशिष्ट साधनों का प्रयोग करने लगते हैं। प्रत्येक श्रमिक को एक विशिष्ट काम सौंप दिया जाता है और अधिक दक्षता के लिए प्रक्रियाओं को उप-प्रक्रियाओं में विभाजित किया जाता है। इस प्रकार, विशेषोकरण से उत्पादन दक्षता बढ़ेगी और लागते घट जाएंगी।

उत्पादन-साधनों का सुचारु रूप से प्रयोग साधनों की अविभाज्यता, विशिष्टीकरण वैज्ञानिक विधियों के प्रयोग के कारण होता है। अविभाज्यता एवम् विशिष्टता जो कि बड़ी फर्मो के साथ जुड़ी होती है उन्हें धीरे-धीरे सभी क्षेत्र जैसे तकनीकी, प्रबन्ध, बाजार एवं वित्त में भी आन्तरिक मितव्ययताएं उपलब्ध करवाती है।

आन्तरिक मितव्ययताओं को मुख्यतया निम्न वर्गों में बांटा जा सकता है :-

(1) तकनीकी मितव्ययताएं

(2) प्रबन्धकीय मितव्ययताए

(3) बाजार एवम् विज्ञापन सम्बन्धी मितव्ययताएं

(4) वित्तीय मितव्ययताएं

(5) जोखिम से सम्बन्धित मितव्ययताएं

(6) अनुसंधान की मितव्ययताएं

(7) कल्याणकारिता की मितव्ययताएं

(i) तकनीकी मितव्ययताए

तकनीकी मितव्ययताएं उत्पादन की उत्तम तकनीक, बड़ी मशीनों के प्रयोग, विशिष्टीकरण तथा श्रम विभाजन के प्रयोग द्वारा प्राप्त की जा सकती है। ये मितव्ययताएं एक अकेले प्रतिष्ठान के आकार को प्रभावित करती है क्योंकि हो सकता है कि एक फर्म के संचालन में एक से अधिक प्रतिष्ठान हो। कैअर्नकास व निक्लेयर ने तीन प्रकार की तकनीकी किफायते बतलायी है-

(1) उच्च स्तरीय तकनीक की मितव्ययताएं-बढ़िया किस्म की मशीनरी बहुत छोटे पैमाने पर उत्पादित नहीं की जा सकती है। इसलिए उच्चकिरम की तकनीक का प्रयोग कर सकने के लिए बड़े पैमाने पर उत्पादन किया जाना आवश्यक होता है। उत्पादन की उत्तम तकनीकी विधियों, स्वचालित तथा शक्ति द्वारा संचालित यंत्रों के प्रयोग से उत्पादन व्यय कम होता है और प्रति इकाई उत्पादन लागत भी कम होती है।

(ii) प्रक्रियाओं को सम्बन्ध करके

व्यापार तथा उत्पादन व्यवस्था के आकार का विस्तार करने पर विभिन्न उत्पादन प्रक्रियाओं एवं विधियों को एक ही स्थान पर सम्बद्ध किया जा सकता है। इसी में व्यर्थ पदार्थों की उपोत्पत्ति(by products) के रुप में बदलने की किफायत भी शामिल की जाती है। छोटे संयंत्रों के साथ काम करने से ये मितव्ययताएं प्राप्त नहीं की जा सकती, क्योंकि उनमें व्यर्थ पदार्थ कम निकलते है। जिनको हटाने का व्यय और वहन करना पड़ता है।

(iii) वृहद आयामों के आकार की मितव्ययताएं

किसी उत्पादन इकाई का विस्तार होने पर बड़ी मशीनों का प्रयोग संभव हो पाता है तथा प्रति इकाई कम व्यय पर अधिक मात्रा में वस्तुओं का उत्पादन किया जा सकता है। छोटी मशीनों के स्थान पर बड़ी मशीनों का प्रयोग मितव्ययी माना जाता है।

(iv) विशिष्टीकरण की मितव्ययताएँ

स्टोनियर व हेग ने इसका वर्णन किया है। विशिष्टीकरण के बढ़ने से श्रम विभाजन बढ़ता है. और इनके लाभ उत्पादन-इकाई के आकार के विस्तार होने पर ही प्राप्त हो सकते हैं। छोटी फर्म में श्रम-विभाजन सीमित होता है, इसलिए मितव्ययताएं कम प्राप्त हो पाती है, क्योंकि कार्य-कुशल व्यक्ति की कार्य-क्षमता का पूर्ण उपयोग संभव नहीं हो पाता है। श्रम विभाजन के लाभों के कारण ही अल्पकाल में एक दिये हुए संयंत्र की सहायता से उत्पत्ति बढ़ाने पर कुछ सीमा तक प्रति इकाई लागत घट सकती है। इस प्रकार विशिष्टीकरण के बढ़ने से तकनीकी मितव्ययताएं प्राप्त होती है।

2. प्रवन्धकीय मितव्ययताएं

बड़े पैमाने पर उत्पादन व्यवस्था में वैज्ञानिक प्रबन्ध तथा प्रबन्ध-व्यवस्था में आवश्यक सुधार करके इस प्रकार की मितव्ययता प्राप्त की जा सकती है। प्रबन्ध में विशिष्टीकरण दो तरह से प्राप्त किया जाता है।(1) विभिन्न प्रकार के कार्य अन्य व्यक्तियों को सौंप देनाः इसमें व्यवसाय का मालिक छोटे छोटे कई कार्य अन्य सहायकों को सौंपकर अपना सम्पूर्ण ध्यान महत्वपूर्ण निर्णयों में लगा सकता है।(ii) कार्यात्मक विशिष्टीकरण फर्म के कुशल प्रबन्ध के लिए कार्यों को विभिन्न विभागों जैसे - क्रय-विक्रय विभाग लेखांकन एवं लागत विभाग, विज्ञापन विभाग आदि में बांट दिया जाता है, और एक विभाग के कार्य को भी कई उप-विभागों में बांटा जा सकता है। परन्तु इस प्रकार का कार्य विभाजन तथा कार्यों का विशिष्टीकरण व्यावसायिक संगठन के विस्तार अथवा संस्थाओं को एक कुशल व्यवस्थापक के अन्तर्गत लाने पर ही संभव हो सकता है और तभी प्रबन्ध सम्बन्ध मितव्ययताएं प्राप्त की जा सकती है।

3. बाजार एवं विज्ञापन सम्बधी मितव्ययताएं

यह मितव्ययताएं फर्म को कच्चे माल को खरीदने तथा उत्पादित माल को बाजार में बेचने से संबंधित है। एक बड़ी उत्पादक संस्था के लिये अधिक मात्रा में कच्चा माल, ईंधन, मशीनों आदि को क्रय करने पर, ये वस्तुएं कम कीमत पर एवं अच्छी मिल जाती है। इन वस्तुओं पर उद्योग को रेल परिवहन अधिकारियों, बैंकों व अन्य संस्थाओं के विशेष सुविधाएं भी मिलती है। एक फर्म के साथ एक से अधिक वस्तुओं की बिक्री करके अपना प्रति इकाई व्यय कम कर सकती है। आजकल के युग में विक्रय के लिए विज्ञापन का सहारा लेना आवश्यक है और बड़ी फर्मों द्वारा विज्ञापन एवं प्रसार पर किया गया व्यय अधिक इकाइयों में बंट जाता है।

4. वित्तीय मितव्ययताएं

आजकल सफल व्यापार के लिए सबसे बड़ी शर्त है आवश्यकतानुसार वित्त का प्राप्त होना, क्योंकि बड़ी फर्मों की बाजार में साख होती है अतः रुपया उधार देने वाली संस्थाएं आसानी से वित्त उपलब्ध करवा देती है। बड़ी फर्म को अपनी ऊँची प्रतिष्ठा के कारण अंश-पूंजी जुटाने में ज्यादा सुविधा रहती है। इन फर्मों के अंशों, ऋण पत्रों आदि का नियमित बाजारों में क्रय-विक्रय किया जाता है। जिससे अंश धारकों को विशेष कठिनाई का समाना नहीं करना पड़ता है।

5. जोखिम से सम्बन्धित मितव्ययताएं

एक बड़े संस्थान में छोटे संस्थान की अपेक्षा व्यावसायिक जोखिम सहने की क्षमता अधिक होती है। इसका कारण यह है कि बड़ी संस्था में यह जोखिम कई अंश धारकों में बंट जाती है। इसके अतिरिक्त बड़ी फर्मों को जोखिम की मात्रा छोटी फर्मों की अपेक्षा कम होती है। कई बाजारों में वस्तुओं की बिक्री करने पर, विभिन्न विधियों द्वारा उनका उत्पादन करने पर तथा विभिन्न क्षेत्रों से कच्चा माल कम करने पर भी जो जोखिम बंट जाती है। आधुनिक उद्योग जोखिम को छितरा देने के लिए अपने उत्पादन में विविधता लाते हैं, बाजारों के सम्बन्ध में विविधता लाते है एवं अपने पूर्ति के स्रोतों व उत्पादन की प्रक्रियाओं में भी विविधता लाते है। इस प्रकार इन विविधताओं से जोखिम कम की जाती है।

6. अनुसंधान की मितव्ययताएं

इस बड़ी फर्म के पास छोटी फर्म की अपेक्षा साधन अधिक होते है और वह अच्छे विशेषज्ञ एवम् अनुसंधानकर्ता रखकर अपनी स्वयं की

अनुसंधान प्रयोगशाला स्थापित कर सकती है। फर्म के विशेषज्ञ जिन नई उत्पादन तकनीकों का अविष्कार करते हैं उनका उपयोग करके वह फर्म उत्पादन बढ़ाती है और लागते कम करती है।

7. कल्याणकारिता की मितव्ययताएं

सभी फर्मों अपने श्रमिकों को कई प्रकार की सुविधाएं प्रदान करती है जैसे फर्म परिसर में सहायक कैन्टीन चलाना, शिशुओं के लिए बालगृह, श्रमिकों के लिए मनोरंजनशाला आदि। फर्म परिसर के बाहर श्रमिकों के लिए सस्ते मकान, मनोरंजन क्लब, शैक्षणिक एवम् चिकित्सासुविधाएं आदि सुविधाएं भी प्रदान कर सकती है। एक छोटी फर्म के मुकाबले बड़ी फर्म के पास अधिक साधन होते हैं। अतः वह अपने श्रमिकों को उपरोक्त सुविधाएं प्रदान कर सकती है। इन सुविधाओं पर फर्म को बहुत खर्च करना पड़ता है, लेकिन इनसे श्रमिकों की उत्पादन क्षमता बढ़ती है जो उत्पादन बढ़ाने और लागतें घटाने में सहायक होती है।

इस प्रकार हम देखते है कि आन्तरिक मितव्ययताएं एक फर्म को उसके आकार में वृद्धि होने से प्राप्त होती है। इनसे उत्पादन की लागत कम होती है। इनका सम्बन्ध फर्म के आन्तरिक संगठन व व्यवस्था से होता है।

6.4 वाह्य मितव्ययताएं(External Economies)

ये वे मितव्ययताएं होती है जो किसी औद्योगिक इकाई के स्वयं के कारण उत्पन्न नहीं होती, बल्कि बड़े पैमाने के उद्योगों के सामान्य विकास के कारण उत्पन्न होती है। इनके उत्पन्न होने का प्रमुख कारण एक ही क्षेत्र में एक ही प्रकार की अनेक औद्योगिक इकाइयों की स्थापना होना है। इनमें केन्द्रीयकरण के कारण उत्पन्न होने वाले लाभ तथा अन्य मितव्ययताएं शामिल होती है।

किसी एक उद्योग का विस्तार होने के कारण सम्पूर्ण उद्योग को प्राप्त होने वाली उन सभी मितव्ययताओं को जिनका लाभ प्रत्येक सदस्य इकाई को सम्मिलित रूप से मिलता है बाहय मितव्ययताएं कहते हैं। केअर्नकास के अनुसार, "बाह्य मितव्ययताएं वे मितव्ययताएं हैं, जो अनेक फर्मों अथवा उद्योगों को प्राप्त होती है। जबकि एक उद्योग अथवा उद्योगों के एक समूह में उत्पादन का पैमाना बढ़ता है।"

स्टोनियर एवं हेग के शब्दों में "उत्पादन की बाह्य मितव्ययताएं एक व्यक्तिगत फर्म को उत्पत्ति वृद्धि की अपेक्षा सम्पूर्ण उद्योग में होने वाली उत्पत्ति की वृद्धि पर निर्भर करती है। जबकि एक उद्योग के आकार में वृद्धि होने से उसमें स्थित व्यक्तिगत फर्मों की लागते कम हो जाती है।"

बाह्य मितव्ययताएं केवल एक फर्म को प्राप्त न होकर अनेक फर्मों अथवा उद्योगों को प्राप्त होती है, ये उस समय प्राप्त होती है जबकि उद्योग में उत्पादन का पैमाना बढ़ता है।

बाह्य मितव्ययताओं के उत्पन्न होने के कारणः

बाहय मितव्ययताएं दो कारणों से उत्पन्न होती है-(1) उद्योगों का स्थानीयकरण तथा(11) केन्द्रित फर्मों द्वारा विशिष्टीकरण को अपनाना।

(i) उद्योगों का स्थानीयकरण

प्राकृतिक आर्थिक तथा अन्य कारणों से एक ही भौगोलिक क्षेत्र या स्थान में एक ही प्रकार की बहुत सी औद्योगिक फर्मों के केन्द्रित हो जाने से प्रत्येक फर्म की उत्पादन लागत कम होती है। प्रो० थॉमस के शब्दों में "बाह्य मितव्ययताएं वे मितव्ययताएं होती है जो उद्योग के स्थानीयकरण के कारण उत्पन्न होती हैं और सभी फर्मों को समान रूप से उपलब्ध होती है।

(ii) केन्द्रित फर्मों द्वारा विशिष्टीकरण को अपनाना

प्रो० स्टिगलर के अनुसार "उद्योग के विकास के फलस्वरूप फर्मों में विशिष्टीकरण की प्रवृत्ति ही बाह्य मितव्ययताओं का मुख्य स्रोत है।" औद्योगिक स्थानीयकरण के कारण विशिष्ट प्रकार की सेवायें प्रदान करने वाली संस्थाएं वहां पर स्थापित हो जाती है। इसके कारण उद्योग की सभी कर्मे विशिष्टीकरण का लाभ प्राप्त करके कम लागत पर उत्पादन करती हैं। मोटे रूप से बाहूप मितव्ययताओं को निम्न भागों में बांटा जा सकता है -

(1) केन्द्रीयकरण की मितव्ययताएं

जब बहुत सी फर्में एक क्षेत्र में केन्द्रित हो जाती है तो उनके स्थानीकरण के परिणामस्वरुप कई बाह्य मितव्ययताएं प्राप्त होती है जैसे एक क्षेत्र में परिवहन तथा संचार व्यवस्था का अच्छा विकास हो जाता है तथा सरकार भी इन साधनों के निर्माण एवं विकास में सहायता करती है।

उद्योगों के केन्द्रीयकरण को देखते हुए सरकार विद्युत शक्ति कभी उस क्षेत्र में विकास करती है जिससे सस्ती दर पर विद्युत मिल जाती है। ऐसे क्षेत्र में कई नई फर्म खुल जाती है जो बड़े उद्योगों को कच्चे माल की पूर्ति करती है और उनसे निर्मित माल लेती है। इसके अलावा उस क्षेत्र में कुलश श्रमिक भी आसानी से प्राप्त हो जाते हैं और उनके लिए प्रशिक्षण सुविधाओं का विकास भी हो जाता है। बैंक एवं बीमा कम्पनियों की स्थापना से इनकी सेवायें प्राप्त होती है इन सबके परिणामस्वरुप फर्म की कुशलता बढ़ जाती है तथा फर्म को बाह्य मितव्ययताएं प्राप्त होती है।

(2) ज्ञान एवं सूचना की मितव्ययताएं

आजकल लगभग सभी बड़े उद्योग अपने यहां अनुसंधान एवं विकास विभाग रखते है तथा उनसे होने वाले लाभों का व्यापारिक एवं तकनीकी पत्रिकाओं के माध्यम से आदान-प्रदान किया जाता है। इसी प्रकार कुछ फर्मे मिलकर एक केन्द्रीय अनुसंधान संस्थान भी स्थापित कर सकती है तथा जिनकी खोजों का लाभ प्रत्येक सदस्य फर्म को हो सकता है। सूचना सम्बन्धी मितव्ययताओं का अकेले उद्योग के साथ-साथ सभी उद्योगों के लिए महत्व होता है। प्रायः इस अनुसंधान के व्यय का भार सरकार के कन्धों पर पड़ता है जिससे सम्पूर्ण उद्योग लाभाविन्त होता है।

(3) विघटन की मितव्ययताएँ

जब किसी उद्योग का पर्याप्त विकास हो जाता है तब उस उद्योग का कुछ प्रक्रियायें पृथक हो जाती है जो एक विशिष्ट फर्म या उद्योग के द्वारा विशिष्टीकरण प्राप्त करके अधिक कार्य कुशलता से पूरी की जा सकती है। इस प्रकार विशिष्ट फर्मों की सेवाओं से सभी फर्मों को लाभ प्राप्त होता है।

उपरोक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि आन्तरिक मितव्ययताएं एक फर्म को मिलती है और यह फर्म पर निर्भर करता है कि वह कुल कितना मितव्ययताएं प्राप्त करने में सफल हो सकती है। ये किसी फर्म विशेष को उसके आकार में वृद्धि तथा संगठन में सुधार के कारण प्राप्त होती है। जबकि बाह्य मितव्ययताएं उद्योग के आकार तथा स्थानीयकरण पर निर्भर करती है तथा इन समस्त फर्मों को मिलती हैं जो एक उद्योग से जुड़ी है और लगभग एक स्थान पर है बाह्य मितव्ययताएं आन्तरिक मितव्ययताओं से भिन्न होती है लेकिन इनमें निश्चित विभाजन करना कठिन होता है क्योंकि एक फर्म के लिए जो आन्तरिक मितव्ययता होती है वही दूसरी फर्म के लिए बाह्य मितव्ययता हो सकती है।

इन दोनों प्रकार की मितव्ययताओं के कारण ही बड़े पैमाने पर उत्पादन करने से प्रति इकाई लागत कम आती है।

प्रश्न बोध-1

प्रश्नों का उत्तर लिखने के लिए प्रत्येक प्रश्न के सामने छोड़ी गयी खाली जगह का प्रयोग करें

इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान करें।

(1) बड़े पैमाने पर उत्पादन का क्या तात्पर्य है?

(2) आन्तरिक मितव्ययताएं मुख्य रूप से कौन सी है?

(3) वाह्य मितव्ययताएं किन कारणों से उत्पन्न होती है?

आन्तरिक तथा वाह्य मितव्ययताओं का सम्बन्ध केवल स्थिति परक ही है। उदाहरणार्थ, कुछ फर्मे अलग- अलग रहकर बाह्य मितव्ययताएं प्राप्त कर रही है, लेकिन यदि वे सब इकट्ठी मिल जाये तो उनके लिए सभी वाह्य मितव्ययताएं आन्तरिक बन जाती है। एक ही प्रकार की मितव्ययता एक के लिए आन्तरिक मितव्ययता और दूसरी के लिए वाह्य मितव्ययता हो सकती है। यदि एक फर्म की किसी आन्तरिक का लाभ कोई दूसरी फर्म लेने लगे तो दूसरी फर्म के लिए वह वाह्य मितव्ययता बन जायेगी। उदाहरण के लिए हम देखे कि रेल्वे परिवहन का विकास किसी क्षेत्र में होने पर यह स्वयं रेल्वे उद्योग के लिए तो आन्तरिक मितव्ययता और अन्य फर्मों के लिए बाह्य मितव्ययता माना जायेगा।

प्रायः वाह्य मितव्ययताओं से आन्तरिक मितव्ययतायें उत्पन्न होती है। श्रीमती जॉन रॉबिन्सन के अनुसार "बड़े पैमाने के उद्योग की मितव्ययताओं का परिणाम यह हो सकता है कि फर्म का इष्टतम परिणाम बदल जाये और जब फर्म अपने को नए इष्टतम परिणाम के अनुरूप समायोजित करने के लिए अपना पुन संगठन करें तो और मितव्ययताएं प्राप्त हो जायें। प्रोफेसर राबर्टसन ने सभी मितव्ययताओं को एक करके उनको आन्तरिक वाह्य मितव्ययताएं कहा है। वे फर्म के परिणाम पर निर्भर करती है इसलिए आन्तरिक मितव्ययताएं और उद्योग के परिणाम पर निर्भर करती है इसलिए बाह्य मितव्ययताएं होती है।

6.6 पैमाने की अमितव्ययताएं(Diseconomies of Scale)

बड़े पैमाने की मितव्ययताएं निरन्तर उपलब्ध नहीं हो सकती। किसी फर्म तथा उद्योग के जीवन में ऐसा समय आता है जब आगे विस्तार से मितव्ययताओं के स्थान पर अमितव्ययताएं उत्पन्न होने लगती है। अमितव्ययताएं भी आन्तरिक अमितव्ययताएं एवम् बाह्य अमितव्ययताएं हो सकती है। आन्तरिक अमितव्ययताओं का सम्बन्ध एक फर्म के आन्तरिक संगठन से होता है। बाह्य अमितव्ययताओं का सम्बन्ध उद्योग के आकार में वृद्धि से होता है जिससे व्यक्तिगत फर्मों की लागते बढ़ जाती है।

बड़े पैमाने पर उत्पादन व्यवस्था में एक सीमा के बाद मितव्ययताएं समाप्त हो जाती है और अमितव्ययताएं उत्पन्न होने लगती हैं। फर्म के विस्तार से उत्पन्न व्यय में वृद्धि हो सकती है। एक सीमा से आगे कुशल श्रम, पूँजी की कमी होने से तथा स्थानाभाव के कारण उत्पादन लागत में वृद्धि हो सकती है। जिससे अमितव्ययताएं प्राप्त होने लगती है। बड़े पैमाने में प्रबन्ध क्रियाओं में उत्पादन, परिवहन, वित्त, बिक्री आदि से सम्बन्धित कियायें आती है। इन सब कार्यों को करने के लिए सही सूचना की आवश्यकता होती है, अन्यथा गलत निर्णय लिये जाने का खतरा रहता है। एक फर्म सेसंयंत्र का आकार बढ़ने से एक बिन्दु के बाद प्रबन्ध का कार्य नीचे के लोगों को सौपना पड़ता है. इससे कागजी कार्यवाही एवं लाल फीताशाही बढ़ने से उत्पादन लागत बढ़ने लगती है और उद्योग को अमितव्ययताएं प्राप्त होने लगती है।

उद्योग का विकास होने पर उसमें दक्ष श्रमिकों की मांग बढ़ जाती है इन्हें तो ऊंची मजदूरी टोकर दूसरे उद्योगों से लेना पड़ता है या घटिया श्रमिकों से कम उत्पादन करवाना पड़ता है। इससे उत्पादन लागत बढ़ जाती है। इससे इस उद्योग की फर्मों के समक्ष बढ़ती हुई लागत की स्थिति उत्पन्न होने से बाह्य अमितव्ययताएं प्राप्त होने लगती है।

उत्पादन के परिणाम में वृद्धि होने पर पूंजी के अतिरिक्त अन्य साधनों को मांग में वृद्धि होने से मजदूरी, कच्चे माल के मूल्य, लगान आदि में वृद्धि हो जाती है जिससे फर्म को अधिक उत्पादन करने पर अमितव्ययताएं प्राप्त होती है।

बोध प्रश्न 2

अपना उत्तर लिखने के लिए प्रत्येक प्रश्न के सामने छोड़ी गयी खाली जगह का प्रयोग करें।

इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान करें।

(1) बड़े पैमाने के उत्पादन की अमितव्ययताओं के बारे में बताइये।

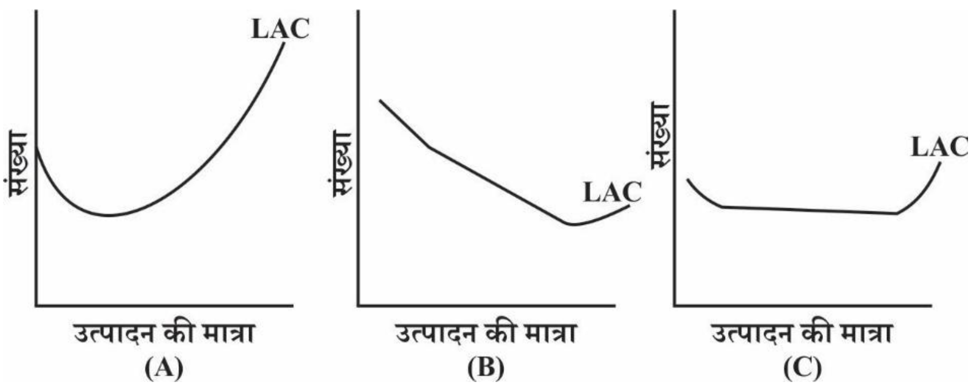

12.7 सारांश

इस इकाई में अपने बड़े पैमाने पर प्राप्त होने वाली मितव्ययाओं के बारे में अध्ययन किया है। प्रारम्भ में हमने देखा कि बड़े पैमाने पर उत्पादन करने से कौन-कौन सी मितव्ययताएं प्राप्त होती है। मोटे रूप से इन्हें दो भागो आंतरिक एवं बाह्य मितव्ययताओं के रूप में बांटा जा सकता है। आंतरिक मितव्ययताएं मुख्य रूप से बड़े आकार से सम्बन्धित मितव्ययताएं है जो फर्मो की अविभाज्यता एवं विशिष्टीकरण से प्राप्त होती है। जबकि बाह्य मितव्ययताएं एक उद्योग के स्थान विशेष में केन्द्रित होने के कारण स्थानीयकरण अनुसंधान एवं विगटन से प्राप्त होने वाली मितव्ययताएं है। मितव्ययताओं के कारण उत्पादन की औसत लागत(AC) कम हो जाती है। लेकिन एक सीमा के बाद बड़े पैमाने के उत्पादन में भी अमितव्ययताएं मिलने लगती है जिनसे औसत लागत बढ़ने लगती है। अतः हम देखते है कि बड़े पैमाने से जो मितव्ययताएं प्राप्त होता है से असीमित नहीं होती।

6.8 कुछ उपयोगी पुस्तके

J.P. GouldAnd C.E. Ferguson "Micro Economic Theorty", 5th ed. Indian reprint, 1988.

William]. Baumol, "Economic TheoryAnd operationsAnalysis, Prentice Hall Pvt. Ltd. New Delhi,

G.S. Stiger, "The Theory of Price. "

J.K. Mehta, "Advanced Economic Theory",

M.L. Jhingan, "Advanced Economic Theory," 8th ed.. Konark pub., 1989.

गूल्ड व फर्ग्यूसन के पैमाने की अमितव्ययताओं पर विचार

यह कह सकता कठिन है कि पैमाने की अमितव्ययताएं कहां से प्रारम्भ होती हैं। जिन व्यवसायों में पैमाने की मितव्ययताएं कम मिलती हैं उनमें अमितव्ययताएं जल्दी चालू हो जाती है, इसलिए इनका दीर्घकाल औसत लागत व उत्पत्ति की थोड़ी मात्राओं पर ही बढ़ने लगता है। चित्र में अमितव्ययताओं की तीन स्थितियों के बारे में बताया गया है। चित्र 12.1(A) 12.1(A) में बताया गया है कि उन उद्योगों में जिनमें पैमाने की मितव्ययताएं एक मिलती है उनमें अमितव्ययताएं जल्दी चालू हो जाती है, इसलिए इनका दीर्घ कालीन औसत लागत(LAC) वक्र उत्पत्ति की थोड़ी मात्राओं पर ही बढ़ने लगता है।

कुछ उद्योगों में प्रवन्ध की कार्य कुशलता तो जल्दी ही घटने लगती है, लेकिन तकनीकी मितव्ययताएं जारी रहती है जो प्रबन्ध की अकार्यकुशलता का प्रभाव मिटा देती है, जिसे उत्पत्ति की काफी मात्राओं तक औसत लागत का घटना जारी रहता है। तत्पश्चात् औसत लागत बढ़ती है, जैसा कि चित्र 12.1(B) में दर्शाया गया है। ऐसा प्राकृतिक एकाधिकार(Natural Monopoly) की स्थिति में देखा जाता है।

कुछ स्थितियां ऐसी होती हैं जिनमें पैमाने को सारी मितव्ययताएं तो जल्दी ही प्राप्त हो जाती है, लेकिन अमितव्ययताएं काफी मात्रा में उत्पत्ति करने तक प्रारंभ नहीं होती। इस अवस्था में औसत लागत तक काफी दूरी तक क्षैतिज(Horizontal) बना रहता है और बाद में बढ़ता है। यह स्थिति चित्र 12.1(C) में दिखायी गयी है।

6.9 अभ्यासों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

(1) जब किसी उद्योग में उत्पत्ति के विभिन्न साधनों(पूँजी, श्रम, कच्चामाल) को कड़ी मात्रा में प्रयोग किया जाता है जिसके फलस्वरूप उत्पादन इकाइयां कड़े आकार की होती है।

(2) आन्तरिक मितव्ययताएं मुख्य रूप से निम्न वर्गों में बंटी जा सकती है -(1) तकनीकी मितव्ययताएं(1) प्रबन्धकीय मितव्ययताएं(iii) बाजार एंव विज्ञापन संबंधी मितव्ययताएं(iv) जोखिम से संबंधित मितव्ययताएं(v) वित्तीय मितव्ययताएं(vi) अनुसंधान की अमितव्ययताएं(vii) कल्याणकारिता की मितव्ययताएं।

(3) बाह्य मितव्ययताएं दो कारणों से उत्पन्न होती है।

(i)उद्योगों का स्थानीयकरण और(ii) केद्रित फर्मों द्वारा विशिष्टीकरण को अपनाना।

बोध प्रश्न 2

(1) उद्योग या फर्म का विस्तार अधिक होने पर अमितव्ययताएं उत्पन्न होने लगती है, ये भी दो प्रकार की होती है।

(i) आन्तरिक अमितव्ययताएं एवं

(ii) बाह्य अमितव्ययताएं।

इकाई 1 : नव क्लासिकी उपयोगिता विश्लेषण Neo-Classical UtilityAnalysis

इकाई की रूपरेखा

1. **उद्देश्य(Aim)**

1.1. प्रस्तावना(Introduction)

1.2. इस थ्योरी की परिकल्पनाएँ(Assumptions of this theory) निम्नलिखित हैं:

1.3. घटती सीमान्त उपयोगिता का नियम(LAW OF DIMINISHING MARGINAL UTILITY)

1.4. कुल उपयोगिता बनाम सीमांत उपयोगिता(Total Utility V/s Marginal Utility)

1.5. मार्जिनल यूटिलिटी और उपभोक्ता की पसंद और प्राथमिकताएँ(Marginal UtilityAnd Consumer's TastesAnd Preferences)

1.6. घटती मार्जिनल उपयोगिता का महत्व(Significance of Diminishing Marginal Utility)

1.7. उपभोक्ता का संतुलन : सम-सीमांत उपयोगिता का सिद्धांत(CONSUMER'S EQUILIBRIUM: PRINCIPLE OF EQUI-MARGINAL UTILITY)

1.8. "समान मार्जिनल उपयोगिता" के सिद्धांत की सीमाएँ:(Limitations of the Law of Equi-Marginal Utility)

1.9. डिमांड कर्व और डिमांड का नियम दिमिनिशिंग मार्जिनल उपयोगिता के सिद्धांत पर आधारित होते हैं।(DERIVATION OF DEMAND CURVEAND LAW OF DEMAND)

1.10. मार्जिनल यूटिलिटी ऑफ मुद्रा(Marginal Utility of Money) का सामान्यत: दो स्थितियों में स्थिर रहता है।

1.11. मार्शल के कार्डिनल यूटिलिटी विश्लेषण की महत्वपूर्ण मूल्यांकन (CRITICAL EVALUATION OF MARSHALL'S CARDINAL UTILITYANALYSIS)

1.12. बोध प्रश्न

1.0 उद्देश्य(Aim)

इस इकाई को पढ़ने क बाद आप :

- **नवीनतम उपयोगिता विश्लेषण तकनीकें:** आप नवीनतम उपयोगिता विश्लेषण तकनीकों की समझ प्राप्त करेंगे, जो आपको डेटा का विश्लेषण करने में मदद करेगी। आपको इन तकनीकों के साथ कैसे काम करना है और उनके उपयोग के तरीकों की समझ होगी।

- **उपयोगकर्ता की आवश्यकताओं का प्राथमिकताओं के साथ समझना**: आपको यह सिखाया जाएगा कि कैसे आप उपयोगकर्ताओं की आवश्यकताओं को समझ सकते हैं और उनकी प्राथमिकताओं पर आधारित रूप से विश्लेषण कर सकते हैं।

- **डेटा से नई जानकारी प्राप्ति:** आपको यह सिखाया जाएगा कि कैसे आप डेटा के माध्यम से नए पैटर्न, योग्यताएँ और अन्य विशेषताओं की पहचान कर सकते हैं, जो आपके व्यवसायिक निर्णयों को समर्थन प्रदान करेगी।

- **डेटा विश्लेषण के लिए मूल्यांकन कैसे करें:** आपको यह सिखाया जाएगा कि कैसे आप उपयोगकर्ताओं की प्राथमिकताओं और आवश्यकताओं के आधार पर सही मूल्यांकन और मापनियाँ कर सकते हैं, जो उपयोगकर्ताओं के अनुकूलन को सुनिश्चित करेगी।

- **नवीनतम उपयोगिता विश्लेषण के तकनीकों के उपयोग का प्रामुख उद्देश्य:** आपको यह समझने में मदद मिलेगी कि कैसे आप उपयोगकर्ताओं के व्यवसायिक निर्णयों का समर्थन करने के लिए नवीनतम उपयोगिता विश्लेषण तकनीकों का सही तरीके से उपयोग कर सकते हैं।

इस चैप्टर के माध्यम से आप नवीनतम उपयोगिता विश्लेषण तकनीकों की समझ प्राप्त करके, व्यवसायिक निर्णयों को समर्थन प्रदान करने के लिए उन्हें सही दिशा में ले सकते हैं।

1.1 प्रस्तावना(Introduction)

नव-शास्त्रीय उपयोगिता विश्लेषण मार्शल, पिगू और अन्य द्वारा निर्मित उपभोक्ता मांग के सिद्धांत को संदर्भित करता है। न्यू-क्लासिकल डिमांड विश्लेषण एक मौलिक ढांचा है जो बाजार अर्थशास्त्र के क्षेत्र में उपभोक्ता व्यवहार के प्रणालीकी गतिविधियों में विचरण करता है। यह तर्कशील दृष्टिकोण न्यू-क्लासिकल पैराडिज्म में गहराई से निहित है जिसमें तर्कसंगत निर्णय लेने, उपयोगिता मैक्सिमाइज़ेशन(Utility Maximization) और बाजार में संतुलन को महत्व दिया जाता है। व्यक्तिगत पसंद , बजट सीमाएँ , और बाजार व्यापार की कड़ी मैत्रितील परीक्षण के माध्यम से न्यू-क्लासिकल डिमांड विश्लेषण उपभोक्ताओं के चयन करने और संसाधनों का आवंटन कैसे करते हैं, उसकी एक समग्र समझ प्रदान करता है। इस विश्लेषण का मूल तत्व उपयोगिता की अवधारणा के चारों ओर है। जो व्यक्तियों को वस्तुओं और सेवाओं का सेवन करके प्राप्त संतोष या कल्याण का आकलन करती है। यह महत्वपूर्ण विचार मूल ढांचे की नींव के रूप में कार्य करता है। उपभोक्ताओं के संसाधनों का आवंटन कैसे करते हैं। इसे मैक्सिमाइज़ करने के लिए, उनकी सीमित संसाधनों का मूल्यांकन करके, अर्थशास्त्रीय विश्लेषक महत्वपूर्ण प्रेरणाओं की पृष्ठभूमि को समझते हैं। न्यू-क्लासिकल डिमांड विश्लेषण के मूल तत्व में मार्जिनल उपयोगिता की अवधारणा का भी एक महत्वपूर्ण स्थान है, जो एक वस्तु या सेवा की एक अतिरिक्त इकाई का सेवन करने से होने वाले उपयोगिता में वृद्धि का आकलन करता है। यह कम होने वाली मार्जिनल उपयोगिता का सिद्धांत मानव पसंदों की सूक्ष्म विशेषता को संकेत करता है, जो विभिन्न विकल्पों के बीच अपने संसाधनों का आवंटन करते समय व्यक्तियों की व्यापारिकताओं के बीच के सौदों को प्रकट करता है। उपभोक्ता के बजट सीमा इस विश्लेषण में महत्वपूर्ण संयोजन है, जो उपभोक्ताओं के संविदान के बारे में वित्तीय सीमाओं को संवेदनशील तरीके से समाहित करती है। इस दृष्टिकोण से, अर्थशास्त्री अनंत आय के बीच की जटिल नृत्य को सुलझाते हैं, जिसमें व्यक्तिगत आय और विभिन्न मूल्यों से युक्त वस्तुओं और सेवाओं की एक व्यापारिकता का वर्णन है। यह खेल उपभोक्ताओं को वित्तीय संसाधनों का विवेकपूर्ण निर्णय लेने के लिए समझाता है ताकि वे संसाधनों का सर्वोत्तम आवंटन प्राप्त कर सकें। उपभोक्ता संतुलन की खोज न्यू-क्लासिकल डिमांड विश्लेषण का मुख्य बिंदु उत्पन्न होता है। यह संतुलन तब होता है जब उपभोक्ता उनके संसाधनों को ऐसे आवंटित करते हैं जिससे उनकी कुल उपयोगिता को अधिकतम कर सकते हैं। उनकी बजट सीमा के दिए गए सीमा के आधार पर। प्रत्येक अतिरिक्त यूनिट की मार्जिनल उपयोगिता को उस वस्तु की मूल्य के साथ तुलना करके व्यक्ति अपने संसाधनों का सबसे लाभकारी आवंटन निर्धारित करते हैं। यह संतुलन अवधारणा न केवल यह बताता है कि उपभोक्ता कैसे निर्णय लेते हैं। बल्कि यह भी अर्थशास्त्री के लिए एक शक्तिशाली दृष्टिकोण प्रदान करता है जिसके माध्यम से मूल्य, आय, और पसंदों में परिवर्तन का विश्लेषण किया जा सकता है। मांग की वक्र, इस ढांचे का एक मूल तत्व, यह सुंदरता से दिखाती है कि वस्तु की मूल्य और उपभोक्ताएं जितनी मात्रा में खरीदने को तैयार हैं। यह वक्र मूल आपूर्ति के साथ मांग के परस्परित संबंध को प्रतिष्ठित सिद्धांत , मांग की कानून की नींव को प्रतिनिधित्व करती है। मूल्य बढ़ने पर, उपभोक्ताएं अपनी खपत को संतुलन बनाए रखने के लिए समायोजित करती हैं। जिससे उनकी इच्छाएं और बजटीय सीमाएँ संतुलित रहे, जिससे उपभोक्ता की मांग में कमी होती है। उलटी चाल में मूल्यों में गिरावट होने पर उपभोक्त वृद्धि करके प्रतिक्रिया देता हैं। मूल्यों और उपभोक्ता व्यवहार के बीच की जटिल खेल की विविधता को और अधिक प्रकट करती है।

कई प्रमुख अर्थशास्त्री ने न्यू-क्लासिकल डिमांड विश्लेषण और उससे संबंधित अवधारणाओं में महत्वपूर्ण योगदान किए हैं। उनके दर्शन और योगदान ने हमें उपभोक्ता व्यवहार, मांग, और बाजार संतुलन को समझने का तरीका दिखाया है। यहां कुछ प्रमुख अर्थशास्त्री हैं जो न्यू-क्लासिकल डिमांड विश्लेषण से जुड़े हैं:

1. ***अल्फ्रेड मार्शल(1842–1924):*** "आधुनिक अर्थशास्त्र के पिता" के रूप में भी जाने, जाने वाले मार्शल ने न्यू-क्लासिकल अर्थशास्त्र की नींव रखी। उनके प्रमुख कृति "प्रिंसिपल्स ऑफ इकोनॉमिक्स" ने उपभोक्ता विश्लेषण के कई महत्वपूर्ण अवधारणाओं को प्रस्तुत किया, जिनमें उपयोगिता, मार्जिनल उपयोगिता, और उपभोक्ता सरप्लस शामिल हैं। मार्शल ने यह धारणा दिलाई कि व्यक्तियों के पास उनकी पसंदों और उनके सामने आने वाली प्रतिबंधों के आधार पर युक्तिपूर्ण निर्णय होते हैं, जिनके आधार पर वे

अपनी भलाई को अधिकतम करने के लिए क्रियाशील होते हैं।

2. ***लियॉन वाल्रास(1834–1910):*** वाल्रास को सामान्य संतुलन सिद्धांत के संस्थापकों में से एक माना जाता है। उनका काम बाजार संतुलन और आपूर्ति और मांग के परस्पर क्रियान्वयन पर महत्वपूर्ण प्रभाव डाला और न्यू-क्लासिकल दृष्टिकोण को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उन्होंने बाजार संतुलन की एक बिक्री संतुलन अवधारणा प्रस्तुत की, जहां सभी बाजार संतुलन आपूर्ति और मांग के बीच एक संतुलन तक पहुंचते हैं।

3. ***विलियम स्टैनली जेवन्स(1835–1882):*** जेवन्स ने मार्जिनल उपयोगिता के सिद्धांत में महत्वपूर्ण योगदान किए। उनकी पुस्तक "थ्योरी ऑफ पॉलिटिकल इकोनॉमी" ने उपभोक्ता व्यवहार और बाजार मूल्यों में मार्जिनल उपयोगिता की भूमिका को प्रमोट किया। उन्होंने प्रस्तावित किया कि उपभोक्ता अपने बजट को उन विभिन्न वस्तुओं के बीच उपयोगिता की मार्जिनल उपयोगिता के मूल्यों के अनुपात को समान करने के तरीके से आवंटन करते हैं।

4. ***कार्ल मेंगर(1840–1921):*** मेंगर, जेवन्स और वाल्रास के साथ, मार्जिनल उपयोगिता की स्थापना करने वाले महान विद्वानों में से एक माने जाते हैं। उनका काम मूल्य की व्यक्तिगत प्रकृति और व्यक्तियों के द्वारा वस्तुओं के मूल्य का निर्धारण कैसे करते हैं, इस पर जोर दिया। मेंगर के विचार ने न्यू-क्लासिकल अर्थशास्त्र के विकास की मूलभूती बुनाई की है।

5. ***पॉल सैम्यूलसन(1915–2009):*** सैम्यूलसन ने न्यू-क्लासिकल अर्थशास्त्र को मुख्य धारा में शामिल करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उनकी पाठ्यपुस्तक "इकोनॉमिक्स: एन इंट्रोडक्टरी एनालिसिस" ने बहुत से छात्रों को न्यू-क्लासिकल अवधारणाओं से परिचित किया और उन्हें एक बड़े दर्शक के लिए पहुंचाया। सैम्यूलसन ने उपभोक्ता संतुलन और बाजार के व्यवहार की अवधारणा को सजीव और विस्तृत किया।

6. ***गैरी बेकर(1930–2014):*** बेकर ने न्यू-क्लासिकल डिमांड विश्लेषण को घरेलू उत्पादन, मानव पूंजी, और समय का आवंटन जैसे विभिन्न व्यवहारों को शामिल करने में विस्तार किया। उनका काम घरेलू निर्णय लेने और अर्थशास्त्रीय सिद्धांतों को गैर-बाजारी गतिविधियों पर भी लागू करने में न्यू-क्लासिकल विश्लेषण की दिशा को विस्तारित किया।

7. ***जॉन हिक्स(1904–1989):*** हिक्स ने उपभोक्ता सिद्धांत और कल्याण अर्थशास्त्र में महत्वपूर्ण योगदान किए। उन्होंने हिक्सियन मांग वक्र की अवधारणा पेश की, जिसमें मूल्य परिवर्तन के आय और प्रतिस्थान के प्रभाव को अलग किया जाता है। उनका काम मूल्यों और आय में परिवर्तन के परिणामस्वरूप उपभोक्ताओं की प्रतिक्रिया को समझने की स्पष्टता में मदद करने में सहायक रहा।

इन अर्थशास्त्रीयों ने, और भी अन्यों ने, मिलकर न्यू-क्लासिकल डिमांड विश्लेषण और इसकी आधारभूत सिद्धांतों को निर्मित किया है। उनके योगदान ने हमारी उपभोक्ता व्यवहार और बाजार गतिविधियों की समझ को न केवल बढ़ाया है, बल्कि आधुनिक माइक्रोआयकन थ्योरी और उसके अनुप्रयोगों के लिए मार्ग भी प्रशस्त किया है।

यह सिद्धांत उपयोगिता के कार्डिनल माप(Cardinal measure of utility) पर आधारित है जो मानता है कि उपयोगिता मापने योग्य और योजक है। इसे काल्पनिक इकाइयों में मापी गई मात्रा के रूप में व्यक्त किया जाता है जिसे 'यूटील्स'(utilities) कहा जाता है। यदि कोई उपभोक्ता कल्पना करता है कि एक आम में 8 यूटील और एक सेब 4 यूटील हैं, तो इसका मतलब है कि एक आम की उपयोगिता एक सेब की तुलना में दोगुनी है।

1.2 इस थ्योरी की परिकल्पनाएँ(Assumptions of this theory) निम्नलिखित हैं:

1. यूटिलिटी विश्लेषण कार्डिनल अवधारणा(Cardinal Utility)पर आधारित है, जिसमें माना जाता है कि यूटिलिटी मापनीय और योजना से मापनीय है, जैसे कि सामान के वजन और लंबाई।

2. यूटिलिटी को पैसे की दृष्टि से मापा जा सकता है।

3. पैसे की मार्जिनल यूटिलिटी(Marginal utility of money)को स्थिर माना गया है।

4. उपभोक्ता यह उचित है जो विभिन्न वस्तुओं के विभिन्न इकाइयों की यूटिलिटी को मापता, गणना करता, चुनता और तुलना करता है और यूटिलिटी की अधिकतमीकरण की दिशा में लक्ष्य रखता है।(Rational Decision-Making)

5. उसे वस्तुओं की उपलब्धता और उनकी तकनीकी गुणवत्ता की पूरी जानकारी होती है।
6. उसके पास उसके लिए खुली वस्तुओं के चयन की सही जानकारी होती है और उसके चयन निश्चित होते हैं।(Perfect Information)
7. उसके पास विभिन्न वस्तुओं की सटीक मूल्यों की जानकारी होती है और उनकी यूटिलिटी उनकी मूल्यों में विभिन्नताओं में परिवर्तनों के प्रभाव से प्रभावित नहीं होती है।
8. कोई परिवर्तन नहीं होते हैं।
9. मार्जिनल उपयोगिता(Marginal Utility): व्यक्ति और कंपनियाँ प्रत्येक अतिरिक्त यूनिट की मार्जिनल उपयोगिता के आधार पर निर्णय लेते हैं, जिससे कि उन्हें सर्वोत्तम परिणाम प्राप्त करने में मदद मिल सके।
10. बजट सीमितता(Budget Constraint): व्यक्ति और कंपनियाँ अपनी वित्तीय सीमाओं के तहत निर्णय लेते हैं, जिससे वे उपयोगिता को अधिकतम करने का प्रयास करते हैं।

मार्शलियन विश्लेषण का सम्पूर्ण भंडार, जिसमें मार्जिनल यूटिलिटी का कानून, अधिकतम संतोष का कानून, उपभोक्ता सरप्लस की अवधारणा और मांग का कानून शामिल है, इन परिकल्पनाओं पर आधारित है। इन धारणाओं से संबंधित होने से पहले, यह शिक्षाप्रद हो सकता है कि कुल यूटिलिटी और मार्जिनल यूटिलिटी के बीच संबंध का अध्ययन किया जाए।

उपरोक्त मौलिक पूर्वापेक्षित तत्वों के साथ, कार्डिनल उपयोगिता विश्लेषण के संस्थापकों ने दो क़ानून विकसित किए हैं जो आर्थिक सिद्धांत में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं और कई अनुप्रयोग और उपयोग हैं। ये दो क़ानून हैं:(1) घटती मार्जिनल उपयोगिता का कानून और(2) समान मार्जिनल उपयोगिता का कानून। उपयोगिता विश्लेषण के वक्ताओं ने इन दोनों क़ानूनों की मदद से उपभोक्ता के व्यवहार के बारे में निमित्त का कानून निकाला है, और उन्होंने उनसे मांग का कानून निर्मित किया है। हम नीचे इन दोनों क़ानूनों को विवरणपूर्वक समझाते हैं और यह बताते हैं कि मांग का कानून इनसे कैसे प्राप्त होता है।

1.3 घटती सीमान्त उपयोगिता का नियम(LAW OF DIMINISHING MARGINAL UTILITY)

"घटती मार्जिनल उपयोगिता का नियम," जिसका कहना है कि जब कोई व्यक्ति किसी वस्तु या सेवा की अधिक इकाइयाँ खाता है, तो प्रत्येक अतिरिक्त इकाई से प्राप्त आनंद या उपयोगिता की अतिरिक्तता कम होती है, इसे पहली बार जर्मन अर्थशास्त्री हरमन हाइनरिच गोसेन ने प्रस्तुत किया था। गोसेन ने 1854 में अपने काम "Entwickelung der Gesetze des menschlichen Verkehrs, und der daraus fließenden Regeln für menschliches Handeln"(मानव संबंधों के नियम और मानव क्रियान्वयन से उत्पन्न नियम)(The Laws of Human RelationsAnd the Rules of HumanAction Derived Therefrom) को प्रकाशित किया, जहाँ उन्होंने अपने विचार घटती मार्जिनल उपयोगिता के बारे में प्रस्तुत किए। यह ध्यान देने योग्य है कि इसी समय अन्य अर्थशास्त्री भी समान अवधारणाओं पर चर्चा कर रहे थे, लेकिन गोसेन को इस सिद्धांत के एक प्रारंभिक औपचारिक वक्तव्य का स्रोत माना जाता है।

कार्डिनल उपयोगिता विश्लेषण का एक महत्वपूर्ण सिद्धांत मार्जिनल उपयोगिता के व्यवहार से संबंधित है। इस मार्जिनल उपयोगिता के परिचित व्यवहार को "घटती मार्जिनल उपयोगिता का नियम" में समाहित किया गया है, जिसका मतलब है कि किसी व्यक्ति के एक वस्तु की अधिक इकाइयाँ सेवन करने पर वस्तु की मार्जिनल उपयोगिता कम होती है। सरल शब्दों में, जब कोई उपभोक्ता एक वस्तु की अतिरिक्त इकाइयाँ प्राप्त करता है, तो प्रत्येक अतिरिक्त इकाई से प्राप्त आनंद या उपयोगिता की मात्रा धीरे-धीरे कम होती जाती है। यह ध्यान देने के लिए महत्वपूर्ण है कि यह कमी मार्जिनल उपयोगिता की है, न कि कुल उपयोगिता, जो किसी वस्तु को सेवन करने से होने वाली कुल संतोष होती है। "घटती मार्जिनल उपयोगिता का नियम" का मतलब होता है कि कुल उपयोगिता एक घटती दर से बढ़ती है।***"व्यक्ति को उस वस्तु की दी गई वृद्धि से प्राप्त अतिरिक्त लाभ, जो कि उसकी पहले से मौजूद स्टॉक में होने वाली हर बढ़त के साथ घटता है।"***

यह कानून दो महत्वपूर्ण तथ्यों पर आधारित है।

पहले, जबकि किसी व्यक्ति की कुल इच्छाएँ वास्तव में असीमित होती हैं, प्रत्येक एकल इच्छा संतोषप्रद हो सकती है। इसलिए, जैसे-जैसे किसी व्यक्ति एक वस्तु की अधिक और अधिक इकाइयाँ सेवन करता है, उसकी वस्तु के प्रति इच्छा की तीव्रता घटती है और एक

बिंदु पर पहुँचता है जहाँ व्यक्ति अब और कोई इकाई चाहता नहीं है। इसका मतलब है, जब संतोषण सीमा पर पहुँचा जाता है, तो वस्तु की मार्जिनल उपयोगिता शून्य हो जाती है। शून्य मार्जिनल उपयोगिता का मतलब होता है कि व्यक्ति के पास उस वस्तु की पूरी की पूरी विशेष इच्छा है।

दूसरा तथ्य, जिस पर घटती मार्जिनल उपयोगिता का नियम आधारित है, वह है कि विभिन्न वस्तुएं विभिन्न इच्छाओं के संतोष में पूरी तरह से एक-दूसरे की पूरी विकल्प नहीं हैं। जब कोई व्यक्ति एक वस्तु की अधिक और अधिक इकाइयाँ सेवन करता है, तो उसकी विशेष इच्छा की तीव्रता कम होती है, लेकिन अगर उस वस्तु की इकाइयाँ अन्य इच्छाओं की संतोष की तरह उपयोग की जा सकती थी और उन्होंने पहले इच्छा की संतोष में किए थे, तो वस्तु की मार्जिनल उपयोगिता कम नहीं होती।

1.4. कुल उपयोगिता बनाम सीमांत उपयोगिता(Total Utility V/s Marginal Utility) :

प्रत्येक वस्तु उपभोक्ता के लिए कुछ योगदान रखता है। जब उपभोक्ता सेब खरीदता है, तो उसे उन्हें इकाइयों में प्राप्त करता है - 1, 2, 3, 4, और आगे बढ़ते हुए, जैसा कि तालिका 1 में दिखाया गया है। प्रारंभ में, 2 सेब 1 से अधिक योगदान रखते हैं; 3, 2 से अधिक योगदान रखते हैं, और 4, 3 से अधिक योगदान रखते हैं। उपभोक्ता द्वारा चयनित सेब की इकाइयाँ उनकी योगदान की एक अवरोही क्रम में होती हैं। उनके मूल्यांकन में, पहला सेब उनमें से सबसे अच्छा होता है और इस तरह से उसे सर्वोत्तम संतोष प्रदान करता है, जिसे 20 यूटिल्स के रूप में मापा जाता है। दूसरा सेब स्वाभाविक रूप से पहले से कम योगदान वाला होगा, और उसमें 15 यूटिल्स होते हैं। तीसरा सेब 10 यूटिल्स और चौथा 5 यूटिल्स प्रदान करता है। कुल योगदान एक वस्तु की विभिन्न इकाइयों से उपभोक्ता द्वारा प्राप्त योगदानों का कुल योग होता है। इस उदाहरण में, दो सेबों का कुल उपयोग 35 =(20 + 15) यूटिल्स होता है, तीन सेबों का 45 =(20 + 15 + 10) यूटिल्स होता है, और चार सेबों का 50 =(20 + 15 + 10 + 5) यूटिल्स होता है। मार्जिनल यूटिलिटी एक वस्तु की एक अतिरिक्त इकाई का समृद्धि कुल उपयोग से होता है। दो सेबों की कुल उपयोगिता 35 यूटिल्स होती है। जब उपभोक्ता तीसरा सेब खाता है, तो कुल उपयोगिता 45 यूटिल्स हो जाती है। इस प्रकार, तीसरे सेब की मार्जिनल यूटिलिटी 10 यूटिल्स होती है(45-35)। अन्य शब्दों में, एक वस्तु की मार्जिनल उपयोगिता वह है जो यदि एक यूनिट कम खाई जाए, तो यूटिलिटी का घाटा होता है। बीजगणितीय रूप से, एक वस्तु की N इकाइयों की मार्जिनल उपयोगिता$(MU)_N$ इकाइयों की कुल उपयोगिता(TU) और N-1 इकाइयों की कुल उपयोगिता का अंतर होता है। इस प्रकार,

$MU_N = TU_N - TU_{N-1}$ । कुल और मार्जिनल उपयोगिता के बीच संबंध तालिका 1 के साथ दिखाया गया है।

तालिका 1: TU और MU के बीच संबंध:

सेब की इकाइयों की संख्या	कुल उपयोगिता(TU) यूटिलिटी में	मार्जिनल उपयोगिता(MU) यूटिलिटी में
0	0	0
1	20	20
2	35	15
3	45	10
4	50	5
5	50	0
6	45	-5
7	35	-10

जब तक कुल उपयोगिता बढ़ती है, मार्जिनल उपयोगिता चौथे सेब तक कम होती है। जब कुल उपयोगिता पांचवें सेब पर अधिकतम होती है,

मार्जिनल उपयोगिता शून्य होती है, जो उपभोक्ता की संतोष की अवस्था को दर्शाता है। जब कुल उपयोगिता कम होती है, मार्जिनल उपयोगिता नकारात्मक होती है(छठे और सातवें सेब)। ये इकाइयाँ अप्रसन्नता या असंतोष प्रदान करती हैं, इसलिए उन्हें प्राप्त करने में कोई उपयोग नहीं होता। यह संबंध चित्र 1 में दिखाया गया है। कुल उपयोगिता और मार्जिनल उपयोगिता की कर्व बनाने के लिए, हम तालिका 1 की कॉलम(2) से कुल उपयोगिता को निकालते हैं और आयतों को प्राप्त करते हैं। इन आयतों के शीर्षों को मिलाकर एक सम्पूर्ण वाले रेखांकन से, हम TU कर्व प्राप्त करते हैं, जो Q पर उच्चतम बिंदु पर पहुँचता है और फिर धीरे-धीरे घटता है। मार्जिनल उपयोगिता की कर्व बनाने के लिए, हम तालिका की कॉलम(3) से मार्जिनल उपयोगिता का उपयोग करते हैं। मार्जिनल उपयोगिता का कर्व चित्र में प्रत्येक इकाई के लिए छवित वृद्धि के रूप में दिखाई देता है। इन छवित वृद्धियों के शीर्षों को एक सम्पूर्ण वाले रेखांकन से जोड़कर, हम मार्जिनल उपयोगिता का कर्व प्राप्त करते हैं। जब तक TU कर्व बढ़ता है, MU कर्व घटता है। जब पहले Q पर शीर्ष बिंदु तक पहुँचता है, दूसरा X-अक्ष पर बिंदु C को स्पर्श करता है, जहाँ MU शून्य होता है। जब TU कर्व Q से नीचे गिरने लगता है, MUC से नकारात्मक हो जाता है।

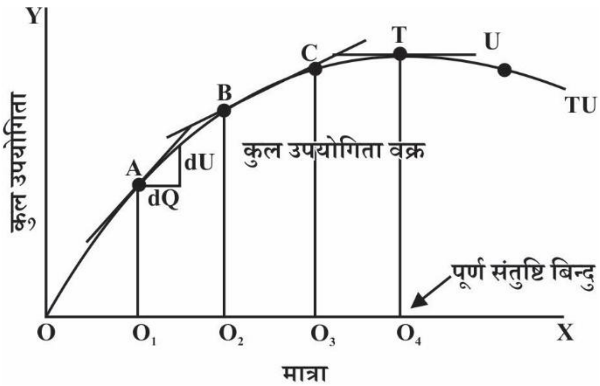

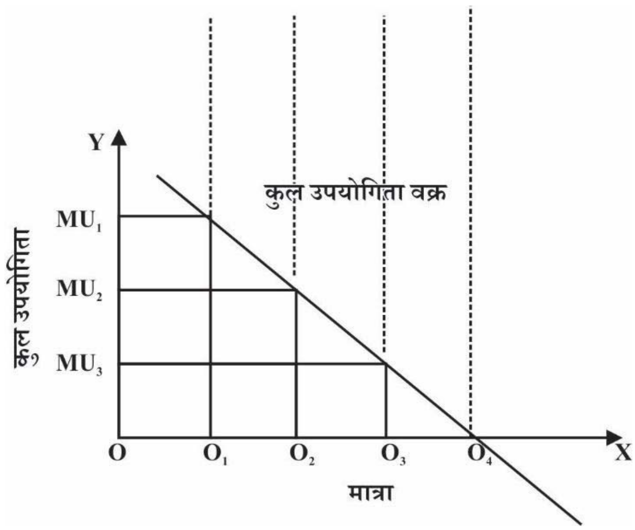

चित्र 1 : चित्र कुल उपयोगिता और सीमांत उपयोगिता

कुल उपयोगिता और मार्जिनल उपयोगिता की वक्रों का उदाहरण प्रस्तुत करता है। चित्र 1 में बनायी गई कुल उपयोगिता वक्र तीन मानकों पर आधारित है। पहले, जब एक उपभोक्ता द्वारा प्रति अवधि सेवन की गई मात्रा बढ़ती है, तो उसकी कुल उपयोगिता बढ़ती है, लेकिन एक घटती दर से(his total utility increases butAtA decreasing rate)। इसका मतलब है कि जैसे-जैसे उपभोक्ता द्वारा प्रति अवधि की वस्तु की मात्रा बढ़ती है, तो मार्जिनल उपयोगिता कम होती है, जैसा कि चित्र 1 के निचले पैनल में दिखाया गया है। दूसरा, जैसा कि चित्र से दिखेगा, जब प्रति अवधि की वस्तु की सेवन दर Q4 की ओर बढ़ती है, तो उपभोक्ता की कुल उपयोगिता अपने अधिकतम स्तर तक पहुँचती है। इसलिए, वस्तु की मात्रा Q4, को संतोषण मात्रा या संतोष बिंदु(satiation quantity or satiety point) कहा जाता है। तीसरे, उपभोक्ता द्वारा प्रति अवधि अधिक संख्या में वस्तु के सेवन की वृद्धि संपूर्ण उपयोगिता पर उसके प्रतिकूल प्रभाव को होता है, यानी अगर संतोषण बिंदु से अधिक Q4 मात्रा की वस्तु की सेवन की जाती है तो उसकी कुल उपयोगिता कम होती है। यह मतलब है कि Q4 के पार वस्तु की मार्जिनल उपयोगिता उपभोक्ता के लिए नकारात्मक हो जाती है, जैसा कि चित्र 1 के निचले पैनल में संतोषण बिंदु(satiation point) Q4 के पार जाते ही MU वक्र X-अक्ष के नीचे चल जाती है, जिससे यह नकारात्मक होती है।

मार्जिनल यूटिलिटी कर्व की निर्माणी की विशेष महत्वपूर्णता को समझना महत्वपूर्ण है। जैसा कि पहले उल्लिखित किया गया है, मार्जिनल यूटिलिटी उपभोक्ता के पूर्व दिए गए अवधि में एक अतिरिक्त इकाई की खपत से उपभोक्ता की कुल संतोष की वृद्धि को सूचित करती है। द्विआवधिकता की पश्चात उपभोक्ता द्वारा सेवित वस्तु की पारिस्थितिकीय उपयोगिता की आवृत्ति को निर्धारित करने के लिए हम संभाविततः प्राप्त कुल उपयोगिता से अतिरिक्त उपयोगिता का मापन कर सकते हैं, जो उपभोक्ता को प्रत्येक उपयोगी इकाई की प्रतिद्वितीय मात्रा से प्राप्त अतिरिक्त संतोष से होती है और उन्हें उनके संबंधित मात्राओं के साथ मापन किया जाता है। हालांकि, गणित में, वस्तु X की मार्जिनल यूटिलिटी पूरी उपयोगिता फ़ंक्शन U = f(Qx) की ढलान होती है। इस प्रकार, हम मार्जिनल यूटिलिटी कर्व को विभिन्न बिंदुओं पर पूरी उपयोगिता कर्व TU की ढलान की मापन करके प्राप्त कर सकते हैं, जिन्हें उन्होंने उनके संबंधित मात्राओं पर तंगें खींचकर दिखाया गया है। उदाहरण के लिए, मात्रा Q1 पर मार्जिनल यूटिलिटी(जिसे $dU/dQ = MU_1$ के रूप में व्यक्त किया गया है) को बिनाA बिंदु पर तंगें खींचकर उसकी ढलान की मापन करके निर्धारित किया गया है। इसे तंगें की नीचे दिए गए चित्र 1 के लोअर पैनल में मात्रा Q1 के खिलौने के साथ प्रदर्शित किया गया है। निचले पैनल में, वस्तु की मार्जिनल यूटिलिटी को Y-अक्ष पर मापा जाता है। वैसे ही, मात्रा Q_2 पर, वस्तु की मार्जिनल यूटिलिटी का मापन बिंदु B पर पूरी उपयोगिता कर्व TU की ढलान की मापन करके किया गया है और इसे लोअर पैनल में मात्रा Q2 के साथ पूरी उपयोगिता कर्व के खिलौने के साथ प्रदर्शित किया गया है। चित्र से स्पष्ट होता है कि जब वस्तु की मात्रा Q4 होती है, तो कुल उपयोगिता अधिकतम स्तर T पर पहुँचती है। इस प्रकार, मात्रा Q4 पर, कुल उपयोगिता कर्व की ढलान इस बिंदु पर शून्य हो जाती है। Q4 की मात्रा से आगे, कुल उपयोगिता में कमी होती है, जिससे मार्जिनल यूटिलिटी नकारात्मक होती है। इस प्रकार, वस्तु की मात्रा Q4 विश्रांति की बिन्दु की प्रतिष्ठा को प्रतिनिधित करती है।

कुल उपयोगिता और मार्जिनल उपयोगिता के बीच एक और महत्वपूर्ण संबंध नोट करने योग्य है। किसी भी मात्रा पर, एक वस्तु की खपत की कुल उपयोगिता मार्जिनल यूटिलिटी की जोड़ होती है। उदाहरण के लिए, अगर पहले, दूसरे, और तीसरे वस्तु की खपत की मार्जिनल उपयोगिताएँ 15, 12, और 8 इकाइयाँ हैं, तो इन तीन इकाइयों की वस्तु की खपत से प्राप्त कुल उपयोगिता 35 इकाइयाँ होनी चाहिए($15 + 12 + 8 = 35$)। इसी तरह, चित्र 1 में दिखाए गए कुल उपयोगिता और मार्जिनल उपयोगिता के ग्राफ की दृष्टि से कहें तो, वस्तु की मात्रता Q4 की खपत की कुल उपयोगिता Q4T के बराबर होनी चाहिए। अर्थात्, निम्न पैनल में मार्जिनल उपयोगिता कर्व MU के तले बिंदु Q4 तक का कुल क्षेत्र वस्तु की खपत की इकाइयों की मार्जिनल उपयोगिताओं का योग है, जो ऊपरी पैनल में कुल उपयोगिता Q4T के बराबर होना चाहिए।

1.5. मार्जिनल यूटिलिटी और उपभोक्ता की पसंद और प्राथमिकताएँ(Marginal UtilityAnd Consumer's TastesAnd Preferences)

किसी विशेष वस्तु को खपत करने से उपभोक्ता को उसकी पसंद और प्राथमिकताओं पर निर्भरता होती है। कुछ उपभोक्ता संतरे पसंद करते हैं, दूसरे सेब की प्राथमिकता करते हैं और अन्य बनाने की प्राथमिकता करते हैं। इस प्रकार, विभिन्न फलों से व्यक्तियों को यहाँ तक कि उनकी पसंद और प्राथमिकताओं पर निर्भरता होती है। व्यक्ति के विभिन्न वस्तुओं से आग्रिम उपयोगिता कर्व व्यक्ति की पसंद और प्राथमिकताओं पर निर्भरता है। इस प्रकार, जो लोग विभिन्न वस्तुओं से उपभोक्ता करते हैं, उनकी पसंद और प्राथमिकताओं का प्रतिनिधित्व करते हैं।

हालांकि, महत्वपूर्ण यह है कि हम उपभोक्ताओं के बीच उपयोगिता की तुलना नहीं कर सकते। प्रत्येक उपभोक्ता का एक विशिष्ट वैयक्तिक उपयोगिता मानक होता है। कार्डिनल उपयोगिता विश्लेषण के संदर्भ में, उपभोक्ता की पसंद और प्राथमिकताओं में परिवर्तन उसके एक या एक से अधिक मार्जिनल यूटिलिटी कर्व में परिवर्तन का मतलब होता है। हालांकि, ध्यान देने योग्य है कि उपभोक्ता की पसंद और प्राथमिकताएँ अक्सर बदलती नहीं हैं, क्योंकि ये उसकी आदतों द्वारा निर्धारित होती हैं। बेशक, पसंद और प्राथमिकताएँ कभी-कभी बदल सकती हैं। इसलिए, आर्थिक सिद्धांत में हम आमतौर पर मानते हैं कि पसंद या प्राथमिकताएँ प्राप्त और अपेक्षाकृत स्थिर होती हैं।

1.6. घटती मार्जिनल उपयोगिता का महत्व(Significance of Diminishing Marginal Utility)

एक वस्तु की घटती मार्जिनल उपयोगिता का महत्व विवाद के लिए यह है कि यह हमें दिखाता है कि एक वस्तु की मांगी गई मात्रा उसके मूल्य कम होने पर बढ़ती है और उलटी दिशा में। इस प्रकार, घटती मार्जिनल उपयोगिता के कारण ही मांग की वक्र रेखा नीचे की ओर ढलती है। इसे इस अध्याय में विस्तार से समझाया जाएगा। यदि यह सही से समझा जाए तो घटती मार्जिनल उपयोगिता सभी इच्छा की वस्तुओं में, सहित मुद्रा के लिए लागू होती है। लेकिन यह उल्लेखनीय है कि मुद्रा की मार्जिनल उपयोगिता सामान्य रूप से कभी भी शून्य या

नकारात्मक नहीं होती। मुद्रा सभी अन्य वस्तुओं पर खरीदारी की शक्ति को प्रतिनिधित करती है, अर्थात्, एक व्यक्ति सभी अपनी सामग्री इच्छाओं को पूरा कर सकता है अगर उसके पास पर्याप्त मुद्रा हो। क्योंकि मनुष्य की कुल इच्छाएँ प्रायः असीमित होती हैं, इसलिए उसके लिए मुद्रा की मार्जिनल उपयोगिता कभी शून्य तक नहीं गिरती।

"जितनी अधिक मात्रा में कोई वस्तु होती है, उसकी अंतिम छोटी इकाई की परिस्थितिकीय प्राप्तियों की कमी होती है, हालांकि जबकि हम वस्तु की मात्रा बढ़ाते हैं तो उसकी कुल उपयोगिता बढ़ती है। इसलिए, यह स्पष्ट है कि बहुत सारे पानी का महंगा मूल्य होता है या यह भी स्पष्ट है कि वायु, भले ही उसका विशाल उपयोग हो, एक निशुल्क वस्तु है। इन अनेक आगामी इकाइयों का प्रभाव होता है कि सभी इकाइयों का बाजार मूल्य कम होता है।"

इसके अलावा, उपभोक्ता के संधान की मार्शलियन अवधारणा में विघटनशील मार्जिनल उपयोगिता के सिद्धांत पर आधारित है।

1.7 उपभोक्ता का संतुलन : सम-सीमांत उपयोगिता का सिद्धांत(CONSUMER'S EQUILIBRIUM: PRINCIPLE OF EQUI-MARGINAL UTILITY)

अनुपातिकता का नियम(The Proportionality Rule): आनुपातिक सिद्धांत को विभिन्न नामों से पुकारा गया है, जैसे सम सीमांत प्रति फलों का नियम(Law of Equi Marginal Returns), स्थानापत्ति नियम(Law of Substitution), अधिकतम संतोष नियम(Law of Maximum Satisfaction), उदासीनता का नियम(Law of Indifference), सम सीमांत उपयोगिता का नियम(Law of Equi Marginal Utility), और गोसन का दूसरा नियम(Gossen's Second Law)। मार्शल ने इसे इस प्रकार से परिभाषित किया है: "यदि किसी व्यक्ति के पास कोई ऐसी वस्तु हो जिसका विभाज्य उपयोग करने के कई तरीके हों, तो वह उसे उन तरीकों में विभाजित करेगा जिनसे उसकी सीमांत उपयोगिता सभी विभाजनों में समान होगी।"

"समान मार्जिनल उपयोगिता का सिद्धांत" कैर्डिनल उपयोगिता विश्लेषण में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। यह सिद्धांत उपभोक्ता के संतुलन की स्पष्टि करने में मदद करता है। एक उपभोक्ता के पास एक दिया गया आय होता है जिसे वह विभिन्न चाहिए वस्तुओं पर खर्च करना होता है। अब सवाल यह है कि वह अपनी दी गई धन आय को विभिन्न वस्तुओं में कैसे विभाजित करेगा, अर्थात्, उसकी विभिन्न वस्तुओं की खरीदों के प्रति संतुलन स्थिति क्या होगी। इस संदर्भ में, उपभोक्ता 'तर्कसंगत' माना जाता है, अर्थात्, उसकी उपयोगिताओं की गणना करते समय वह सतर्क रूप से काम करता है और एक वस्तु को दूसरी के साथ प्रतिस्थापन करने के लिए प्रतिस्थापन करता है ताकि वह अपनी उपयोगिता या संतोष को अधिकतम कर सके।

$$MU_m = \frac{MU_x}{P_x}$$

सरलता के लिए, आइए केवल दो वस्तुओं: एक्स(x) और वाई(y), पर एक परिदृश्य को ध्यान में रखते हैं, और यहां उन वस्तुओं के लिए निर्धारित मूल्य हैं। इन परिस्थितियों में, उपभोक्ता के निर्णयन का आधार दो प्रमुख कारकों पर टिका होता है: प्रत्येक वस्तु के मार्जिनल उपयोगिता और मौजूदा मूल्यों के साथ। समान मार्जिनल उपयोगिता का नियम कहता है कि उपभोक्ता अपनी आय को एक विशेष तरीके से विभाजित करेगा ताकि प्रत्येक वस्तु पर आखिरी रुपये के खर्च से प्राप्त उपयोगिता समान हो। संक्षेप में, उपभोक्ता का संतुलन प्राप्त किए गए पैसे के प्रत्येक वस्तु पर खर्च की मार्जिनल उपयोगिता समान होने पर होता है। अन्य शब्दों में, वस्तुओं एक्स और वाई की खरीदों के प्रति उपभोक्ता का संतुलन सिद्ध होता है जब:

$$\frac{MU_x}{P_x} = \frac{MU_y}{P_y}$$

अब, यदि MU_X/P_X और MU_Y/P_Y बराबर नहीं हैं और MU_X/P_X संभव MU_Y/P_Y से अधिक है और $x > y$ है, तो उपभोक्ता वस्तु Y को वस्तु X के लिए प्रतिस्थापित करेगा। इस प्रतिस्थापन के परिणामस्वरूप, वस्तु X की मार्जिनल उपयोगिता कम हो जाएगी और वस्तु Y की मार्जिनल उपयोगिता बढ़ जाएगी। उपभोक्ता वस्तु X की जगह वस्तु Y को तब तक प्रतिस्थापित करना जारी रखेगा जब तक कि MU_X/P_X इक्वैशन MU_y/P_y से बराबर नहीं हो जाता है। जब MU_X/P_X इक्वैशन MU_y/P_y के बराबर हो जाता है, तो उपभोक्ता संतुलन में होगा।

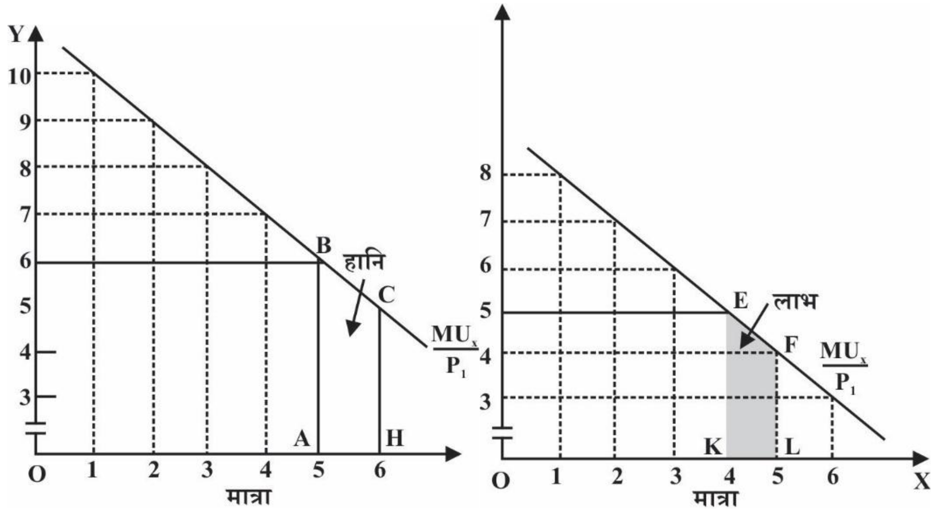

चित्र 2: समान मार्जिनल(सीमांत) उपयोगिता का सिद्धांत और उपभोक्ता का संतुलन (Equi-Marginal Utility PrincipleAnd Consumer's Equilibrium)

लेकिन MU_X/P_X की इक्वैशन MU_Y/P_Y के साथ समानता केवल एक स्तर पर ही नहीं, विभिन्न व्यय स्तरों पर भी प्राप्त की जा सकती है। सवाल यह है कि उपभोक्ता अपनी चाहिए वस्तुओं की खरीद में कितना आगे बढ़ता है। यह उसकी मुद्रा आय की आकार द्वारा निर्धारित होता है। दी गई आय और मुद्रा व्यय के साथ एक रुपया उसके लिए एक निश्चित उपयोगिता रखता है: यह उपयोगिता उसके लिए मुद्रा की मार्जिनल उपयोगिता होती है। क्योंकि मुद्रा आय की घटती मार्जिनल उपयोगिता भी लागू होती है, जितनी अधिक आय होती है, उसके लिए मुद्रा की मार्जिनल उपयोगिता उतनी ही कम होती है। अब, उपभोक्ता वस्तुओं की खरीद में जारी रहेगा जब तक कि प्रत्येक वस्तु पर मुद्रा व्यय की मार्जिनल उपयोगिता उसके लिए मुद्रा की मार्जिनल उपयोगिता के बराबर नहीं हो जाती। इस प्रकार, उपभोक्ता संतुलन में होगा जब निम्नलिखित समीकरण सही हो:

$$MU_m = \frac{MU_x}{P_x} = \frac{MU_y}{P_y}$$

जहाँ MUm मुद्रा व्यय की मार्जिनल उपयोगिता है(अर्थात्, प्रत्येक वस्तु पर खर्च की गई आखिरी रुपये की उपयोगिता)। यदि उपभोक्ता अपनी आय पर ज्यादा से दो वस्तुओं पर खर्च कर रहा है, तो उपरोक्त समीकरण को सभी के लिए सत्यापित किया जाना आवश्यक है। इस प्रकार

$$\frac{MU_x}{P_x} = \frac{MU_y}{P_y} \ldots\ldots\ldots\ldots\ldots. \frac{MU_n}{P_n} = MU_m$$

तालिका 2: वस्तुओं X और Y की मार्जिनल(सीमांत) उपयोगिता(Marginal Utility of Goods XAnd Y)

Units	*MU_x (Utils)*	*MU_y (Utils)*
1	20	24
2	18	21
3	16	18
4	14	15
5	12	9
6	10	3

तालिका 3: पैसे के व्यय की मार्जिनल(सीमांत) उपयोगिता(Marginal Utility of Money Expenditure)

Units	$\frac{MU_x}{P_x}$	$\frac{MU_y}{P_y}$
1	10	8
2	9	7
3	8	6
4	7	5
5	6	3
6	5	1

विचार करें कि एक उपभोक्ता के पास दो वस्तुओं पर खर्च करने के लिए 24 रुपये की मुद्रा आय है। यह दर्ज करने योग्य है कि उपयोगिता को अधिकतम करने के लिए उपभोक्ता वस्तुओं की मार्जिनल उपयोगिता को समान नहीं करेगा क्योंकि दोनों वस्तुओं की मूल्यें अलग हैं। वास्तव में, वह दोनों वस्तुओं पर खर्च किए जाने वाले आखिरी रुपये की मार्जिनल उपयोगिता(अर्थात् मुद्रा व्यय की मार्जिनल उपयोगिता) को समान करेगा। दूसरे शब्दों में, वह अपनी दी गई मुद्रा आय को दो वस्तुओं पर खर्च करते समय MU_x / P_x को इक्वैशन MU_y / P_y से समान करेगा। तालिका 3 की ओर देखकर स्पष्ट हो जाएगा कि MUx / Px जब उपभोक्ता वस्तु X की 6 इकाइयों को खरीदता है, तब 5 यूटिल्स के बराबर होता है, और MU_y / P_y जब वह वस्तु Y की 4 इकाइयों को खरीदता है, तब 5 यूटिल्स के बराबर होता है। इसलिए, उपभोक्ता संतुलन में होता है जब वह वस्तु X की 6 इकाइयाँ और वस्तु Y की 4 इकाइयाँ खरीदता है और(Rs. 2 × 6 + Rs. 3 × 4) = Rs. 24 खर्च करता है, जो उपभोक्ता की दी गई मुद्रा आय के बराबर है। इस प्रकार, संतुलन स्थिति में जहाँ उपभोक्ता अपनी उपयोगिता को अधिकतम करता है,

$$MU_m = \frac{MU_x}{P_x} = \frac{MU_y}{P_y}$$

$$5 = \frac{10}{2} = \frac{15}{3}$$

इस प्रकार, वह दो खरीदी जाने वाली वस्तुओं पर आखिरी रुपये की मार्जिनल उपयोगिता का अनुपात समान होता है, अर्थात् 5 यूटिल्स।

उपभोक्ताओं का संतुलन ग्राफिकल रूप में चित्रित किया जाता है चित्र 7.2 में। क्योंकि वस्तुओं की मार्जिनल उपयोगिता वक्रवृत्तीय होती है, इसलिए MUx / Px और MUy / Py का चित्रित किया जाता है जो भी वक्रवृत्तीय होता है। इस प्रकार, जब उपभोक्ता X की OH इकाइयाँ और Y की OK इकाइयाँ खरीदता है, तब:

$$MU_m = \frac{MU_x}{P_x} = \frac{MU_y}{P_y}$$

1.8. "समान मार्जिनल उपयोगिता" के सिद्धांत की सीमाएँ:(Limitations of the Law of Equi-Marginal Utility)

2. Assumption of Continuous Divisibility: यह सिद्धांत उपभोक्ता के वस्तुओं की निरंतर विभाज्यता की अनुमानित करता है, जो अक्सर वास्तविकता से मेल नहीं खाता है। उदाहरण के लिए, आप आधा एक केक नहीं खरीद सकते हैं।
3. Neglects Interdependence: यह सिद्धांत उपभोक्ता के वस्तुओं के परस्पर संबंधों को नजरअंदाज करता है, जैसे कि एक वस्तु की खरीद किसी दूसरी वस्तु की खरीद पर क्या प्रभाव डालती है।
4. StaticAssumption: यह सिद्धांत आवश्यकताओं और आय के बदलते परिस्थितियों को नजरअंदाज करता है, जो वास्तविकता में विशिष्ट होते हैं।
5. Constant Preferences: समान मार्जिनल उपयोगिता सिद्धांत उपभोक्ता की पसंद में किसी बदलाव की अनुमानित करता है, जो अक्सर वास्तविकता में नहीं होता है।
6. Ignores IncomeAnd Wealth Distribution: यह सिद्धांत आय और धन के वितरण को नजरअंदाज करता है, जिससे

उपभोक्ता की खरीदी क्षमता पर प्रभाव पड़ सकता है।

7. No Consideration of Time: इस सिद्धांत में समय का कोई विचार नहीं होता है, जिससे उपभोक्ता की वित्तीय प्राथमिकताओं को नजरअंदाज किया जा सकता है।

8. Lacks Real-WorldApplication: समान मार्जिनल उपयोगिता का सिद्धांत वास्तविक व्यापार, उत्पादन, और आय दरों को समझने में आसानी से प्रयुक्त नहीं हो सकता है।

इन सीमाओं के बावजूद, "समान मार्जिनल उपयोगिता" का सिद्धांत व्यक्तिगत उपभोक्ता के वस्तुओं की खरीदने के प्रक्रिया को समझने में मदद कर सकता है, लेकिन वास्तविक आर्थिक परिस्थितियों को पूरी तरह से प्रतिष्ठित नहीं कर सकता है।

1.9 डिमांड कर्व और डिमांड का नियम दिमिनिशिंग मार्जिनल उपयोगिता के सिद्धांत पर आधारित होते हैं।(DERIVATION OF DEMAND CURVEAND LAW OF DEMAND)

डिमांड कर्व, या डिमांड का नियम, दिखाता है कि उत्पाद की मूल्य कैसे उपभोक्ताओं की खरीद की मात्रा पर प्रभाव डालती है। अल्फ्रेड मार्शल ने उपभोक्ता के उपयोगिता कार्यों से डिमांड कर्व को प्राप्त किया, मानते थे कि विभिन्न वस्तुओं के उपयोगिता का आपसी आपेक्षिक नहीं होता। इस तरीके में, वे नहीं देखते कि वस्तुएँ एक दूसरे की जगह लेती हैं या एक-दूसरे को पूरक करती हैं। मार्शल की तकनीक यह भी मानती है कि खर्च की मार्जिनल उपयोगिता(MUm) सामान्यतया निरंतर रहती है।

संक्षेप में, डिमांड कर्व मूल्य-मात्रा गतिकी को दिखाता है, जिसे उपयोगिता कार्यों की परिप्रेक्ष्य में प्राप्त किया गया है, विभिन्न वस्तुओं के आपसी उपयोगिता और निरंतर खर्च की मार्जिनल उपयोगिता के साथ।

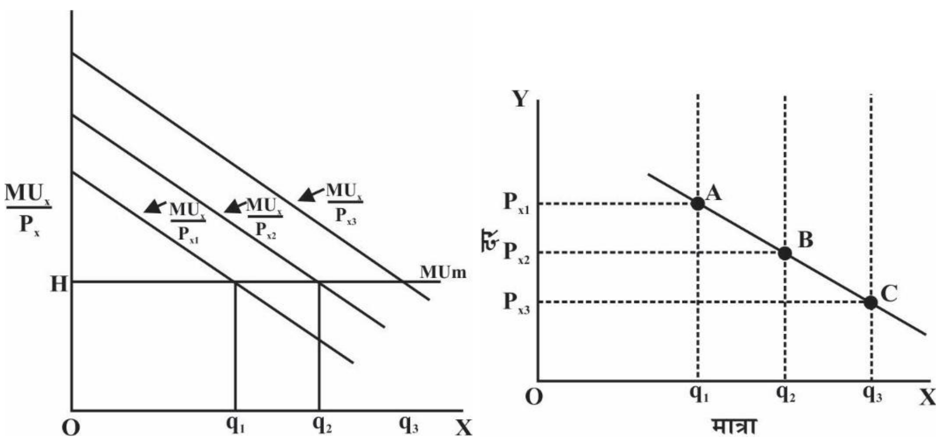

चित्र 3 मांग वक्र की व्युत्पत्ति(Derivation of Demand Curve)

चित्र 3 के ऊपरी भाग में, Y-अक्षरेखा पर MU_x/P_x दिखाया गया है, जबकि X-अक्षरेखा पर वस्तु X की मांग की मात्रा दिखाई देती है। दिए गए उपभोक्ता की निश्चित आय के आधार पर, सामान्य रूप में उपभोक्ता के लिए मुद्रा की मार्जिनल यूटिलिटी OH के बराबर होता है। जब मूल्य P_{x1} हो, तो उपभोक्ता वस्तु X की मात्रा O_{q1} की खरीद कर रहा है, क्योंकि मात्रा O_{q1} की X पर, मार्जिनल यूटिलिटी के मान OH और MU_x/P_{x1} के बराबर होते हैं।

$$\frac{MU_x}{P_{X_1}} = OH$$

अब, जब वस्तु X का मूल्य P_{x2} पर गिरता है, तो MU_x/P_{x2} के नये स्थिति के लिए वक्रीभूत हो जाएगी। इसे सामान्यत: तारीक के साथ मानी की मार्जिनल यूटिलिटी(OH) को समान करने के लिए उपभोक्ता मांग की मात्रा O_{q2} को बढ़ाता है। इस प्रकार, वस्तु X के मूल्य के गिरने से P_{x2}, उपभोक्ता उसकी अधिक मात्रा खरीदता है।

$$\frac{MU_x}{P_{X_2}} = OH$$

मानी की मार्जिनल यूटिलिटी दो स्थितियों में निरंतर रह सकती है। पहले, जब मार्जिनल यूटिलिटी कर्व की पर्याप्तता(मूल्य परिप्रेक्ष्यता) एक होती है, ऐसा होता है कि महसूस किए गए वृद्धि के साथ एक वस्तु की खरीद की जाती है, तो उस पर व्यय की जाती है। दूसरे, मानी की मार्जिनल यूटिलिटी निरंतर रह सकती है छोटे परिवर्तनों के लिए मान वस्तुओं की मूल्य में, वह वस्तुएं जो उपभोक्ता के बजट के नेग्लिज़िबल हिस्से का हिस्सा बनाती हैं।

चित्र 3 के निचले भाग में, वस्तु X के लिए मांग कर्व प्राप्त किया जाता है। इस निचले पैनल में, मूल्य Y-अक्षरेखा पर मापा जाता है। ऊपरी पैनल की तरह ही, X-अक्षरेखा मात्रा को प्रतिष्ठित करता है। जब वस्तु X की कीमत P_{x1} हो, तो उपयुक्त वक्र MU/P वक्र MU_x/P_{x1} होता है जो ऊपरी पैनल में दिखाया गया है। MU_x/P_{x1} के साथ, जैसा पहले स्पष्ट किया गया है, वह वस्तु X की मात्रा O_{q1} खरीदता है। अब, निचले पैनल में यह मात्रा O_{q1} को P_{x1} की कीमत पर मांगी जाती है। जब X की कीमत P_{x1} पर गिरती है, तो MU/P का कर्व नये स्थिति MU_x/P_{x2} की ओर बदल जाता है। MU_x/P_{x2} के साथ, उपभोक्ता वस्तु X की मात्रा O_{q2} खरीदता है। निचले पैनल में मात्रा O_{q2} को P_{x2} की कीमत पर मांगी जाती है। उसी तरह, मूल्य को और बदलकर हम दूसरी कीमतों पर मांगी जाने वाली मात्रा जान सकते हैं। इस प्रकार, बिंदुओंA, B और C को जोड़कर हम मांग कर्व DD प्राप्त करते हैं। मांग कर्व DD नीचे की ओर मुड़ता है जिससे दिखाया जाता है कि मांग कर्व कम होने पर उस वस्तु की मात्रा बढ़ती है।

यह महत्वपूर्ण है कि इस विश्लेषण में उपभोक्ता की वास्तविक आय में वृद्धि के संभवन असर को नहीं लिया गया है जो वस्तु X के मूल्य में गिरावट से हो सकती है। यह छोड़ दिया गया है क्योंकि वास्तविक आय में परिवर्तन को मान्यता दिया जाना है तो मार्जिनल यूटिलिटी ऑफ मुद्रा भी बदलेगा और इससे खरीदारी के निर्णयों पर प्रभाव पड़ सकता है।

1.10 मार्जिनल यूटिलिटी ऑफ मुद्रा(Marginal Utility of Money) का सामान्यत: दो स्थितियों में स्थिर रहता है।

- पहले, जब मार्जिनल यूटिलिटी कर्व की पर्याप्तता(मूल्य की परिप्रेक्ष्य) एकता होती है, ऐसा होता है कि मानिक व्यय पर भी महसूस किए गए वृद्धि के साथ भी कोई वस्तु की खरीद की जाती है, तो उस पर खर्च की जाती है।
- दूसरा, मार्जिनल यूटिलिटी ऑफ मुद्रा अपरिमित व्यवसायिक वस्तुओं में मात्रिक मूल्य बदलने पर अनुमानित रूप में स्थिर रहता है, यानी वे वस्तुएं जो उपभोक्ता के बजट का तुच्छ हिस्सा बनाती हैं। इन तरीकों में, महसूस होने वाले वास्तविक आय में वृद्धि का प्रभाव अनदृश्य होता है और इसलिए इसे नजरअंदाज किया जा सकता है।

1.11 मार्शल के कार्डिनल यूटिलिटी विश्लेषण की महत्वपूर्ण मूल्यांकन (CRITICAL EVALUATION OF MARSHALL'S CARDINAL UTILITYANALYSIS)

हमने ऊपर पढ़ा है, उसे विभिन्न कारणों पर आलोचना की गई है। कार्डिनल यूटिलिटी विश्लेषण की निम्नलिखित कमियाँ और दुर्बलताएँ पर प्रकाश डाला गया है:

1) **कार्डिनल यूटिलिटी की अवास्तविक संभावना(The Unrealistic Notion of Cardinal Measurability):** कार्डिनल यूटिलिटी विश्लेषण का एक प्रमुख आलोचना यह है कि यह अनुमान पर आधारित है कि यूटिलिटी को पूर्णत: नापी जा सकती है, जिसे 1, 2, 3 आदि कार्डिनल संख्याओं के रूप में व्यक्त किया जा सकता है। हालांकि, इस विचार को वास्तविक जीवन में लागू करते समय इसे महत्वपूर्ण चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। यूटिलिटी मूल रूप से एक अध्यात्मिक और मनोवैज्ञानिक अनुभव होता है, जिसके कारण इसे सटीक संख्यात्मक मूल्यों में निर्धारित करना कठिन होता है। व्यावासिक परिस्थितियों में, उपभोक्ताओं केवल विभिन्न वस्तुओं या उनके संयोजनों से प्राप्त संतोष के स्तरों की तुलना कर सकते हैं। अन्य शब्दों में, उपभोक्ता केवल यह निर्धारित कर सकते हैं कि क्या एक वस्तु या संयोजन किसी अन्य के समान, कम या अधिक संतोष प्रदान करता है, लेकिन वे यूटिलिटी को संख्यात्मक या कार्डिनल तरीके से सटीक नहीं माप सकते। अनेक अर्थशास्त्रियों, जैसे कि जे.आर. हिक्स, यह दावा करते हैं कि यूटिलिटी की कार्डिनल मापनीयता का अनुमान अवास्तविक है और इसलिए इसे छोड़ देना चाहिए।
2) **Fallacy of Independent Utilities(स्वतंत्र उपयोगिताओं की भ्रांति):** उपयोगिता विश्लेषण की एक और आलोचना

स्वतंत्र उपयोगिताओं की धारणा की है। यह धारणा यह सुझाती है कि एक विशिष्ट वस्तु से उपभोक्ता को प्राप्त होने वाली उपयोगिता केवल उस वस्तु की मात्रा पर निर्भर होती है, और उसे अन्य वस्तुओं की खपत के असर से प्रभावित नहीं होती। यह सिद्ध करने का प्रयास करता है कि व्यक्ति को खरीदी गई सभी वस्तुओं से प्राप्त होने वाली कुल उपयोगिता केवल उनकी विशिष्ट उपयोगिताओं के अलग योग है, अधिनियमित उपयोगिता समूहों का यह मानना है।

हालांकि, यह विचार वास्तविक जीवन में दोषपूर्ण है।। वास्तविक उपयोगिता और संतोष एक वस्तु से अक्सर अन्य वस्तुओं के उपलब्धता और संयोजन पर निर्भर करते हैं। उदाहरण स्वरूप, एक कलम से प्राप्त होने वाली उपयोगिता कलम की उपलब्धता पर प्रभावित होती है। इसी तरह, चाय के साथ कॉफी की उपलब्धता चाय से प्राप्त होने वाली उपयोगिता पर प्रभाव डाल सकती है। वास्तव में, वस्तुएँ आपस में परिवर्तकों या पूरकों के रूप में कार्य कर सकती हैं, जो उपयोगिता विश्लेषण द्वारा माना गया पूरी तरह से स्वतंत्र उपयोगिताओं की धारणा को चुनौती देता है। यह इस मानक की दृढ़ता को खत्म करने के रूप में काम करता है कि जिसे जेवन्स, मेंगर, वालरास और मार्शल जैसे न्यू-क्लासिकल अर्थशास्त्रियों द्वारा माना गया है कि उपयोगिता समूह अधिनियमित हैं।

3) **Assumption of constant marginal utility of money is not valid.** कार्डिनल उपयोगिता विश्लेषण में मानवीय उपयोगिता की स्थिर मार्जिनल मुद्रा की मानना अयथार्थ है। वास्तविकता में, जब उपभोक्ता का खर्च बदलता है, तो उनकी मार्जिनल मुद्रा की मान भी वास्तविक आय में परिवर्तनों के कारण बदल जाती है। माल की मूल्यों में परिवर्तन भी वास्तविक आय को प्रभावित करते हैं और मांग को बदलते हैं। इन प्रभावों को अनदेखा करने से ऐसी बड़ी गलतियाँ होती हैं, जैसे कि मार्शल को मूल्य परिवर्तनों के पूरे प्रभाव को समझने में असमर्थता, उसके मांग सिद्धांत की मान्यता, और गिफेन पैराडॉक्स की व्याख्या की सम्पूर्ण प्रभावीता की समझ में भूल।

4) **Marshallian demand therem cannot genuinely be derived except inA one commodity case** मार्शलियन मांग का सिद्धांत वास्तव में केवल एक माल वस्तु की स्थिति में ही सत्यप्रमाणीक किया जा सकता है: J.R. हिक्स और तपस मजूमदार ने मार्शलियन उपयोगिता विश्लेषण का आलंब है कि "मार्शलियन मांग सिद्धांत को मार्जिनल यूटिलिटी की परिमाणिका की मान्यता के बिना एक-माल वस्तु मॉडल में सत्यप्रमाणीक रूप से प्राप्त किया नहीं जा सकता है।" अन्य शब्दों में, मार्शल का मांग सिद्धांत और मानी की स्थिर मार्जिनल उपयोगिता एक-माल वस्तु की स्थिति में ही मेल खाते हैं, बिना किसी प्रकार की मुखर्जीत मार्जिनल यूटिलिटी की मान्यता को विरोधित किए। मार्शलियन मांग सिद्धांत को मान्यता से प्राप्त किया जा सकता है। संक्षिप्त में कहें तो, मजूमदार के शब्दों में, "इस प्रकार, एक सख्त एक-माल वस्तु विश्व के अलावा, मुद्रा की स्थिर मार्जिनल उपयोगिता की मान्यता मार्शलियन मांग सिद्धांत के साथ मेल नहीं खाती है।"

5) **कार्डिनल उपयोगिता विश्लेषण मूल्य प्रभाव को प्रतिस्थानन और आय प्रभाव में नहीं विभाजित करता है:** कार्डिनल उपयोगिता विश्लेषण की तीसरी अवधिकता यह है कि यह मूल्य परिवर्तन के आय प्रभाव और प्रतिस्थानन प्रभाव के बीच भिन्नता नहीं करता है(does not distinguish between the income effectAnd the substitutional effect of the price change)। हम जानते हैं कि जब किसी वस्तु की मूल्य गिरती है, तो उपभोक्ता पहले की तुलना में बेहतर हो जाता है, यानी, किसी वस्तु की मूल्य में गिरावट उपभोक्ता की वास्तविक आय में वृद्धि लाती है। अन्य शब्दों में, अगर मूल्य में गिरावट के साथ उपभोक्ता पहले की तरह ही वस्तु की समान मात्रा खरीदता है, तो उसके पास कुछ आय रह जाएगी। इस आय से उसे इस वस्तु की और अन्य वस्तुओं की अधिक मात्रा खरीदने की स्थिति में होगी। यह एक वस्तु की मांग पर मूल्य में गिरावट का आय प्रभाव है। साथ ही, जब किसी वस्तु की मूल्य गिरती है, तो वह अन्य वस्तुओं की तुलना में सस्ती हो जाती है और इसके परिणामस्वरूप उपभोक्ता को उस वस्तु की अन्य वस्तुओं के स्थान पर प्रतिस्थान करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। इसका परिणाम होता है कि उस वस्तु की मांग में वृद्धि होती है। यह मूल्य परिवर्तन की प्रतिस्थान प्रभाव है जिसका परिणाम वस्तु की मांग में होता है।

6) **मार्शल गिफेन पैराडॉक्स की व्याख्या नहीं कर सके**: प्रतिस्थान और आय प्रभाव के संयोजन के रूप में मूल्य प्रभाव की दृष्टि में अपनायी जाने वाली और मूल्य परिवर्तन के आय प्रभाव को अनदेखा करके, मार्शल गिफेन पैराडॉक्स की व्याख्या नहीं कर सके। उन्होंने इसे केवल अपने मांग के कानून की एक छूट के रूप में देखा।

7) मार्जिनल उपयोगिता विश्लेषण को यह आलोचना की जाती है कि यह ओर्डिनल उपयोगिता विश्लेषण(इंडिफरेंस कर्व तकनीक) की तुलना में अधिक और अधिक कठिन धारणाएँ लेता है। मार्जिनल उपयोगिता विश्लेषण, अन्यों में, उपयोगिता को कार्डिनल रूप में मापने और मनी की मार्जिनल उपयोगिता को स्थिर मानने का अनुमान लगाता है। उसके विपरीत, हिक्स-एलन की

इंडिफरेंस कर्व प्राप्ति प्रतिष्ठानों की आवश्यकता नहीं होती है और फिर भी यह मार्जिनल उपयोगिता विश्लेषण के सभी सिद्धांतों को निष्कर्षित करने में सक्षम होता है, साथ ही एक और अधिक सामान्य मांग का सिद्धांत निष्कर्षित करता है। अन्य शब्दों में, इंडिफरेंस कर्व विश्लेषण न केवल उतना ही समझाता है जितना मार्जिनल उपयोगिता विश्लेषण करता है, बल्कि उससे आगे बढ़ता है और उसमें कम और कम कठिन धारणाएँ होती हैं। ओर्डिनल उपयोगिता पर आधारित और मानी की मार्जिनल उपयोगिता को स्थिर मानने की आवश्यकता नहीं होने के कारण, इंडिफरेंस कर्व तकनीक उपभोक्ता संतुलन और एक से अधिक सामान्यों की मांग के शर्त को स्थापित करने में सक्षम होती है।

1.12 बोध प्रश्न

1. सीमांत उपयोगिता को कम करने के नियम को स्पष्ट कीजिए और समझाइए? मांग का नियम इससे कैसे प्राप्त होता है?

2. उपभोक्ता के संतुलन से क्या तात्पर्य है? उपभोक्ता अपनी संतुलन स्थिति तक कैसे पहुंचता है

कार्डिनल उपयोगिता विश्लेषण में?

3. सम-सीमांत उपयोगिता के नियम को स्पष्ट कीजिए? यह उपभोक्ता के संतुलन की व्याख्या कैसे करता है?

4. आपको उपभोक्ता द्वारा प्राप्त वस्तुओं X और Y की निम्नलिखित सीमांत उपयोगिताएँ दी जाती हैं। देखते हुए यदि X का मूल्य = 5 रुपये, Y का मूल्य = 2 रुपये और आय = 22 रुपये है, तो इष्टतम ज्ञात कीजिये। माल का संयोजन।

इकाई 2 : हिक्स का तटस्थता वक विश्लेषण Hicks Indifference curveAnalysis

इकाई की रूपरेखा

2.0. उद्देश्य(Aim)

2.1. प्रस्तावना(Introduction)

2.2. उपभोक्ता प्राथमिकताएं(CONSUMER PREFERENCES)

2.3. उपभोक्ता वरीयताओं के बारे में धारणाएं(AssumptionsAbout Consumer Preferences)

2.4. उदासीनता वक्र दृष्टिकोण (INDIFFERENCE CURVEAPPROACH)

2.5. उदासीनता वक्र क्या हैं? (WHATARE INDIFFERENCE CURVES ?)

2.6. प्रतिस्थापन की सीमांत दर(MARGINAL RATE OF SUBSTITUTION)

2.7. X के लिए Y की परिपर्ण दर अनुशासन का सिद्धांत Principle of Diminishing Marginal Rate of Substitution

2.8. PROPERTIES OF INDIFFERENCE CURVES उदासीनता कर्वों की गुणधर्म

2.9. पूर्ण प्रतिस्थापकों और पूर्ण सहयोगियों की उदासीनता की दीर्घिकाएँ Indifference curves of Perfect SubstitutesAnd Perfect Complements

2.10. उदासीनता के कुछ गैर-सामान्य मामले: माल, बैड्स और न्यूटर्स SOME NON-NORMAL CASES OF INDIFFERENCE CURVES : GOODS, BADSAND NEUTERS

2.11. बजट लाइन या बजट की कमी BUDGET LINE OR BUDGET CONSTRAINT

2.12. आय में परिवर्तन और बजट लाइन में बदलाव Changes in IncomeAnd Shifts in Budget line

2.13. उपभोक्ता का संतुलन: संतुष्टि को अधिकतम करना CONSUMER’S EQUILIBRIUM : MAXIMISING SATISFACTION

2.14. उपभोक्ता का संतुलन : कॉर्नर समाधान CONSUMER’S EQUILIBRIUM : CORNER SOLUTIONS

2.15. उत्तल उदासीनता वक्र और कोना संतुलन Convex Indifference CurvesAnd Corner Equilibrium

2.16. कोना संतुलन और अवतल उदासीनता वक्र Corner EquilibriumAnd Concave Indifference Curves

2.17. समाप्ति CONCLUSION

2.18. पूरी तरह से उपयुक्त प्रतिस्थापकों और पूरी तरह से उपयुक्त पूरकों के मामले में कोने का समाधान Corner Solution in Case of Perfect SubstitutesAnd Perfect Complements

2.19. बोध प्रश्न

2.0. उद्देश्य(Aim)

इस इकाई को पढ़ने क बाद आप सीखेंगे :

"हिक्स का तटस्थता वक विश्लेषण" एक विशेष चैप्टर है जिसमें हिक्स के आर्थिक विश्लेषण के माध्यम से तटस्थता के महत्वपूर्ण सिद्धांतों की व्याख्या की जाती है। यह एक आर्थिक सिद्धांत है जिसे जॉन हिक्स ने विकसित किया था, और इसका मुख्य उद्देश्य आर्थिक बदलावों के परिणामस्वरूप समाज में तटस्थता की प्रतिक्रिया का मूल्यांकन करना है।

इस चैप्टर के माध्यम से आप निम्नलिखित मुख्य बिंदुओं की समझ प्राप्त करेंगे:

- हिक्स का तटस्थता वक का परिचय: आपको हिक्स के तटस्थता वक के आरंभिक सिद्धांतों की परिचय मिलेगी, जैसे कि तटस्थता के प्रतिक्रियात्मक पहलु, स्थिरता के संबंध में।

- तटस्थता के प्रभावों का विश्लेषण: आपको यह सिखाया जाएगा कि हिक्स का तटस्थता वक कैसे आर्थिक पैमाने पर तटस्थता के प्रभावों का विश्लेषण करता है, जैसे कि आय, मूल्यों की परिवर्तन, और आर्थिक गतिविधियों में बदलाव।

- अद्यतन तटस्थता: आपको यह समझाया जाएगा कि कैसे हिक्स के तटस्थता वक का आद्यातन किया जा सकता है ताकि नई स्थितियों और परिस्थितियों में उसका अनुपालन किया जा सके।

- आर्थिक नीतियों के प्रति तटस्थता का प्रभाव: आपको यह दिखाया जाएगा कि हिक्स के तटस्थता वक कैसे आर्थिक नीतियों के प्रति तटस्थता के प्रभाव को मापता है और कैसे विभिन्न नीतिक्रमों का मूल्यांकन करता है।

- आर्थिक सुधारों के प्रति सुसंगतता: आपको यह सिखाया जाएगा कि कैसे हिक्स के तटस्थता वक के माध्यम से आर्थिक सुधारों के प्रति सुसंगतता का मूल्यांकन किया जा सकता है और कैसे विभिन्न संभावित परिणामों का अनुमान लगाया जा सकता है।

- इस प्रकार, "हिक्स का तटस्थता वक विश्लेषण" चैप्टर के माध्यम से आप हिक्स के तटस्थता वक के महत्वपूर्ण सिद्धांतों की समझ प्राप्त करेंगे और उनके आर्थिक विश्लेषण के माध्यम से आर्थिक प्रणाली में होने वाले परिवर्तनों की समझ प्राप्त करेंगे।

2.1. प्रस्तावना(Introduction)

इस अध्याय में, हम उन सिद्धांतों की खोज करेंगे जिनका उपभोक्ता के उत्पाद पसंद करने में निर्णय लेने में परिणाम होता है। उपभोक्ता चयन के सिद्धांत से हमें पूर्वानुमान करने की क्षमता मिलती है कि उपभोक्ता मूल्यों, आय, पसंद और प्राथमिकताओं, संबंधित वस्तुओं की मूल्यों और विज्ञापन खर्च की परिवर्तनों का प्रतिक्रिया कैसे करेंगे। यह समझने से कंपनी के प्रबंधक को बेहतर तरीके से समझने में मदद मिलती है कि कंपनी के उत्पाद की मूल्य, बिक्री बढ़ाने के लिए विज्ञापन खर्च और उपभोक्ता की प्रतिक्रियाएँ जैसे परिवर्तनों में उसके राजस्व में परिणाम होगा, जिन्हें कंट्रोल किया जा सकता है। उदाहरण की तरह, उपभोक्ता की आय, प्रतिस्थितियों की मूल्यों, और उनके प्रमोशन की रणनीतियों के परिवर्तनों के प्रति उपभोक्ता की प्रतिक्रियाओं को कंपनी के प्रबंधक को समझने में मदद मिलती है। इस प्रमाणन में, उपभोक्ता के लिए उपभोक्ता की स्थिति की प्राथमिकता होती है, जिसका मतलब होता है कि उपभोक्ता विभिन्न वस्तुओं में अपनी सीमित आय को ऐसे विभाजित करता है कि प्रति रुपये की मार्जिनल उपयोगिता सभी वस्तुओं के लिए समान हो।

यहाँ तक कि किसी कंप्यूटर कंपनी के प्रबंधक को कंपनी के उत्पाद की मूल्य, बिक्री की प्रवृत्तियों, विज्ञापन खर्च, आदि में होने वाले परिवर्तनों के कारण कंपनी के राजस्व में परिणाम को अच्छे से समझने में मदद मिलती है। इसके साथ ही, इस अध्याय में हम उपभोक्ता की मांग के लिए इन्डिफरेंस कर्व विश्लेषण की व्यापक सिद्धांत पर विचार करेंगे। इंडिफरेंस कर्व की तकनीक को पहले एक क्लासिकी अर्थशास्त्री एजवर्थ ने आविष्कार किया था, लेकिन उन्होंने उसे केवल दिखाने के लिए प्रयुक्त किया था कि दो व्यक्तियों के बीच विनिमय की संभावनाएँ हैं, और उपभोक्ता की मांग को समझाने के लिए नहीं। बाद में, इंग्लिश अर्थशास्त्री जे.आर. हिक्स और आर.जी.डी. एलन ने मार्शल के कार्डिनल उपयोगिता विश्लेषण पर आलोचना की, जो कार्डिनल उपयोगिता मापन पर आधारित था, और व्यक्तिगत उपयोगिता के विचार पर निर्धारित उपयोगिता के सिद्धांत पर आधारित इंडिफरेंस कर्व प्रासंगिक करने के लिए प्रस्तुत किया। 1939 में, हिक्स ने अपनी पुस्तक "मूल्य और पूँजी"(‘ValueAnd Capital ’) में उपभोक्ता की मांग के इंडिफरेंस कर्व सिद्धांत को विस्तारित किया, मूल पेपर की रूपरेखा को कुछ हद तक संशोधित किया।

2.2 उपभोक्ता प्राथमिकताएं(CONSUMER PREFERENCES)

उपभोक्ता व्यवहार का अध्ययन उस उपभोक्ता के निर्णयों के आसपास के बारे में है जो विभिन्न वस्तुओं या वस्तुओं के संयोजनों में अपनी बजट सीमा के माध्यम से चुनता है। किसी विशिष्ट वस्तु के लिए मांग की रेखा उन विकल्पों से प्राप्त होती है जो उपभोक्ताओं को मांग की मात्राएँ प्रदान करती हैं, उनकी मूल्यों को ध्यान में रखकर। अर्थशास्त्र में, माना जाता है कि उपभोक्ताएँ अपनी चाहतों की पूर्ति के लिए वस्तुओं या वस्तुओं के संयोजन का चयन विवेकपूर्ण रूप में करती हैं। उपभोक्ता के व्यवहार की स्पष्टीकरण के लिए अर्थशास्त्रियों का कहना है कि उपभोक्ताओं के पास एक पसंदों का सेट होता है जो उन्हें उनकी खपत के लिए वस्तुओं में चयन करने में मार्गदर्शन करता है। इन पसंदों

में व्यक्तिगत विभिन्नताएँ काफी अधिक होती हैं। उदाहरण के लिए, कुछ व्यक्ति सफेद कमीज़ों को पसंद कर सकते हैं, जबकि दूसरे रंगीन कमीज़ों की ओर जा सकते हैं। उसी तरह, किसी को सेब पसंद हो सकते हैं, तो किसी को केले पसंद हो सकते हैं। हालांकि वास्तविक जीवन में उपभोक्ता के विकल्प कई वस्तुओं को शामिल करते हैं, हम अक्सर दो-आयामी डायग्राम का उपयोग करके विश्लेषण को दो वस्तुओं पर केंद्रित करते हैं।

जे.आर. हिक्स(J.R. Hicks) ने अपने पुनर्विचारित मांग सिद्धांत में कमजोर प्राथमिकता की अवधारणा को शामिल किया, जो तार्किक क्रमबद्धता पर आधारित है। उसके कमजोर-क्रमबद्ध प्राथमिकता की अध्ययन में हिक्स की मानना है कि जब कोई व्यक्ति दो वस्तुओं की एक संयोजन को उन विभिन्न संयोजनों में से चुनता है, तो इसका मतलब होता है कि वह या तो चयनित संयोजन को सभी अन्य संभावित संयोजनों पर प्राथमिकता देता है या वह चुने गए संयोजन के साथ कुछ अन्य संभावित संयोजनों के बीच उदासीनता बनाता है। इस प्रकार, हिक्स के पुनर्विचारित मांग सिद्धांत में, चयनित संयोजन को किसी भी दो वस्तुओं के संभावित संयोजनों के साथ सख्त विद्रोह की संभावना को बाहर नहीं किया जाता है, जो उपभोक्ता के पास मौजूद हो सकते हैं, लेकिन उन्होंने चयन नहीं किया है। सारांश स्वरूप, कमजोर प्राथमिकता का मतलब है कि जब उपभोक्ता किसी संभावित विकल्पों में से वस्तुओं के एक संयोजन का चयन करता है, तो यह जरूरी नहीं है कि वह विकल्पों में से चुने गए संयोजन को विकल्पों के साथ सकारात्मक रूप से प्राथमिक पसंद करता हो; कमजोर प्राथमिकता की अपेक्षा से, उपभोक्ता का कहना है कि उसके द्वारा चुने गए संयोजन और कुछ अन्य उपलब्ध विकल्पों के बीच उसकी उदासीनता के बीच कोई समानता हो सकती है।

2.3. उपभोक्ता वरीयताओं के बारे में धारणाएं(AssumptionsAbout Consumer Preferences)

1) ***पूर्णता(Completeness)*** : उपभोक्त सामान संयोजनों की रैंकिंग कर सकते हैं, जिससे उनकी प्राथमिकताओं का स्पष्ट चयन होता है या उनके बीच उदासीनता, जो उनके चयन की स्थिति का स्पष्ट आदेश होता है।

2) ***परस्परता (Transitivity)*** : यदि कोई उपभोक्ता संयोजनA को संयोजन B से प्राथमिकता देता है और संयोजन B को संयोजन C से प्राथमिकता देता है, तो वह संयोजनA को संयोजन C से प्राथमिकता देगा, जिससे प्राथमिकता की स्थितिकरण सुनिश्चित होता है।

3) ***अधिक बेहतर है (More is Better):*** अन्य कारकों को स्थिर रखते हुए, उपभोक्ताएँ एक वस्तु की अधिक मात्रा को कम मात्रा से प्राथमिकता देती हैं, मानव पहले से ही पूर्ण संतोषित नहीं है मानी जाती है।

(नोट: "बुराइयाँ," जैसे प्रदूषण या जीवाणु, कम मात्रा पर प्राथमिकता है, यहाँ उपयोग की बदलती सामान्य अर्थशास्त्रीय सिद्धांत प्राथमिकताओं के विकल्पों पर ध्यान केंद्रित करता है।)

2.4. उदासीनता वक्र दृष्टिकोण (INDIFFERENCE CURVEAPPROACH)

उदासीनता रेखा दृष्टिकोण का प्रस्तावना कार्डिनल उपयोगिता विश्लेषण को आवश्यकता पड़ने वाले डिमांड के विश्लेषण का बदलाव करने के लिए विकसित की गई है, जिस पर पिछले अध्याय में चर्चा की गई थी। उदासीनता रेखा प्रणाली का उद्देश्य कार्डिनल उपयोगिता विश्लेषण से निष्कर्षित सभी नियम और कानून निष्कर्षित करना है जो उपयोगिता विश्लेषण से निष्कर्षित किए जा सकते हैं। इसी बीच, नई प्रणाली के आविष्कारक और समर्थक यह दावा करते हैं कि उनका विश्लेषण अधिक कमजोर और सजीव मान्यानुशासनों पर आधारित है। हालांकि, उदासीनता रेखा विश्लेषण ने मार्शल के कार्डिनल उपयोगिता विश्लेषण की कुछ अनुमानें बनाए रखी हैं। इस प्रकार, उदासीनता रेखा प्रणाली, पुराने कार्डिनल उपयोगिता प्रणाली की तरह, मानव उपभोक्ता को 'पूरी जानकारी' की प्राप्त है जो उसे उसके पास होने वाले आर्थिक पर्यावरण के सभी प्रासंगिक पहलुओं के बारे में मिलती है। उदाहरण स्वरूप, सामानों की मूल्य, उनके बाजार, उनसे प्राप्त संतोष आदि। इसके अतिरिक्त, मानव उपभोक्ता का 'सततता' का अनुमान भी हिक्स-एलन उदासीनता रेखा प्रणाली में बनाए रखा गया है। सततता अनुमान का मतलब है कि उपभोक्ता सभी संभावित संयोजनों को संतोष के द्वारा आदान-प्रदान करने की क्षमता रखते हैं।

➤ **क्रमिक उपयोगिता Ordinal utility**

उदासीनता रेखा विश्लेषण का मौलिक दृष्टिकोण यह है कि इसने कार्डिनल उपयोगिता की धारणा को त्याग दिया है और इसके स्थान पर क्रमिक उपयोगिता की धारणा को अपनाया है। उदासीनता रेखा सिद्धांत के प्रायोगिकों के अनुसार, उपयोगिता एक मानसिक उपकरण है और

इसलिए इसे मात्रात्मक कार्डिनल शब्दों में मापा नहीं जा सकता है। अन्य शब्दों में, भौतिकी सुख की भावना मापनीय नहीं है क्योंकि यह एक मानसिक अनुभूति है। उदासीनता सिद्धांत के प्रस्तावकों के अनुसार, कार्डिनल उपयोगिता की धारणा इसलिए अस्थायी है। दूसरी ओर, उनके अनुसार, क्रमिक उपयोगिता की अनुमानना काफी विवेकपूर्ण और यथार्थिक है। क्रमिक उपयोगिता यह इम्प्लाइ करती है कि उपभोक्ता केवल 'संतोष के विभिन्न स्तरों की तुलना करने में सक्षम है। अन्य शब्दों में, क्रमिक उपयोगिता के सिद्धांत के अनुसार, यदि उपभोक्ता को यह सूचित करने में सक्षम नहीं हो सकता कि वह कोमोडिटीज़ से या उनके किसी संयोजन से प्राप्त उपयोगिताओं की सटीक मात्रा क्या है, तो वह समझ सकता है कि क्या संतोष एक अच्छी या संयोजन से प्राप्त होने वाला है, या किसी अन्य से कम या अधिक होता है।

- **उदासीनता रेखा दृष्टिकोणThe Indifference lineApproach: :** यह तरीका कार्डिनल उपयोगिता को क्रमिक उपयोगिता से बदल देता है। इसमें कहा गया है कि उपयोगिता व्यक्तिगत होती है और मात्रात्मक रूप में मापा नहीं जा सकता। उपभोक्ताओं को पसंद की तुलना केवल गुणात्मक रूप में कर सकते हैं, मात्रात्मक अंतर को माप नहीं सकते। वे पसंद के लिए संयोजनों की तुलना कर सकते हैं, संतोष स्तरों में यथार्थ भिन्नताओं को माप नहीं सकते। यह तरीका तर्कसंगत चयन, संघटन, और क्रमिक उपयोगिता पर आधारित है।

2.5. उदासीनता वक्र क्या हैं? (WHATARE INDIFFERENCE CURVES ?)

उपयोगिता विश्लेषण की Hicks-Allen क्रमिक उपयोगिता विश्लेषण की मूल उपकरण होती है उदासीनता रेखा, जो सामग्री के समान संतोष प्रदान करने वाले सभी संयोजनों को प्रतिनिधित्व करती है। उदाहरण के लिए, एक उपभोक्ता जो भी संयोजनों में उपलब्ध होते हैं, उनमें उदासीन रहेगा। दूसरे शब्दों में, एक उपभोक्ता को उपयोगिता अनुसूचियों के साथ आना शुरू करने के लिए बेहतर होगा। स्केल की तुलना में। सारणी 4 में, दो उदासीनता अनुसूचियाँ दी गई हैं।

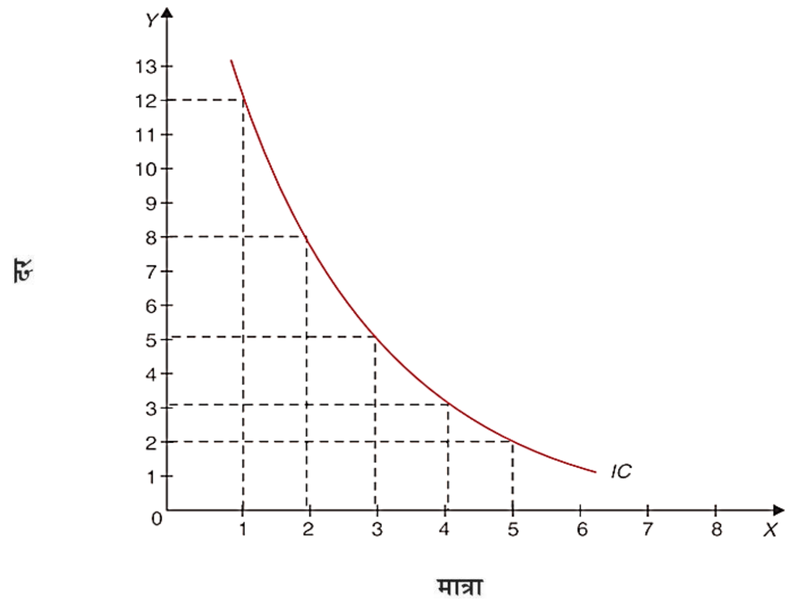

Fig. 4. अनधिमान वक्र

प्रत्येकअनुसूची में प्रत्येक संयोजन में वस्त्र X और Y की मात्राएँ इतनी होती हैं कि उपभोक्ता के बीच प्रत्येक संयोजनों में उदासीनता होती है। प्रारंभ में, अपने स्तर को समान रखते हुए, उपभोक्ता को 1 यूनिट X और 12 यूनिट Y की आवश्यकता होती है। अब, उपभोक्ता से पूछा जाता है कि वह अतिरिक्त X की एक यूनिट के लाभ के लिए कितने Y को छोड़ने के लिए तैयार है ताकि उसका संतोष स्तर एक ही बने रहे। यदि 1 यूनिट X का लाभ उसे 4 यूनिट Y की हानि का पूरा करता है, तो अगले संयोजन 2X + 8Y उसे प्रारंभिक संयोजन(1X + 12Y) की तरह संतोष प्रदान करेगा। इसी तरह, उपभोक्ता से आगे किसे पूछकर, वह समय के साथ अपने X स्टॉक में वृद्धि के लिए कितना Y त्यागने के लिए तैयार होगा, ताकि उसका संतोष स्तर अबलिक नहीं होता, हमें संयोजन 3X + 5Y, 4X + 3Y, और 5X + 2Y प्राप्त होते हैं, जो हर एक संयोजन(1X + 12Y या 2X + 8Y) की तरह समान संतोष प्रदान करते हैं। क्योंकि उसका संतोष समान है चाहे किसी भी संयोजन को उसे प्रस्तुत किया जाए, उसे स्थितियों के संयोजनों में उदासीनता होगी।

Table. 4. Two Indifference Schedule

I		II	
Good X	Good Y	Good X	Good Y
1	12	2	14
2	8	3	10
3	5	4	7
4	3	5	5
5	2	6	4

अनुसूची II में, प्रारंभ में उपभोक्ता के पास 2 यूनिट X और 14 यूनिट Y है। उपभोक्ता से पूछकर, उसके स्टॉक में X के लगातार जोड़ने के लिए वह कितने Y को छोड़ने के लिए तैयार होगा ताकि उसका संतोष प्रारंभिक संयोजन(2X + 14Y) से बराबर रहे, हमें संयोजन 3X + 10Y, 4X + 7Y, 5X + 5Y और 6X+ 4Y प्राप्त होते हैं। इस तरह, अनुसूची II में प्रत्येक संयोजन उपभोक्ता के लिए बराबर रूप से इष्टतम होगा और उसे उनमें उदासीनता होगी। लेकिन ध्यान देना चाहिए कि उपभोक्ता किसी भी अनुसूची II के संयोजन को किसी भी अनुसूची I के संयोजन से पसंद करेगा। अर्थात्, किसी भी अनुसूची II के संयोजन में किसी भी अनुसूची I के संयोजन से उसको अधिक संतोष मिलेगा।

उपभोक्ता किसी वस्त्र की अधिक मात्रा को कम मात्रा की प्राथमिकता देता है क्योंकि इससे उसके संतोष में वृद्धि होती है(अन्य शब्दों में, अधिक मात्रा का उपभोक्ता को मात्रा से अधिक संतोष मिलता है), अन्य वस्त्रों की मात्रा उसके साथ यूँ ही रहती है। अनुसूची II में प्रारंभिक संयोजन में दोनों वस्त्रों की अधिक मात्रा होती है जिससे सांतोष अधिक होता है तुलना में अनुसूची I के प्रारंभिक संयोजन से। इस प्रकार, अनुसूची II के किसी भी संयोजन को अनुसूची I के किसी भी संयोजन से अधिक पसंद किया जाएगा। अब, हम विभिन्न संयोजनों को एक ग्राफ पेपर पर उत्क्रिय संख्याओं में प्लॉट करके उदासीनता अनुसूचियों को उदासीनता वक्र बना सकते हैं। चित्र 8.1 में एक उदासीनता वक्र आईसी को उदाहरण संयोजनों की विभिन्न संयोजनों को प्लॉट करके बनाया गया है। वस्त्र X की मात्रा को आयताकार धुरी पर मापा जाता है, और वस्त्र Y की मात्रा को लंबी धुरी पर मापा जाता है। एक उदासीनता संरचना में, उदासीनता वक्र पर स्थित संयोजन भी उपभोक्ता के लिए बराबर रूप से प्रासंगिक होते हैं, अर्थात्, उसे वही संतोष मिलता है। उदासीनता की मुलायमता और नियमितता का अर्थ है कि वस्त्र ने इसे पूरी तरह से विभाज्य माना जाता है। यदि अनुसूची II भी उदासीनता वक्र में रूपांतरित होती है, तो यह उदासीनता वक्र अनुसूची I के उदासीनता वक्र IC से ऊपर स्थित होगी।

उच्च उदासीनता वक्र अधिक संतोष का प्रतिनिधित्व करते हैं। दाएं और ऊपर की ओर एक वक्र दूसरे से उच्च संतोष की सूचना देती है। यद्यपि समान संतोषप्रद संयोजनों को दिखाते हुए, उदासीनता वक्र संतोष की मात्रा को मापनीयता की वजह से नहीं बताते हैं क्योंकि यह आदिक सुविधा की प्रकृति के कारण।

गणितीय रूप से, एक व्यक्ति के बहुताव वक्र द्वारा प्रतिनिधित उपयोगिता फ़ंक्शन दो वस्तुओं X और Y के मामले में लिखा जा सकता है:

$$U(x, y) = A$$

जहां 'a' कोई स्थिरांक है, अनुक्रमिक दृष्टि में, उपयोगिता फ़ंक्शन, U(x, y) की वक्र भी निम्नलिखित रूप ले सकती है:

$$U(x, y) = xy = A$$

उपरोक्त सुख-कारीता फ़ंक्शन U(x, y) = x2 y2 के अनुसार उदासीनता वक्र बांधर और नीचे की ओर होगी। विभिन्न और उच्च मूल्यों के लिए 'a' के सफलतापूर्वक उदासीनता वक्रों के सतत उच्चतम वाले होंगे।

$$U(x, y) = x2\ y2 = (xy)2 = U(x, y)\ 2$$

आगे ध्यान दें कि यहां $U(x, y)^2$ सिर्फ उपभोक्ता फ़ंक्शन U(x, y) के वर्ग है, जो इसके एकांत्रिक परिवर्तन है। उसी तरह, $U(x, y) = \sqrt{x\gamma}$ भी सामान्य उदासीनता वक्रों का उपयोगिता फ़ंक्शन होगा।

यह दर्शाता है कि मार्शलियन कार्डिनल सुख मॉडल की एक गंभीर कमी थी क्योंकि इसने सख्त अनुमान किया कि विभिन्न वस्तुओं की उपयोगिता परस्पर असम्बद्ध और संजोजनशील हैं। कार्डिनल सुख विश्लेषण की जोड़ने वाली उपयोगिता फ़ंक्शन निम्नलिखित रूप लेती है:

यहाँ, Ux(x) अच्छे X की उपभोग से प्राप्त कुल सुख, Uy(y) अच्छे Y की उपभोग से प्राप्त कुल सुख है और U कुल सुख है। जैसा कि उपरोक्त, उदासीनता वक्र विश्लेषण के प्रसारक ने माना कि विभिन्न वस्तुओं की उपयोगिता असंख्य स्वतंत्र और संजोजनशील नहीं होती हैं। इस प्रकार, हम सिर्फ उपभोक्ताओं की अधिकतम, कमतम, या समानतम इच्छाएँ जान सकते हैं और हमें उनकी उपयोगिता की कार्डिनल माप को नहीं जानते हैं। यहां, उदासीनता वक्र विश्लेषण में, केवल उपकारी प्राथमिकताओं को जानना पर्याप्त माना जाता है, उपभोक्ता के चयन की स्थिति की निर्धारण करने के लिए और मांग सिद्धांत की प्रतिस्थान निर्धारित करने के लिए।

$$U = Ux(x) + Uy(y)$$

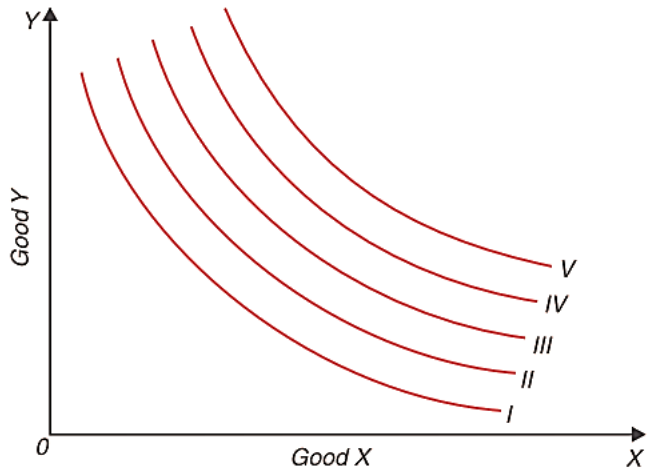

Fig. 5. अनधिमान मैप

एक उदासीनता नक्शा एक उपभोक्ता की पसंदों और विभिन्न दो सामग्रियों के विभिन्न संयोजनों के लिए चुनौती और चुनिस्ता की गई विभिन्न कुर्वों के ग्राफिकल प्रतिनिधित्व होता है। इसमें कई उदासीनता वक्र होते हैं, प्रत्येक उदासीनता वक्र संयोजनों का प्रतिनिधित्व करता है जो समान संतोष स्तर प्रदान करते हैं। नक्शा उपभोक्ता की पसंदों के स्तर का प्रतिनिधित्व करता है और उपभोक्ता के व्यवहार के विश्लेषण में मार्शल की उपयोगिता अनुसूची का स्थान लेता है। हर उदासीनता वक्र पर किसी भी बिंदु पर एक पसंदीदा सामग्री संयोजन का अधिशिष्ट विनिमय दर

2.6. प्रतिस्थापन की सीमांत दर(MARGINAL RATE OF SUBSTITUTION)

अधिशिष्ट विनिमय दर का अवधारणा उपभोक्ता के X और Y वस्तुओं को एक दूसरे के साथ विनिमय के लिए तैयार होने की दर को कहा जाता है। हमारे उपरोक्त उदासीनता अनुसूची I में, जिसे टेबल 5 में पुनर्प्रक्षिप्त किया गया है, शुरू में उपभोक्ता एक अतिरिक्त इकाई एक्स के लाभ के लिए 4 यूनिट Y की बलि देता है और इस प्रक्रिया में उसके संतोष का स्तर समान रहता है। इसका परिणाम है कि एक इकाई में एकाधिक प्राप्ति उसके लिए 4 यूनिट Y की हानि का पूर्ण मुआवज़ा है। इसका मतलब है कि इस चरण में उपभोक्ता एक इकाई के लिए 4 यूनिट Y की विनिमय के लिए तैयार है। इस प्रकार, हम एक्स के लिए वाई की अधिशिष्ट विनिमय दर को उस मात्रा के रूप में परिभाषित कर सकते हैं जिसकी हानि करने से उपभोक्ता का संतोष स्तर समान रह सकता है।प्रतिनिधित्व करता है, जो उपभोक्ता की पसंदों और विचारों के बारे में दर्शन प्रदान करता है।

टेबल 5 में, जब उपभोक्ता अपने उदासीनता अनुसूची पर कॉम्बिनेशन B से कॉम्बिनेशन C पर जाता है, तो उसे एक अतिरिक्त इकाई X की प्राप्ति के लिए 3 यूनिट Y की बलि देनी पड़ती है। इसलिए, X के लिए Y की अधिशिष्ट विनिमय दर 3 होती है। उसी तरह, जब उपभोक्ता C से D में और फिर D से E में जाता है अपने उदासीनता अनुसूची में, तो एक्स के लिए Y की अधिशिष्ट विनिमय दर 2 और 1 होती है, क्रमशः।

Table. 5. उदासीनता अनुसूची Indifference Schedule

Combination	Good X	Good Y	MRS_{xy}
A	1	12	4
B	2	8	3
C	3	5	2
D	4	3	1
E	5	2	

मार्जिनल रेट ऑफ सब्स्टिट्यूशन को एक उदासीनता कर्व पर कैसे मापा जाए? चित्र 6 को विचार करें, जहाँ एक उदासीनता कर्व दिखाया गया है। जब उपभोक्ता इस उदासीनता कर्व पर बिंदुA से B जाता है, तो उसे Y कीAS बलि देनी पड़ती है और X की SB बढ़ोतरी करते हैं और वह समान उदासीनता कर्व पर बना रहता है(या अन्य शब्दों में, समान संतोष स्तर पर)। इसका मतलब है किAS बलि को देने से होने वाले संतोष की हानि SB बढ़ने वाले X में संतोष के बढ़ने के समान है। इससे परिणामित होता है कि उपभोक्ता तैयार हैAS बलि के लिए SB बढ़ते X के विनिमय के लिए। अन्य शब्दों में, एक्स के लिए वाई की मार्जिनल रेट ऑफ सब्स्टिट्यूशन(MRSxy) बराबर होती है,

$$\frac{AS}{SB} = \frac{\Delta Y}{\Delta X}$$

अब, मान लीजिए कि बिंदुA और B एक-दूसरे के बहुत करीब हैं, इससे यह माना जा सकता है कि वे दोनों एक ही सहमत रेखा tT पर लेटे हैं(चित्र 6)। अब, एक लब्धांगुलिक त्रिभुजASB में,AS/SB ∠ABS के कोण की तिकोनमेटर के बराबर होता है। इससे यह परिणामित होता है कि:

$$MRS_{xy} = \frac{AS}{SB} = \frac{\Delta Y}{\Delta X} = \angle ABS$$

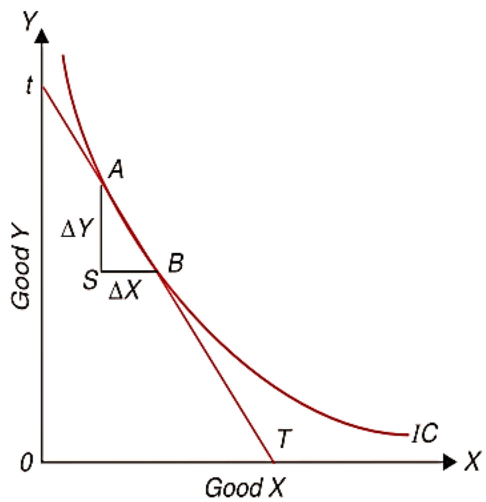

Fig. 6. घटती सिमान्त प्रतिस्थापन की दर चित्र द्वारा

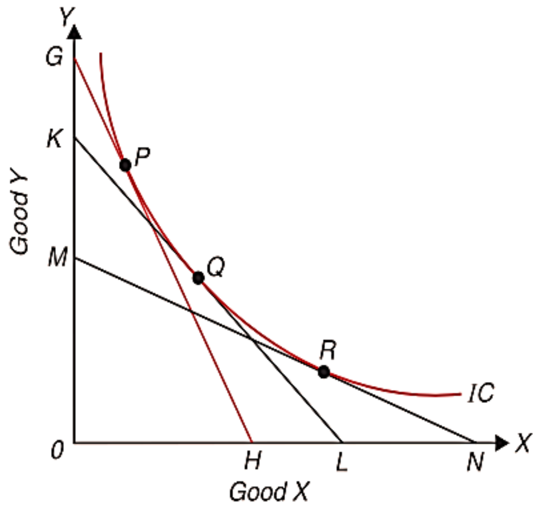

Fig. 7. घटती सिमान्त प्रतिस्थापन की दर चित्र द्वारा

लेकिन चित्र 8.3 में ∠ABS = ∠tTO होता है। इससे MRSxy = ∠tT की तिकोनमेटर(tangent) होती है। लेकिन ∠tTO की तिकोनमेटर Ot/OT के बराबर होती है। इस प्रकार, ∠tTO की तिकोनमेटर तय करती है कि बिंदुA या B पर उदासीनता कर्व पर बने तांजेंट रेखा tT की ढलान की तिकोनमेटर होती है। अन्य शब्दों में, बिंदुA या B पर उदासीनता कर्व की ढलान तांजेंट ∠tTO के बराबर होती है। इससे यह परिणामित होता है:

MRSxy = ∠tTO की तिकोनमेटर = बिंदुA या B पर उदासीनता कर्व की ढलान = Ot/OT

उपरोक्त से स्पष्ट होता है कि हमें उदासीनता कर्व पर एक बिंदु पर MRSxy को जानना हो तो हम बिंदु पर उदासीनता कर्व की एक तांजेंट

बनाकर और फिर उस तांजेंट रेखा के X-अक्ष के साथ बनाने वाले कोण की तिकोनमेटर के मूल्य का आकलन करके कर सकते हैं।

2.7. X के लिए Y की परिपर्ण दर अनुशासन का सिद्धांत Principle of Diminishing Marginal Rate of Substitution

आर्थिक सिद्धांत का एक महत्वपूर्ण सिद्धांत है कि जैसे-जैसे अधिक और अधिक अच्छा X अच्छा बदल रहा है, X के लिए Y की परिपर्ण दर कम हो जाती है। अन्य शब्दों में, जैसे-जैसे उपभोक्ता के पास अधिक और अधिक X होता है, वह Y के प्रति कम और कम त्यागने के लिए तैयार होता है। परिपर्ण दर की अनुशासन की अवधारणा चित्र 8.4 में दिखाई गई है।

यह भी स्पष्ट है कि मासिक दर में संक्षेपण तालिका 8.2 से होता है। प्रारंभ में X के लिए Y की परिपर्ण दर 4 है और जैसे-जैसे अधिक X प्राप्त किया जाता है और कम Y छोड़ा जाता है, MRSxy कम होता जाता है। B और C के बीच यह 3 है; C और D के बीच, यह 2 है; और अंत में D और E के बीच, यह 1 है। यह मतलब है कि तालिका 8.2 से कि जैसे-जैसे उपभोक्ता का X का स्टॉक बढ़ता है और उसके Y का स्टॉक कम होता है, वह एक दिए गए X के बढ़ाने के लिए Y का कम और कम त्याग करने के लिए तैयार होता है। अन्य शब्दों में, X के लिए Y की परिपर्ण दर उसके पास अधिक X और कम Y होने पर कम होती है। कि X के लिए Y की परिपर्ण दर संक्षेपित होती है यह भी विभिन्न बिंदुओं पर उदासीनता कर्व पर तांजेंट बनाने से ज्ञात हो सकता है। जैसा कि ऊपर व्याख्यानित किया गया है, उदासीनता कर्व पर एक बिंदु पर मासिक दर के बराबर तांजेंट होती है और इसलिए उस बिंदु पर तांजेंट रेखा की ढलान को मापकर मासिक दर की जानकारी प्राप्त की जा सकती है। चित्र 8.4 में पॉइंट P, Q और R पर तीन तांजेंट GH, KL और MN बनाई गई है।

1) मार्जिनल उपयोगिताओं के बीच संबंध Relationship Between Marginal Utilities

गुड्स के बीच MRSxy का गणितीय रूप से प्रदर्शन किया जा सकता है कि गुड्स X और Y की मार्जिनल उपयोगिताओं का अनुपात है।

एक उदासीनता कर्व को निम्नलिखित से प्रतिष्ठित किया जा सकता है

U(x, y) =A ......(i)

$$\frac{dY}{dX} = \frac{\frac{\partial U}{\partial X}}{\frac{\partial U}{\partial Y}}$$

जहांA एक उदासीनता कर्व पर एक स्थिर उपयोगिता को प्रतिनिधित करता है।(i) की कुल परिवर्तनीय ले तो हमारे पास है:

$$\frac{\partial U}{\partial X}\ dX + \frac{\partial U}{\partial Y} dY \ = \ 0$$

$\frac{\partial U}{\partial X}$ and $\frac{\partial U}{\partial Y}$ are marginal utilities of goods X and Y respectively.Thus,

$$\frac{dY}{dX} = \frac{MU_x}{MU_y}$$

$\frac{dY}{dX}$ is the slope of indifference curve and represents MRS_{xy}. Thus,

$$MRS_{xy} = \frac{MU_x}{MU_y}$$

2.8. PROPERTIES OF INDIFFERENCE CURVES उदासीनता कर्वों की गुणधर्म

गुणधर्म I: उदासीनता कर्व दक्षिण दिशा की ओर नीचे की ओर मुड़ते हैं। यह गुणधर्म एक नकारात्मक माप के साथ होता है। यह गुणधर्म I की मानवता से निकलता है। नीचे की ओर मुड़ने वाले उदासीनता कर्व का मतलब है कि जब किसी संयोजन में एक वस्त्र की मात्रा बढ़ती है, तो दूसरे वस्त्र की मात्रा कम होती है। अगर उदासीनता कर्व पर संतोष की स्तर को समान रखने के लिए।

गुणधर्म II: उदासीनता कर्व उपकरणीया के लिए मुख्य मानक की ओर मुड़े होते हैं। दूसरे शब्दों में, उदासीनता कर्व अपेक्षा से अधिकतर अपेक्षा से आरंभ में तंग होते हैं और अपेक्षा से अधिक मुद्रित में तंग होते हैं। उदासीनता कर्व की इस गुणधर्म का पालन अधिक और अधिक गुड्स X के लिए बदले जाने पर मार्जिनल रेट ऑफ सब्स्टिटूशन X के लिए Y का(MRSxy) कम होता है। केवल एक वक्र उदासीनता कर्व अपेक्षा से अधिकतर MRSxy की वक्र हो सकती है। यदि उदासीनता कर्व मूल के प्रति अपेक्षा से वक्र होता है, तो इसका मतलब है कि X के लिए Y की आर्थिक रेट बढ़ती है जैसा कि X की आगामी और और अधिक मात्रा में प्रतिस्थान किया जाता है।

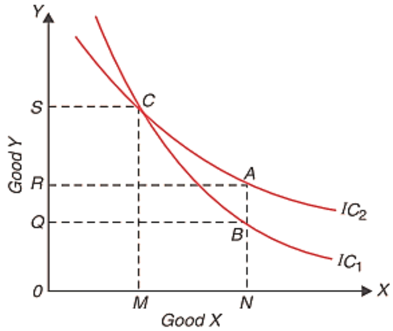

Fig. 8.5. अनधिमान वक्र एक दूसरे को काट नहीं सकते

गुणधर्म III: उदासीनता कर्व एक दूसरे के साथ कट नहीं सकते हैं। दूसरे शब्दों में, एक ही उदासीनता कर्व केवल उदासीनता मानचित्र में एक बिन्दु से गुजरेगा। इस गुण को पहले उन दो उदासीनता कर्वों को एक दूसरे को काटने देने से सिद्ध किया जा सकता है और फिर दिखाया जा सकता है कि इससे कैसे अयोग्यता या स्व-विरोधी परिणाम निकलता है।

अब उदासीनता कर्व IC2 पर बिंदुA और उदासीनता कर्व IC1 पर बिंदु B ले लें, जो बिंदुA के नीचे विशिष्ट होता है। क्योंकि एक उदासीनता कर्व उन व्यवसायियों की समान संतोष प्रदान करने वाली वस्तुओं के संयोजनों का प्रतिनिधित्व करता है, इसलिए बिंदुA और C दोनों उन व्यक्तियों को समान संतोष प्रदान करेंगे क्योंकि दोनों ही उन्हें एक ही उदासीनता कर्व IC2 पर आते हैं। उसी तरह, बिंदु B और C दोनों व्यक्तियों को समान संतोष प्रदान करेंगे; दोनों ही एक ही उदासीनता कर्व IC1 पर होते हैं। अगर बिंदुA का संतोष बिंदु C के समान होता है और बिंदु B का संतोष भी बिंदु C के समान होता है, तो इसका मतलब है कि बिंदुA और B का संतोष भी समान होगा।

गुण IV: एक उच्च उदासीनता वक्र कम उदासीनता वक्र की तुलना में संतुष्टि के उच्च स्तर का प्रतिनिधित्व करता है।A higher indifference curve representsA higher level of satisfaction thanA lower indifference curve. उच्च उदासीनता समर्थनीयता की तुलना में अधिक संतोष स्तरों की सूचना नीचे की उदासीनता की तुलना में अधिक संतोष स्तरों की सूचना देती है। दिए गए उदाहरण में, यदि हम उदासीनता समर्थनीयता की उदासीनता कुर्वों IC2 और IC1 पर कॉम्बिनेशन Q और S लेते हैं, जहां IC2 उच्च है, तो कॉम्बिनेशन Q ने कॉम्बिनेशन S की तुलना में वस्तुओं X और Y की अधिक मात्रा प्रदान की है। इसका मतलब है कि उपभोक्ताएँ कॉम्बिनेशन Q को कॉम्बिनेशन S की प्राथमिकता देंगी क्योंकि वस्तुओं X और Y की अधिक मात्रा के कारण। पर्यायता के सिद्धांत द्वारा, किसी भी कॉम्बिनेशन की IC2 पर(Q को उदासीनता के साथ) जो भी होगा, उसे IC1 पर किसी भी कॉम्बिनेशन(S के साथ उदासीनता के साथ) की प्राथमिकता दी जाएगी। इस प्रकार, उच्च उदासीनता कुर्वों का संकेत उच्च संतोष स्तरों की प्रतीति कराता है।

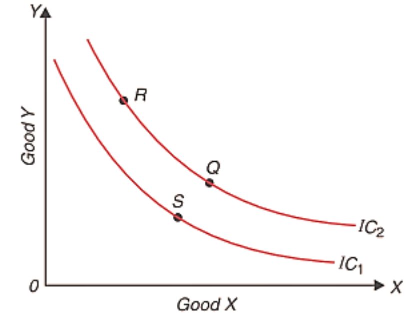

Fig. 8.6. एक ऊँचा अनधिमान वक्र अधिक सन्तुष्टि को दिखाता है

2.9. पूर्ण प्रतिस्थापकों और पूर्ण सहयोगियों की उदासीनता की दीर्घिकाएँ Indifference curves of Perfect SubstitutesAnd Perfect Complements:

उदासीनता वक्र की कानवेक्सिटी X के Y के प्रति प्रतिस्थापन के गिरती हुई सीमान्त दर पर आश्रित रहता है। जैसा कि पहले कहा गया, जब दो वस्तुएँ एक दूसरे के पूर्ण प्रतिस्थापक होती हैं, तो उदासीनता की दीर्घिका एक सीधी रेखा होती है जिस पर अधिकतम प्रतिस्थापन दर स्थिर रहती है। पूर्ण प्रतिस्थापकों की सीधी रेखाएँ चित्र 8.7 में दिखाई गई हैं। जितनी अच्छी तरह से दो वस्तुएँ आपस में प्रतिस्थापक होती हैं, उतनी ही करीब उदासीनता की दीर्घिका सीधी रेखा के पास आती है, ऐसा कि जब दो वस्तुएँ पूर्ण प्रतिस्थापक होती हैं, तो उदासीनता की दीर्घिका सीधी रेखा होती है। पूर्ण प्रतिस्थापकों के मूल रूप से सीधी रेखाएँ परिपक्त होती हैं क्योंकि उपभोक्ता दोनों वस्तुओं को बराबरी से पसंद करता है और उन्हें एक अचल दर पर एक वस्तु को दूसरे के साथ आदान-प्रदान करने के लिए तैयार होता है। एक सीधी रेखा परिपक्त पूर्ण प्रतिस्थापकों की उदासीनता की दीर्घिका के साथ चलते समय एक वस्तु की दूसरे वस्तु के प्रतिस्थापन दर स्थिर रहती है। वास्तविक दुनिया में पूर्ण प्रतिस्थापक वस्तुएँ के उदाहरण मिलने में कठिनाई नहीं है। उदाहरण स्वरूप, डालडा और रथ वनस्पति, पेप्सी कोला और कोका कोला जैसे दो विभिन्न प्रकार की ठंडी पीने की वस्तुएँ आमतौर पर एक-दूसरे के पूर्ण प्रतिस्थापक मानी जाती हैं।

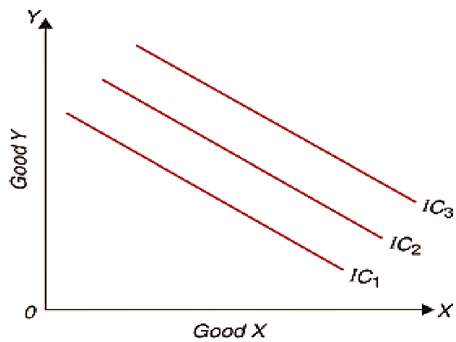

Fig. 8.7. पूर्ण प्रतिस्थापित वस्तु के लिए अनधिमान वक्र

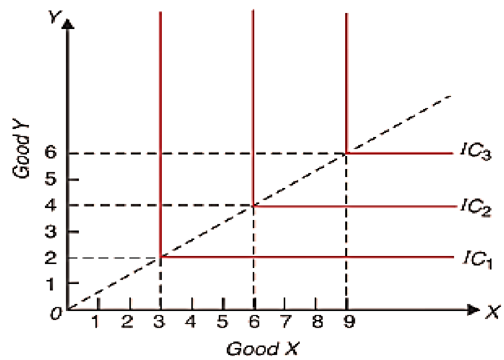

Fig. 8.8. पूर्णतः पूरक वस्तु के लिए अनधिमान वक्र

जैसा कि चित्र 8.8 में दिखाया जा रहा है, पूर्ण पूरक वस्तुओं की उदासीनता की बाईं ओर की भाग सीधी रेखा होती है, जिससे यह सूचित होता है कि एक इकाई X के स्थान पर किसी भी अनुभाग को स्थानांतरित करने के लिए अनगिनत मात्रा में वास्तविक आवश्यक है, और उदासीनता की उस दर का दायां ओर का भाग एक सीधी रेखा होता है जिसका अर्थ है कि एक इकाई वास्तविक में एक अनुभाग को स्थानांतरित करने के लिए अनगिनत मात्रा में वास्तविक आवश्यक है। यह सब कुछ यह सूचित करता है कि दो पूर्ण पूरक एक निश्चित अनुपात में उपयोग किए जाते हैं और एक-दूसरे के लिए प्रतिस्थापित नहीं किए जा सकते हैं। चित्र 8.8 में दो पूर्ण पूरक अनुपात 3X: 2Y में खपत किए जाते हैं। इस प्रकार, पूरक वस्तुएं वे वस्तुएं हैं जो संयुक्त रूप से निश्चित अनुपात में खपत की जाती हैं, ताकि उनकी खपत समयानुसार बढ़े या घटे। कलम और सियाही, दाहिने जूता और बाएं जूता, ऑटोमोबाइल और पेट्रोल, सॉस और हैम्बर्गर, टाइपराइटर और टाइपिस्ट्स कुछ पूर्ण पूरक उदाहरण हैं।

2.10. उदासीनता के कुछ गैर-सामान्य मामले: माल, बैड्स और न्यूटर्स SOME NON-NORMAL CASES OF INDIFFERENCE CURVES : GOODS, BADSAND NEUTERS:

इस अध्याय में, हमने "सामग्रियाँ" की उदासीनता रेखाओं का विश्लेषण किया है, जिन्हें "सामान्य वस्तुएँ" कहा जा सकता है, अर्थात्, वांछनीय वस्तुएँ। यदि कोई सामग्री 'सामान्य वस्तु' है, तो उसके अधिक एक बहुत अधिक तुलनात्मक वस्तु की तुलना में प्राथमिकता है। जैसा कि पहले देखा गया है, दो सामग्रियों के बीच उदासीनता रेखाएँ नीचे की ओर मुड़ती हैं और मूल से विषमांक होती हैं। हालांकि, जब एक उपभोक्ता के लिए कोई सामग्री 'बुरा' होती है, अर्थात्, अवांछनीय वस्तु, तो उसके लिए उसकी संतोष स्तर को कम करने के लिए अधिक सामग्री पसंद की जाती है। इस प्रकार, अगर कोई बुरी सामग्री(उदाहरण के लिए, प्रदूषण) एक्स-अक्ष पर प्रतिष्ठित होती है और एक 'सामान्य वस्तु' वस्तु वाई-अक्ष पर प्रतिष्ठित होती है, तो उदासीनता रेखा उपवर्गीय दिशा में मुड़ी होती है(अर्थात्, उपवर्गीय स्थानांतरण होता है) जैसा कि चित्र 8.9 में दिखाया गया है। इसका कारण यह है कि इस मामले में एक उदासीनता रेखा पर दाईं ओर की ओर की परिवर्तन(अर्थात्,

अधिक प्रदूषण) का मतलब होता है जो उपभोक्ता की संतोष स्तर को कम करेगा, और इसलिए, उसके संतोष स्तर को स्थिर रखने के लिए 'सामान्य वस्तु' जैसे कपड़े की मात्रा को बढ़ानी होगी। इस मामले में पसंद की दिशा ऊपर और बाएं की ओर होती है। एक महत्वपूर्ण उपयोग अभिमति रेखा विश्लेषण का हाल के सालों में पोर्टफोलियो चयन संबंधित है, जिसमें व्यक्ति का विभिन्न संपत्ति के विभिन्न संदर्भों में धन का वितरण चयन होता है, जैसे कि इक्विटी शेयर, डिबेंचर, रियल एस्टेट, आदि। ये विभिन्न संपत्तियाँ विभिन्न मानदंडों के साथ अलग-अलग लाभ देती हैं और भिन्न-भिन्न विसंकोच के स्तर में शामिल होती हैं। चित्र 8.10 में हम एक निवेशक की उदाहरण रेखाएँ दिखा रहे हैं, जो उच्च औसत लाभ और कम जोखिम पसंद करता है। औसत लाभ जितना अधिक होगा, उतना अधिक होगा।

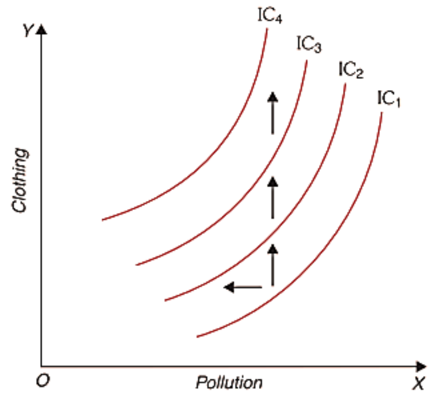

Fig. 8.9. अनधिमान वक्र बैड और गुड के लिए

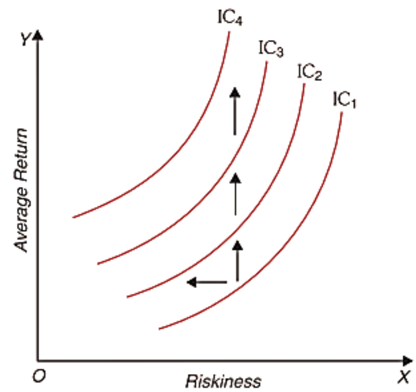

Fig. 8.10. अनधिमान वक्र रिस्कनेश और एवरेज रिटर्न के लिए

न्यूट्रल गुड्स एक सामग्री नपुंसक(या एक तटस्थ वस्तु) हो सकती है, जिसका मतलब है कि उपभोक्ता को यह परवाह नहीं होता कि उसके पास उस सामग्री की अधिक या कम मात्रा हो। अर्थात्, एक नपुंसक की अधिक या कम मात्रा उसके संतोष पर किसी भी तरह का प्रभाव नहीं डालती है। यदि सामग्री X एक नपुंसक सामग्री है और Y एक सामान्य सामग्री है, तो निवेशक की संतोष की भी कोई परवाह नहीं होती; और उसकी बढ़ती हुई संतोष की स्तर में कोई परिवर्तन नहीं होता है। यदि कोई वस्तु X एक नपुंसक वस्तु है और Y एक सामान्य वस्तु है, तो निवेशक की संतोष की भी कोई परवाह नहीं होती; और उसकी बढ़ती हुई संतोष की स्तर में कोई परिवर्तन नहीं होता है। न्यूट्रल समान्य वस्तु हो सकती है जिसका मतलब है कि उपभोक्ता को यह परवाह नहीं होता कि उसके पास उस सामग्री की अधिक या कम मात्रा हो। अर्थात्, एक न्यूट्रल की अधिक या कम मात्रा उसके संतोष पर किसी भी तरह का प्रभाव नहीं डालती है।

अब हम चित्र 8.11 में चित्रित तरीके के न्यूटर सामग्रियों के बारे में विचार करें, जहाँ स्थिति का यह है कि निवेशक को उच्च औसत लाभ और कम जोखिम पसंद है। उच्च औसत लाभ के साथ, उच्च संतोष; और पोर्टफोलियो में शामिल जोखिम की डिग्री के साथ, निवेशक का संतोष कम होता है। इसलिए, इस मामले में भी, जोखिम(अर्थात्, बुराई) और लाभ की दर(अर्थात्, एक अच्छी चीज़) के बीच उदासीनता रेखा ऊपर की ओर मुड़ती है। यह इसलिए है क्योंकि हम दक्षिण की ओर बढ़ रहे हैं, जोखिम बढ़ने के कारण संतोष कम हो रहा है और इसके कारण संतोष में होने वाले कमी को पूरा करने के लिए लाभ की दर(अर्थात्, 'अच्छी' चीज़) को बढ़ाना होगा। ध्यान देने योग्य है कि प्राथमिकता की दिशा भी उत्तरी और पश्चिमी दिशा में होगी जैसा कि डायग्राम में दिखाया गया है। विपरीत तरफ, यदि सामग्री Y न्यूटर है, जबकि सामग्री X अच्छी या सामान्य है, तो उदासीनता रेखाएँ चित्र 8.12 में दर्शाई गई सीधी लकीरें होंगी। इस मामले में प्राथमिकता की दिशा पूर्व की ओर(अर्थात्, दाहिनी ओर) होगी।

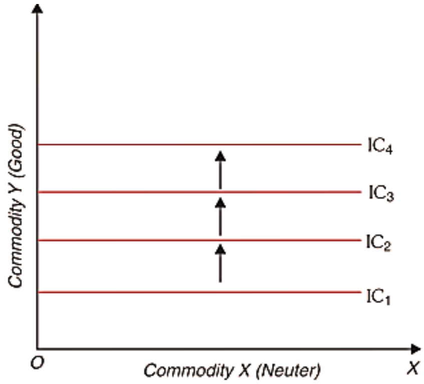

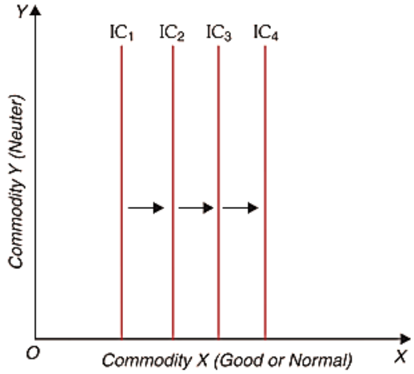

Fig. 8.11. अनधिमान वक्र न्यूट्रल एण्ड गुड के लिए **Fig. 8.12. अनधिमान वक्र गुड एण्ड न्यूट्रल के लिए**

- **परिपूर्णता और आनंद का बिंदु SatiationAnd Point of Bliss**

हमारे दृश्य जगत में आवश्यक सामग्री तब तक अच्छी होती है जब तक उस सामग्री के सेवन को एक बिन्दु तक ही सीमित किया जाए, जिसे परिपूर्णता का बिंदु कहा जाता है, और उसे अपनी सेवन को बढ़ाने के लिए मजबूर किया जाए तो उसके लिए उस उपभोक्ता के लिए बुरी हो जाती है। एक उपभोक्ता के लिए उपभोक्ता के लिए उपयुक्त या सबसे पसंदीदा मात्राएँ शामिल की गई है और उनमें से हर एक की मात्रा को उस बेहतर या उपयुक्त मात्रा से बढ़ाने से उपभोक्ता की स्थिति बिगड़ जाएगी(यानी, उसकी संतोष को कम कर देगा), दूसरी सामग्रियों की मात्राएँ वैसे ही रहेंगी। हर चीज़ की बहुत ज्यादा होने की बुराई होती है। इसलिए, सामग्री X की मात्रा X1 से परे बुरी हो जाती है और सामग्री Y की मात्रा Y1 से परे बुरी हो जाती है। दो वस्तुओं की स्थिति को चित्र 8.13 में दिखाया गया है जहां दो वस्तुओं X और Y के बीच वृत्ताकार उदासीनता रेखाएँ खींची गई है। मान लीजिए X1 और Y1, दो वस्तुओं की मात्राएँ हैं जिन्हें उपभोक्ता अपनी सबसे अच्छी या उपयुक्त मात्राएँ मानता है जिनके पार दो वस्तुएँ बुरी हो जाती हैं। बिंदु S इन सबसे पसंदीदा मात्राओं को प्रतिनिधित करता है और इसलिए यह संतोष का बिंदु या आनंद का बिंदु होता है। क्षेत्र 1 में, दो वस्तुओं के बीच उदासीनता रेखाओं के हिस्से की नकारात्मक ढलान होती है और इसलिए इस क्षेत्र में दो वस्तुएँ अच्छी होती हैं।

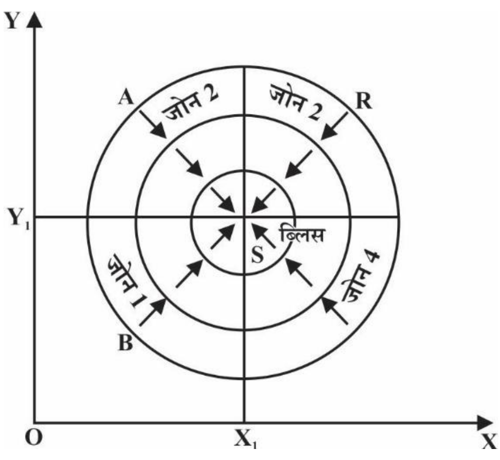

Fig. 8.13. Different zones of GoodnessAnd BadnessAnd Point of Bliss

क्षेत्र 2 में बिंदुA है, जिसमें वस्तु Y की मात्रा वाणिज्यिक या सबसे अच्छी मानी जाने वाली मात्रा से अधिक है। इसलिए उसके संतोष को स्थिर रखने के लिए, उसे X की मात्रा में वृद्धि की आवश्यकता होती है(ध्यान दें कि क्षेत्र 2 में X की मात्रा X1 से कम है और उसकी मात्रा में वृद्धि की इसकी इच्छानीय और उसके संतोष में जोड़ने से उसका संतोष बढ़ जाता है। क्षेत्र 2 में, उदासीनता रेखाएँ सकारात्मक ढलान रखती हैं और यहां वस्तु X बहुत कम होती है, जबकि वस्तु Y बहुत ज्यादा होती है। इसलिए, क्षेत्र 2 में, वस्तु Y बुरी हो जाती है जबकि वस्तु X अच्छी बनी रहती है। और यह भी ध्यान दिया जा सकता है कि जैसे ही उपभोक्ता अपने सबसे पसंदीदा संयोजन S के पास आता है या उसकी उदासीनता रेखाएँ इस बिंदु के करीब आती हैं, उसका संतोष बढ़ता है। क्षेत्र 3 में, कृपया उपमा की रेखा IC1 पर बिंदु R को विचार करें, जिसमें उदासीनता रेखाएँ भी नकारात्मक ढलान रखती हैं। जैसे ही उपभोक्ता बिंदु R से बिंदु S की ओर बढ़ता है, दोनों वस्तुओं की

मात्राएँ कम होती हैं, लेकिन वह संस्थिति बिंदु S के पास आ जाता है, जिससे उसका संतोष और भी बढ़ जाता है। इस मामले का संक्षिप्त और मान्यता है कि जैसे ही उपभोक्ता अपने सबसे पसंदीदा संयोजन S के करीब आता है, उसका संतोष बढ़ता है। क्षेत्र 4 में, जबकि वस्तु X इच्छित मात्रा X1 से अधिक होती है, वस्तु Y की मात्रा अपनी उपयुक्त मात्रा से कम होती है। इस क्षेत्र में सकारात्मक ढलान वाली उदासीनता रेखाएँ होती हैं, जिससे संतोष की स्थिति को स्थिर रखने के लिए X की मात्रा में वृद्धि की जानी चाहिए, जो कि इस क्षेत्र में इच्छानीय होती है, उपभोक्ता के संतोष की स्तर को स्थिर रखने के लिए वस्तु Y की मात्रा में वृद्धि की जानी चाहिए।

दो वस्तुओं के संयोजन, जैसे कि चॉकलेट और आइसक्रीम, जो संस्थिति या आनंद बिंदु के करीब होते हैं, वे उच्च उदासीनता रेखाओं पर आते हैं और उन संयोजनों को दूरतम स्थिति से आने वाले, निम्न उदासीनता रेखाओं पर आते हैं। किसी उपभोक्ता के लिए चॉकलेट और आइसक्रीम की कुछ सर्वोत्तम संयोजना होती है जिसे वह प्रति सप्ताह खाना पसंद करेगा। उपभोक्ताओं को स्वतंत्र रूप से उन्हें बहुत ज्यादा खाने की इच्छा नहीं होती है, अर्थात उनकी इच्छानीय मात्रा से अधिक नहीं। इस प्रकार, उपभोक्ता के वस्तुओं के चयन के लिए रुचिकर क्षेत्र वह होता है जहां उसके पास उन दोनों वस्तुओं की सर्वोत्तम मात्रा से कम है। चित्र 8.13 में इस क्षेत्र का प्रतिनिधित्व क्षेत्र 1 द्वारा किया गया है जिसमें उपभोक्ता के पास उसकी इच्छानीय मात्रा से कम दो वस्तुएँ हैं और इस क्षेत्र में दोनों वस्तुओं की मात्रा में वृद्धि उसके संतोष में वृद्धि का कारण होगी और उसे संस्थिति के बिंदु के पास ले जाएगी।

- **प्रतिस्थान प्रभाव Substitution effect**

हमने ऊपर एक वस्त्र की खरीद या सेवन में आय के परिवर्तन के प्रभाव को समझाया है। एक अन्य महत्वपूर्ण कारक जो एक वस्त्र की खरीद में परिवर्तन के लिए जिम्मेदार है, वह प्रतिस्थान प्रभाव है। जबकि आय प्रभाव एक उपभोक्ता द्वारा एक वस्त्र की मात्रा खरीदी गई की परिवर्तन को दिखाता है जो उसकी आय में परिवर्तन के परिणामस्वरूप होता है, वस्त्रों के मूल्य निरंतर रहते हैं, प्रतिस्थान प्रभाव का मतलब है कि एक वस्त्र की खरीद की मात्रा में परिवर्तन उसके संबंधित मूल्य में परिवर्तन के परिणामस्वरूप होता है, वास्तविक आय या संतोष स्तर निरंतर रहते हैं।

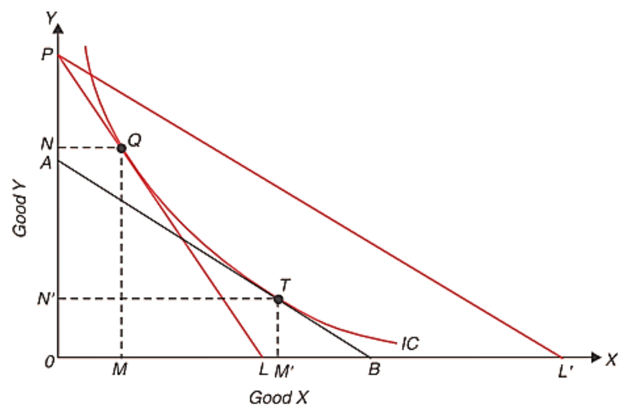

Fig. 8. हिक्सियन प्रतिस्थापन प्रभाव

अब, दो थोड़ी भिन्न प्रतिस्थान प्रभाव के अवशिष्ट दो संकेत विकसित किए गए हैं; एक J.R. हिक्स द्वारा और दूसरा ई. स्लट्सकी द्वारा। इन दो प्रतिस्थान प्रभाव के अवशिष्ट दो संकेतों का नाम उनके लेखकों के नाम के आधार पर रखा गया है। इस प्रकार, हिक्स और एलेन द्वारा प्रस्तुत किया गया प्रतिस्थान प्रभाव को हिक्सियन प्रतिस्थान प्रभाव कहा जाता है और ई. स्लट्सकी द्वारा विकसित किया गया प्रतिस्थान प्रभाव को स्लट्सकी प्रतिस्थान प्रभाव कहा जाता है। इन दोनों प्रतिस्थान प्रभावों में एक महत्वपूर्ण अंतर है जिसमें उपभोक्ता की वास्तविक आय में होने वाले परिवर्तन को संवाहित करने के लिए कितने बदलाव का प्रभावित होना चाहिए जो मूल्य में परिवर्तन के परिणामस्वरूप होता है। हम यहाँ हिक्सियन प्रतिस्थान प्रभाव की व्याख्या करेंगे।

हिक्सियन प्रतिस्थान प्रभाव में मूल्य परिवर्तन के साथ ही आय में एक बड़े से बड़ा परिवर्तन होता है, ताकि उपभोक्ता उस समय से उचित हो न हो, अर्थात्, उसका मूल संतोष स्तर बरकरार रहे। दूसरे शब्दों में, उपभोक्ता की आय में एक बदलाव होता है जिसकी मात्रा उस व्यक्ति को उस समय से उचित बनाने के लिए पर्याप्त होती है जिस पर उसने मूल्य में परिवर्तन किया था। इस प्रकार, हिक्सियन प्रतिस्थान प्रभाव एक ही अनधिमान वक्र पर होता है। उपभोक्ता की आय में जो परिवर्तन होता है, ताकि उपभोक्ता उस समय से उचित बने, उसे संवाहनीय संवर्धन

कहलाता है। अन्य शब्दों में, संवाहनीय संवर्धन आय।

इस प्रकार स्पष्ट है कि किसी कमोडिटी की सांख्यिक मूल्य में गिरावट हमेशा प्रतिस्थान प्रभाव के कारण उसकी मांग में वृद्धि करती है, उपभोक्ता की संतोष या उचितता समान बनी रहती है। इस प्रकार प्रतिस्थान प्रभाव हमेशा नकारात्मक होता है। नकारात्मक प्रतिस्थान प्रभाव इस बात का संकेत करता है कि किसी कमोडिटी की सांख्यिक मूल्य और उसकी मांग दोनों विपरीत दिशा में परिवर्तित होती हैं, अर्थात्, किसी कमोडिटी की सांख्यिक मूल्य में कमी होने से हमेशा उसकी मांग में वृद्धि होती है। यह नकारात्मक प्रतिस्थान प्रभाव ही है जो विशेषत: मांग और मूल्य के बीच के प्रतिष्ठान के प्रसिद्ध कानून की मूल में होता है, जिसमें मूल्य और मांग के बीच के परास्पर विपरीत संबंध का उल्लेख होता है।

2.11 बजट लाइन या बजट की कमी BUDGET LINE OR BUDGET CONSTRAINT

चित्र 8.14 में दिखाया गया है कि 50 के साथ और वस्तु X और Y की मूल्यें रुपये 10 और 5 हैं, उपभोक्ता 10Y और 0X या 8Y और 1X खरीद सकता है, या 6Y और 2X खरीद सकता है, या 4Y और 3X आदि। दूसरे शब्दों में, वह उन सभी संयोजनों को खरीद सकता है जो उसकी दी गई मुद्रा आय और वस्तुओं की दी गई मूल्यों के साथ बजट रेखा पर स्थित हैं। ध्यान देने योग्य है कि किसी भी संयोजन को जैसे H(5Y और 4X) जो दी गई बजट रेखा के ऊपर और बाहर स्थित है, वह उपभोक्ता के पहुंच से बाहर होगा। लेकिन किसी भी संयोजन को जो बजट रेखा के अंदर स्थित है, जैसे K(2X और 2Y), वह उपभोक्ता की पहुंच में होगा, लेकिन अगर वह कोई ऐसा संयोजन खरीदता है, तो उसे अपनी सारी आय `50 का खर्च नहीं कर रहा होगा। इस प्रकार, यह धारणा कि दी गई आय का सारा भाग वस्तुओं पर और उनकी दी गई मूल्यों पर खर्च किया जाता है, उपभोक्ता को उन सभी संयोजनों में से चुनना होगा जो बजट रेखा पर स्थित है।

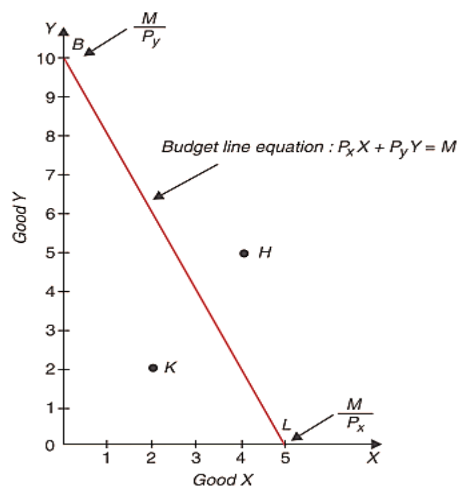

Fig. 8.14. बजट रेखा या बजट बाधिता

$$P_X X + P_Y Y = M$$

$$\text{Or},\ Y = P/P_Y - P_X/P_Y * X$$

उपरोक्त से स्पष्ट होता है कि बजट रेखा ग्राफिकल रूप से बजट प्रतिबद्धता को दिखाती है। बजट रेखा के दाईं ओर स्थित वस्तुओं के संयोजन अप्राप्य होते हैं क्योंकि उपभोक्ता की आय उन संयोजनों को खरीदने के लिए पर्याप्त नहीं होती है। दिए गए उपभोक्ता की आय और दो वस्तुओं की मूल्यों के आधार पर, बजट रेखा के बाईं ओर स्थित वस्तुओं के संयोजन प्राप्य होते हैं, अर्थात्, उपभोक्ता किसी भी एक को खरीद सकता है। यह भी महत्वपूर्ण है कि चित्र 8.14 में Y-अक्ष पर OB का पर्याप्त आय(M) के प्रति वस्तु Y की मूल्य(PY) से विभाजित राशि के बराबर है। अर्थात्, OB = M/Py। इसी तरह, X-अक्ष पर OL का पर्याप्त आय की वस्तु X की मूल्य से विभाजित राशि का माप करता है। इस प्रकार OL = M/Px। बजट रेखा को बीजगणितीय रूप में निम्नलिखित तरीके से लिखा जा सकता है। जहाँ Px और Py वस्तुओं X और Y की मूल्यों को सूचित करते हैं और M पैसे की आय को दर्शाता है: उपरोक्त बजट-रेखा समीकरण(1) इसका संकेत करता है कि, उपभोक्ता की मुद्रा इनकम और दो वस्तुओं की मूल्यों को दिए गए मान के साथ, हर संयोजन जो बजट-रेखा पर आता है, उसका कीमत एक ही मात्र पैसे की राशि होगी और इसलिए दी गई आय से खरीद सका जा सकेगा।

बजट-रेखा को दो वस्तुओं के संयोजनों का एक सेट के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिन्हें खरीदा जा सकता है अगर उन पर पूरी दी गई आय खर्च की जाए और इसकी ढाल यानी की मूल्य अनुपात की ऋणात्मक को समान हो।

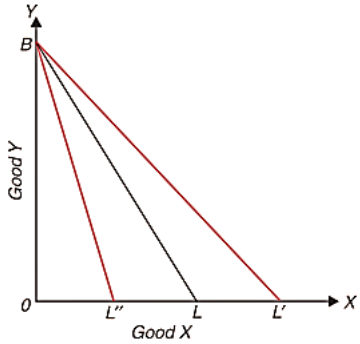

Fig. 8.16. X वस्तु के कीमत में परिवर्तन के बाद बजट लाइन में परिवर्तन

Fig. 8.17. Y वस्तु के कीमत में परिवर्तन के बाद बजट लाइन में परिवर्तन

2.12 आय में परिवर्तन और बजट लाइन में बदलाव Changes in IncomeAnd Shifts in Budget line:

आय में होने वाले परिवर्तन का बजट रेखा पर प्रभाव चित्र 8.18 में दिखाया गया है। यहाँ, बीएल पहली बजट रेखा है, दी गई वस्तुओं की निश्चित मूल्यों और आय के साथ। यदि उपभोक्ता की आय बढ़ जाती है, वही वस्तुओं X और Y की मूल्यों अपरिवर्तित रहती हैं, तो मूल्य रेखा ऊपर की ओर बदलती है(उदाहरण स्वरूप, B'L') और मूल बजट रेखा बीएल के साथ समांतर होती है। यह इसलिए क्योंकि बढ़ी हुई आय के साथ उपभोक्ता उससे पहले की तुलना में वस्तु X की सापेक्षिक मात्रा खरीद सकता है, अगर पूरी आय केवल X पर खर्च हो रही है, और उपभोक्ता उससे पहले की तुलना में वस्तु Y की सापेक्षिक मात्रा खरीद सकता है, अगर पूरी आय केवल Y पर खर्च हो रही है। विपरीत, यदि उपभोक्ता की आय कम होती है, वस्तु X और Y की मूल्यों के अपरिवर्तित रहती हैं, तो बजट रेखा नीचे की ओर बदलती है(उदाहरण स्वरूप, B"L") लेकिन मूल बजट रेखा बीएल के साथ समांतर बनी रहती है। यह इसलिए है क्योंकि कम आय वस्तु X की सापेक्षिक मात्रा को पुरी करने में प्राप्त होगी, अगर पूरी आय केवल X पर खर्च हो रही है, और कम आय वस्तु Y की सापेक्षिक मात्रा को पुरी करने में प्राप्त होगी, अगर पूरी आय केवल Y पर खर्च हो रही है।

The slope of the budget line is equal to the ratio of the prices of two goods. बजट रेखा की ढाल विद्यमान दो वस्तुओं की मूल्यों के अनुपात के बराबर होती है।

इसे चित्र 8.14 की सहायता से सिद्ध किया जा सकता है। मान लीजिए उपभोक्ता की दी गई आय 'M' है और वस्तुओं की मूल्यों की दी गई मान X और Y की क्रमशः 'Px' और 'Py' है। बजट रेखा BL की ढाल OB OL होती है। हम यह सिद्ध करने का इरादा रखते हैं कि यह ढाल वस्तुओं X और Y की मूल्यों के अनुपात के बराबर होती है।

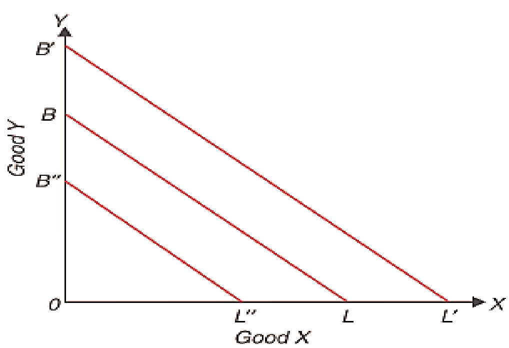

Fig. 8.18. आय में परिवर्तन के बाद बजट रेखा में विवर्तन

The quantity of good X purchased if whole of the given income M is spent on it is OL.
Therefore, $OL \times P_x = M$

$$OL = \frac{M}{P_x} \quad \ldots(i)$$

Now, the quantity of good Y purchased if whole of the given income M is spent on it is OB. Therefore,

$$OB \times P_y = M$$

$$OB = \frac{M}{P_y} \quad \ldots(ii)$$

Dividing (*ii*) by (*i*) we have

$$\frac{OB}{OL} = \frac{M}{P_y} \div \frac{M}{P_x} = \frac{M}{P_y} \times \frac{P_x}{M} = \frac{P_x}{P_y}$$

Thus, slope of budget line $= \frac{OB}{OL} = \frac{P_x}{P_y}$

It is thus proved that *the slope of the budget line BL is equal to the ratio of prices of two goods.*

2.13. उपभोक्ता का संतुलन: संतुष्टि को अधिकतम करना CONSUMER'S EQUILIBRIUM : MAXIMISING SATISFACTION

एक उपभोक्ता को उस समय संतुलन में कहा जाता है जब वह ऐसी वस्तुओं की एक संयोजन को खरीद रहा है जो उसे वस्तुओं की खरीदारी को फिर से व्यवस्थित करने की कोई प्रवृत्ति नहीं छोड़ता। वह उस समय तब्दीली नहीं करने के प्रति संतुलन स्थिति में होता है जब वह विभिन्न वस्तुओं में अपने पैसे के व्यय का आवंटन करने के संबंध में। उदाहरणार्थ, कार्डिनल उपयोगिता विश्लेषण में, उदासीनता वक्र विश्लेषण के तरीके में भी माना जाता है कि उपभोक्ता अपनी संतुष्टि को अधिकतम करने का प्रयास करता है। दूसरे शब्दों में, उपभोक्ता का तर्किक रूप से माना जाता है कि वह अपनी संतुष्टि को अधिकतम करने का उद्देश्य रखता है। इसके अलावा, हम उपभोक्ता के संतुलन की स्थिति की स्पष्टीकरण के लिए निम्नलिखित मान्यताओं का पालन करेंगे।

(1) उपभोक्ता के पास दिए गए समान्यता मानचित्र है जो उसकी प्राथमिकताओं के मानचित्र की प्रदर्शन करता है, जिनमें दो वस्तुओं, X और Y के विभिन्न संयोजनों की स्केल होती है।

(2) उसके पास दो वस्तुओं पर खर्च करने के लिए एक स्थिर राशि की गई है। उसको दो वस्तुओं पर दिए गए पूरे पैसे का खर्च करना होता है।

(3) वस्तुओं की मूल्यें उसके लिए दी गई और स्थिर होती हैं। वह वस्तुओं की मूल्यों पर कोई प्रभाव नहीं डाल सकता है जिसका उपयोग उन्हें ज्यादा या कम खरीदने के द्वारा मूल्य पर प्रभाव डालने के लिए किया जाता है।

(4) वस्तुएँ समान और विभाजनीय होती हैं।

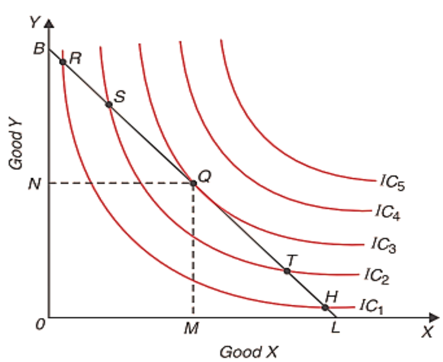

Fig. 8.19. उपभोक्ता सन्तुलन

उपभोक्ता के निर्णय का दिखाने के लिए कि वह कौन सी दो वस्तुओं, X और Y, की संयोजन को खरीदने का निर्णय लेगा और

संतुलन स्थिति में होगा, उसके समानता मानचित्र और बजट रेखा को एक साथ लाया जाता है। जैसा कि ऊपर देखा गया है, जबकि समानता मानचित्र उपभोक्ता की प्राथमिकताओं के मानचित्र को दिखाता है जो दो वस्तुओं के विभिन्न संयोजनों के बीच में हो सकती है, तो बजट रेखा उन विभिन्न संयोजनों को दिखाती है जिन्हें वह अपनी दिए गए मौद्रिक आय और दी गई वस्तुओं की मूल्यों के साथ खरीदने के लिए कर सकता है। चित्र 8.19 को विचार करें जिसमें हमने उपभोक्ता की समानता मानचित्र को बजट रेखा BL के साथ दिखाया है। वस्तु X को एक्स-अक्ष पर मापा गया है और वस्तु Y को वाई-अक्ष पर मापा गया है। दिए गए मौद्रिक खर्च के और दी गई वस्तुओं की मूल्यों के साथ, उपभोक्ता किसी भी वस्तुओं का संयोजन खरीद सकता है जो बजट रेखा BL पर होता है। हर संयोजन बजट रेखा BL पर उसे एक ही मात्रा पैसे की लागत करता है। संतुष्टि को अधिकतम करने के लिए उपभोक्ता को संभावित सबसे उच्च समानता मानचित्र तक पहुँचने की कोशिश करनी चाहिए जिसे उसने दिए गए पैसे के खर्च और दी गई वस्तुओं की मूल्यों के साथ किया है। बजट की प्रतिबंधन उपभोक्ता को बजट रेखा पर बने रहने के लिए मजबूर करता है, अर्थात उसे केवल उन्हीं संयोजनों में से एक का चयन करना होता है जो दी गई बजट रेखा पर होते हैं।

चित्र 8.19 में बजट लाइन BL अनधिमान वक्र पर Q बिन्दु पर स्पर्श करती है। Q पर स्थित अन्य सभी बिन्दु जैसे R, S, T, H, या तो नीचे या ऊपर वाले अनधिमान वक्र पर स्थित है। ये सभी बिन्दु हालांकि खरीदने योग्य हैं पर नीचे अनधिमान वक्र पर स्थित होने के कारण इनसे प्राप्त होने वाली संतुष्टि का स्तर कम होता है। बिन्दु Q ही ऐसा बिन्दु है जहाँ पर उपभोक्ता अधिक संतुष्टि प्राप्त करता है। तथा निर्धारित आय और मूल्य के साथ X की OM इकाई तथा Y की ON इकाई क्रय करता है।

स्पर्श बिन्दु Q पर, बजट लाइन BL और उदासीनता की कर्व IC3 की ढालें समान होती हैं। उदासीनता की कर्व की ढाल वस्तु X की वस्तु Y के प्रति मार्जिनल रेट ऑफ सब्स्टिट्यूशन(MRSxy) को प्रदर्शित करती है, जबकि बजट लाइन की ढाल दो वस्तुओं की मूल्य अनुपात(Px / Py) को प्रदर्शित करती है। इसलिए, संतुलन बिंदु Q पर,

$$MRS_{xy} = \frac{\text{Price of good X}}{\text{Price of good Y}} = \frac{P_x}{P_y}$$

जब वस्तु X के लिए वस्तु Y की मार्जिनल रेट ऑफ सब्स्टिट्यूशन(MRSxy) दोनों वस्तुओं के मूल्य अनुपात से अधिक या कम होती है, तो उपभोक्ता के लिए एक वस्तु को दूसरी वस्तु के स्थान पर प्रतिस्थापित करना लाभकारी होता है। इस प्रकार, चित्र 8.19 में बिंदुओं R और S पर मार्जिनल रेट्स ऑफ सब्स्टिट्यूशन(MRSxy) दिए गए मूल्य अनुपात से अधिक होती हैं, उपभोक्ता वस्तु X को वस्तु Y के लिए प्रतिस्थापित करेगा और बजट लाइन BL के साथ नीचे बढ़ेगा। वह इसे इस प्रकार करेगा जब तक मार्जिनल रेट ऑफ सब्स्टिट्यूशन समान मूल्य अनुपात के बराबर नहीं हो जाती, अर्थात्, दिए गए बजट लाइन BL को उदासीनता की कर्व के साथ संवादी बना दिया जाता है।

उलटे, चित्र 8.19 में बिंदु H और T पर मार्जिनल रेट्स ऑफ सब्स्टिट्यूशन दिए गए मूल्य अनुपात से कम होती हैं। इसलिए, उपभोक्ता के लिए लाभकारी होगा कि वस्तु Y को वस्तु X के लिए प्रतिस्थापित करे और इसी तरह बजट लाइन BL के साथ ऊपर बढ़े, जब तक MRSxy इस प्रकार नहीं बढ़ जाता कि यह दिए गए मूल्य अनुपात के बराबर हो जाए।

2.14. उपभोक्ता का संतुलन : कॉर्नर समाधान CONSUMER'S EQUILIBRIUM : CORNER SOLUTIONS

जब एक उपभोक्ता की पसंद ऐसी होती है कि वह दोनों वस्तुओं की कुछ मात्रा का सेवन करना पसंद करता है, तो वह उस समय समय के एक संतुलन स्थिति तक पहुंचता है जो कि बजट रेखा और उसकी उदासीनता रेखा के बीच के बिंदु पर स्पर्श करता है। इस समय समय पर होने वाली संतुलन स्थिति को आंतरिक समाधान कहा जाता है, जो दोनों विकल्पों के बीच कमोडिटी स्पेश में स्थित होता है। आंतरिक समाधान का आर्थिक परिणाम होता है कि उपभोक्ता के संयोजन का भिन्नीकरण(Diversified) होता है, अर्थात्, वह उन वस्तुओं की कुछ मात्रा की खरीद करता है। हमारा ज्ञान वास्तविक दुनिया के बारे में हमें यह बताता है कि उपभोक्ताओं के विभिन्न वस्तुओं के सेवन के पैटर्न में बहुत विविधता होती है और वे अक्सर कई विभिन्न वस्तुओं के बंडल को खरीदने के बजाय अपनी पूरी आय का उपयोग किसी एक वस्तु पर खर्च करने में नहीं करते।

2.15 उत्तल उदासीनता वक्र और कोना संतुलन Convex Indifference CurvesAnd Corner Equilibrium

"जब एक उपभोक्ता की पसंद ऐसी होती है कि वह दोनों वस्तुओं की कुछ मात्रा का सेवन करना पसंद करता है, तो उपभोक्ता की उदासीनता समरेखाएँ एक सुंदर रूप में कांवेक्स बनती हैं। इन समरेखाओं का अर्थ होता है कि उपभोक्ता उन वस्तुओं के बीच एक विशेष संतुलन स्थिति तक पहुँचता है, जिसे हम 'कोन्वेक्स अंतराल समाधान' कह सकते हैं। यह समाधान वस्तुमंडल में दो धाराओं के बीच स्थित

होता है, और इसका आर्थिक प्राथमिकता स्थानिक संवेदनशीलता के साथ मिलता है। आंतरिक समाधान का आर्थिक प्राथमिकता होने का मतलब है कि उपभोक्ता का खरीद पैटर्न विविध होता है, यानी वह दोनों वस्तुओं की कुछ मात्रा खरीदता है। वास्तविक दुनिया की जानकारी हमें यह दिखाती है कि उपभोक्ताओं का खरीद पैटर्न बहुत विविध होता है और वे अक्सर कई विभिन्न वस्तुओं के सेट को खरीदते हैं, एक ही वस्तु पर पूरे आय का खर्च नहीं करते।"

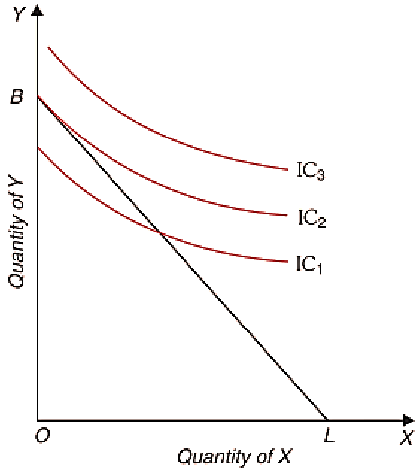

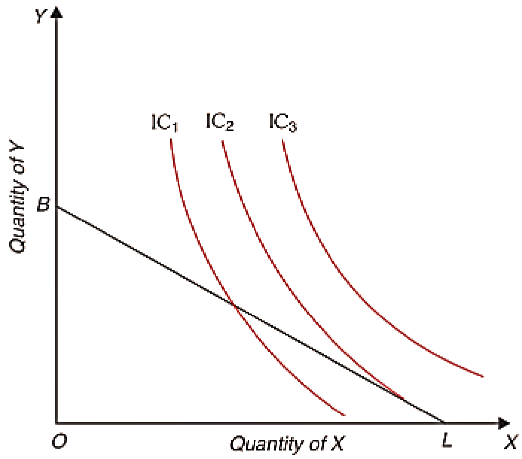

Fig. 8.22. कार्नर सन्तुलन कानकेव अनधिमान वक्र जब केवल 4 वस्तु खरीदें

Fig. 8.23. कार्नर सन्तुलन कानकेव अनधिमान वक्र जब केवल 4 वस्तु खरीदी जाये

उदासीनता मानक विश्लेषण हमें इस प्रकार के प्रसंग की व्याख्या करने में सहायक होता है। चित्र 8.22 की चर्चा करें, जहां दो वस्तुओं X और Y के बीच उदासीनता मानचित्र और बजट रेखा BL ऐसे हैं कि आंतरिक समाधान संभाव नहीं है और उपभोक्ता अपने संतुलन स्थिति में बिंदु B पर न केवल वस्तु X की कोई मात्रा खरीदेगा।

यह इसलिए है क्योंकि चित्र 8.22 में दिखाया गया है कि वस्तु X का मूल्य इतना उच्च है कि बजट रेखा दो वस्तुओं के बीच उदासीनता समरेखाओं से कम ढालू है। आर्थिक शब्दों में, इसका मतलब है कि बाजार में वस्तु X की मूल्य या अवसर लाभ X के लिए Y के प्रतिस्थान की सीमांत दर की तुलना में अधिक है, जिससे वस्तु X के लिए तैयारी होती है। वस्तु X की मूल्य इतनी उच्च है कि प्रतिस्थान की सीमान दर(वस्तु X के लिए तैयारी की मूल्य या पहली इकाई की मार्जिनल मूल्यांकन) की तुलना में उपभोक्ता एक भी इकाई वस्तु X नहीं खरीदता है($Px/Py > MRSy$)। इस प्रकार, उपभोक्ता अपनी संतुष्टि को अधिकतम करना चाहता है या वह संतुलन स्थिति में कोने के बिंदु B पर है जहां वह केवल वस्तु Y की खरीद करता है और किसी भी वस्तु X की नहीं। इस प्रकार, हमारे पास उपभोक्ता के संतुलन के लिए एक कोने का समाधान होता है,

दूसरी ओर, चित्र 8.23 में दो वस्तुओं के बीच उदासीनता मानचित्र ऐसा होता है कि बजट रेखा BL दो वस्तुओं के बीच उदासीनता समरेखाओं से कम ढलती है, ताकि $MRSy > Px/Py$ बजट रेखा BL के सभी उपभोग स्तर के लिए। इसलिए, वह अपनी संतोष को कोने के बिंदु L पर अधिकतम करता है, जहां वह केवल वस्तु X की खरीद करता है और किसी भी वस्तु Y की नहीं। इस मामले में वस्तु Y की मूल्य और इसके लिए तैयारी(अर्थात् MRS) इस प्रकार की होती है कि उपभोक्ता इसे खरीदने के लायक नहीं मानता है, यहाँ तक कि उसको इसकी एक भी इकाई खरीदने के लिए वापसी के योग्य नहीं लगता।

2.16. कोना संतुलन और अवतल उदासीनता वक्र Corner EquilibriumAnd Concave Indifference Curves:

उदासीनता मानक आमतौर पर मूल की ओर कोणों में वक्र होते हैं। उदासीनता मानक की कोणविता से यह सूचित होता है कि वस्तु X के लिए Y की प्रतिमूलन दर बढ़ती है जब अधिक X को Y के लिए प्रतिस्थापित किया जाता है। इस प्रकार, उदासीनता मानक मूल की ओर वक्र होते हैं जब न्यूनतम अतिरिक्त मार्जिनल विनिमय दर का सिद्धांत अच्छे से माना जाता है, जो आमतौर पर होता है। हालांकि, उदासीनता मानक मूल की ओर गोल होने की संभावना कुछ अपवादित मामलों में बाहर नहीं की जा सकती है। उदासीनता मानक की कान्वेक्सिटी दिखाती है कि वस्तु X के लिए Y की प्रतिमूलन दर बढ़ती है जब अधिक X को Y के लिए प्रतिस्थापित किया जाता है।

उदासीनता मानक की गोलाईविता सूचित करती है कि उपभोक्ता को प्रकार की नफरत है, अर्थात्, उपभोक्ता संविभिन्नता में रुचि नहीं रखता है। हालांकि, प्रकार की नफरत को सामान्य या मॉडल व्यवहार का मानना संभावना नहीं हो सकता, इसलिए हम गोलाईविता को सामान्य प्रकार मानते हैं।

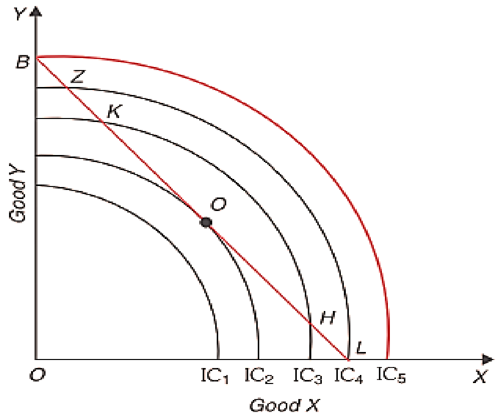

Fig. 8.24. उपभोक्ता सन्तुलन कानकेव अनधिमान कर्व

लेकिन जब उपभोक्ताओं को प्रकार की नफरत होती है और विविधता, तो प्रकार की नफरत के मामले में उदासीनता मानक कोने परिस्थितियों में पाया जाएगा। प्रकार की नफरत के मामले में, उपभोक्ता संतुलन स्थिति में नहीं होगा, अर्थात्, बजट रेखा और उदासीनता समरेखा के बीच स्पर्श के बिंदु पर, इस मामले में आंतरिक समाधान मौजूद नहीं होगा। इसके बजाय, हमारे पास उपभोक्ता के संतुलन के लिए कोने का समाधान होगा।

आइए चित्र 8.24 को देखें, यहां उदासीनता समरेखाएँ दिखाई दी हैं जो गोल हैं। दी गई बजट रेखा BL उदासीनता समरेखा IC2 को बिंदु Q पर स्पर्श करती है। लेकिन उपभोक्ता संतुष्टि में नहीं हो सकता क्योंकि दी गई बजट रेखा BL के साथ चलते हुए उसे उच्च स्तर की उदासीनता समरेखाओं पर जाने और Q पर से अधिक संतुष्टि प्राप्त करने की स्वतंत्रता होती है। इस प्रकार, बजट रेखा BL पर बढ़ते समय उसकी संतोष आवृत्तियों में बढ़ती है और वह संतुष्टि के प्राप्ति के लिए ऊपर की ओर बढ़ता है जब तक कि उसे अंतिम बिंदु B तक न पहुँच जाता है। उसी तरह, अगर Q से बजट रेखा पर नीचे जाता है, तो उसे उच्च स्तर की उदासीनता समरेखाओं पर जाने की स्वतंत्रता होती है और उसकी संतुष्टि Q पर पहुँचने से बढ़ती है, जब तक कि वह दूसरे अंतम बिंदु L तक पहुँच जाता है। इस परिस्थितियों में उपभोक्ता केवल दोनों वस्तुओं में से केवल एक का चयन करेगा: वह या तो X खरीदेगा या Y, इस पर निर्भर करेगा कि क्या L या B उच्चतम उदासीनता समरेखा पर पड़ता है। चित्र 8.24 में दिखाई देने वाली परिस्थितियों में बिंदु B बिंदु L से उच्च उदासीनता समरेखा पर पड़ता है। इस प्रकार, उपभोक्ता केवल Y का चयन करेगा और Y की OB खरीदेगा। यह सावधानीपूर्ण रूप से ध्यान देने योग्य है कि B पर बजट रेखा उदासीनता समरेखा IC5 के साथ स्पर्श नहीं करती है, फिर भी उपभोक्ता यहां संतुष्ट है। स्पष्ट है कि जब उपभोक्ता के पास अवसादना मानक होते हैं, तो उसे एक ही वस्तु का सेवन करने के लिए अवगत होगा।

2.17. समाप्ति CONCLUSION

हमारे विश्लेषण में, हमने प्रदर्शित किया है कि वस्तुओं के बीच वक्र उदासीनता समरेखाओं के साथ भी उपभोक्ता संतुलन में एक कोने का समाधान मौजूद हो सकता है। हालांकि, यह कोने संतुलन केवल तभी उत्पन्न होता है जब किसी वस्तु की मूल्य पहले इकाई के लिए अतिरिक्त विनिमय दर की तुलना में अत्यधिक हो। दूसरी ओर, जब उदासीनता समरेखाएं वक्र होती हैं, तो कोने समाधान अपरिहार्य होता है, जिससे यह संकेतित होता है कि जैसे-जैसे उपभोक्ता वस्तु X की अधिक मात्रा प्राप्त करता है, उसकी एक अतिरिक्त इकाई से आगामी संतोष अधिक महत्वपूर्ण होता है। हालांकि, एक वस्तु पर केवल खर्च करने वाले उपभोक्ता का यह चित्रण वास्तविक दुनिया के अनुभवों के खंडन से प्रतिकूल है, जहाँ विविध वस्तुएँ खरीदी जाती हैं। इस प्रकार, वक्र उदासीनता समरेखाएं विश्वास्त्रीय नहीं हैं। यह अर्थशास्त्रिक तर्क वक्र के स्थान पर वक्रित समरेखाओं के लिए है, जो उपभोक्ता के व्यवहार के साथ मेल खाते हैं।

2.18 पूरी तरह से उपयुक्त प्रतिस्थापकों और पूरी तरह से उपयुक्त पूरकों के मामले में कोने का समाधान Corner Solution in Case of Perfect SubstitutesAnd Perfect Complements

उपयुक्त प्रतिस्थापकों के साथ उपभोक्ता संतुलन में कोने का समाधान और भी एक उदाहरण है। इस परिदृश्य में, उदासीनता समरेखाएँ रेखांकित होती हैं, और एक आंतरिक समाधान नहीं हो सकता क्योंकि बजट रेखा एक सीधी रेखा की समरेखा के एक बिंदु पर स्पर्श नहीं कर सकती। दो संभावनाएं हैं: अगर बजट रेखा की ढलान उदासीनता समरेखा की ढलान से तीव्र है(जैसा कि चित्र 8.25 में), तो उपभोक्ता केवल Y ही खरीदेगा, जबकि अगर बजट रेखा की ढलान उदासीनता समरेखा की ढलान से कम है(जैसा कि चित्र 8.26 में), तो उपभोक्ता केवल X ही खरीदेगा।

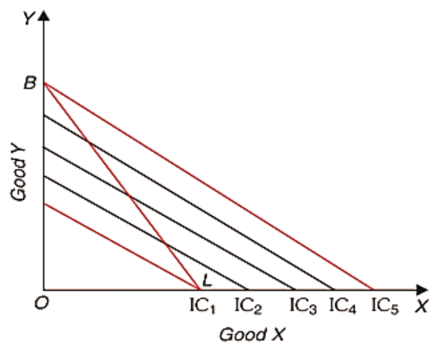

Fig. 8.25. कार्नर सन्तुलन पूर्ण प्रतिस्थान में

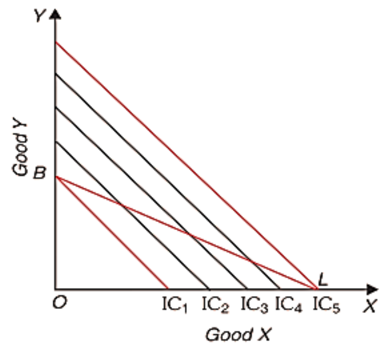

Fig. 8.26. कार्नर सन्तुलन पूर्ण प्रतिस्थान में

यह महत्वपूर्ण है कि बजट रेखा के दोनों अंतों(B और L) के बीच, उपभोक्ता संतुष्टि नहीं प्राप्त करेगा। चित्र 8.25 के मामले में, अंत बिंदु B सबसे उच्च संभावित उदासीनता समरेखा पर पड़ता है; उसी तरह, चित्र 8.26 में भी, अंत बिंदु L ऐसा करता है। यह दिखाता है कि उपयुक्त प्रतिस्थापकों के साथ भी, उपभोक्ता एक एकल विकल्प की ओर झुकता है।

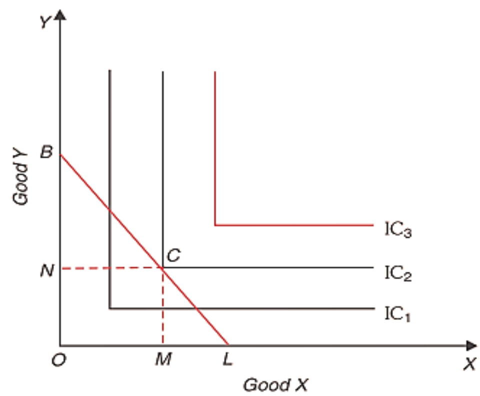

Fig. 8.27. कार्नर सन्तुलन पूर्ण पूरक वस्तु के मामले में

एक अनूठा मामला विशेष पूरक वस्तुओं का है, जो चित्र 8.27 में दिखाया गया है। पूरी तरह से उपयुक्त पूरक वस्तुओं की उदासीनता समरेखाएँ एक समंगुण आकार बनाती हैं। इस प्रकार, उपभोक्ता संतुलन केवल उदासीनता समरेखा IC_2 के कोने बिंदु पर निर्धारित होगा, जो बजट रेखा BL को बिंदु C पर छूतती है। उदासीनता समरेखा IC_2 सबसे उच्च संभावित समरेखा है जिसें उपभोक्ता पहुँच सकता है। दिए गए बजट रेखा BL में चित्र 8.27 में, उपभोक्ता संतुष्टि स्थिति को उदासीनता समरेखा IC_2 पर बिंदु C पर प्राप्त होगी और वह X की OM और Y की ON खपत करेगा।

2.19 बोध प्रश्न :

1) कार्डिनल उपयोगिता और ऑर्डिनल उपयोगिता का भेद करें? कौन सी अधिक यथार्थ है?

2) उदासीनता वक्र क्या होते हैं? उदासीनता वक्र विश्लेषण की मांगों पर क्या पूर्वानुमान होते हैं?

3) (a) व्यक्तिगत की उदासीनता कुर्वों के पास(i) नकारात्मक ढलव क्यों होता है,(ii) क्यों इस परसेक्ट नहीं करते हैं, और(iii) मूल के प्रति वक्र होते हैं, यह समझाइए।

(b) दिखाएँ कि यदि उदासीनता वक्र अवतल हैं, तो एक उपभोक्ता निम्न में से केवल एक का उपभोग करेगा दो सामान।

4) बजट लाइन क्या है? एक्स-अक्ष पर इसका इंटरसेप्ट क्या दर्शाता है? Y-अक्ष पर इसका अवरोध क्या है? प्रदर्शन? बजट रेखा का ढलान क्या मापता है?

5) अमित की अच्छे X और अच्छे Y से संबंधित बजट लाइन में अच्छे X की 50 इकाइयाँ और 20 इकाइयाँ हैं। अच्छा Y. यदि वस्तु X का मूल्य 12 है, तो अमित की आय क्या है? अच्छे की कीमत क्या है। Y ? बजट रेखा का ढलान क्या है?

6) उदासीनता वक्र दृष्टिकोण की सहायता से उपभोक्ता की सन्तुलन स्थिति को स्पष्ट कीजिए। कैसा क्या उपभोक्ता की आय में परिवर्तन उसके संतुलन को प्रभावित करेगा?

7) समझाइए कि उपभोक्ता बाजार बास्केट क्यों चुनेगा ताकि प्रतिस्थापन की सीमांत दर(एमआरएस) माल के मूल्य अनुपात के बराबर।

8) एक उपभोक्ता अपनी सारी आय भोजन और कपड़ों पर खर्च करता है। की वर्तमान कीमतों पर पीएफ = ' 10 और पीसी = ' 5, वह 20 यूनिट भोजन और 50 यूनिट कपड़े खरीदकर अपनी उपयोगिता को अधिकतम करती है

(a) उपभोक्ता की आय क्या है?

(b) संतुलन की स्थिति में कपड़ों के लिए भोजन के प्रतिस्थापन की उपभोक्ता की सीमांत दर क्या है?

इकाई-3 जोखिम व अनिश्चितता के संदर्भ चुनाव हेतु आधुनिक उपयोगिता विश्लेषण: बरनौली अवधारणा, न्यूमान मार्गेन्टर्न उपयोगिता माप विधि Modern utilityAnalysis for selection of riskAnd uncertainty: Bernoulli concept, Neumann Margeren utility measurement method

इकाई की रूपरेखा

3.0. उद्देश्य(Aim)

3.1. प्रस्तावना(Introduction)

3.2. सेंट पीटर्सबर्ग पैरेडॉक्स और बर्नूली की अनुमानित घटना ST. PETERSBURG PARADOXAND BERNOULLI'S HYPOTHESIS

3.3. रिस्की परिस्थितियों में न्यूमैन-मॉर्गनस्टर्न यूटिलिटी संकेत अनुभाग(Neumann-Morgenstern Utility Concept Index Under Risky Situations)

3.4. (उपयोगिता सिद्धांत और जोखिम के प्रति दृष्टिकोण) UTILITY THEORYANDATTITUDE TOWARD RISK

3.5. जोखिम और अनिश्चितता की स्थितियों के तहत जोखिम टालने वाले का विकल्प Choice ofA RiskAverter Under Conditions of RiskAnd Uncertainty

3.6. (फ्रीडमैन-सैवेज परिकल्पना) FRIEDMAN-SAVAGE HYPOTHESIS

3.7. जोखिम को मापना: परिणाम की संभावना MEASURING RISK: PROBABILITY OFAN OUTCOME

3.8. जोखिम-वापसी व्यापार-बंद और पोर्टफोलियो का विकल्प(RISK-RETURN TRADE-OFFAND CHOICE OFA PORTFOLIO)

3.9. मार्कोविट्ज पोर्टफोलियो सिद्धांत(Markowitz Portfolio Theory)

3.10. आधुनिक पोर्टफोलियो सिद्धांत के अनुमान(Estimates of modern portfolio theory)

3.11. बोध प्रश्न

3.0. उद्देश्य(Aim)

इस इकाई को पढ़ने क बाद आप सीखेंगे :

- "जोखिम और अनिश्चितता के संदर्भ में आधुनिक उपयोगिता विश्लेषण" एक महत्वपूर्ण चैप्टर है जिसमें विभिन्न उपयोगिता विश्लेषण की तकनीकों का परिचय दिया जाता है जो जोखिम और अनिश्चितता के समय में विभिन्न विकल्पों का चयन करने के लिए प्रयुक्त होते हैं। इस चैप्टर के माध्यम से आप निम्नलिखित प्रमुख उपयोगिता विश्लेषण की समझ प्राप्त करेंगे:

- **बर्नौली अवधारणा:** इस भाग में, आपको बर्नौली अवधारणा की समझ प्राप्त होगी, जो जोखिम और पुरस्कृति के बीच एक मनवान्य संतुलन का परिचय देती है।

- **न्यूमान मार्गेन्टर्न उपयोगिता माप विधि:** आपको न्यूमान मार्गेन्टर्न उपयोगिता माप विधि के बारे में जानकारी मिलेगी, जो उपयोगकर्ताओं की पसंदीदा विकल्पों की प्राथमिकताओं को मापता है।

- **फ्रीडमैन सैवज अवधारणा:** इस भाग में, आप फ्रीडमैन सैवज अवधारणा की समझ प्राप्त करेंगे, जो व्यक्तिगत विकल्पों की प्राथमिकताओं को मापता है जब उपयोगकर्ता विभिन्न जोखिमों के सामना करते हैं।

- **मार्कोविज अवधारणा:** आपको मार्कोविज अवधारणा की समझ प्राप्त होगी, जिसका उपयोग उपयोगकर्ताओं के पूर्वानुमान करने में किया जाता है ताकि वे विकल्पों के बीच चयन कर सकें।

- इस प्रकार, "जोखिम और अनिश्चितता के संदर्भ में आधुनिक उपयोगिता विश्लेषण" चैप्टर के माध्यम से आप जोखिम और अनिश्चितता के समय में सुरक्षित और मानवान्य निर्णय लेने के लिए विभिन्न उपयोगिता विश्लेषण की तकनीकों की समझ प्राप्त करेंगे।

3.1. प्रस्तावना(Introduction)

हमारा उपभोक्ता व्यवहार का विश्लेषण चुनौतियों की निश्चितता में किया गया है, लेकिन वास्तविक दुनिया में खेल के मामलों, अपूर्व रिटर्न वाले निवेशों और सामान की गुणवत्ता के बारे में जानकारी की कमी के कारण अनिश्चितता को पेश करती है। खेल, जुआ और निवेशों में अनिश्चित परिणामों का सामान्यत: प्रभाव होता है जो उपयोगिता और रिटर्न्स को प्रभावित करता है। उत्पाद की गुणवत्ता के बारे में जानकारी की कमी, विशेष रूप से प्रयुक्त आइटम में, अनिश्चितता जोड़ती है। हम बात करेंगे उन दो अनिश्चितता के परिणामों के बारे में जहाँ परिणामों की अनिश्चितता होती है। उपनिषदों के अनिश्चितता के तहत चुनौतियों के साथ निर्णय लेने का ध्यान हम बुक के बादी हिस्से में करेंगे।

➢ **<u>The Concept of Risk</u>**

रिस्क उन स्थितियों को संकेत करता है जहाँ किसी निर्णय के परिणाम में अनिश्चितता होती है, लेकिन प्रत्येक संभावित परिणाम की संभावनाएँ जानी या आकलनीय होती हैं। रिस्क के साथ निर्णय लेने में संभावित परिणामों और उनकी संबंधित संभावनाओं की जानकारी की आवश्यकता होती है। उदाहरण स्वरूप, सिक्के की फेंक में सिर या पूंछ की 50-50 अवसर होती है। इसी तरह, कंपनी के शेयरों में निवेश करने में भी पिछले अनुभव पर आधारित परिणामों का आकलन किया जाता है। अधिक परिणाम असमानता से संबंधित होते हैं, तो निवेश रिस्क अधिक होता है। रिस्क को अनिश्चतता से भिन्न करना महत्वपूर्ण है; अनिश्चतता में कई परिणाम होते हैं जिनकी विशिष्ट संभावनाएँ अज्ञात या आकलित नहीं होती हैं, क्योंकि प्रतिस्थितियों की प्रमाणित जानकारी की कमी या परिवर्तनशीलता हो सकती है। कुछ मामूलतः अज्ञात परिणाम भी हो सकते हैं, जैसे अज्ञात क्षेत्रों में तेल की खोज के लिए खुदाई करने में। सैद्धांतिक भिन्नता के बावजूद, रिस्क और अनिश्चतता का प्रयोग अक्सर परिवर्तनशील रूप से किया जाता है।

3.2 सेंट पीटर्सबर्ग पैरेडॉक्स और बर्नूली की अनुमानित घटना ST. PETERSBURG PARADOXAND BERNOULLI'S HYPOTHESIS

जैसा कि पहले कहा गया है, डैनियल बर्नूली ने सेंट पीटर्सबर्ग पैरेडॉक्स नामक समस्या में गहरी रूचि दिखाई और इसे हल करने का प्रयास किया। सेंट पीटर्सबर्ग पैरेडॉक्स उस समस्या की ओर इशारा करता है कि अधिकांश लोग एक न्यायसंगत खेल या दांव में भाग लेने के लिए तैयार नहीं होते। उदाहरण स्वरूप, एक जुआ में भाग लेने की प्रस्तावना, जिसमें किसी व्यक्ति का जीतने या हारने का बराबर मौका(अर्थात्, 50-50 अवसर) होता है, एक न्यायसंगत खेल है। गणितिक शब्दों में कहें तो, जुआ जिसका अपेक्षित मूल्य शून्य है, या और भी आमतौर पर, खेल जिसमें खेलने का अधिकार की फीस उसके अपेक्षित मूल्य के बराबर होती है, एक न्यायसंगत है। इस प्रकार, सेंट पीटर्सबर्ग के अनुसार एक अनिश्चित खेल में अधिकांश व्यक्तियों किसी न्यायसंगत दांव को नहीं लगाएंगे, अर्थात्, न्यायसंगत खेल में भाग नहीं लेंगे।

डैनियल बर्नूली ने इस तर्कपूर्ण व्यक्तिगत व्यवहार की समझदारी प्रस्तुत की। उनके अनुसार, एक तर्कपूर्ण व्यक्ति अपेक्षित उपयोगिता के आधार पर निर्णय लेगा, जबकि उसकी निर्णय की आधारित धनगत मूल्य से कम होगी। उन्होंने इसे भी जताया कि पैसे की अतिरिक्त जीतने पर व्यक्ति की मार्जिनल उपयोगिता कम होती है। क्योंकि व्यक्ति अपेक्षित उपयोग से अधिक पैसे का लाभ उठाता है अगर वह खेल जीतता है, और पैसे की मार्जिनल उपयोगिता उसके पास अधिक पैसे होने पर कम होती है, तो अधिकांश व्यक्तियों खेल नहीं खेलेंगे, अर्थात्, दांव नहीं लगाएंगे। इसी तरह बर्नूली ने 'सेंट पीटर्सबर्ग पैरेडॉक्स' को हल किया।

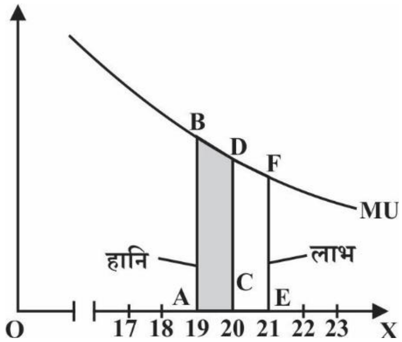

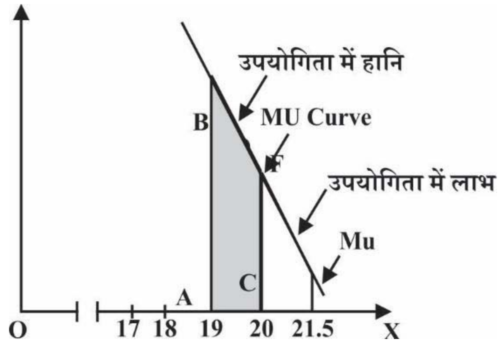

Fig. 9. बरनौली परिकल्पना फेयर गेम में प्रतिभाग न करने की इच्छा

Fig. 10. प्रतिभाग करने की अनिच्छा जब MU तेजी से गिरे

ग्राफिक चित्रण बर्नूली के संदर्भ में पैराडाक्स का समाधान स्पष्ट करेगा। चित्र .9. को ध्यान में रखें, जिसमें X-अक्ष पर पैसे की मात्रा(हजार रुपये) और Y-अक्ष पर एक व्यक्ति के पैसे की मार्जिनल उपयोगिता(रुपये) मापी जाती है। मान लीजिए कि एक व्यक्ति के पास 20 हजार रुपये हैं और वह बाजी लगा सकता है, जिसमें जीतने या हारने का समान अवसर(अर्थात्, 50-50 अवसर) होता है। अगर वह बाजी जीतता है, तो उसके पास 21 हजार(20 + 1) रुपये हो जाएंगे। अगर उसके पास पैसे बढ़ने से उसकी मार्जिनल उपयोगिता कम होती है, तो उसकी अतिरिक्त एक हजार रुपये की मार्जिनल उपयोगिता जो चतुर्भुज CDFE द्वारा दर्शाई गई है, पिछले एक हजार(अर्थात्, 20 हजार) रुपये की अतिरिक्त मार्जिनल उपयोगिता से कम होती है, जिसे चतुर्भुजABDC द्वारा मापा जाता है। दूसरे शब्दों में, जीतने के मामले में उपयोग की वृद्धि हार के मामले में उपयोग की हानि से कम है, हालांकि आर्थिक राशि(अर्थात्, 1 हजार रुपये) की दृष्टि से लाभ और हानि समान होती है। इस प्रकार, मार्जिनल उपयोग की वृद्धि को देखते हुए एक तर्कपूर्ण व्यक्ति इसलिए बाजी नहीं लगाएगा, अर्थात्, 50-50 अवसरों के साथ।

बर्नूली की अनुमानित प्रायिकता की अपने निर्णय को किसी गेम में भाग लेने के व्यक्ति की निर्णय की ओर परिणाम के बजाय अपेक्षित उपयोगिता पर निर्भर करती है, यह रिस्क के तहत व्यवहार को समझने में महत्वपूर्ण है। जबकि बर्नूली का विचार कि व्यक्तियों का ध्यान अतिरिक्त पैसे से प्राप्त उपयोगिता पर होता है, यह मान्यता प्राप्त कर चुका है, लेकिन यह सापेक्ष उपयोगिता मापन करता है, जिसका समाधान वॉन नेउमैन और मॉर्गनस्टर्न द्वारा किया गया है। उन्होंने उपयोगिता को संख्यात्मक मूल्यों के लिए नए तरीके से आवंटित करने की एक नई विधि प्रस्तुत की, जिसमें बर्नूली के अपेक्षित उपयोगिता के तत्व को शामिल किया गया है, जो व्यक्तिगत चुनौतीग्रस्त परिस्थितियों में चयन का विश्लेषण करने की अनुमति देता है, एक N - M उपयोगिता सूचकांक का उपयोग करके।

3.3 रिस्की परिस्थितियों में न्यूमैन-मॉर्गनस्टर्न यूटिलिटी संकेत अनुभाग(Neumann-Morgenstern Utility Concept Index Under Risky Situations)

बर्नूली के विचार का उपयोग करते हुए कि रिस्की और अनिश्चित प्रायिकताओं में जैसे कि सट्टे में, जुए में और लॉटरी टिकट खरीदने में, एक तर्कसंगत व्यक्ति अपेक्षित उपयोगिताओं के स्थान पर अपेक्षित पैसे के मूल्यों के बजाय जाएगा, न्यूमैन और मॉर्गनस्टर्न ने अपने प्रसिद्ध काम "खेल और आर्थिक व्यवहार का सिद्धांत" में2 पुरस्कृत उपयोगिता से प्राप्त जीतने की उम्मीदवारिता को संख्यात्मक रूप से मापन करने का एक तरीका दिया। इस उपयोगिता सूचकांक के आधार पर, जिसे N-M सूचकांक कहा जाता है, रिस्की परिस्थितियों के मामलों में व्यक्तिगत निर्णय लिए जाते हैं। इस प्रकार, न्यूमैन-मॉर्गनस्टर्न विधि का उपयोग करके एक उपयोगिता नंबर का आवंटन किया जाता है, या अन्य शब्दों में, व्यक्ति के पास पैसे की संपत्ति की वृद्धि होने पर प्राप्त सम्पूर्ण उपयोगिता का N-M उपयोगिता सूचकांक निर्मित किया जाता है। रिस्की और अनिश्चित परिस्थितियों में एक व्यक्ति के द्वारा किए गए चयन N-M यूटिलिटी सूचकांक(अर्थात प्राप्त संख्यात्मक उपयोगिताओं) और पैसे की आय में परिवर्तनों पर निर्भर करते हैं। कैसे N-M उपयोगिता सूचकांक की गणना की जाती है, यह इस अध्याय के अप्पेंडिक्स में स्पष्ट किया जाएगा। आगे बढ़ते हुए, हम पहले N-M उपयोगिता सूचकांक के अविभाग का उपयोग करके विभिन्न रिस्क के प्रति दृष्टिकोण को समझाएंगे। रिस्क की दिशा को समझाने के बाद, हम N-M उपयोगिता सूचकांक के साथ व्यक्तियों को क्यों बहुत से लोग उचित शर्तों(अर्थात उचित जुए) से बचते हैं और बीमा खरीदते हैं, यह समझाएंगे। के साथ, हम यह भी समझाएंगे कि कुछ लोग क्यों जुए को पसंद करते हैं।

3.4.(उपयोगिता सिद्धांत और जोखिम के प्रति दृष्टिकोण) UTILITY THEORYANDATTITUDE TOWARD RISK

लोगों की रिस्क के प्रति प्राथमिकताएँ बहुत अलग होती हैं। आमतौर पर अधिकांश व्यक्तियों को कम रिस्की परिस्थिति पसंद होती है(अर्थात परिणामों या पुरस्कारों में कम परिवर्तन की परिस्थिति)। दूसरे शब्दों में, अधिकांश व्यक्तियों का उद्देश्य रिस्क को कम करना होता है और वे रिस्क को न्यंत्रित करने वाले या रिस्क अवर्टर कहलाते हैं। हालांकि, कुछ व्यक्तियों को रिस्क पसंद होता है और वे रिस्क-सीकर या रिस्क-लवर कहलाते हैं। कुछ अन्य व्यक्तियों को रिस्क के प्रति उदासीनता होती है और उन्हें रिस्क-न्यूट्रल कहा जाता है। हालांकि, यह महत्वपूर्ण है कि ये विभिन्न रिस्क के प्रति प्राथमिकताएँ व्यक्ति के लिए पैसे की अतिरिक्त उपयोगिता के बारे में निर्भर करती हैं, यह कि व्यक्ति के लिए पैसे की मार्जिनल यूटिलिटी कम हो रही है या बढ़ रही है या स्थिर है। जैसा कि नीचे स्पष्ट किया जाएगा, रिस्क अवर्ट व्यक्ति के लिए मार्जिनल यूटिलिटी कम होती है जब उसके पास अधिक पैसे होते हैं, वही समय जब रिस्क-सीकर के लिए मार्जिनल यूटिलिटी पैसे के साथ बढ़ती है। रिस्क-न्यूट्रल व्यक्ति के लिए मार्जिनल यूटिलिटी पैसे के साथ बराबर रहती है।

1) **जोखिम से बचने वाला(RiskAverter) :** विचार करें एक व्यक्ति के रिस्क के प्रति दृष्टिकोण की, उनकी मुद्रा इनकम पर एक प्रतिष्ठानक माप के रूप में. मुद्रा इनकम वह वस्तुओं की श्रेणी को सूचित करती है जो बाजार में खरीदी जा सकती हैं. माना जाता है कि व्यक्ति को विभिन्न परिस्थितियों में मुद्रा इनकम कमाने की संभावना के बारे में ज्ञान है. हालांकि, परिणाम या लाभ नकदी की बजाय उपयोगिता के प्रायोगिक मूल्य में मूल्यांकन किए जाते हैं. चित्र 11 में, हमने एक कर्व वाली वर्गीकृत OU दिखाई है, जो एक रिस्क-एवर्स व्यक्ति के मुद्रा इनकम की उपयोगिता फ़ंक्शन का प्रस्तुतिकरण दिखाता है.

इस ग्राफिकल प्रतिनिधित्व में, व्यक्ति की मुद्रा इनकम को एक्स-अक्ष पर प्लॉट किया जाता है, जबकि उस आय से प्राप्त उपयोगिता को वाय-अक्ष पर प्रतिनिधित्व किया गया है. विशेष रूप से, एक रिस्क-एवर्स व्यक्ति की उपयोगिता फ़ंक्शन आय अक्ष(एक्स-अक्ष) के संदर्भ में एक गोल आकार लेता है. यह कर्व दिखाता है कि हालांकि रिस्क संवर्जित व्यक्ति द्वारा अनुभवित कुल उपयोगिता उनकी आय बढ़ने पर बढ़ती है, लेकिन वृद्धि की दर समय के साथ कम हो जाती है. सरल शब्दों में, कुल उपयोगिता के कर्व(OU) की तीव्रता व्यक्ति की मुद्रा इनकम बढ़ने के साथ कम होती है.

चित्र 11 की जांच करते हैं, हम देखते हैं कि जैसे-जैसे व्यक्ति की मुद्रा इनकम 10 से 20 हजार रुपये से बढ़ती है, वे कुल उपयोगिता भी 45 से 65 इकाइयों तक बढ़ती है. इससे कुल उपयोगिता में 20 इकाइयों की वृद्धि का सूचना देता है. उसी तरह, जब व्यक्ति की मुद्रा इनकम और भी 20 हजार से 30 हजार रुपये तक बढ़ती है, तो उनकी कुल उपयोगिता 65 से 75 इकाइयों तक बढ़ती है, जिससे 10 इकाइयों की वृद्धि परिलक्षित होती है।

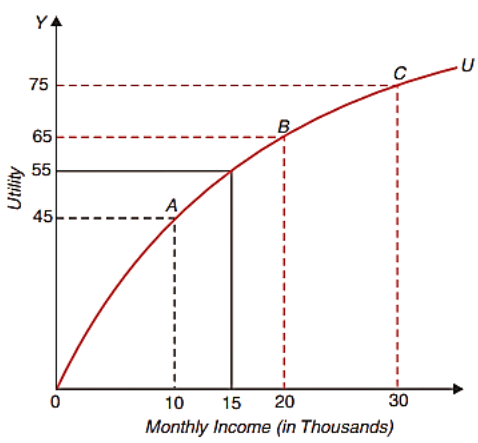

Fig. 11. एक रिस्क एवर्ट के लिए उपयोगिता फलन

3.5 जोखिम और अनिश्चितता की स्थितियों के तहत जोखिम टालने वाले का विकल्प Choice ofA RiskAverter Under Conditions of RiskAnd Uncertainty:

अब, एक महत्वपूर्ण सवाल पर चर्चा करते हैं: एक रिस्क-एवर्ट व्यक्ति, जिसे एक कानकेव उपयोगिता फ़ंक्शन द्वारा चरित्रित किया गया है,

अनिश्चितता और जोखिम के सामने कैसे निर्णय लेता है? वह व्यक्ति वर्तमान में एक स्थिर मासिक वेतन(₹20,000) पर काम कर रहा है। इस स्थिर नौकरी की कमाई के बारे में कोई संदेह नहीं है, और इसलिए कोई जोखिम शामिल नहीं है। अब, एक स्थिर नौकरी के स्थानांतरण को विचार करें जिसमें कमीशन आधार पर एक बिक्रीकर्ता की नई नौकरी है। यह नई भूमिका जोखिम लाती है क्योंकि आय निश्चित नहीं है। सफल बिक्रीकर्ताई एक मासिक आय ₹30,000 पैदा कर सकती है, जबकि नाकामियता की स्थिति में आय को ₹10,000 तक कम कर सकती है। यदि हर स्थिति के लिए 50-50 प्रासंगिकता मानी जाए(प्रत्येक की 0.5 प्रासंगिकता के साथ), तो अनिश्चितता है। जबकि किसी विशिष्ट विकल्प के अपेक्षित उपयोगिता को जानकारी नहीं है, हम विभिन्न परिणामों के साथ जुड़े प्रासंगिकताओं के प्रायोजनिक उपयोगिता को आंक सकते हैं।

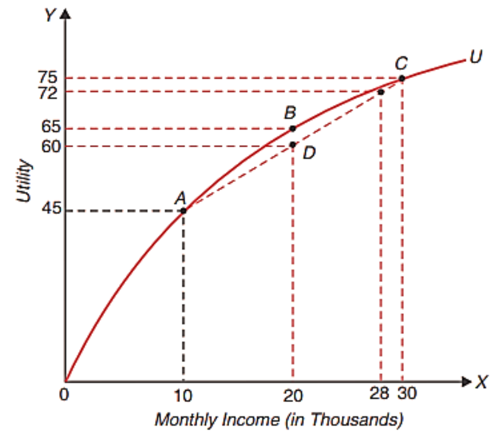

Fig. 11(a). रिस्क एवर्स व्यक्ति की च्वाइस

यह निर्दिष्ट करना कि क्या व्यक्ति को नई अनिश्चित नौकरी का चयन करना चाहिए या उसे वर्तमान स्थिर नौकरी पर ठिकाना देना चाहिए, नई नौकरी की प्रत्याशित उपयोगिता को वर्तमान नौकरी की निश्चित उपयोगिता के साथ तुलना करने में शामिल है। एक आपत्तिग्राही व्यक्ति के निर्णय-निर्माण प्रक्रिया को स्पष्ट करने के लिए, चित्र 11(a) का विचार करें। विशेष रूप से, चित्र 11(a) में उपयोगिता कर्व OU दिखाता है जो निश्चित ₹20,000 की आय की उपयोगिता को 65 बताता है। नई, अनिश्चित नौकरी के मामले में, यदि व्यक्ति एक बिक्रीकर्ता के रूप में सफल होता है और ₹30,000 कमाता है, तो इसकी संबंधित उपयोगिता 75 होती है। विपरीत रूप से, यदि उनकी बिक्रीकर्ता के रूप में प्रदर्शन में कमी होती है, जिससे ₹10,000 की आय होती है, तो उपयोगिता 45 होती है।(इस बात का ध्यान देने योग्य है कि नई, अनिश्चित नौकरी की प्रत्याशित मूल्य ₹20,000 होता है, जिसे इस प्रकार गणना किया जा सकता है:

E(X) = 0.5 × ₹10,000 + 0.5 × ₹30,000 = ₹20,000)

अब, एक रेखाAC खींची जाती है, जो बिंदुA(₹10,000 के समर्थन में) और बिंदु C(₹30,000 के समर्थन में) को जोड़ती है। सफल बिक्रीकर्ताई या नाकामियता की संभावना 0.5 के साथ दी गई है, नई नौकरी की प्रत्याशित उपयोगिता को निर्धारित कर सकती है। चित्र 11(a) से स्पष्ट होता है कि अपेक्षित आय ₹20,000 पर(रेखाAC पर बिंदु D पर) आशायित उपयोगिता 60 है।

E(U) = 0.5 U(10,000) + 0.5 U(30,000)

Since utility of ` 10,000 is 45And utility of ` 30,000 is 75, we have

E(U) = 0.5 × × 45 + 0.5 × 75

= 22.5 + 37.5

= 60.0

संक्षेप में, वर्तमान नौकरी एक निश्चित मासिक वेतन(₹20,000) प्रदान करती है जिसमें कोई अनिश्चितता नहीं है, जिससे उपयोगिता 65 होती है। दूसरी ओर, नई बिक्रीकर्ता नौकरी की प्रत्याशित उपयोगिता 60 होती है(चित्र 11(a) में ₹20,000 की प्रत्याशित आय के बिंदु D पर)। क्योंकि नई, अनिश्चित नौकरी की प्रत्याशित उपयोगिता वर्तमान नौकरी की निश्चित उपयोगिता से कम है, व्यक्ति संभावित है कि वह नयी

नौकरी की पेशेवरता को नकार देगा जो जोखिम शामिल करती है।

एक विपरीत प्रासंगिकता के अनुसार, बिक्रीकर्ता के रूप में सफलता की 90% के लिए(प्रासंगिकता 0.9 की) मानने पर, कमीशन-आधारित बिक्रीकर्ता नौकरी की प्रत्याशित उपयोगिता 72 की गणना की जाती है, जो ₹20,000 की निश्चित आय की उपयोगिता को पार करती है। जितना कि व्यक्ति जोखिम विरोधी होने के बावजूद उचित विचार का चयन करेगा क्योंकि प्रत्याशित मूल्य काफी अधिक होता है। यह निर्णय मुख्य रूप से सफलता की बड़ी 90% संभावना पर निर्भर है, जो दिखाता है कि एक रिस्क-एवर्ट व्यक्ति सफलता में विश्वास रखने पर जब विशेष रूप से उच्च होता है, तो उसने जोखिमपूर्ण विकल्प का चयन किया सकता है। इससे यह महत्वपूर्ण बात सामने आती है कि ऐसे निर्णयों को करने में एक प्रत्याशित मूल्य और उच्च आत्मविश्वास की महत्वपूर्णता को कैसे साझा किया जाता है।

E(U) = 0.1 U(10,000) + 0.9 U(30,000)

Since the utility of ` 10,000 is 45And the utility of ` 30,000 is 75, we have:

E(U) = 0.1 × 45 + 0.9 × 75

= 4.5 + 67.5 = 72

जहां व्यक्ति की बिक्रीकर्ता के रूप में सफलता की प्रासंगिकता 90%(प्रासंगिकता 0.9) है, ग्राफ : 11(a) निर्णय लेने की प्रक्रिया का वर्णन करता है। उपयोगिता वक्र OU में कानकेव उपयोगिता फ़ंक्शन का चित्रण करती है, जो निश्चित ₹20,000 की आय की उपयोगिता को 65 दिखाता है। नई प्रत्याशित उपयोगिता वक्र इसे बिंदु E पर पार करती है, जो ₹28,000 की प्रत्याशित आय का संवादन करता है, जहां प्रत्याशित उपयोगिता 72 है। यह उच्च सफलता की संभावना वाली बिक्रीकर्ता नौकरी का प्रतिनिधित्व करता है। रेखाAC बिंदुA(₹10,000) और बिंदु C(₹30,000) को जोड़ती है, अनिश्चित नौकरी की संभावित परिणामों की प्रस्तुति करती है। 90% सफलता की संभावना के साथ, व्यक्ति का निर्णय जोखिमपूर्ण विकल्प की उच्च प्रत्याशित उपयोगिता पर प्रभावित होता है। बिंदु E(₹28,000) पर प्रत्याशित उपयोगिता 72 होती है, निश्चित आय विकल्प की उपयोगिता को पार करती है।

E(V) = 0.1 × 10,000 + 0.9 × 30,000

= 1,000 + 27,000 = 28,000 or 28 thousand

यह परिस्थिति दिखाती है कि एक व्यक्तिगत सफलता की प्रासंगिकता काफी उच्च होने पर एक जोखिम-विरोधी व्यक्ति आमतौर पर जोखिमपूर्ण विकल्प का चयन कर सकता है, जिसका मतलब है कि उनकी क्षमताओं में मजबूत विश्वास है। निर्णय को एक पर्याप्त प्रत्याशित मूल्य और सफलता की ऊँची मानसिकता की संयोजन द्वारा प्रेरित किया जाता है।

2) **जोखिम प्रेमी (Risk Lover) :** एक जोखिम-प्रेमी व्यक्ति प्रासंगिक आय के साथ एक जोखिमपूर्ण परिणाम की प्राथमिकता करता है, जो निश्चित आय के बजाय एक समान प्रत्याशित आय के साथ होता है, जो चित्र 12 में उपयोगिता फ़ंक्शन कर्व OU(चित्र 12) से स्पष्ट होता है, जहाँ उच्च मुद्रा आय मार्जिनल उपयोगिता में वृद्धि लाता है। मान लीजिए कि इस व्यक्ति की वर्तमान नौकरी में निश्चित आय ₹20,000 है, जिससे उन्हें 43 की उपयोगिता प्राप्त होती है(चित्र 12)।

E(U) = 0.5 U(10,000) + 0.5 U(30,000)

अब, अगर उन्हें एक नई जोखिमपूर्ण नौकरी की पेशेवरता की प्रस्तावना की जाती है, जिसमें 50% संभावना होती है कि उनकी कमाई ₹30,000 हो और 50% संभावना होती है कि उनकी कमाई ₹10,000 हो, तो उनकी प्रत्याशित उपयोगिता 51.5 के रूप में गणना की जाती है, जो उनकी वर्तमान नौकरी से 43 की उपयोगिता को पार करती है।

E(U) = 0.5(20) + 0.5(83)

= 10 + 41.5

= 51.5

समान प्रत्याशित आय के बावजूद, जोखिम-प्रेमी व्यक्ति जोखिमपूर्ण विवर्तन के प्रति उनकी प्रियता के कारण नई जोखिमपूर्ण नौकरी की ओर रुचि दिखाता है, जैसा कि जुआ और समान गतिविधियों में दिखाई देता है।

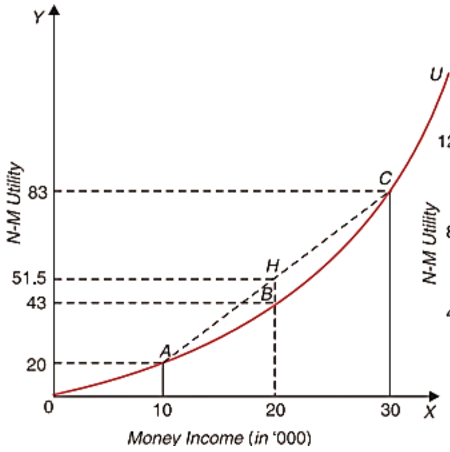

Fig. 12. रिस्क सीकर का उपयोगिता फलन

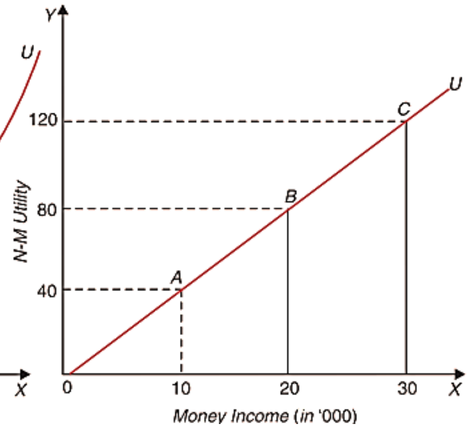

Fig. 13. रिस्क न्यूट्रल के लिए उपयोगिता फलन

3) **जोखिम-तटस्थ(Risk-Neutral) :** (A person is called risk neutral, if he is indifferent betweenA certain given incomeAndAn uncertain income with the same expected value). एक जोखिम-न्यूत्रल व्यक्ति निश्चित आय और एक अनिश्चित आय के बीच समान प्रत्याशित मूल्य पर उदासीन होता है। यह उदासीनता वित्तीय आय की अनुपातिकता को दर्शाती है जैसा कि चित्र 13 में कुल उपयोगिता फ़ंक्शन कर्व दिखाता है। उदाहरण स्वरूप में, एक निश्चित आय ₹20,000 इस कर्व में 80 की उपयोगिता प्रदान करती है। जब आय सफल बिक्रीकर्ताई के कारण एक जोखिमपूर्ण नौकरी में ₹30,000 तक बढ़ती है, तो उपयोगिता 120 हो जाती है।

उलटे, यदि व्यक्ति नई जोखिमपूर्ण नौकरी में बुरी प्रदर्शन करता है, जिसके परिणामस्वरूप आय ₹10,000 होती है, तो उपयोगिता 40 होती है। नई नौकरी में उच्च और निम्न आयों के लिए समान संभावनाएँ मानकर, प्रत्याशित आय ₹20,000 बनी रहती है। इस नई जोखिमपूर्ण नौकरी की प्रत्याशित उपयोगिता इन परिणामों की तुलना करके निर्धारित की जाती है।

E(U)= 0.5 U(10,000) + 0.5 U(30,000).

= 0.5(40) + 0.5(120)

= 20 + 60

= 80

उपर से देखा गया है कि जोखिम-न्यूत्रल व्यक्ति के मामूल्य आश्वासित या निश्चित आय की उपयोगिता के समान होते हैं। अर्थात्, उनके बीच उदासीनता होती है।

3.6.(फ्रीडमैन-सैवेज परिकल्पना) FRIEDMAN-SAVAGE HYPOTHESIS

फ्रीडमन और सेवेज ने सामान्य आय सीमाओं के लिए पैसे की मार्जिनल उपयोगिता की बर्नूलियन का सिद्धांत छोड़ दिया और इसके बजाय एक अन्य सिद्धांत को अपनाया। फ्रीडमन-सेवेज सिद्धांत के अनुसार, अधिकांश लोगों के लिए पैसे की मार्जिनल उपयोगिता एक निश्चित स्तर की आय तक कम होती है, फिर उस मध्य स्तर से बढ़ जाती है और उसके बाद बहुत उच्च स्तरों पर फिर से कम होती है। इस सिद्धांत का उपयोग करके और न्यूमैन-मॉर्गनस्टर्न उपयोगिता कर्व का उपयोग करके फ्रीडमन और सेवेज ने बीमा खरीदने के रिस्क से बचने और जुआ खेलने की दो प्रकार की व्यवहारिकता की व्याख्या की है। फ्रीडमन-सेवेज सिद्धांत को चित्र 14 में दिखाया गया है, जिसमें न्यूमैन-मॉर्गनस्टर्न उपयोगिता कर्व जिसमें उत्कृष्ट और अवक्षेप भाग दोनों हैं, दिखाया गया है। इस चित्र से स्पष्ट होता है कि N-M उपयोगिता कर्व U(I) का सेग पॉइंट K तक उत्तल है और मध्य सेग E से F तक अवतल है, और F पॉइंट से आगे, अर्थात उच्च स्तरों पर, यह फिर से उत्तल हो जाता है। इससे स्पष्ट होता है कि न्यूमैन-मॉर्गनस्टर्न उपयोगिता कर्व का यह खंड U(I) नीचे की ओर है और E से F तक मध्य खंड

उत्तल है, और B से आगे, अर्थात उच्च स्तरों पर, यह फिर से नीचे की ओर जाता है। फ्रीडमैन और सैवेज का मानना है कि धन की एन-एम यूटिलिटी कर्व विभिन्न सामाजिक-आर्थिक वर्गों में लोगों के प्रति जोखिम के प्रति उनके व्यवहार या दृष्टिकोण को दर्शाता है। वे बिल्कुल मानते हैं कि एक ही सामाजिक-आर्थिक वर्ग के भीतर व्यक्तियों के बीच कई अंतर होते हैं; कुछ को जुआ खेलने की बड़ी प्राथना होती है और कुछ को निर्धारित जोखिम लेने की इच्छा ही नहीं होती। फिर भी फ्रीडमैन और सैवेज का मानना है कि यह कर्व व्यापक वर्गों की प्रवृत्तियों का वर्णन करता है। मध्य आय वर्ग जिनकी धन की मार्जिनल यूटिलिटी बढ़ रही है, वे वे हैं जो अपनी आर्थिक स्थिति में सुधार के लिए जोखिम लेने में उत्सुक हैं। इस समूह के लोगों के लिए अधिक धन की आशा बहुत मायने रखती है: अगर उनके प्रयास सफल होते हैं, तो वे अगले ऊपरी सामाजिक-आर्थिक वर्ग में उठ जाएंगे। इन व्यक्तियों के पास केवल अधिक उपभोक्ता वस्त्र नहीं है; उनकी सामाजिक स्तर में उच्चारण की इच्छा होती है। वे उच्चतमता की दिशा में बढ़ना चाहते हैं, अपने जीवन शैलियों को बदलना चाहते हैं। कोई आश्चर्य नहीं कि उनके लिए धन की मार्जिनल यूटिलिटी बढ़ती है।

चित्र 14 से यह स्पष्ट होगा कि 20 हजार से उम्मीदित उपयोगिता MLAC चॉर्ड पर है जो की निश्चित आय 20 हजार की उपयोगिता MB से कम है। रिस्क से बचने के लिए, वह सुरक्षा बीमा की प्रीमियम LD या 7.5 हजार चुका सकता है ताकि उसकी निश्चित आय 12.5 हजार हो। अब, मान लीजिए कि वही व्यक्ति 35 हजार आय वाले एक लॉटरी टिकट खरीदने का विचार कर रहा है जिसमें उसे एक बड़ी राशि जीतने का मौका है, मान लीजिए 40 हजार रुपये, लॉटरी का पहला पुरस्कार, और उसकी आय को 75 हजार रुपये तक बढ़ाता है। यदि वह जीतता नहीं है, तो उसकी आय 30 हजार रुपये की बढ़ जाएगी; 5 हजार रुपये लॉटरी टिकट की कीमत होने के कारण।

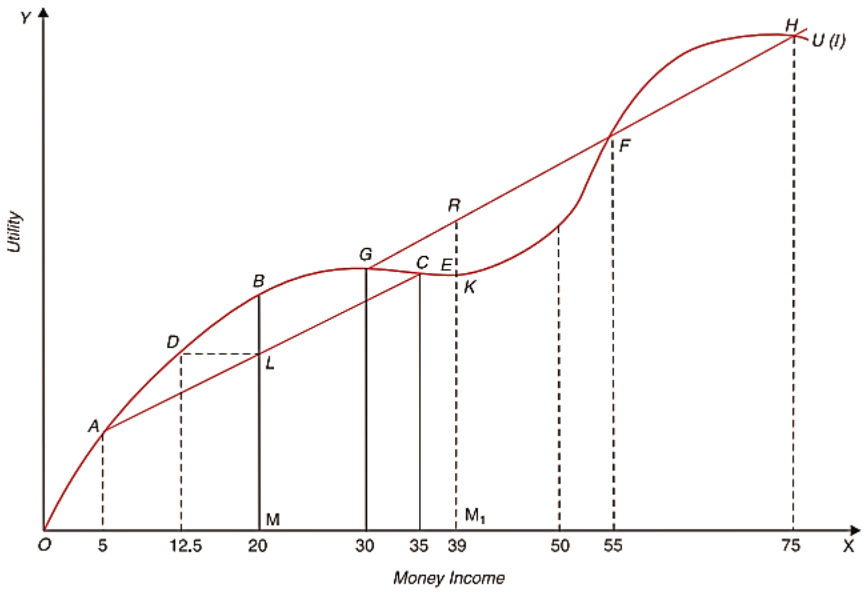

Fig. 14. फ्रीडमेन सेवेज परिकल्पना

ध्यान दें कि इस मामले में उनकी आय की उम्मीदित मान E(X) है

E(X) = 0.5 × 35 + 0.5(5)

E(X)= 17.5 + 2.5 = 20 हजार

अब, अगर लॉटरी जीतने की 20 प्रतिशत संभावना हो, तो उसकी उम्मीदित मान भी बराबर होगी

E(X) = 0.2 × 75 + 0.8(30),

E(X) = 15 + 24 = 39 हजार

,और जैसा कि चित्र 14 से दिखाया गया है, 39 हजार की राशि से उम्मीदित उपयोगिता M1R(ध्यान दें कि बिंदु R सीधे रेखा खंड GH पर है) है जो उपयोगिता M1K से अधिक है जो उसको निश्चित राशि 39 हजार से मिलती है। इस प्रकार, व्यक्ति लॉटरी टिकट खरीदेगा, अर्थात जुआ खेलेगा।

अब, मान लीजिए कि व्यक्ति की आय 50 हजार है, जो माध्यम आय खंड में है जहां पैसे की मार्जिनल उपयोगिता बढ़ रही है। 50 हजार की आय के साथ व्यक्ति लॉटरी टिकट खरीदने के लिए तैयार होगा, जुआ खेलने के लिए या जोखिमपूर्ण निवेश करने के लिए क्योंकि अतिरिक्त पैसे से उपयोगिता का वर्धन बहुत अधिक होगा(मार्जिनल उपयोगिता बढ़ रही है) जिससे लॉटरी टिकट के लिए छोटे पेमेंट से या जुआ में बराबर मौद्रिक हानि से होने वाले उपयोगिता का नुकसान कम होगा। व्यक्ति जिनकी आय 55 से पार होती है या FH सेगमेंट में है उन्हें बहुत उच्च आय होती है और इसके कारण पैसे की मार्जिनल उपयोगिता उनके लिए कम होती है। इसके परिणामस्वरूप वे बाजी में रिस्क नहीं उठाना चाहेंगे, चाहे उनके पास कितनी भी अच्छे अवसर क्यों न हों। फ्रिडमन-सेवेज यह मानते हैं कि धन की एन-एम उपयोगिता वक्ताओं के विभिन्न सामाजिक-आर्थिक वर्गों की रिस्क की दिशा या दृष्टिकोण की आवश्यकता को दर्शाती है। वे तो बेशक स्वीकारते हैं कि एक ही सामाजिक-आर्थिक वर्ग के भीतर व्यक्तियों के बीच बहुत सारे अंतर होते हैं; कुछ लोग जुआ खेलने के लिए बड़ी प्राथमिकता रखते हैं और कुछ लोग बिना किसी जोखिम के किसी भी प्रकार का रिस्क उठाने के लिए अनिच्छुक होते हैं। हालांकि, फिर भी फ्रिडमन और सेवेज मानते हैं कि यह कर्व व्यापक वर्गों की प्रवृत्तियों का वर्णन करता है। मध्य आय वर्ग, जिनमें मार्जिनल यूटिलिटी ऑफ मुद्रा बढ़ती है, उन्हें धनिकरण की स्थिति में सुधार के लिए जोखिम उठाने की उत्सुकता होती है, उन्होंने यह विचार किया है। उनके लिए अधिक धन की आशा काफी मायने रखती है: यदि उनके प्रयास सफल होते हैं, तो वे अपने आप को अगले ऊपरी सामाजिक-आर्थिक वर्ग में उठा सकते हैं। इन व्यक्तियों की खुद को सिर्फ अधिक उपभोक्ता वस्त्रों की ही नहीं, बल्कि सामाजिक मानक में उच्चतम परिवर्तन करने की महत्वपूर्ण इच्छा होती है। उन्हें उच्चतम परिवर्तन करने, अपने जीवन शैली को बदलने की महत्वपूर्ण इच्छा होती है। कोई आश्चर्य नहीं कि पैसे की मार्जिनल उपयोगिता उनके लिए बढ़ जाती है।

3.7 जोखिम को मापना: परिणाम की संभावना MEASURING RISK: PROBABILITY OFAN OUTCOME:

हमने ऊपर देखा है कि जब एक निर्णय के कई संभावित परिणाम होते हैं और प्रत्येक परिणाम की संभावना या तो जानी जाती है या आकलन की जा सकती है, तो इसे जोखिम कहते हैं। इसलिए, जोखिम की डिग्री को मापने के लिए हमें प्रत्येक संभावित निर्णय के प्रत्येक परिणाम की संभावना को जानने की आवश्यकता होती है। संभावना का मतलब किसी घटना के प्राप्त होने की संभावना होती है। इस प्रकार, अगर किसी परिणाम के होने की संभावना 1/4 या 0.25 हो, तो इसका मतलब है कि उस परिणाम के होने की 4 में से 1 या 25 प्रतिशत संभावना होती है। उदाहरण के लिए, सोचें कि कोई व्यक्ति कंपनी में निवेश करने का विचार कर रहा है जो खुद्रा तेल की नई खोज में लगी है। यदि खोज सफल होती है, तो कंपनी के स्टॉक की मूल्य ₹50 प्रति शेयर बढ़ जाएगी और यदि इसकी खोज असफल होती है, तो कंपनी के स्टॉक की मूल्य ₹10 प्रति शेयर गिर जाएगी। इन दो संभावित परिणामों के दिए गए, अर्थात्, ₹50 प्रति शेयर मूल्य और ₹10 प्रति शेयर मूल्य, यदि पिछली जानकारी यह सुनिश्चित करती है कि तेल खोज की सफलता की संभावना 1

4 या 25 प्रतिशत है और इसकी असफलता की संभावना 3/4 है, तो हम कहते हैं कि तेल खोज की सफलता की संभावना 25 प्रतिशत है और इसकी असफलता की संभावना 75 प्रतिशत है(सफलता और असफलता दो संभावित परिणाम हैं)। Thus ***probability isA number that indicates the likelihood ofAn event or outcome occurring.***

ये दो प्रायिकता के एक अनुप्राय हैं जो कैसे मापी जाती है। पहली है प्रायिकता की आवश्यकता और जरूरत के आधार पर। यदि पिछले जानकारी या डेटा से परिणामों या घटनाओं के प्राप्ति की जानकारी उपलब्ध हो, तो प्रायिकता को उन परिणामों के प्राप्त होने की बार-बार और दीर्घकाल में आकर्षित होने के बारे में जानकारी की संभावना के रूप में परिभाषित किया जाता है। आमतौर पर, अगर एक स्थिति को बार-बार, कहें M बार, दोहराया जाता है और अगर एक परिणाम, कहें X, m बार होता है,

$$P(X) = m/M$$

इस प्रकार, हमारे उदाहरण में अगर हम तेल खोज की पिछली जानकारी से जानते हैं कि सफलता की दर 25 प्रतिशत है, तो सफलता प्राप्ति की संभावना 1/4 या 0.25 है। पिछले अनुभव के आधार पर प्रायिकता की माप को आमतौर पर प्रायिक उपयोगी माप के रूप में जाना जाता है। लेकिन कई मामलों में ऐसी कोई समान पिछली स्थिति नहीं होती जो हमें प्रायिकता की माप करने में मदद करती है। उस मामले में व्यक्तिगत प्रायिकता का अवगत होता है। व्यक्तिगत प्रायिकता किसी व्यक्ति के व्यक्तिगत दृष्टिकोण को दर्शाती है जिसमें एक परिणाम के होने की आशंका है और यह उनके व्यक्तिगत निर्णय, अनुभव या विषय के बारे में उनके व्यक्तिगत विचारों पर आधारित है, और पिछले में परिणाम वाकई हुआ था नहीं। स्पष्ट रूप से, जब प्रायिकता सूचनात्मक रूप से निर्धारित होती है और पिछले डेटा पर नहीं आधारित होती है, तो विभिन्न व्यक्तियाँ विभिन्न परिणामों के होने की विभिन्न संभावनाओं को संलग्न करेंगी और इसलिए वे विभिन्न विकल्पों के बीच विभिन्न

चुनौतियों का सामना करेंगे। जैसा कि प्रायिकता की संभावना कैसे भी पहुंचाई जाती है, यह हमें दो महत्वपूर्ण अवधारणाओं को मापने में मदद करता है, अर्थात्, प्रत्याशित मूल्य और परिणाम की परिवर्तनशीलता। इन दो अवधारणाओं का उपयोग हमें जोखिम और अनिश्चितता से युक्त विभिन्न रणनीतियों की लाभकारिता का मूल्यांकन करने में करता है जिससे हमें उनमें से एक का चयन करने में मदद मिलती है। हम नीचे इन दो अवधारणाओं का मतलब समझाते हैं।

इस प्रकार, हमारे उदाहरण में यदि हम तेल खोज के पिछले डेटा से जानते हैं कि सफलता की दर 25 प्रतिशत है, तो सफलता प्राप्ति की संभावना 1/4 या 0.25 है। पिछले अनुभव के आधार पर प्रायिकता की माप को आमतौर पर प्रायिक उपयोगी माप के रूप में जाना जाता है।

लेकिन कई मामलों में ऐसी कोई समान पिछली स्थिति नहीं होती जो हमें प्रायिकता की माप करने में मदद करती है। उस मामले में व्यक्तिगत प्रायिकता का अवगत होता है। व्यक्तिगत प्रायिकता किसी व्यक्ति के व्यक्तिगत दृष्टिकोण को दर्शाती है जिसमें एक परिणाम के होने की आशंका है और यह उनके व्यक्तिगत निर्णय, अनुभव या विषय के बारे में उनके व्यक्तिगत विचारों पर आधारित है, और पिछले में परिणाम वाकई हुआ था नहीं। स्पष्ट रूप से, जब प्रायिकता सूचनात्मक रूप से निर्धारित होती है और पिछले डेटा पर नहीं आधारित होती है, तो विभिन्न व्यक्तियाँ विभिन्न परिणामों के होने की विभिन्न संभावनाओं को संलग्न करेंगी और इसलिए वे विभिन्न विकल्पों के बीच विभिन्न चुनौतियों का सामना करेंगे।

3.8 जोखिम-वापसी व्यापार-बंद और पोर्टफोलियो का विकल्प(RISK-RETURN TRADE-OFFAND CHOICE OFA PORTFOLIO)

जोखिम और अनिश्चितता के तहत चुनौती की सिद्धांत व्यक्तिगतों के लिए भी लागू होता है जो अपनी बचत को विभिन्न प्रकार की संपत्तियों में निवेश करने के लिए विभिन्न जोखिमों के स्तरों के साथ सर्वोत्तम लाभ प्राप्त करने की आवश्यकता है। उदाहरण के लिए, यदि कोई निवेशक किसी प्रकार के जोखिम का सामना करना नहीं चाहता है, तो वह भारतीय स्टेट बैंक की फिक्स्ड डिपॉजिट में निवेश कर सकता है जिसमें एक निश्चित दर का ब्याज होता है। यदि वह जोखिम उठाने के लिए तैयार है, तो उसे स्टॉक मार्केट से शेयर खरीदने में रुचि हो सकती है जिनका मूल्य और डिविडेंड काफी भिन्न हो सकते हैं। इन शेयरों से वह जब स्टॉक मार्केट अच्छी तरह जाता है, तो उसे कई अधिक रिटर्न मिल सकते हैं या यदि स्टॉक मार्केट विपत्ति में फंस जाता है तो उसकी वापसी बहुत कम हो सकती है। स्वाभाविक रूप से, उसे सुनिश्चित निर्धारित रिटर्न वाले संपत्तियों को संलग्न करने की समस्या होती है, जैसे कि बैंकों में फिक्स्ड डिपॉजिट्स, प्रमुख कंपनियों के डिबेंचर्स के साथ कुछ इक्विटी शेयर्स, तकि उसे सर्वोत्तम निवेश पोर्टफोलियो तक पहुँच सके।

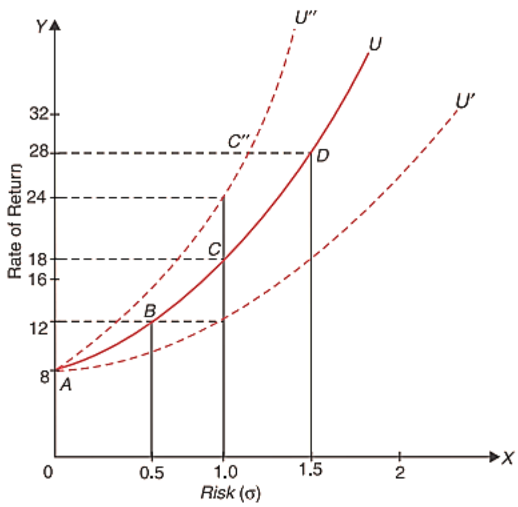

Fig. 15 अनधिमान वक्र या रिस्क रिटर्न ट्रेड आफ कर्व

एकांतता कर्व या जोखिम-रिटर्न ट्रेड-आफ की अवधारणा को फिगर 15 के साथ बेहतरीन तरीके से समझाया जा सकता है, जहाँ पर X-अक्ष पर, हम जोखिम को प्रमाणिका वितरण की मानक विचलन(σ) के रूप में मापते हैं, और यितने प्रतिशत निवेश के रूप में लाभ मापा जाता है वह जिसे Y अक्ष पर नापा गया है। एक ऊपर उठता दृढ़ कर्वA बिंदु से खिची गई है। बिंदुA पर निश्चित-रिति वापसी की 8 प्रतिशत को दर्शाता है। यहA यूर्व व्यक्ति या एक फर्म के जोखिम-रिटर्न विनिमय समारोह की प्रतिस्था को दर्शाती है और यह दिखाती है कि 8 प्रतिशत

की निश्चित-रिति वापसी के ऊपर 4 प्रतिशत अतिरिक्त लाभ की आवश्यकता है जो जोखिम की डिग्री के लिए मुआवजा करने के लिए आवश्यक है जिसे $\sigma = 0.5$ द्वारा दिए गए है(ध्यान दें कि 12 - 8 = 4)।

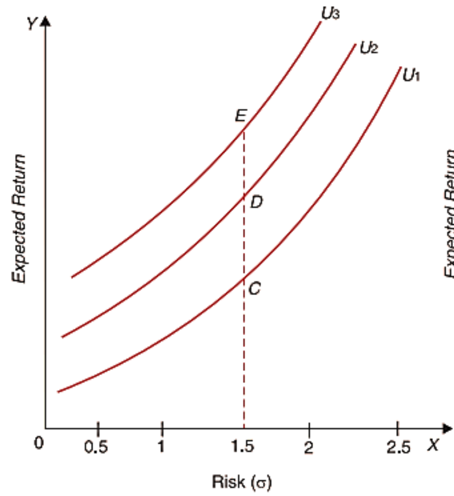

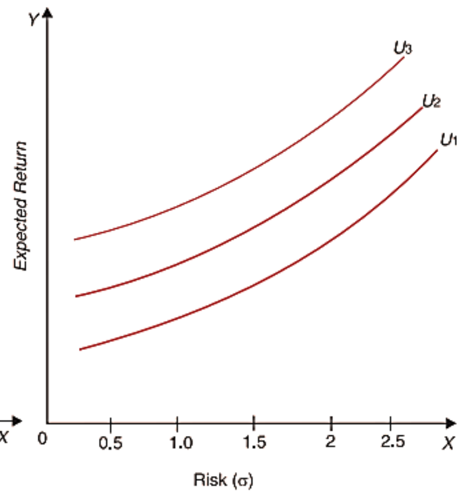

Fig. 16. अपेक्षित रिटर्न और अत्यधिक रिस्क एवर्स व्यक्ति के बीच का अनधिमान वक्र

Fig. 17. अपेक्षित उपयोगिता और एक कम रिस्क एवर्स व्यक्ति के बीच का अनधिमान वक्र

यहाँ, 8 प्रतिशत एक जोखिम-मुक्त वापसी है क्योंकि इसके संबंध में मानक विचलन(σ) जो जोखिम के स्तर को मापता है, शून्य होता है। जोखिमपूर्ण निवेश पर आवश्यक रिटर्न की आवश्यकता और जोखिममुक्त निवेश पर रिटर्न के बीच की अंतर, जिसे जोखिम प्रीमियम कहा जाता है, जोखिम के साथ निवेश परAU वापसी दर 0.5 σ वाले जोखिम के साथ निवेश पर 4 प्रतिशत की आवश्यक है। उसी तरह, फिगर 17.10 मेंAU विनिमय करने के लिए जोखिम 1.0 σ के साथ निवेश का संघटन करने के लिए 18 प्रतिशत का वापसी आवश्यक है(यानी, इस निवेश पर जोखिम प्रीमियम 10 प्रतिशत है, 18 - 8 = 10)। 1.5 σ के साथ जोखिमपूर्ण निवेश पर 28 प्रतिशत की वापसी आवश्यक या उम्मीदित है। अधिक जोखिम संरक्षित व्यक्ति के लिए दिए गए मानक विचलन के साथ एक जोखिमपूर्ण निवेश के लिए उच्च रिटर्न की आवश्यकता होती है। इस प्रकार, एक अधिक जोखिमपूर्ण व्यक्ति के साथ, एक स्टीपर वक्र या जोखिम-रिटर्न विनिमय कर्वAU″(डॉटेड) खींची गई है।AU″ जोखिम से संरक्षित निवेश के लिए 1.0 σ के साथ आवश्यक 24 प्रतिशत वापसी है, यानी, इसका जोखिम प्रीमियम पिछले व्यक्ति की 10 प्रतिशत की तुलना में 16 प्रतिशत है।

इसी तरह, कम जोखिमपूर्ण व्यक्ति के लिए विनिमय समारोह ढला होगा जैसेAU′(डॉटेड)।AU ′ के साथ एक व्यक्ति, जोकिंग के साथ जोखिमपूर्ण निवेश के लिए उसे मुआवजा करने के लिए 1.0 σ की आवश्यकता होती है,(यानी, 1.0 σ के जोखिम के लिए 4 प्रतिशत जोखिम प्रीमियम की आवश्यकता होती है)।

यह साबित होता है कि विभिन्न व्यक्तियों की विभिन्न निष्कल्पता की आधारित जोखिम और रिटर्न के बीच विरुद्धता की विभिन्न एकताताओं की असमानता होगी। वे व्यक्तियाँ जो अधिक जोखिम संरक्षित हैं, उनकी जोखिम-रिटर्न विनिमय कर्वो की ढली हुई एकताता की तरह होती है जैसा कि फिगर 16 में दिखाया गया है, और उन्होंने जो अधिक जोखिम-मुक्त हैं, उनकी जोखिम-रिटर्न विनिमय कर्व ढले हुए होते हैं, जैसा कि फिगर 17 में दिखाया गया है। इसे समझना चाहिए कि हम उच्च उदासीनता कुर्व U2, U3 क्यों प्राप्त करते हैं। जब किसी निर्णित जोखिम के स्तर जैसे कि 1.5 σ के साथ निवेश से अपेक्षित आय बढ़ती है, तो व्यक्तियों का विचार U1 विचारता करते समय वह उदासीनता कर्व U2 पर स्थान C से ऊपर स्थान D पर बदल जाता है। ऐसी ही तरीके से, ढली हुई उदासीनता कर्व वाले व्यक्तियों के मामले में भी समान तरीका होता है। यह फिर से साफ़ करने की आवश्यकता है कि विभिन्न व्यक्तियों की जोखिम के प्रति दृष्टिकोण में अंतर है जो उनके जोखिम और आवापन के बीच उदासीनता कुर्वों को विभिन्न ढलाव और गोलाकारता के साथ बनाते हैं।

3.9. मार्कोविट्ज पोर्टफोलियो सिद्धांत(Markowitz Portfolio Theory)

हैरी मार्कोविट्ज द्वारा विकसित इस सिद्धांत को आधुनिक पोर्टफोलियो सिद्धांत(MPT) के रूप में भी जाना जाता है। इस सिद्धांत में यह बताया गया है कि निवेशक कैसे अपने निवेश पोर्टफोलियो को विचारणीयता और लाभ के बीच सबसे अच्छे संतुलन को प्राप्त करने के लिए आवश्यक कदम उठा सकते हैं। मार्कोविट्ज ने विविधता की अवधारणा को पेश किया, जिससे वह दिखाते हैं कि विभिन्न जोखिम स्तरों के साथ संपत्तियों को मिलाकर एक अधिक कुशल पोर्टफोलियो बनाने से एक अधिक कुशल पोर्टफोलियो प्राप्त किया जा सकता है।

आधुनिक पोर्टफोलियो सिद्धांत में यह माना जाता है कि सुरक्षा की संयोजन से लाभ की अधिकतमीकरण करना चाहिए। आधुनिक पोर्टफोलियो सिद्धांत विभिन्न सुरक्षाओं के बीच संबंध की चर्चा करता है और फिर उनके बीच की जोखिमों की अंतर-संबंधन बनाता है।

3.10. आधुनिक पोर्टफोलियो सिद्धांत के अनुमान(Estimates of modern portfolio theory):

1) सभी निवेशक स्वतंत्र निर्णय लेते हैं और वे स्वतंत्र रूप से और विवेकपूर्ण तरीके से निवेश करते हैं।
2) निवेशक सिर्फ निवेश के जोखिम को महत्वपूर्ण मानते हैं और उन्हें आवश्यकता के हिसाब से उचित जोखिम को लेते हैं।
3) निवेशक सिर्फ रिटर्न को बढ़ावा देते हैं और वे विभिन्न सुरक्षाओं की संयोजन से उपयुक्त पोर्टफोलियो तैयार करते हैं।
4) सुरक्षा के मानक विचलन का प्रभाव उनके पोर्टफोलियो पर अहम होता है और वे मानक विचलन के आधार पर सुरक्षाओं का चयन करते हैं।
5) सभी सुरक्षाएँ व्यक्तिगत रूप से निवेशकों के विकल्पों की तुलना करने के लिए उपलब्ध होती हैं और निवेशक उन्हें विवेकपूर्णता से चुनते हैं।
6) ये अनुमान आधुनिक पोर्टफोलियो सिद्धांत के मूल तत्व हैं जिन पर यह सिद्धांत आधारित होता है कि निवेशकों को विविध सुरक्षाओं के संयोजन से बेहतर रिटर्न प्राप्त किया जा सकता है।

यह आवश्यक नहीं है कि सफलता पाई जाए, केवल न्यूनतम जोखिम की सभी सुरक्षाओं की प्राप्ति की कोशिश करके। सिद्धांत का कहना है कि कम जोखिम वाली एक सुरक्षा को एक उच्च जोखिम वाली दूसरी सुरक्षा के साथ मिलाकर, निवेशक को निवेश के विकल्प की चुनौती में सफलता प्राप्त की जा सकती है।

पारंपरिक सिद्धांत इस तथ्य पर आधारित था कि प्रत्येक व्यक्तिगत सुरक्षा पर जोखिम को मापा जा सकता है और मानक विचलन की खोज की प्रक्रिया के माध्यम से उस सुरक्षा का चयन किया जाना चाहिए जहाँ विचलन सबसे कम हो। अधिक विविधता और उच्च विचलन उन सुरक्षाओं के मुकाबले में अधिक जोखिम दिखाते हैं जिनमें कम विविधता होती है।

आधुनिक सिद्धांत का मानना है कि विविधीकरण द्वारा जोखिम को कम किया जा सकता है। निवेशक विभिन्न क्षेत्रों में अलग-अलग क्षेत्रों में कंपनियों के बड़ी संख्या के साझेदारी के द्वारा विविधीकरण कर सकते हैं, अलग-अलग उद्योगों में, या विभिन्न प्रकार के उत्पाद लाइन उत्पन्न करने वालों के साथ।इस प्रकार, पारंपरिक सिद्धांत और आधुनिक सिद्धांत दोनों ही जोखिम और लाभ की परिस्थितियों के परिबंधनों के तहत तैयार किए गए हैं, पहले किसी व्यक्तिगत सुरक्षा के विश्लेषण की और दूसरे सुरक्षाओं के संयोजन की दृष्टिकोण में विश्वास करते हैं। पारंपरिक सिद्धांत मानता है कि बाजार अप्रभावी है और मौलिक विश्लेषक स्थिति का लाभ उठा सकते हैं। कंपनी की आंतरिक वित्तीय विवरणों की विश्लेषण करके, वह उच्च लाभ के माध्यम से अधिक लाभ कमा सकता है। तकनीकी विश्लेषक ने बाजार के व्यवहार और पिछले प्रवृत्तियों का आदान-प्रदान करके सुरक्षाओं के भविष्य का पूर्वानुमान लगाया। ये विश्लेषण मुख्य रूप से एकल सुरक्षा विश्लेषण के जोखिम और लाभ मानकों के तहत थे।

मार्कोविट्ज और शार्प द्वारा उत्कृष्ट पोर्टफोलियो प्राप्त करने के लिए सुरक्षाओं के संयोजन के रूप में प्रस्तुत आधुनिक पोर्टफोलियो सिद्धांत उनके द्वारा प्रगट किया गया है। सुरक्षाओं के संयोजन कई तरीकों से किया जा सकता है। मार्कोविट्ज ने विज्ञानात्मक तर्क और विधि के माध्यम से विविधता के सिद्धांत को विकसित किया।

3.11 बोध प्रश्न

1. जोखिम से क्या तात्पर्य है? यह अनिश्चितता से कैसे अलग है?
2. एक उचित जुआ क्या है? क्यों ज्यादातर लोग एक उचित जुआ खेलने से इनकार करते हैं?
3. जोखिम और अनिश्चितता से क्या तात्पर्य है? उपभोक्ता पसंद के सिद्धांत में ये अवधारणाएं महत्वपूर्ण क्यों हैं?
4. सेंट पीटर्सबर्ग विरोधाभास क्या है? डैनियल बर्नौली ने इसे कैसे हल किया?
5. बर्नौली की परिकल्पना क्या है? उन्होंने कैसे समझाया कि ज्यादातर लोग उचित दांव स्वीकार नहीं करते हैं(यानी निष्पक्ष खेल खेलते हैं)?
6. जोखिम भरी परिस्थितियों में उपयोगिता सूचकांक की न्यूमैन-मॉर्गेनस्टर्न अवधारणा क्या है? इसका निर्माण कैसे किया जाता है?
7. धन के एन-एम उपयोगिता कार्यों की सहायता से जोखिम से बचने वाले, जोखिम प्रेमी और जोखिम तटस्थ की विशेषता की व्याख्या करें।
8. निश्चितता के मामले से जोखिम या अनिश्चितता के मामले में किसी व्यक्ति द्वारा उपयोगिता अधिकतमकरण की प्रक्रिया कैसे भिन्न होती है।
9. जोखिम को कैसे मापा जाता है? इस संबंध में अपेक्षित मूल्य, मानक विचलन और भिन्नता के गुणांक की अवधारणाओं की व्याख्या करें।
10. जोखिम और अनिश्चितता से जुड़ी स्थिति में निर्णय लेने की प्रक्रिया की व्याख्या करें। क्या जोखिम भरी आर्थिक स्थिति में निर्णय लेने के लिए अपेक्षित मूल्य का अधिकतमकरण वैध मानदंड है?
11. जोखिम से बचने, जोखिम से प्यार करने और जोखिम तटस्थता से क्या तात्पर्य है? ये अवधारणाएं व्यक्ति की धन आय के उपयोगिता कार्य से कैसे संबंधित हैं?

खण्ड 4

कीमत सिद्धांत

इकाई–1 पूर्ण प्रतियोगिता के अंतर्गत कीमत एवं उत्पादन निर्धारण : अल्पकालीन एवं दीर्घकालीन

इकाई की रुपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 पूर्ण प्रतियोगिता के अंतर्गत कीमत निर्धारण

1.3 उद्योग द्वारा कीमत निर्धारण

1.4 पूर्ण प्रतियोगिता में फर्म की संस्थिति

1.5 अल्पकाल में फर्म का संतुलन

1.6 दीर्घ काल में फर्म का संतुलन

1.7 पूर्ण प्रतियोगिता में उद्योग का संतुलन

1.8 बोध प्रश्न

1.9 सारांश

1.10 शब्दावली

1.11 संदर्भ ग्रंथ

1.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.13 अभ्यासार्थ प्रश्न

1.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप समझ सकेंगे कि –

- पूर्ण प्रतियोगिता के अंतर्गत कीमत का निर्धारण कैसे होता है?
- पूर्ण प्रतियोगी उद्योग द्वारा संतुलन कीमत कैसे निर्धारित होती है?
- पूर्ण प्रतियोगिता में फर्म की संस्थिति अल्पकाल और दीर्घकाल में किस प्रकार निर्धारित होती है?

1.1 प्रस्तावना

इस इकाई में पूर्ण प्रतियोगिता जो कि बाजार का एक महत्वपूर्ण प्रकार है, के बारे में बताया गया है। यह इकाई मुख्यतः पूर्ण प्रतियोगिता के अंतर्गत कीमत और उत्पादन निर्धारण की विस्तृत जानकारी प्रदान करती है। पूर्ण प्रतियोगिता में उद्योग द्वारा कीमत का निर्धारण किस प्रकार माँग वक्र तथा पूर्ति वक्र की सहायता से किया जाता है, यह हम इस इकाई में आगे समझेंगे। तथा उद्योग द्वारा कीमत निर्धारण के साथ साथ पूर्ण प्रतियोगिता में फर्म की संस्थिति के आधारभूत सिद्धांतों को भी आप समझ सकेंगे। इसके साथ–साथ हम अल्प काल और दीर्घ काल में फर्म के संतुलन की व्याख्या भी इस इकाई में करेंगे, जिसकी सहायता से

विधार्थी इस इकाई में पूर्ण प्रतियोगिता में फर्म को होने वाले लाभ तथा हानि की स्थिति से अवगत हो सकेंगे।

1.2 पूर्ण प्रतियोगिता के अंतर्गत कीमत निर्धारण

पूर्ण प्रतियोगी बाजार में कीमत का निर्धारण किसी एक फर्म के द्वारा नहीं होता है बल्कि सहजातीय वस्तु का उत्पादन एवं विक्रय करने वाले उद्योग के द्वारा स्वतंत्र रूप से मूल्य का निर्धारण, बाजार की मांग एवं पूर्ति की शक्तियों के द्वारा किया जाता है। इस प्रकार उद्योग मूल्य का निर्धारण करती है तथा फर्में इस निर्धारित मूल्य पर वस्तुओं का विक्रय करती हैं। यह मूल्य, संतुलन मूल्य होता है। यदि इसमें किसी प्रकार का कोई परिवर्तन होता है तो मांग एवं पूर्ति की शक्तियां इतनी अधिक लोचशील होती हैं कि पुनः परस्पर क्रिया करके संतुलन मूल्य स्थापित कर देती हैं।

1.3 उद्योग द्वारा कीमत निर्धारण

उद्योग द्वारा कीमत का निर्धारण उद्योग के मांग वक्र तथा पूर्ति वक्र की सहायता से किया जाता है। उद्योग का पूर्ति वक्र उद्योग की फर्मों की व्यक्तिगत पूर्ति वक्रों का क्षैतिज योग होता है, जो बाएं से दाएं ऊपर की ओर उठता हुआ होगा। जबकि उद्योग का मांग वक्र, जो बाजार में वस्तु की मांग को दर्शाता है वह बाएं से दाएं नीचे की ओर गिरता हुआ ढाल दर्शाता है। उद्योग का मांग वक्र विभिन्न मूल्यों पर उत्पादित वस्तु की मांग को दर्शाता है।

पूर्ण प्रतियोगिता में मांग वक्र तथा पूर्ति वक्र के समन्वय द्वारा संतुलन कीमत प्राप्त होती है।

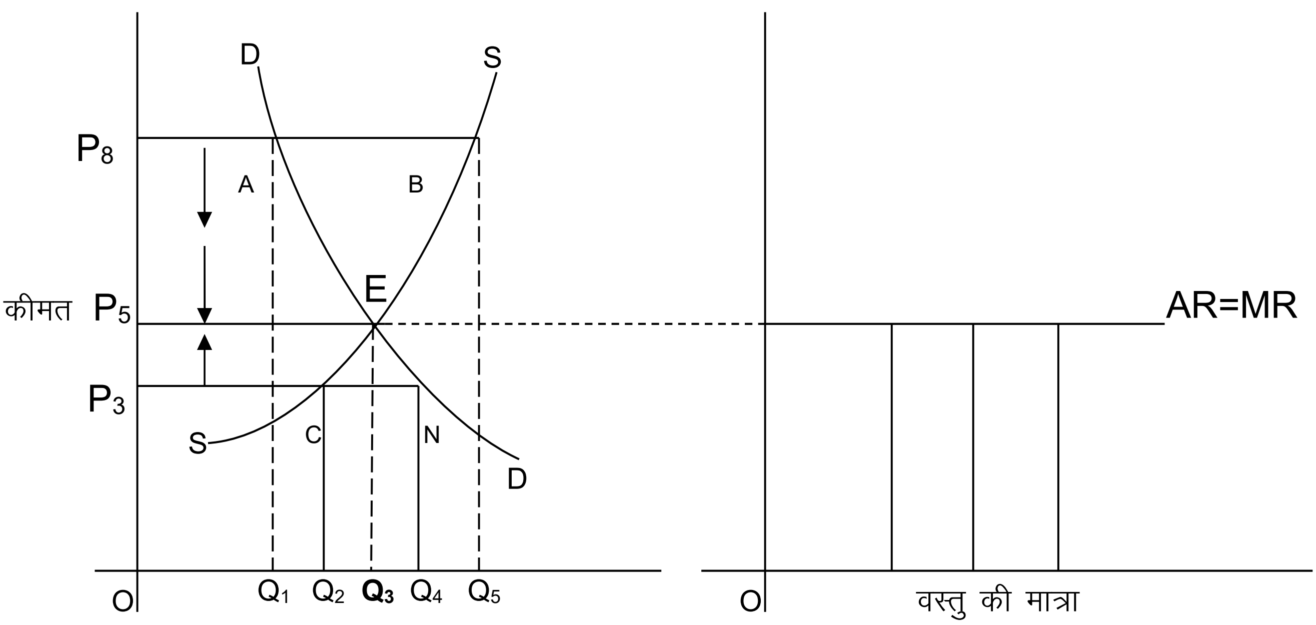

उपरोक्त रेखाचित्र में DD तथा SS दोनों E बिंदु पर बराबर हैं। OP_5 उद्योग द्वारा निर्धारित कीमत है, जिसे सभी फर्में स्वीकार करेंगी। यही कीमत फर्मों के व्यक्तिगत औसत तथा सीमांत आगम वक्र को दर्शाएगी।

1.4 पूर्ण प्रतियोगिता में फर्म की संस्थिति –

पूर्ण प्रतियोगिता में फर्म के लिए मूल्य उद्योग द्वारा निर्धारित रहता है। अत: फर्म अपने लाभ को अधिकतम करने के उद्देश्य से अपनी लागत को न्यूनतम करने का प्रयास करती है तथा संतुलन को प्राप्त करती है। इस संदर्भ में लाभ अधिकतम करने के दो प्रकार है–

(a) कुल आय (TR) तथा कुल लागत (TC) के आधार पर–

फर्म को संतुलन की स्थिति में अधिकतम लाभ प्राप्त होगा जब निम्नलिखित शर्तें पूरी हो

- जहां पर TR एवं TC का अंतर अधिकतम हो।
- जहां पर TR पर खींची गई स्पर्श रेखा TC पर खींची गई स्पर्श रेखा के समानांतर हो।

पूर्ण प्रतियोगी बाजार में कीमत या औसत आय स्थिर होती है, इसलिए कुल आय में वृद्धि, बेची गई वस्तु के अनुपात में होती है इसलिए कुल आय (TR) वक्र 45° की सीधी रेखा होगा, जबकि कुल लागत (TC) वक्र अंग्रेजी के उलटे S आकार का होता है।

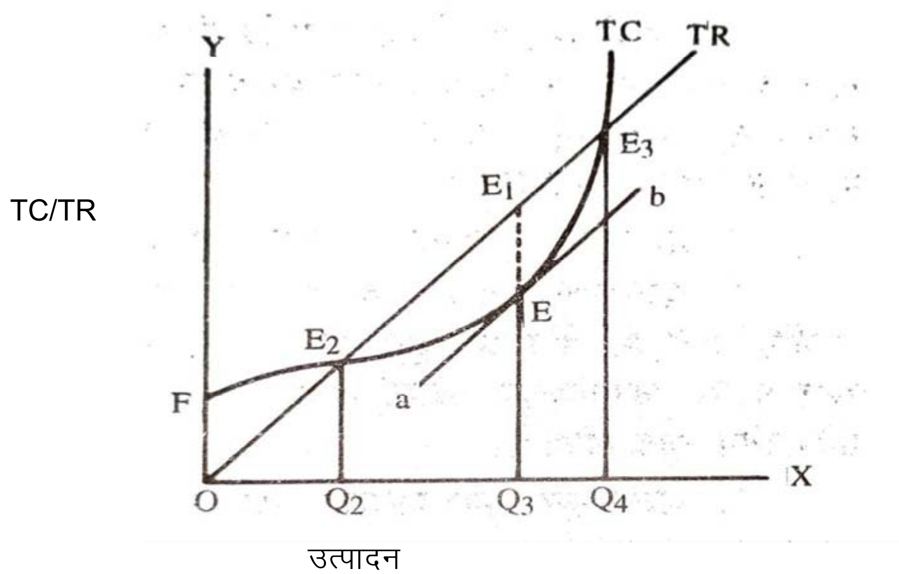

चित्र – 2

रेखा चित्र से स्पष्ट है कि उत्पादन के OQ_2 तथा OQ_4 स्तर पर लाभ शून्य है तथा उत्पादन के OQ_3 स्तर पर लाभ अधिकतम है, यहीं पर संतुलन की सभी शर्तें पूरी हो रही हैं।

(b) सीमांत आगम (MR) तथा सीमांत लागत (MC) के आधार पर–

फर्म को संतुलन की स्थिति तब प्राप्त होगी, जब वह निम्नलिखित शर्तें पूर्ण करेगी–

- सीमांत लागत का मान सीमांत आय के बराबर हो।
- MC वक्र का ढाल, MR वक्र के ढाल से अधिक हो।

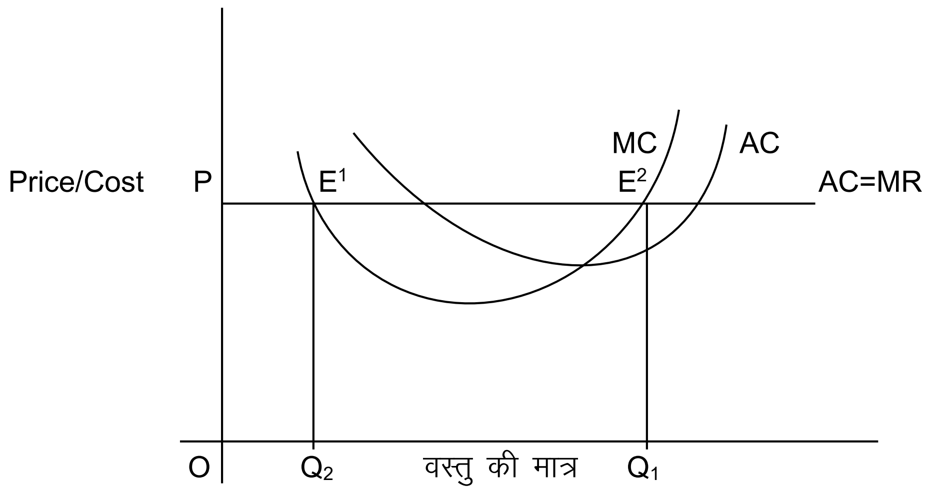

चित्र – 3

रेखाचित्र में E बिंदु पर संतुलन की स्थिति है जहां पर संतुलन से संबंधित सभी शर्तें पूरी हो रही हैं। E_1 बिंदु पर संतुलन स्थित नहीं है क्योंकि यहां MC वक्र का ढाल, MR वक्र के ढाल से कम है। यद्यपि की E_1 बिंदु पर MC का मान MR के बराबर है।

1.5 अल्पकाल में फर्म का संतुलन–

पूर्ण प्रतियोगी बाजार में फर्में अल्पकाल में पूर्ति के अनुसार मांग का समायोजन नहीं कर पाती हैं। उन्हें अल्पकाल में असामान्य लाभ, सामान्य लाभ तथा हानि तीनों का सामना करना पड़ता है।

[A] असामान्य लाभ (Abnormal Profit) –

अल्पकाल में फर्में असामान्य लाभ तब प्राप्त करेंगी, जब उनको प्राप्त कीमत/औसत आय उनकी औसत लागत से अधिक हो अर्थात् ।R >AC की स्थिति हो।

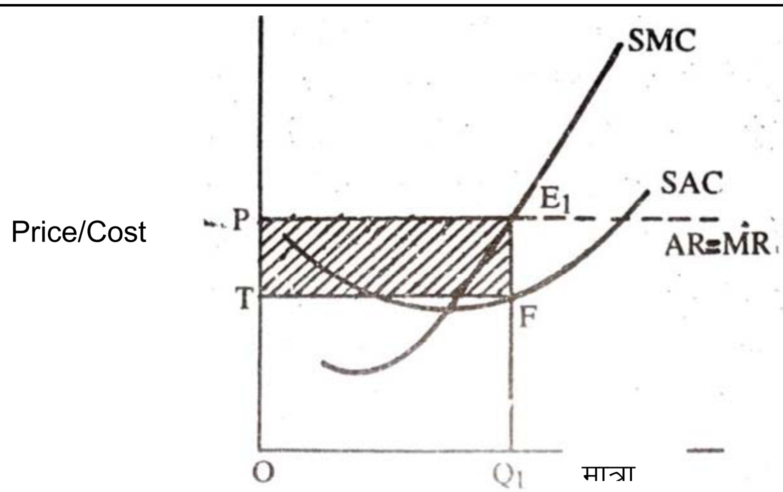

चित्र – 4

रेखाचित्र में संतुलन बिंदु E_1 है, जिससे संबंधित कीमत या औसत आय (AR) का मान औसत लागत से अधिक है तथा फर्म $PTFE_1$ के बराबर असामान्य लाभ अर्जित कर रही है।

[B] सामान्य लाभ (Normal Profit)–

सामान्य लाभ की स्थिति में फर्में औसत लागत (AC) के बराबर कीमत या औसत आय (AR) प्राप्त करती है,अर्थात AR =AC=P

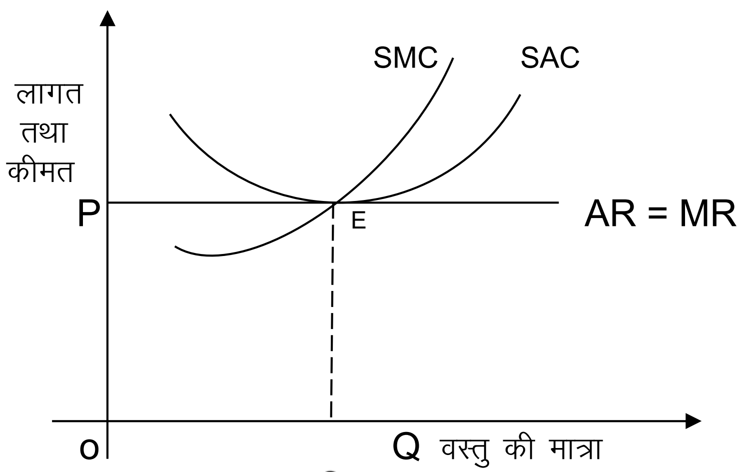

चित्र – 5

उपरोक्त रेखाचित्र में फर्म E बिंदु पर संतुलन में है, जहाँ पर OQ उत्पादन स्तर हेतु औसत लागत तथा औसत आगम समान है तथा फर्में सामान्य लाभ प्राप्त करती हैं।

[C] हानि (Loss)-

अल्पकाल में फर्मों को हानि का सामना करना पड़ता है क्योंकि घर में अल्पकाल में समय कम होने के कारण लागतो में परिवर्तन नहीं कर पाती हैं इस स्थिति में फर्म को प्राप्त औसत आगम या कीमत औसत लागत से कम होती है अर्थात।R<AC → P<AC

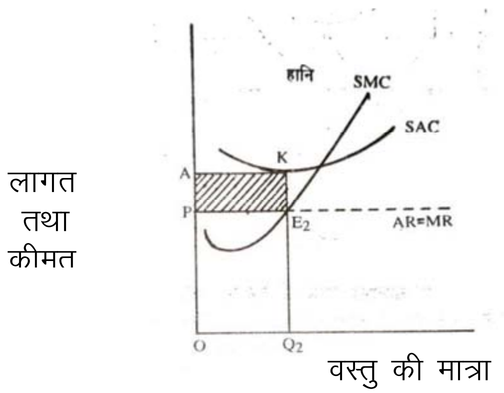

चित्र – 6

उपरोक्त रेखाचित्र से स्पष्ट है कि।R<AC तथा फर्म की कुल हानि PCTE के बराबर है

- **तालाबंदी बिंदु(Shutdown point) –**

अल्पकाल में फर्म हानि की स्थिति में तभी तक उत्पादन करती हैं जब तक उसको मिलने वाली कीमत आवश्यक परिवर्तनीय लागत से अधिक हो इस स्थिति में फर्म औसत स्थिर लागत के बराबर हानि सहन करती है लेकिन जैसे ही आवश्यक परिवर्तनीय लागत कीमत के बराबर या उससे अधिक होती है फरमान में कार्य करना बंद कर देती है इसे shutdown point कहते हैं।

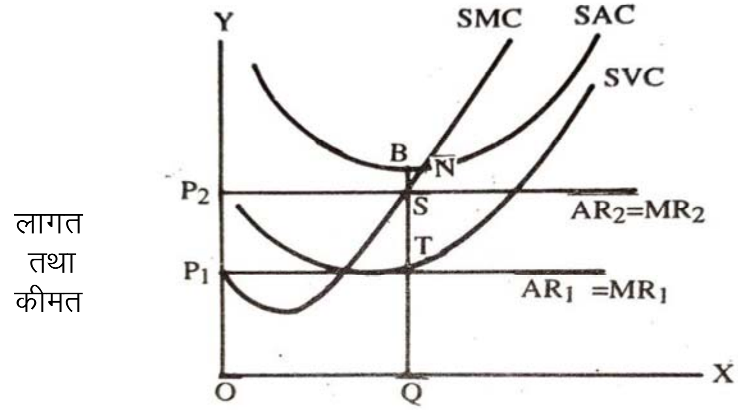

चित्र – 7

वस्तु की मात्रा

रेखाचित्र से स्पष्ट है कि औसत परिवर्तनीय लागत (AVC) का मान OP' है तथा संतुलन कीमत OP है। E बिंदु पर OP>OP' है अतः फर्म हानि में कार्य करेगी, लेकिन जैसे ही ।VC का मान OP' से बढ़कर OP हो जाये, फर्म उत्पादन करना बंद कर देगी।

1.6 दीर्घ काल में फर्म का संतुलन –

दीर्घकाल में समय अधिक होने के कारण फर्में मांग के अनुसार लागतो में समायोजन करने में सक्षम होती हैं। फर्मों के आवागमन प्रतिबंध रहित होने के कारण बाजार में यदि असामान्य लाभ विद्यमान हो तो बाहर की फर्में भी उत्पादन हेतु बाजार में प्रवेश करेंगी। जिसके कारण लागत में वृद्धि आएगी तथा एक स्थिति में सभी फर्मों को पुनः सामान्य लाभ ही प्राप्त होगा।

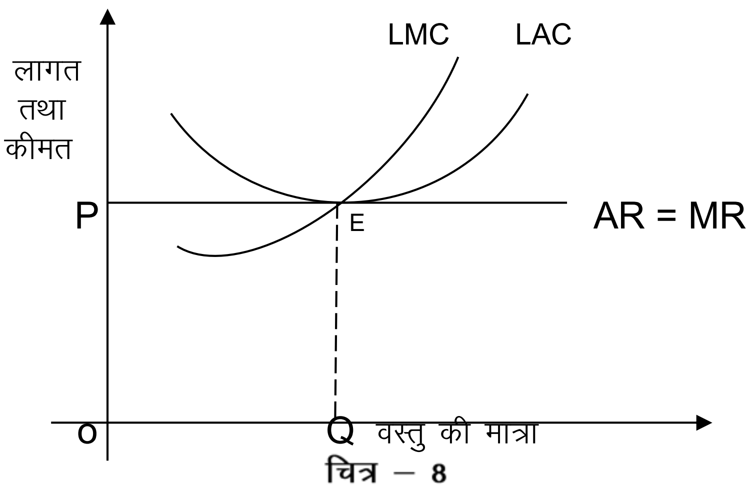

चित्र – 8

यदि बाजार में हानि की स्थिति हो तो उद्योग से फर्में बाहर जाना प्रारंभ कर देंगी, जिससे लागतो में कमी आएगी और हानि की स्थिति समाप्त होकर पुनः सामान्य लाभ स्थापित होगा। दीर्घकाल में फर्मों को सामान लाभ प्राप्त होगा तथा।R=MR=AC=MC=Price की संतुलन स्थिति होगी।

1.7 पूर्ण प्रतियोगिता में उद्योग का संतुलन –

किसी उद्योग का संतुलन तब होगा जब उस उद्योग की कुल उत्पादन मात्रा में घटने–बढ़ने की प्रवृत्ति नहीं हो। जिस मात्रा तथा कीमत पर उद्योग का मांग वक्र तथा पूर्ति वक्र एक दूसरे को काटेंगे उस उत्पादन मात्रा पर उद्योग संतुलन में होगा। एक उद्योग के संतुलन हेतु निम्न शर्तें पूरी होनी चाहिए–

- उद्योग द्वारा उत्पादित पदार्थ की पूर्ति मात्रा तथा उसकी मांग मात्रा समान हो।
- मांग तथा पूर्ति द्वारा निर्धारित कीमत पर सभी पर में व्यक्तिगत संतुलन की स्थिति में हो।
- उद्योग की फर्म केवल सामान्य लाभ अर्जित कर रही हों।

[A] अल्पकाल में उद्योग का संतुलन –दी हुई बाजार मांग तथा बाजार पूर्ति के साथ उद्योग उस मूल्य पर संतुलन की स्थिति में होगा जिस पर बाजार मांग तथा बाजार पूर्ति परस्पर बराबर हो

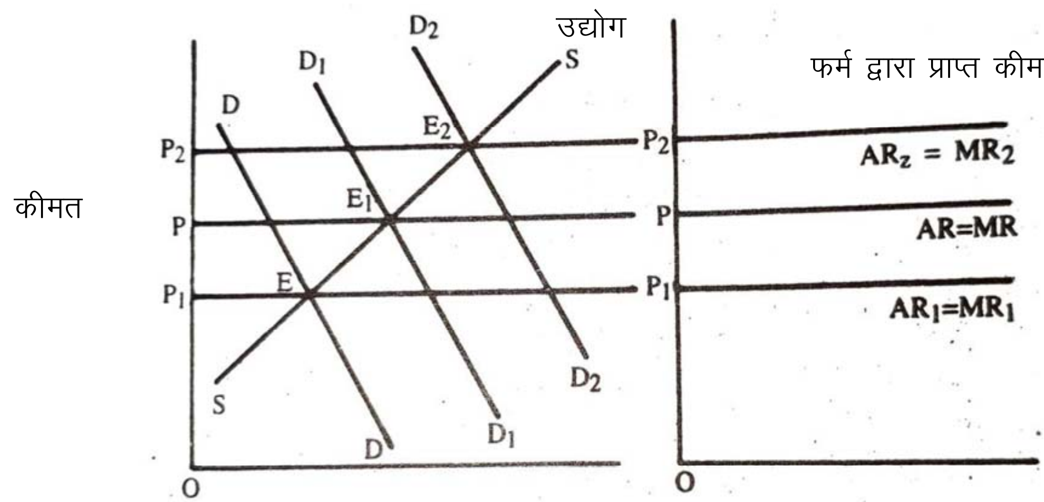

वस्तु की मात्रा **चित्र – 9**

उद्योग की अल्पकालीन संतुलन में कुछ फर्म असामान्य लाभ कुछ फर्म सामान्य लाभ तथा कुछ फर्म हानि की स्थिति में होंगे। परिणाम स्वरूप उद्योग में विस्तार तथा संकुचन की संभावना बनी रहेगी।

[B] दीर्घ काल में उद्योग का संतुलन –

दीर्घकाल में उद्योग संतुलन की स्थिति में होगा जब उद्योग की मांग तथा पूर्ति परस्पर बराबर हो तथा उद्योग के कुल उत्पादन में संकुचन और विस्तार की प्रवृत्ति पूर्णतः समाप्त हो जाए अर्थात सभी फर्में सामान्य लाभ ही अर्जित कर रही हो।

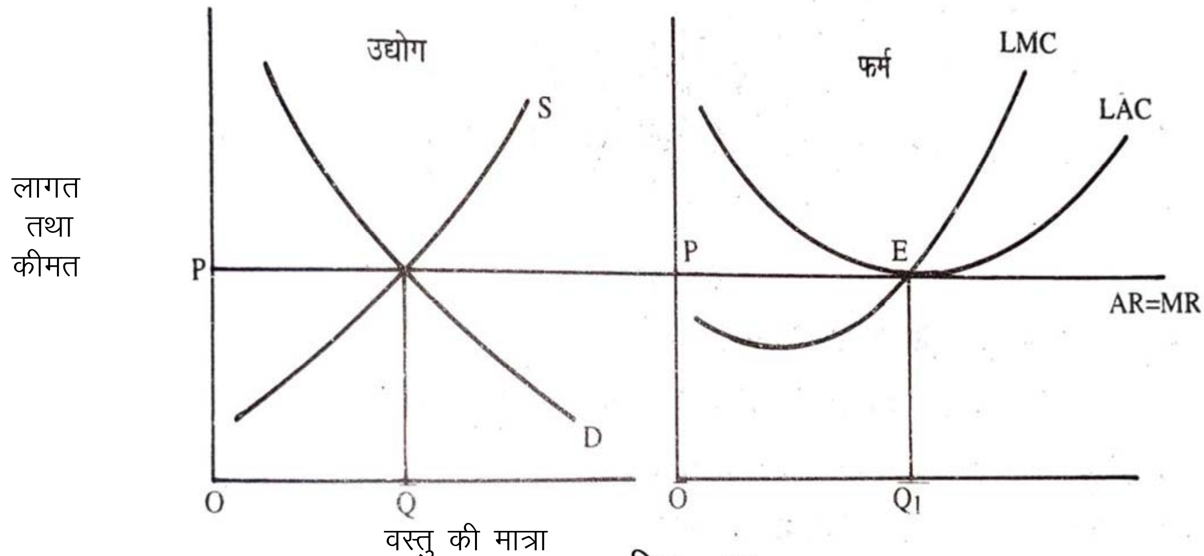

चित्र – 10

दीर्घकाल में संतुलन की स्थिति में प्रत्येक कर्म की औसत लागत औसत आगम तथा सीमांत आगम सीमांत लागत परस्पर समान होंगे अर्थात

$$LAC=LMC=AR=Price$$

1.8 बोध प्रश्न

1. पूर्ण प्रतियोगिता में कीमत निर्धारण किन शक्तियों द्वारा किया जाता है?
2. पूर्ण प्रतियोगिता में फर्म की संस्थिति कितने तरीकों से निर्धारित की जा सकती है?
3. तालाबंदी बिंदु से क्या अभिप्राय है?

1.9 सारांश

इस इकाई में हमने पूर्ण प्रतियोगिता के अंतर्गत अल्पकालीन तथा दीर्घकालीन परिस्थिति में कीमत एवं उत्पादन निर्धारण को समझा।पूर्ण प्रतियोगी बाजार में कीमत का निर्धारण किसी एक फर्म के द्वारा नहीं होता है बल्कि सहजातीय वस्तु का उत्पादन एवं विक्रय करने वाले उद्योग के द्वारा स्वतंत्र रूप से मूल्य का निर्धारण, बाजार की मांग एवं पूर्ति की शक्तियों के द्वारा किया जाता है। उद्योग द्वारा कीमत का निर्धारण उद्योग के मांग वक्र तथा पूर्ति वक्र की सहायता से किया जाता है।पूर्ण प्रतियोगिता में कर्म के लिए मूल्य उद्योग द्वारा निर्धारित रहता है। अत: फर्म अपने लाभ को अधिकतम करने के उद्देश्य से अपनी लागत को न्यूनतम करने का प्रयास करती है तथा संतुलन को प्राप्त करती है।पूर्ण प्रतियोगी बाजार में फर्में अल्पकाल में पूर्ति के अनुसार मांग का समायोजन नहीं कर पाती हैं। उन्हें अल्पकाल में असामान्य लाभ, सामान्य लाभ तथा हानि तीनों का सामना करना पड़ता है।

1.10 शब्दावली

पूर्ण प्रतियोगिता – बाजार का एक प्रकार जहाँ क्रेता एवम् विक्रेता अत्यधिक संख्या में पाये जाते हैं तथा कीमत पर इनका नियंत्रण नहीं होता है।

तालाबंदी बिन्दु – पूर्ण प्रतियोगिता में वह बिन्दु जहाँ फर्में उत्पादन कार्य बंद कर देती हैं।

1.11 संदर्भ ग्रंथ

1. Principles of Micro Economics — Mansfield
2. A Text Book of Economic Theory — Stonier & Hague
3. Microeconomic Theory — A.P. Lerner

1.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

1 उत्तर –पूर्ण प्रतियोगी बाजार में कीमत का निर्धारण किसी एक फर्म के द्वारा नहीं होता है बल्कि सहजातीय वस्तु का उत्पादन एवं विक्रय करने वाले उद्योग के द्वारा स्वतंत्र रूप से मूल्य का निर्धारण, बाजार की मांग एवं पूर्ति की शक्तियों के द्वारा किया जाता है।

2 उत्तर –पूर्ण प्रतियोगिता में कर्म के लिए लाभ अधिकतम करने के दो प्रकार है–

- कुल आय (TR) तथा कुल लागत (TC) के आधार पर
- सीमांत आगम (MR) तथा सीमांत लागत (MC) के आधार पर

3 उत्तर – अल्पकाल में फर्म हानि की स्थिति में तभी तक उत्पादन करती हैं जब तक उसको मिलने वाली कीमत आवश्यक परिवर्तनीय लागत से अधिक हो इस स्थिति में फर्म औसत स्थिर लागत के बराबर हानि सहन करती है लेकिन जैसे ही आवश्यक परिवर्तनीय लागत कीमत के बराबर या उससे अधिक होती है फर्म कार्य करना बंद कर देती है इसे shutdown point कहते हैं।

1.13 अभ्यासार्थ प्रश्न –

1. पूर्ण प्रतियोगिता के अंतर्गत उद्योग द्वारा कीमत निर्धारित की व्याख्या करिये।

2. पूर्ण प्रतियोगिता में फर्म के क्या उद्देश्य होते हैं? इसकी संस्थिति के आधारभूत सिद्धांतों को समझाइये।

3. पूर्ण प्रतियोगिता में फर्म की अल्पकालीन तथा दीर्घकालीन संस्थिति की उचित रेखाचित्रों के साथ व्याख्या करिये।

इकाई–2 अपूर्ण प्रतियोगिता : एकधिकार, द्वयाधिकार, अल्पाधिकार में कीमत निर्धारण

इकाई की रुपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 एकाधिकार

2.3 अल्पकालीन बाजार में संतुलन

2.4 दीर्घकालीन बाजार में संतुलन

2.5 द्वयाधिकार

2.5.1 कूर्नो मॉडल

2.5.2 बरट्रेंड मॉडल

2.5.3 एजवर्थ मॉडल

2.6 अल्पाधिकार

2.7 अल्पाधिकार में कीमत निर्धारण

2.8 बोध प्रश्न

2.9 सारांश

2.10 शब्दावली

2.11 संदर्भ ग्रंथ

2.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

2.13 अभ्यासार्थ प्रश्न

2.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप समझ सकेंगे कि –

- एकाधिकार, द्वयाधिकार और अल्पाधिकार क्या होता है?
- एकाधिकार में संतुलन का निर्धारण कैसे होता है?
- द्वयाधिकार की विशेषताएं क्या हैं? और इसके प्रमुख मॉडल कौन कौन हैं?
- अल्पाधिकार की विशेषताएं क्या हैं? और अल्पाधिकार में कीमत का निर्धारण किस प्रकार होता है?

2.1 प्रस्तावना

इस इकाई में अपूर्ण प्रतियोगिता के विविध स्वरूपों यथा – एकाधिकार, द्वायाधिकार, अल्पाधिकार में कीमत निर्धारण की संरचना तथा प्र—ति को प्रस्तुत किया गया है। इस इकाई के अध्ययन से हम एकाधिकार, द्वयाधिकार और अल्पाधिकार की परिभाषा तथा संतुलन निर्धारण को अच्छे तरीके से समझ सकेंगे। द्वयाधिकार में कीमतनिर्धारण के प्रमुख मॉडल कूर्नो, बरट्रेंड और एजवर्थ द्वारा प्रतिपादित किये गए, जिसकी व्याख्या इस इकाई में की गयी है। अंत में विधार्थी अल्पाधिकार की परिभाषा, विशेषता और कीमत निर्धारण की प्रक्रिया भी जान सकेंगे, जिसका अर्थशास्त्र के सिद्धांत में महत्वपूर्ण स्थान है।

2.2 एकाधिकार;Monopoly)

यह बाजार की ऐसी स्थिति होती है, जिसमें वस्तु की पूर्ति पर मात्र एक विक्रेता का नियंत्रण होता है। अर्थात् ऐसा बाजार जिसमें एक मात्र विक्रेता होता है, वही फर्म तथा उद्योग दोनों की भूमिका मे होता है। और बाजार की पूर्ति–उत्पादन एवं कीमत पर उसका पूर्ण नियंत्रण हो, ऐसे बाजार को **एकाधिकार** कहते हैं।

परिभाषा–

प्रो बोल्डिंग के अनुसार, शुद्ध एकाधिकारी फर्म वह फर्म है जो कि कोई ऐसी वस्तु उत्पादित कर रही है जिसका किसी अन्य फर्म की उत्पादित वस्तुओं में कोई प्रभावपूर्ण स्थानापन्न नहीं हो।

प्रो लर्नर के अनुसार, एकाधिकार से आशय उस विक्रेता से है जिसका मांग वक्र गिरता हुआ होता है।

चैंबरलिन के मत में, एकाधिकारी उसे समझना चाहिए जो किसी वस्तु की पूर्ति पर पूर्ण नियंत्रण रखता हो।

विशेषताएं–

शुद्ध एकाधिकार की महत्वपूर्ण विशेषताएं निम्न हैं–

- बाजार में अकेला विक्रेता होता है।
- बाजार में वस्तु की पूर्ति तथा कीमत पर विक्रेता का पूर्ण नियंत्रण होता है।
- बाजार में उत्पादित वस्तुओं की निकट स्थानापन्न वस्तु का अभाव होता है तथा तिर्यक/आड़ी माँग की लोच का मान शून्य होता है।
- उद्योग में फर्म के प्रवेश तथा बहिर्गमन पर प्रतिबंध होता है।
- दो बाजारों के बीच अत्यधिक दूरी पायी जाती है।
- एकाधिकार की स्थिति में मूल्य विभेद संभव होता है अर्थात् विक्रेता वस्तु की विभिन्न इकाईयों को अलग अलग मूल्य पर बेच सकता है।

संतुलन का निर्धारण –

एकाधिकार में विक्रेता अकेला होता है और वही फर्म तथा उद्योग होता है; मूल्य का निर्धारण भी वही करता है। एकाधिकारी संतुलन की स्थिति में अपने लाभ का अधिकतम करने का प्रयास करता है। संतुलन के लिये निम्नलिखित शर्तें हैं–

(i) MR= MC

(ii) MC वक्र का ढाल, MR वक्र के ढाल से अधिक हो।

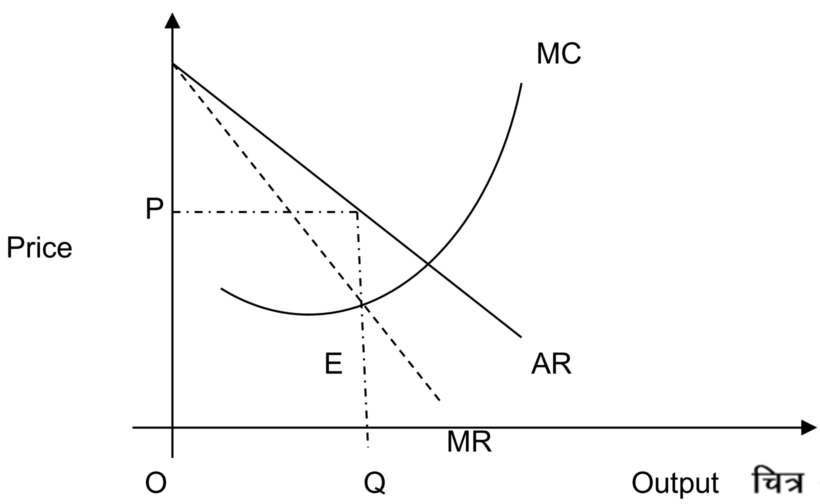

चित्र – 1

2.3 अल्पकालीन बाजार में संतुलन –

अल्पकाल में एकाधिकार की फर्म को असामान्य लाभ, सामान्य लाभ एवं हानि तीनों ही स्थितियों का सामना करना पड़ता है क्यों कि समयाभाव के कारण फर्म माँग के अनुरूप पूर्ति का समायोजन नहीं कर पाता है।

[A] असामान्य लाभ (Abnormal Profit) –

असामान्य लाभ की स्थिति फर्म को तब प्राप्त होती है, जब उसको प्राप्त होने वाली कीमत या औसत आगम (AR) उसकी औसत लागत (AC) से अधिक होती है। अर्थात् AR>AC.

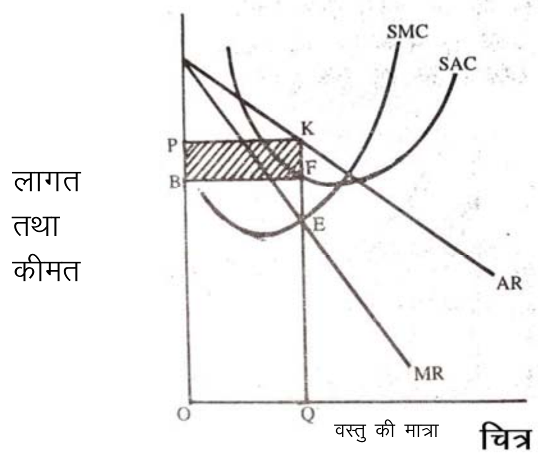

चित्र – 2

रेखाचित्र में E बिन्दु पर संतुलन की स्थिति है जिससे सम्बन्धित कीमत (औसत आय) OP तथा औसत लागत OB है। चूँकि OP> OB है, अतः AR>AC, प्रति इकाई लाभ OP- OB =PB है तथा कुल लाभ PBFK है।

[B] सामान्य लाभ (Normal Profit) –

फर्म सामान्य लाभ की स्थिति में तब होगी, जब उसको मिलने वाली कीमत उसकी औसत लागत के बराबर हो अर्थात् AR=AC.

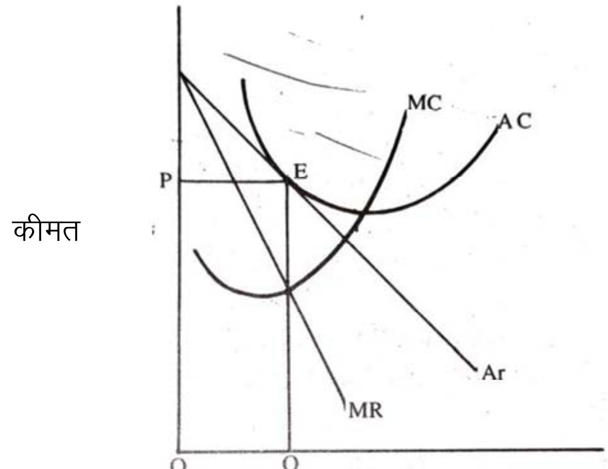

चित्र – 3

संलग्न रेखाचित्र में E बिन्दु पर संतुलन है; सम्बन्धित कीमत (औसत आगम) तथा औसत लागत बराबर है। अतः फर्म को सामान्य लाभ की प्राप्ति हो रही है।

[C] हानि (Loss)-

जब फर्म को प्राप्त होने वाली औसत आय (कीमत) उसकी औसत लागत से कम होती है, तो फर्म को हानि का सामना करना पड़ता है। अर्थात् ।R<AC.

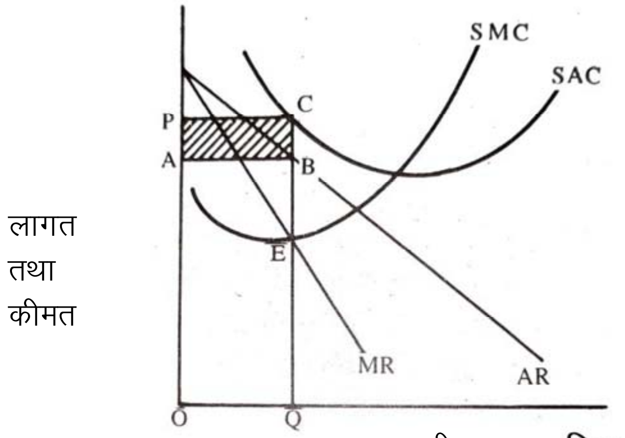

वस्त की मात्रा **चित्र – 4**

संलग्न रेखाचित्र में कीमत (OP) का मान औसत लागत (OB) से से कम है तथा फर्म को PBFK के बराबर कुल हानि हो रही है।

एकाधिकारी फर्म अल्पकाल में हानि की स्थिति में तभी तक उत्पादन करेगी जब तक कि उसको प्राप्त होने वाली कीमत का मान औसत परिवर्तनीय लागत (AVC) से अधिक रहेगा।

2.4 दीर्घकालीन बाजार में संतुलन –

दीर्घकाल में फर्म के पास समय अधिक रहता है तथा वह माँग के अनुरूप अपनी पूर्ति में समायोजन करने सक्षम होती है। दीर्घकाल में एकाधिकारी को सदैव असामान्य लाभ प्राप्त होता है क्योंकि बाजार में वह अकेला विक्रेता होता है तथा नयी फर्मों के आवगमन पर प्रतिबन्ध होता है।

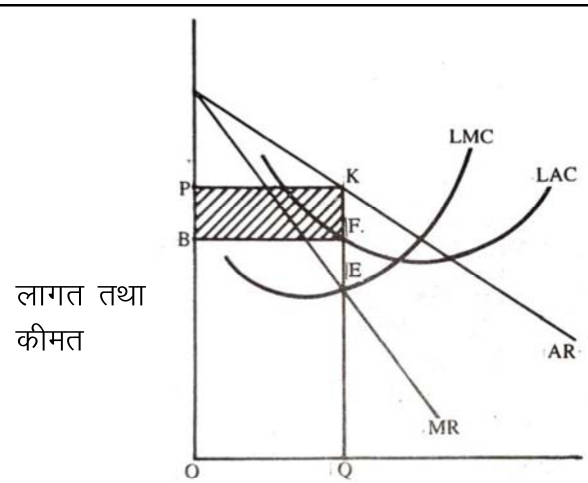

उत्पादन **चित्र – 5**

रेखाचित्र में फर्म OQ मात्रा का उत्पादन करते हुये E बिन्दु पर संतुलन की स्थिति में है; जिससे सम्बन्धित कीमत OP तथा औसत लागत OB है। चूँकि औसत आगम का मान औसत लागत से अधिक है अतः फर्म को असामान्य लाभ की प्राप्ति हो रही है। फर्म का प्रतिइकाई लाभ PB तथा कुल लाभ PBFK है।

2.5 द्वयाधिकार

द्वयाधिकार बाजार की वह स्थिति है, जिसके अंतर्गत बाजार में केवल दो फर्में कार्य करती हैं। इसकी एक विशेषता यह है कि इसके अंतर्गत व्यक्तिगत फर्म को अपनी कीमत अथवा उत्पादन मात्रा या दोनों के परिवर्तन संबंधी अपने निर्णय के अप्रत्यक्ष प्रभावों पर केंद्रित होना पड़ता है।

"द्वयाधिकार बाजार की वह स्थिति है, जिसमें वस्तु की पूर्ति केवल दो विक्रेताओं द्वारा की जाती है, ऐसी फर्मों द्वारा उत्पादित वस्तु प्रायः एक ही होती है और वस्तु की कीमतें भी समान रहती हैं।"

द्वयाधिकार की विशेषताएं –

- केवल दो फर्में होती हैं।
- दोनों फर्मों में पारस्परिक निर्भरता बनी रहती है।
- इसमें कीमत स्थायित्व की प्र—ति पाई जाती है।
- दोनों फर्मों में समान्यतः एक ही वस्तु उत्पादित होती है।
- माँग वक्र, औसत आय वक्र और एवं सीमांत आय वक्र की ढाल ऋणात्मक होती है।

द्वयाधिकार में कीमत निर्धारण के प्रमुख मॉडल निम्नलिखित हैं–

2.5.1 कूर्नो मॉडल –

इस मॉडल का प्रतिपादन कूर्नो ने सन् 1838 ई० में किया। कूर्नो ने अपने मॉडल में माँग पक्ष का विश्लेषण किया है, लेकिन उत्पादन लागत को शून्य मानकर कूर्नो के अनुसार उत्पादन मात्रा का निर्धारण करने में वह अपनी क्रिया के प्रति प्रतिद्वंदी की प्रतिक्रिया का ध्यान नहीं देता।

कूर्नो मॉडल की मान्यताएं –

- केवल दो उत्पादकA तथा B हैं।
- खनिज झरनों का उदाहरण लिया गया है।
- उत्पादन लागत शून्य है।
- बाजार माँग वक्र रेखीय है।
- प्रत्येक फर्म की उत्पादन क्षमता असीमित है।

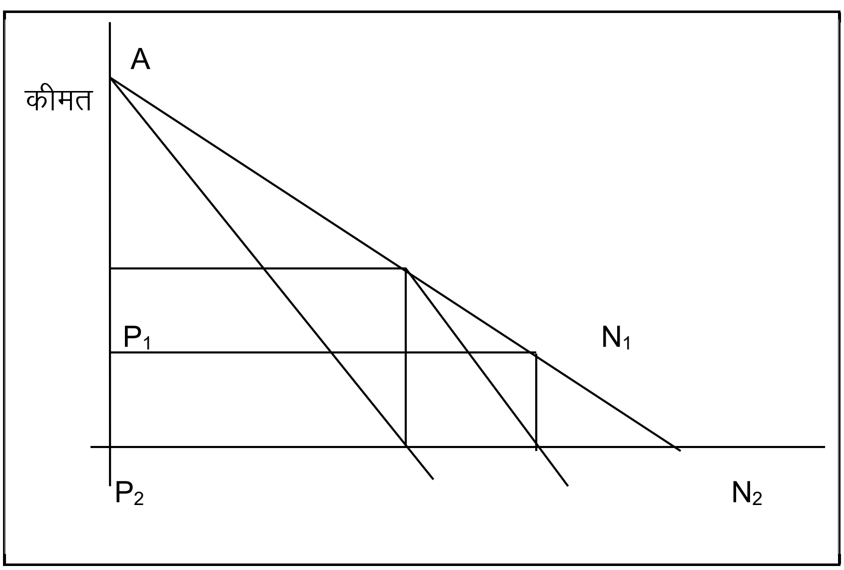

चित्र में X अक्ष पर उत्पादन तथा Y अक्ष पर मूल्य प्रदर्शित है। बाजार में सबसे पहले एक मात्र फर्म है, जिसका माँग वक्रAB है। सम्बंधित सीमांत आय वक्र MR_1 है। फर्मA अपने अधिकतम लाभ हेतु OM उत्पादन करती है, जो OB बाजार माँग का आधा है। एकाधिकारी कीमत OP_1 है तथा OMN_1P_1 है। फर्म B जब प्रवेश करती है, तो वह BN_1 माँग वक्र को पूरा करने का प्रयास करती है, जिससे सम्बंधित सीमांत आय वक्र MR_2 है। फर्म B का लाभ OP_2 कीमत से MS उत्पादन करने पर अधिकतम होगा। चूँकि पदार्थ समरूप हैं, अतः फर्म। के ग्राहक कम कीमत पर फर्म B की ओर आकर्षित होंगे। फर्म। के लाभ कम होने पर यह शेष माँग वक्र 3/4 OB का 1/2 भाग उत्पादन करेगी अर्थात् 3/8OB पर। दोनों फर्मों पर क्रिया प्रतिक्रिया तब तक चलेगी, जब तक कि दोनों फर्मों द्वारा उत्पादित भाग समान नहीं हो जाता है। जो कि 1/3+1/3 = 2/3 भाग होगा।

यदि कूर्नो के मॉडल में n फर्में हैं तो

कुल उत्पादन =;n/n+1) OB

प्रत्येक फर्म का कुल उत्पादन =;1/n+1) OB

2.5.2 बरट्रेंड मॉडल

बरट्रेंड के अनुसार कीमत के गिरने की कोई सीमा नहीं है, क्योंकि प्रत्येक उत्पादक दूसरे से कम कीमत पर बेचकर अपने ही उत्पादित पदार्थ की पूर्ति में बढ़ोत्तरी कर सकता है। ऐसा वह तब तक करता है, जब तक कीमत, औसत लागत के बराबर नहीं हो जाती। इस मॉडल में पहले कीमत निर्धारित होती है, फिर उस कीमत पर माँगी गयी मात्रा का उत्पादन होता है।

इस मॉडल में प्रत्येक उत्पादक यह मानता है कि उसका प्रतियोगी वर्तमान स्तर पर अपनी कीमत स्थिर रखेगा अर्थात् यहाँ शून्य कल्पित परिवर्तनशीलता की कल्पना की गयी है। बरट्रेंड के मॉडल में उत्पादक अपनी कीमतों को परिवर्तित करते हैं, अपनी उत्पादन मात्रा को नहीं।

बर्ट्रेंड के मॉडल में संतुलन तब प्राप्त होता है, जबकि बाजार कीमत औसत उत्पादन लागत के बराबर होती है और दोनों द्वयाधिकारियों की संयुक्त संतुलन उत्पादन मात्रा पूर्ण प्रतियोगी उत्पादन के बराबर होती है।

2.5.3 एजवर्थ मॉडल

एजवर्थ के अनुसार प्रत्येक द्वयाधिकारी यह सोचता है कि वह चाहे जो कीमत निर्धारित करे, उसका प्रतिद्वंदी अपनी कीमत में कोई परिवर्तन नहीं करेगा। एजवर्थ ने यह बताया कि द्वि अधिकारी में कोई भी निश्चित संतुलन नहीं हो सकता है।

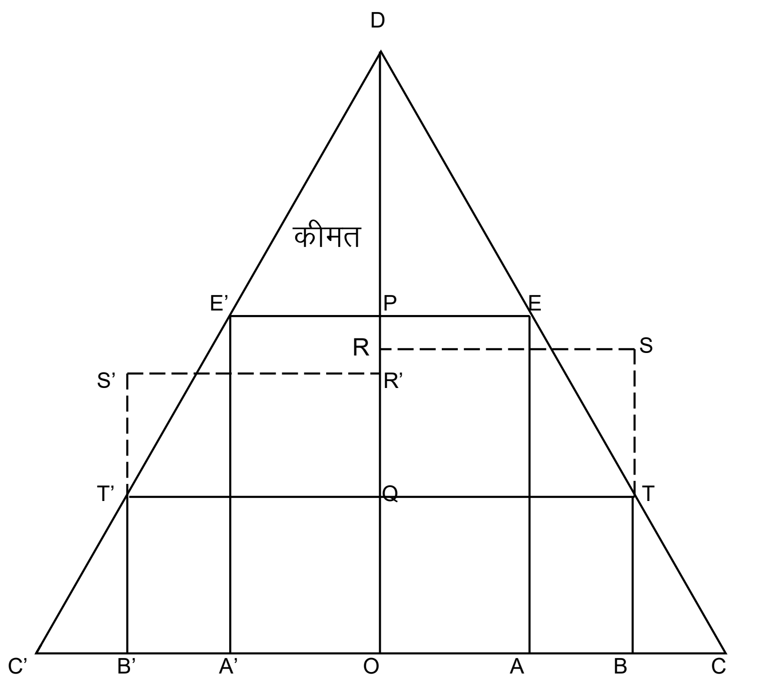

[चित्र – 7]

एजवर्थ का द्वि अधिकारी समाधान निरंतर असंतुलन का है क्योंकि कीमत लगातार एकाधिकारी कीमत तथा पूर्ण प्रतियोगी कीमत के बीच चक्कर काटती रहती है।

इस प्रकार एजवर्थ का द्वि अधिकारी मॉडल किसी निश्चित संतुलन का वर्णन नहीं करता है।

2.6 अल्पाधिकार (Oligopoly)-

अल्पाधिकार अपूर्ण प्रतियोगिता का एक महत्वपूर्ण रूप है। अल्पाधिकार(Oligopoly) उस स्थिति को कहा जाता है, जिसमें एक वस्तु का उत्पादन/विक्रय करने वाली फर्में बहुत कम संख्या; सामान्यतः 2 से 10 के बीच होती हैं। अल्पाधिकार का सबसे सरल रूप **'द्वि– अधिकार'**;Duopoly) होता है, जिसमें सिर्फ 2 फर्में होती हैं। अल्पाधिकार को 'कुछ में प्रतियोगिता'भी कहते हैं।

जब अल्पाधिकार में फर्मों के पदाथ समान हों तो उसे **'गैर– विभेदीकृत अल्पाधिकार'**कहते हैं या शुद्ध अल्पाधिकार कहा जाता है। लेकिन जब विभिन्न विक्रेताओं के पदार्थ एक दूसरे के निकट स्थानापन्न होते हैं, तो इसे **विभेदीकृत अल्पाधिकार** कहते हैं।

अल्पाधिकार की विशेषताएँ

(1) फर्मों के बीच परस्पर निर्भरता पायी जाती है। एक फर्म के निर्णय का अन्य फर्मों की कीमत,उत्पादन, विक्रय लागतों पर प्रभाव पड़ता है।

(2) अल्पाधिकार में विज्ञापन तथा विक्रय लागतें महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

(3) उद्योग की फर्मों में समूह व्यवहार (कार्टेल) पाया जाता है।

(4) अल्पाधिकारी का माँग वक्र– अल्पाधिकार में फर्मों का माँग वक्र अनिश्चित होता है। क्योंकि फर्मों के बीच परस्पर निर्भरता पायी जाती हैं।

2.7 अल्पाधिकार में कीमत निर्धारण

अल्पाधिकार में कीमत का निर्धारण फर्में स्वतंत्र रूप से संधिपूर्ण तरीके से अथवा कीमत नेतृत्व द्वारा करती हैं।

1. स्वतंत्र मूल्य निर्धारण–

स्वतंत्र मूल्य निर्धारण के अंतर्गत अल्पाधिकार उद्योग की प्रत्येक फर्म अपने मूल्य तथा उत्पादन मात्रा सम्बंधित निर्णय स्वतंत्र रूप से संपादित करती है। इस स्थिति में प्रतिद्वंदी विक्रेताओं में निरंतर कीमत युद्ध होने के कारण कीमत में पहले से अधिक स्थिरता आ सकती है।

2. सन्धिपूर्ण मूल्य निर्धारण –

स्वतंत्र मूल्य निर्धारण नीति द्वारा उत्पन्न अस्थिरता से बचने के लिए अल्पाधिकारीं फर्में संधिपूर्ण अल्पाधिकार द्वारा कीमत तय करती हैं। इसकी व्याख्या अगली इकाई में प्रस्तुत है।

3. कीमत नेतृत्व के अंतर्गत मूल्य निर्धारण–

कीमत नेतृत्व के अंतर्गत फर्में उस कीमत पर अपनी वस्तुओं को बेचने के लिए तैयार होती हैं, जो उद्योग के किसी एक सदस्य फर्म द्वारा निर्धारित की जाती है।

कीमत नेतृत्व के अंतर्गत एक फर्म जो साधारणतः कोई बड़ी फर्म होती है, जो मूल्य निर्धारण करती है और अल्पाधिकार उद्योग की अन्य फर्में उस कीमत का अनुसरण करती हैं। यह सब एक अनौपचारिक समझौते की

तरह होता है।

कीमत नेतृत्वकर्ता अपनी वस्तु का मूल्य निर्धारण करते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखता है—

- उसकी कीमत नीति पर प्रतिद्वंदियों की प्रतिक्रिया।
- उसके तथा उसके प्रतिद्वंदियों द्वारा उत्पादित वस्तुओं के बीच प्रतिस्थापन की लोच।
- अपने प्रतिद्वंदियों की मूल्य नीति के विषय में उसका अपना ज्ञान।

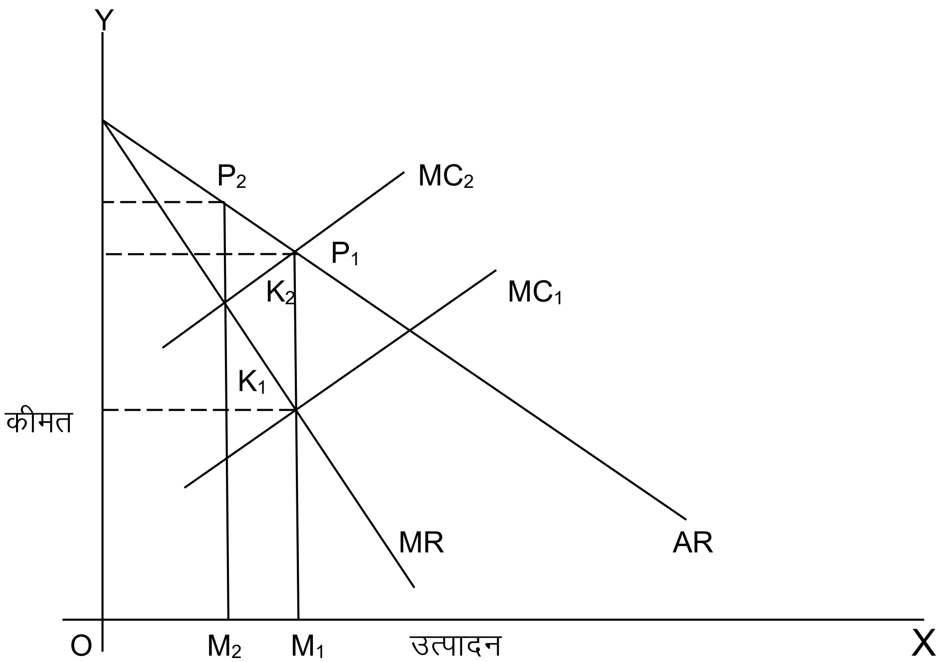

[चित्र – 8]

उपरोक्त रेखा चित्र मेंAR – औसत आगम और MR – सीमांत आगम वक्र है, जो दोनों अल्पाधिकारी फर्मों के लिए समान है, क्योंकि दोनों बिल्कुल एक सी ही वस्तु उत्पादित (बिक्री) करती हैं। इसमें एक फर्म कीलागत कम (MC_1) तथा दूसरी फर्म की लागत अधिक (MC_2) है।

साम्य की स्थिति में पहली फर्म जिसकी उत्पादन लागत कम है, अपनी कीमत तथा उपज की मात्रा K_1 बिन्दु के अनुसार निश्चित करेगी, जहाँ उसकी सीमांत लागत, उसके सीमांत आगम के बराबर है। अर्थात् P_1M_1 कीमत तथा OM_1 उत्पादन मात्रा होगी।

इसी प्रकार दूसरी फर्म अपनी कीमत तथा उत्पादन की मात्रा K_2 बिन्दु के अनुसार निश्चित करेगी, जहाँ $MC_2 = MR$ है। चूंकि पहली फर्म की कीमत (P_1M_1) तथा दूसरी फर्म की कीमत (P_2M_2) से कम है, अतः पहली फर्म कीमत नेता बन जायेगी और इसके द्वारा निर्धारित कीमत ही बाजार कीमत होगी।

कीमत नेतृत्व की विशेषताएं

- प्रभावशाली फर्म का नेतृत्व, जो सामान्यतः उद्योग की सम्पूर्ण उत्पादन मात्रा का एक महत्वपूर्ण भाग उत्पादित करती हैं।

- प्राचीन फर्म को उद्योग की स्थिति की सही परख होती है।
- आक्रामक कीमत नेतृत्व जिसमें उद्योग में शक्तिशाली फर्म अपने कुछ अथवा सभी प्रतिद्वंदियों को बाजार से बाहर निकालने के लिए सभी प्रकार के अच्छे और बुरे उपाय अपनाती है।

2.8 बोध प्रश्न

1. एकाधिकार क्या होता है?
2. एकाधिकार में संतुलन निर्धारण की आवश्यक शर्त बताइये।
3. द्वयाधिकार की क्या परिभाषा है?
4. अल्पाधिकार में कीमत नेतृत्व क्या है?

2.9 सारांश

एकाधिकार में विक्रेता अकेला होता है और वही फर्म तथा उद्योग होता है; मूल्य का निर्धारण भी वही करता है। एकाधिकारी संतुलन की स्थिति में अपने लाभ का अधिकतम करने का प्रयास करता है। अल्पकाल में एकाधिकार की फर्म को असामान्य लाभ, सामान्य लाभ एवं हानि तीनों ही स्थितियों का सामना करना पड़ता है क्यों कि समयाभाव के कारण फर्म माँग के अनुरूप पूर्ति का समायोजन नहीं कर पाता है। दीर्घकाल में एकाधिकारी को सदैव असामान्य लाभ प्राप्त होता है क्योंकि बाजार में वह अकेला विक्रेता होता है तथा नयी फर्मों के आवागमन पर प्रतिबन्ध होता है।

द्वयाधिकार बाजार की वह स्थिति है, जिसमें वस्तु की पूर्ति केवल दो विक्रेताओं द्वारा की जाती है, ऐसी फर्मों द्वारा उत्पादित वस्तु प्रायः एक ही होती है और वस्तु की कीमतें भी समान रहती हैं। अल्पाधिकार(Oligopoly) उस स्थिति को कहा जाता है, जिसमें एक वस्तु का उत्पादन/विक्रय करने वाली फर्में बहुत कम संख्या; सामान्यतः 2 से 10 के बीच होती हैं। अल्पाधिकार में कीमत का निर्धारण फर्में स्वतंत्र रूप से संधिपूर्ण तरीके से अथवा कीमत नेतृत्व द्वारा करती हैं।

2.10 शब्दावली

एकाधिकार –यह बाजार की ऐसी स्थिति होती है, जिसमें वस्तु की पूर्ति पर मात्र एक विक्रेता का नियंत्रण होता है।
द्वयाधिकार – बाजार की वह स्थिति है, जिसमें वस्तु की पूर्ति केवल दो विक्रेताओं द्वारा की जाती है।
अल्पाधिकार – अल्पाधिकार में एक वस्तु का उत्पादन/विक्रय करने वाली फर्में सामान्यतः 2 से 10 के बीच होती हैं।

2.11 संदर्भ ग्रंथ

4. व्यष्टि अर्थशास्त्र — एस. एन. लाल
5. Modern Micro Economics — A. Koustsoyiannis
6. Principles of Micro Economics — Mansfield

2.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.उत्तर– एकाधिकार में विक्रेता अकेला होता है और वही फर्म तथा उद्योग होता है; मूल्य का निर्धारण भी वही

करता है।

2.उत्तर– संतुलन के लिये निम्नलिखित शर्तें हैं–

(i) MR= MC

(ii) MC वक्र का ढाल, MR वक्र के ढाल से अधिक हो।

3.उत्तर– द्वयाधिकार बाजार की वह स्थिति है, जिसमें वस्तु की पूर्ति केवल दो विक्रेताओं द्वारा की जाती है, ऐसी फर्मों द्वारा उत्पादित वस्तु प्रायः एक ही होती है और वस्तु की कीमतें भी समान रहती हैं।

4.उत्तर– कीमत नेतृत्व के अंतर्गत फर्में उस कीमत पर अपनी वस्तुओं को बेचने के लिए तैयार होती हैं, जो उद्योग के किसी एक सदस्य फर्म द्वारा निर्धारित की जाती है।

2.13 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. एकाधिकार को परिभाषित करते हुए अल्पकालीन एवम् दीर्घकालीन बाजार में संतुलन की व्याख्या करिये।
2. द्वयाधिकार क्या होता है? इसकी विशेषता बताते हुए कूर्नो मॉडल की व्याख्या करिये।
3. बर्ट्रेंड एवं एजवर्थ मॉडल में प्रमुख अंतर क्या हैं?
4. अल्पाधिकार क्या होता है? इसके अंतर्गत कीमत निर्धारण के विभिन्न स्वरूपों की व्याख्या करिये।

इकाई–3 सन्धिपूर्ण एवम् गैर सन्धिपूर्ण अल्पाधिकार के विभिन्न स्वरूप

इकाई की रुपरेखा

3.0 उद्देश्य
3.1 प्रस्तावना
3.2 सन्धिपूर्ण अल्पाधिकार
3.3 सन्धिपूर्ण अल्पाधिकार में कीमत तथा उत्पादन मात्रा निर्धारण
3.4 गैर सन्धिपूर्ण अल्पाधिकार
3.5 विकुंचित माँग वक्र धारणा
3.6 बोध प्रश्न
3.7 सारांश
3.8 शब्दावली
3.9 संदर्भ ग्रंथ
3.10 बोध प्रश्नों के उत्तर
3.11 अभ्यासार्थ प्रश्न

3.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप समझ सकेंगे कि–

- संधिपूर्ण अल्पाधिकार क्या है?
- सन्धिपूर्ण अल्पाधिकार में कीमत और उत्पादन का निर्धारण कैसे होता है?
- गैर–संधिपूर्ण अल्पाधिकार क्या है? अल्पाधिकार क्या है?
- विकुंचित माँग वक्र धारणा क्या है?

3.1 प्रस्तावना

सन्धिपूर्ण अल्पाधिकार तथा गैर सन्धिपूर्ण अल्पाधिकार अपूर्ण प्रतियोगिता के महत्वपूर्ण भाग हैं। इस इकाई में विद्यार्थियों के लिये सन्धिपूर्ण अल्पाधिकार तथा गैर सन्धिपूर्ण अल्पाधिकार को परिभाषित करते हुए कीमत और उत्पादन निर्धारण को समझाया गया है। गैर सन्धिपूर्ण अल्पाधिकार में संतुलन निर्धारण विकुंचित माँग वक्र धारणा के द्वारा प्रस्तुत किया गया है।

3.2 सन्धिपूर्ण अल्पाधिकार

अल्पाधिकारी उद्योग में फर्में आपस में औपचारिक समझौता कर लेती हैं। इसी समझौते पर फर्में एक कीमत – युद्ध को हानिकारक समझते हुये दूरदर्शिता का परिचय देती हैं। इस स्थिति में उद्योग द्वारा प्राप्त लाभ सदस्य फर्मों के बीच पूर्व निर्धारित नियमों के अनुसार विभाजित कर दिये जाते हैं।

3.3 सन्धिपूर्ण अल्पाधिकार में कीमत तथा उत्पादन मात्रा निर्धारण

सन्धिपूर्ण अल्पाधिकार में फर्में परस्पर समझौते द्वारा कार्टेल का निर्माण करती हैं, जिसका उद्देश्य सदस्य फर्मों के

लिये अधिकतम संयुक्त लाभ प्राप्त करना है। कार्टेल का माँग वक्र नीचे की ओर गिरता हुआ होगा। कार्टेल का सीमांत लागत वक्र (MC) दो फर्मों के सीमांत लागत वक्रों का क्षैतिज योग होता है।

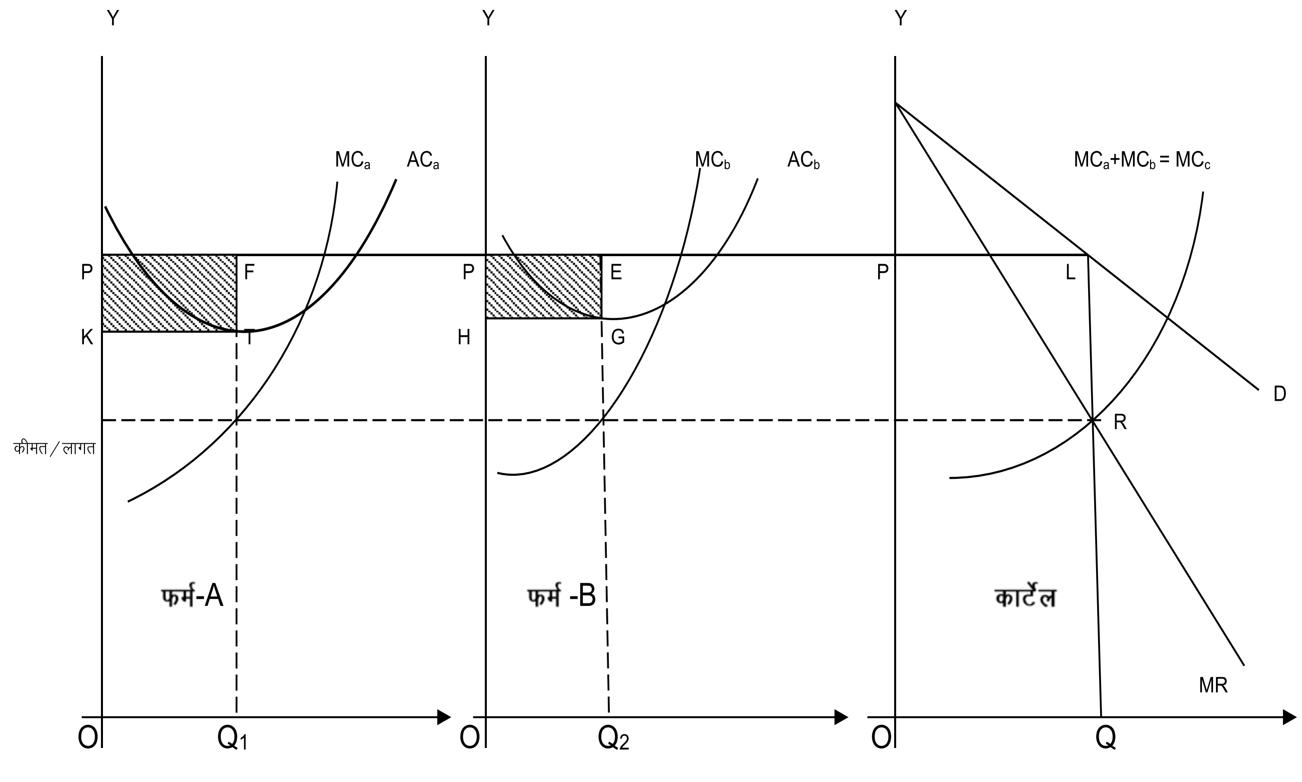

[चित्र – 1]

कीमत OP पर ही संयुक्त लाभ अधिकतम होगा, जो कि सन्धिपूर्ण अल्पाधिकार का उद्देश्य है। फर्मों के बीच लाभ का वितरण उनकी उत्पादन मात्राओं के अनुपात में किया जाता है।

3.4 गैर सन्धिपूर्ण अल्पाधिकार

अल्पाधिकार में फर्मों के बीच परस्पर निर्भरता पायी जाती है। फर्मों की क्रिया प्रतिक्रिया तथा रणनीति के बारे में अनिश्चितता की स्थिति होती है। कोई फर्म –ढ़तापूर्वक यह नहीं मान सकती कि उसके किसी भी फैसले के बारे में प्रतिद्वंदी फर्म की क्या प्रतिक्रिया होगी। इस अनिश्चिततापूर्ण स्थिति में जब फर्मे एक दूसरे का सहयोग नहीं करती हैं तथा स्वतंत्र होकर निर्णय लेती हैं, तो इसे गैर सन्धिपूर्ण अल्पाधिकार कहते हैं। इसके प्रमुख उदाहरण कूर्नो मॉडल, बरट्रेंड मॉडल और स्वीजी का विकुञ्चित माँग वक्र मॉडल है। चूँकि पिछली इकाई में हम कूर्नो और बरट्रेंड द्वारा प्रतिपादित मॉडल का अध्ययन कर चुके हैं, अतः यहाँ हम केवल स्वीजी के मॉडल की चर्चा करेंगे।

3.5 विकुंचित माँग वक्र धारणा

विकुंचित माँग वक्र अल्पाधिकार में कीमत –ढ़ता की व्याख्या करता है। इस सिद्धांत के अनुसार अल्पाधिकारी जिस माँग वक्र का सामना करता है, उसमें वर्तमान कीमत स्तर पर विकुंचन (kink) पाया जाता है। इस विकुंचन का कारण यह है कि माँग वक्र का जो भाग वर्तमान कीमत स्तर से ऊपर है, अत्यंत लोचदार होता है तथा वर्तमान कीमत स्तर से नीचे स्थित माँग वक्र बेलोचदार होता है।

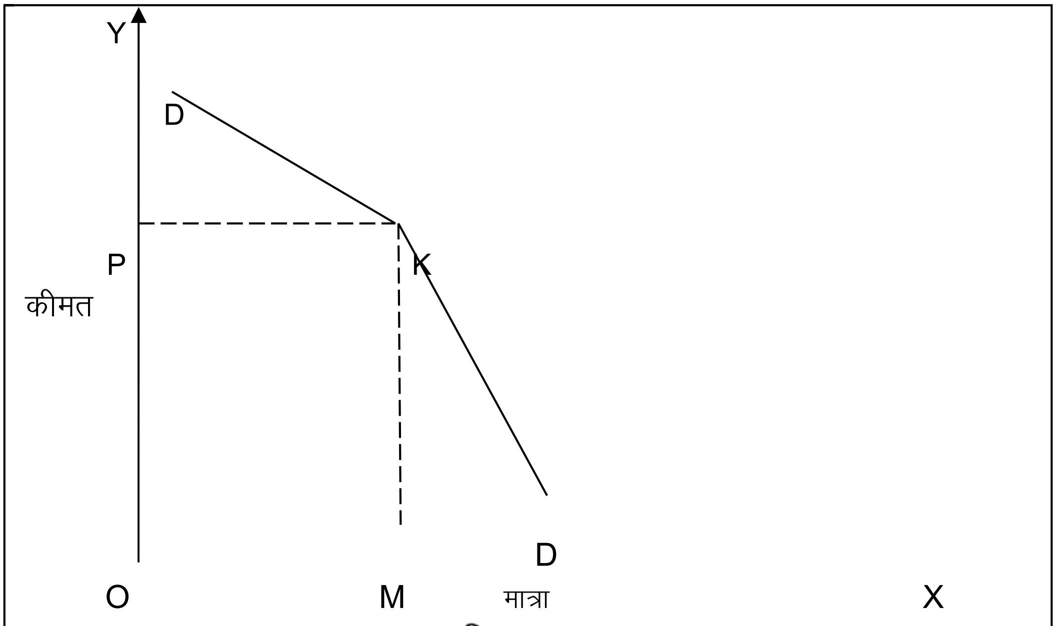

[चित्र – 2]

विकुंचित माँग वक्र सिद्धांत में जिस प्रतिक्रिया की कल्पना की गयी है, वह यह है कि प्रत्येक अल्पाधिकारी यह विश्वास करता है कि यदि वह अपनी कीमत को वर्तमान कीमत स्तर से नीचे गिरा देता है तो उसके प्रतिद्वंदी भी ऐसा ही करेंगे और अपनी – अपनी कीमतों को गिरा देंगे। परंतु यदि वह मूल्य में वृद्धि करता है, तो प्रतिद्वंदी अपनी कीमतों में वृद्धि नहीं करेंगे।

संतुलन का निर्धारण

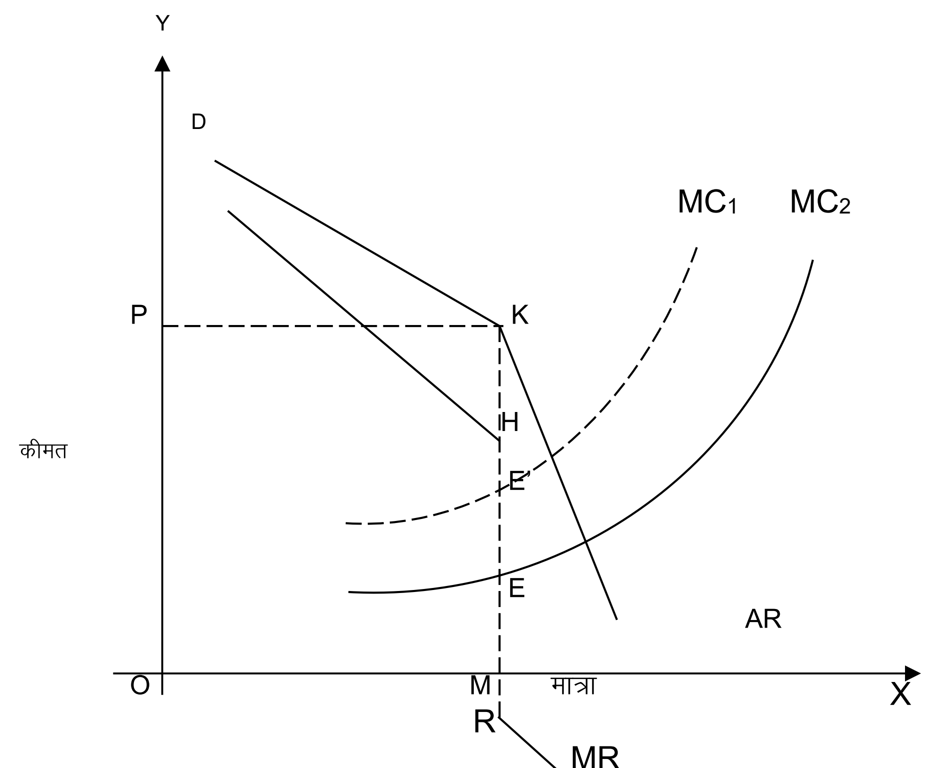

[चित्र – 3]

विकुंचित मांग वक्र की स्थिति में अल्पाधिकारी को वर्तमान कीमत स्तर पर अधिकतम लाभ प्राप्त होगा। विकुंचित मांग वक्र से सम्बंधित सीमांत आय वक्र (MR) में Discontinuity होती है या अन्य शब्दों में इसमें उदग्र खंडित भाग होता है। रेखाचित्र में यदि MC वक्र, सीमांत आय वक्र (MR) के खण्डितध्सान्तर भाग HR से गुजरता है तो अल्पाधिकारी वर्तमान कीमत स्तर OP पर ही अधिकतम लाभ प्राप्त करेगा।

3.6 बोध प्रश्न

1. संधिपूर्ण अल्पाधिकार क्या है?

2. गैर सन्धिपूर्ण अल्पाधिकार को समझाइये।

3.7 सारांश

अल्पाधिकारी उद्योग में फर्में आपस में औपचारिक समझौता कर लेती हैं। इसी समझौते पर फर्में एक कीमत – युद्ध को हानिकारक समझते हुये दूरदर्शिता का परिचय देती हैं। सन्धिपूर्ण अल्पाधिकार में फर्में परस्पर समझौते द्वारा कार्टेल का निर्माण करती हैं, जिसका उद्देश्य सदस्य फर्मों के लिये अधिकतम संयुक्त लाभ प्राप्त करना है। अनिश्चिततापूर्ण स्थिति में जब फर्में एक दूसरे का सहयोग नहीं करती हैं तथा स्वतंत्र होकर निर्णय लेती हैं, तो इसे गैर सन्धिपूर्ण अल्पाधिकार कहते हैं। इसके प्रमुख उदाहरण कूर्नो मॉडल, बरट्रेंड मॉडल और स्वीजी का विकुञ्चित माँग वक्र मॉडल है। विकुंचित माँग वक्र अल्पाधिकार में कीमत –ढ़ता की व्याख्या करता है।

3.8 शब्दावली

कार्टेल– सन्धिपूर्ण अल्पाधिकार में फर्में परस्पर समझौते द्वारा कार्टेल का निर्माण करती हैं, जिसका उद्देश्य सदस्य फर्मों के लिये अधिकतम संयुक्त लाभ प्राप्त करना है।
विकुंचन– मुड.ा हुआ

3.9 संदर्भ ग्रंथ

7.	उच्चतर आर्थिक सिद्धांत	एच. एल. आहूजा
8.	व्यष्टि अर्थशास्त्र	एस. एन. लाल

3.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.उत्तर – अल्पाधिकारी उद्योग में फर्में आपस में औपचारिक समझौता कर लेती हैं। इसी समझौते पर फर्में एक कीमत – युद्ध को हानिकारक समझते हुये दूरदर्शिता का परिचय देती हैं। इस स्थिति में उद्योग द्वारा प्राप्त लाभ सदस्य फर्मों के बीच पूर्व निर्धारित नियमों के अनुसार विभाजित कर दिये जाते हैं।

2.उत्तर – अल्पाधिकार में फर्मों के बीच परस्पर निर्भरता पायी जाती है। फर्मों की क्रिया प्रतिक्रिया तथा रणनीति के बारे में अनिश्चितता की स्थिति होती है। कोई फर्म –ढ़तापूर्वक यह नहीं मान सकती कि उसके किसी भी फैसले के बारे में प्रतिद्वंदी फर्म की क्या प्रतिक्रिया होगी। इस अनिश्चिततापूर्ण स्थिति में जब फर्में एक दूसरे का सहयोग नहीं करती हैं तथा स्वतंत्र होकर निर्णय लेती हैं, तो इसे गैर सन्धिपूर्ण अल्पाधिकार कहते हैं।

3.11 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. सन्धिपूर्ण अल्पाधिकार में कीमत और उत्पादन का निर्धारण की उचित रेखाचित्र की सहायता से व्याख्या कीजिये।
2. गैर सन्धिपूर्ण अल्पाधिकार में संतुलन निर्धारण विकुंचित माँग वक्र धारणा के द्वारा समझाइये।

इकाई–4 एकाधिकार प्रतियोगिता

इकाई की रुपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 एकाधिकारात्मक प्रतियोगिता में संतुलन का निर्धारण

4.3 अल्पकालीन बाजार में संस्थिति

4.4 दीर्घकालीन बाजार में फर्म का संतुलन

4.5 बोध प्रश्न

4.6 सारांश

4.7 शब्दावली

4.8 संदर्भ ग्रंथ

4.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

4.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

4.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप समझ सकेंगे कि –

- एकाधिकारिक या एकाधिकारात्मक प्रतियोगिता में संतुलन का निर्धारण कैसे होता है?

4.1 प्रस्तावना

एकाधिकारिक या एकाधिकारात्मक प्रतियोगिता में फर्म संतुलन की स्थिति की प्राप्ति हेतु अपने लाभ को अधिकतम करने का प्रयास करती है। इस इकाई में एकाधिकारिक प्रतियोगिता में अल्पकालीन तथा दीर्घकालीन बाजार में फर्म के संतुलन की व्याख्या उचित रेखाचित्रों की सहायता से की गयी है।

4.2 एकाधिकारात्मक प्रतियोगिता में संतुलन का निर्धारण

एकाधिकारात्मक प्रतियोगिता में फर्म संतुलन की स्थिति में अपने लाभ को अधिकतम करने का प्रयास करती है। प्रो. चैम्बरलिन ने अपने सिद्धान्त में बताया कि मूल्य निर्धारण के सम्बन्ध में फर्मे प्रत्यक्ष रूप से MR= MC की अवधारणा का प्रयोग नहीं करती हैं, परन्तु उनके सिद्धान्त में अप्रत्यक्ष रूप से MR= MC की अवधारणा निहित हैं। एकाधिकारिक प्रतियोगिता में फर्म द्वारा अधिकतम लाभ वाले उत्पादन का निर्धारण तीन बातों पर निर्भर करता है–

i. फर्मों द्वारा ली जाने वाली कीमत।

ii. वस्तु की किस्म।

iii. विक्रय लागत की मात्रा।

4.3 अल्पकालीन बाजार में संस्थिति

अल्पकाल में फर्म को तीन स्थितियों का सामना करना पड़ता है –

[A] <u>असामान्य लाभ;**Abnormal Profit**)</u>-

असामान्य लाभ की स्थिति में फर्म को प्राप्त कीमत;औसत आगम) उसकी औसत लागत;AC) से अधिक होती है–

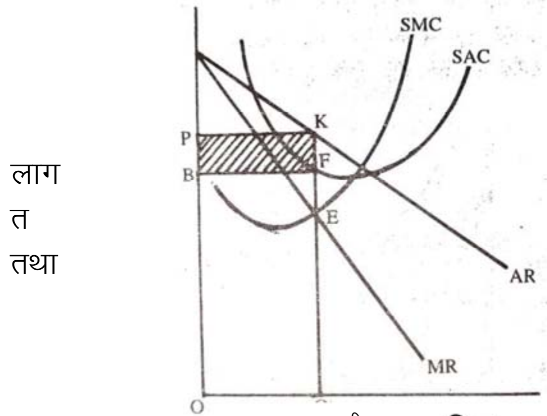

चित्र – 1

रेखाचित्र में चुँकि OP> OB है, अतः ।R>AC होगा। इस स्थिति में प्रति इकाई लाभ PB तथा कुल लाभ PBFK होगा।

[B] <u>सामान्य लाभ;Normal Profit)</u>-

सामान्य लाभ की स्थिति में एकाधिकारात्मक प्रतियोगीता में फर्मों को उनकी औसत लागत;AC) के बराबर कीमत (औसत आय) प्राप्त होती है अर्थात् ।R =AC.

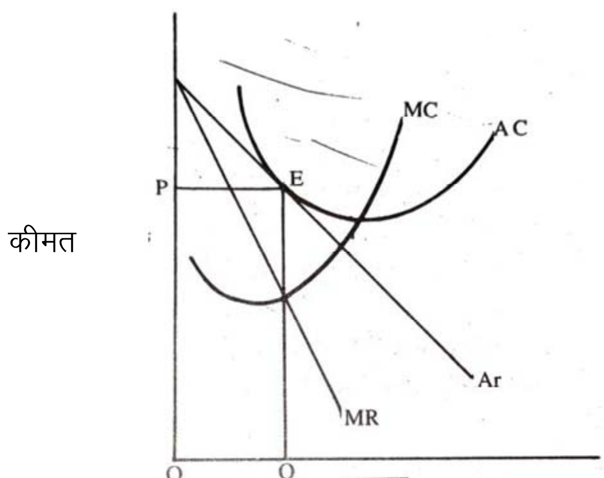

चित्र – 2

[C] <u>हानि (LOSS)</u>–

हानि की स्थिति में फर्मों को प्राप्त कीमत या औसत आय (AR) उनकी वहन की गयी औसत लागत (AC) क्रम होती है। अर्थात् |R<AC.

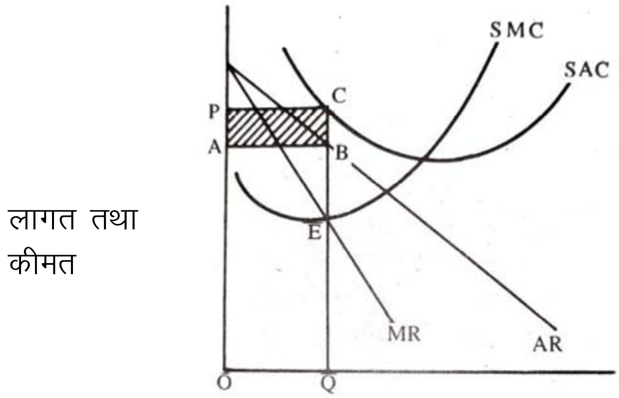

चित्र – 3

रेखाचित्र में संतुलन बिन्दु E से सम्बन्धित कीमत OA तथा औसत लागत OP है। चूँकि OA<OP अतः फर्म की प्रति इकाई हानि |P तथा कुल हानि PABC है।

4.4 दीर्घकालीन बाजार में फर्म का संतुलन

दीर्घकाल में समय अधिक होने तथा फर्मों का आवागमन (उद्योग में) सरल होने के कारण एकाधिकारात्मक बाजार में फर्मों को सदैव सामान्य लाभ ही प्राप्त होता है; क्योंकि यदि बाजार में असामान्य लाभ की स्थिति हो तो नयी फर्में उस बाजार /उद्योग में प्रवेश करेंगी, जिससे पूर्ति एवं लागतों में वृद्धि होगी और यह तब जारी रहेगी, जब तक औसत लागत और औसत आय परस्पर बराबर न हों जायें। अर्थात् |R =AC हो जाये।

यदि बाजार में हानि की स्थिति हो तो दीर्घकाल में इस बाजार से फर्में बाहर जाना प्रारम्भ कर देंगी, जिससे पूर्ति और लागत जन्य कीमतें कम होंगी। यह क्रिया तब तक होगी जब तक कि सामान्य लाभ या |R =AC की स्थिति न प्राप्त हो जाये।

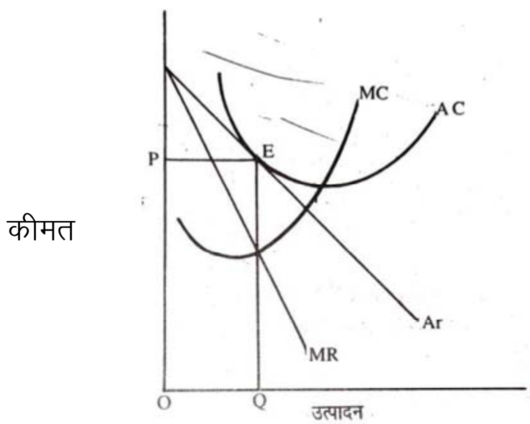

चित्र – 4

इस प्रकार दीर्घकाल में एकाधिकारात्मक प्रतियोगिता में फर्मों को सदैव सामान्य लाभ ही प्राप्त होता है। सन्तुलन

की स्थिति में फर्मों के औसत लागत वक्र के न्यूनतम बिन्दु पर कार्य न करने के कारण अतिरिक्त उत्पादन क्षमता फर्मों में विद्यमान रहती है।

इस प्रकार संतुलन स्थिति में – MR= MC

AR=AC परन्तु |R > MC.

AR> MC अप्रयुक्त उत्पादन क्षमता को दर्शाता है।

4.5 बोध प्रश्न

1. एकाधिकारिक प्रतियोगिता से आप क्या समझते हैं?

4.6 सारांश

एकाधिकारात्मक प्रतियोगिता में फर्म संतुलन की स्थिति में अपने लाभ को अधिकतम करने का प्रयास करती है। प्रो. चैम्बरलिन ने अपने सिद्धान्त में बताया कि मूल्य निर्धारण के सम्बन्ध में फर्मे प्रत्यक्ष रूप से MR= MC की अवधारणा का प्रयोग नहीं करती हैं, परन्तु उनके सिद्धान्त में अप्रत्यक्ष रूप से MR= MC की अवधारणा निहित हैं।

4.7 शब्दावली

एकाधिकारिक प्रतियोगिता– एकाधिकारात्मक प्रतियोगिता में फर्म संतुलन की स्थिति में अपने लाभ को अधिकतम करने का प्रयास करती है।

4.8 संदर्भ ग्रंथ

9. A Text Book of Economic Theory — Stonier & Hague

10. Microeconomic Theory — A.P. Lerner

11. A Revision of Demand Theory — J.R. Hicks

4.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.उत्तर– एकाधिकारात्मक प्रतियोगिता में फर्म संतुलन की स्थिति में अपने लाभ को अधिकतम करने का प्रयास करती है। प्रो. चैम्बरलिन ने अपने सिद्धान्त में बताया कि मूल्य निर्धारण के सम्बन्ध में फर्मे प्रत्यक्ष रूप से MR= MC की अवधारणा का प्रयोग नहीं करती हैं, परन्तु उनके सिद्धान्त में अप्रत्यक्ष रूप से MR= MC की अवधारणा निहित हैं। एकाधिकारिक प्रतियोगिता में फर्म द्वारा अधिकतम लाभ वाले उत्पादन का निर्धारण तीन बातों पर निर्भर करता है–

i. फर्मों द्वारा ली जाने वाली कीमत।

ii. वस्तु की किस्म।

iii. विक्रय लागत की मात्रा।

4.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. एकाधिकारिक प्रतियोगिता में फर्म के संतुलन की अल्पकालीन बाजार के संदर्भ में व्याख्या कीजिये।

2. एकाधिकारिक प्रतियोगिता में फर्म के संतुलन की दीर्घकालीन बाजार के संदर्भ में व्याख्या कीजिये।

इकाई–5 मूल्य विभेद एवम् क्रेता एकाधिकार

इकाई की रुपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 परिभाषा

5.3 मूल्य विभेद के प्रकार

5.4 क्रेता एकाधिकार

5.5 क्रेता एकाधिकार की विशेषताएं

5.6 बोध प्रश्न

5.7 सारांश

5.8 शब्दावली

5.9 संदर्भ ग्रंथ

5.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

5.11 अभ्यासार्थ प्रश्न

5.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप समझ सकेंगे कि –

- मूल्य विभेद क्या होता है?
- मूल्य विभेद के कितने प्रकार हैं?
- क्रेता एकाधिकार क्या है?

5.1 प्रस्तावना

बाजार में उपभोक्ता को कभी कभी मूल्य विभेद का सामना करना पड़ता है। इस इकाई में विद्यार्थियों की जानकारी के लिए मूल्य विभेद को परिभाषित किया गया है तथा प्रोफेसर पीगू द्वारा प्रतिपादित इसके विभिन्न प्रकारों की व्याख्या की गयी है। इकाई के अंत में क्रेता एकाधिकार की परिभाषा तथा विशेषता का वर्णन किया गया है।

5.2 परिभाषा

मूल्य विभेद का अर्थ है कि तकनीकी –ष्टि से समरूप पदार्थों को भिन्न भिन्न कीमतों पर बेचना, जो उनकी सीमांत लागतों के अनुपात से अधिक हों। मूल्य विभेद वह क्रिया होती है, जिसके अंतर्गत एकाधिकारी अपने द्वारा उत्पादित समान वस्तु के लिए विभिन्न क्रेताओं से विभिन्न कीमतें वसूल करता है। यह एकाधिकारी की एक प्रमुख विशेषता है।

श्रीमती ज,न र,बिन्सन के अनुसार, "एक ही वस्तु को जिसका उत्पादन एक ही उत्पादक द्वारा किया जाता हैय जैसे – ड,क्टर, वकील तथा व्यवसायिक सलाहकार कभी कभी अपने मुवक्किल या ग्राहक को उसकी आय के आधार पर भिन्न – भिन्न मूल्य पर अपनी सेवाएँ प्रदान करते हैं।"

5.3 मूल्य विभेद के प्रकार

प्रोफेसर ए सी पीगू ने मात्रा के सन्दर्भ में मूल्य विभेद की तीन कोटियाँ बतायीं हैं–

1. प्रथम कोटि का कीमत विभेद –

प्रथम कोटि के कीमत विभेद के अंतर्गत एकाधिकारी प्रत्येक इकाई की वह उच्चतम कीमत वसूल करता है, जो उपभोक्ता देने के लिए तैयार रहता है। अतः ऐसी स्थिति में क्रेता को किसी भी प्रकार की कोई बचत प्राप्त नहीं होती है। इसमें प्रत्येक ग्राहक से उसकी सामर्थ्य के अनुसार एकाधिकारी अलग अलग कीमत वसूलता है।

2. द्वितीय कोटि का कीमत विभेद –

द्वितीय कोटि के मूल्य विभेद में एकाधिकारी बाजार को विभिन्न समूहों में बाँटकर उनसे वह न्यूनतम कीमत प्राप्त करता है, जो उस समूह का प्रत्येक व्यक्ति देने को तैयार रहता है। यह कीमत समूह के सीमांत क्रेता द्वारा दी जाने वाली कीमत होती है। इसमें क्रेता को अल्प मात्रा में उपभोक्ता की बचत प्राप्त होती है।

3. तृतीय कोटि का कीमत विभेद –

तृतीय कोटि का मूल्य विभेद में एकाधिकारी क्रेताओं को दो या दो से अधिक बाजारों में बाँटकर उपभक्ताओं से भिन्न भिन्न कीमत वसूलता है। यह वसूल की गयी कीमत बाजार की माँग लोच पर निर्भर (विपरीत रूप से) करती है।

➢ *मूल्य विभेद तब लाभकारी होता है, यदि समान एकाधिकारी कीमत पर एक मार्केट में माँग की मूल्य लोच अन्य मार्केट में माँग की मूल्य लोच से भिन्न है।*

5.4 क्रेता एकाधिकार

क्रेता एकाधिकार बाजार की वह स्थिति है, जिसमें केवल एक मात्र खरीददार होता है। क्रेता एकाधिकार की स्थिति भौगोलिक बाधा, सरकारी विनियमन या अद्वितीय उपभोक्ता माँग के कारण उत्पन्न होती है। क्रेता एकाधिकारी नीचे की ओर मूल्य निर्धारण पर दबाव उत्पन्न करने में सक्षम होता है।

5.5 क्रेता एकाधिकार की विशेषताएं

- बाजार में केवल एक क्रेता होता है।
- विक्रेताओं की सौदेबाजी शक्ति कम होती है।
- बाजार में अपूर्णता से अक्षमताएँ उत्पन्न होती हैं।
- आपूर्तिकर्ता नवाचार को सीमित रखते हैं।

5.6 बोध प्रश्न

1. मूल्य विभेद से आप क्या समझते हैं?

2. क्रेता एकाधिकार क्या है?

5.7 सारांश

मूल्य विभेद वह क्रिया होती है, जिसके अंतर्गत एकाधिकारी अपने द्वारा उत्पादित समान वस्तु के लिए विभिन्न क्रेताओं से विभिन्न कीमतें वसूल करता है। यह एकाधिकारी की एक प्रमुख विशेषता है। मूल्य विभेद तब लाभकारी होता है, यदि समान एकाधिकारी कीमत पर एक मार्केट में माँग की मूल्य लोच अन्य मार्केट में माँग की मूल्य लोच से भिन्न है। क्रेता एकाधिकार बाजार की वह स्थिति है, जिसमें केवल एक मात्र खरीददार होता है। क्रेता एकाधिकार की स्थिति भौगोलिक बाधा, सरकारी विनियमन या अद्वितीय उपभोक्ता माँग के कारण उत्पन्न होती है।

5.8 शब्दावली

विभेद – भेद भाव, अलग–अलग

विनियमन – नियंत्रण

5.9 संदर्भ ग्रंथ

12. WelfareAnd Competition T. Scitovsky

13. The Economics of Imperfect Competition Joan Robinson

14. Imperfect CompetitionAnd Excess Capicity N. Kaldor

5.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.उत्तर– मूल्य विभेद वह क्रिया होती है, जिसके अंतर्गत एकाधिकारी अपने द्वारा उत्पादित समान वस्तु के लिए विभिन्न क्रेताओं से विभिन्न कीमतें वसूल करता है।

2.उत्तर– क्रेता एकाधिकार बाजार की वह स्थिति है, जिसमें केवल एक मात्र खरीददार होता है।

5.11 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. मूल्य विभेद तथा इसके विभिन्न स्वरूपों की व्याख्या कीजिये।
2. क्रेता एकाधिकार को परिभाषित करिये तथा इसकी विशेषताएं लिखिये।

इकाई–6 द्विपक्षीय एकाधिकार में मूल्य निर्धारण

इकाई की रुपरेखा

6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 द्विपक्षीय एकाधिकार

6.3 द्विपक्षीय एकाधिकार के अंतर्गत कीमत निर्धारण

6.4 बोध प्रश्न

6.5 सारांश

6.6 शब्दावली

6.7 संदर्भ ग्रंथ

6.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

6.9 अभ्यासार्थ प्रश्न

6.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप समझ सकेंगे कि –

- द्विपक्षीय एकाधिकार क्या होता है?
- द्विपक्षीय एकाधिकार के अंतर्गत कीमत का निर्धारण कैसे होता है?

6.1 प्रस्तावना

इस इकाई में छात्रों की जानकारी के लिए द्विपक्षीय एकाधिकार, जो कि बाजार में पायी जाने वाली एक विशेष स्थिति होती है को समझाया गया है तथा इसके अंतर्गत कीमत निर्धारण की प्रक्रिया उचित रेखाचित्र के द्वारा प्रस्तुत की गयी है।

6.2 द्विपक्षीय एकाधिकार

द्विपक्षीय एकाधिकार से आशय बाजार की उस स्थिति से है, जब एक वस्तु/साधन का एकमात्र विक्रेता उस वस्तु/साधन के एकमात्र क्रेता से सामना होता है। द्विपक्षीय एकाधिकार के अंतर्गत एक विक्रेता अथवा पूर्तिकर्ता अपने पदार्थ (वस्तु) या साधन का एकाधिकारी होता है तथा एकमात्र क्रेता उस पदार्थ/साधन का क्रय एकाधिकारी होता है। यह स्थिति मुख्यतः साधन बाजार में पायीं जाती हैं।

6.3 द्विपक्षीय एकाधिकार के अंतर्गत कीमत निर्धारण

द्विपक्षीय एकाधिकार के अंतर्गत कीमत निर्धारण हेतु निम्नलिखित मान्यताएँ कार्यरत होती हैं–

- एक ही वस्तु है, जिसका कोई निकट स्थानापन्न नहीं है।
- वस्तु का एकमात्र विक्रेता होगा।
- वस्तु का एकमात्र क्रेता होगा।
- एकाधिकारी क्रेता तथा विक्रेता दोनों अपने लाभ को अधिकतम करने हेतु स्वतंत्र हैं।

उपरोक्त मान्यताओं की उपस्थिति में कीमत निर्धारण को निम्नांकित रेखा चित्र द्वारा समझाया गया है–

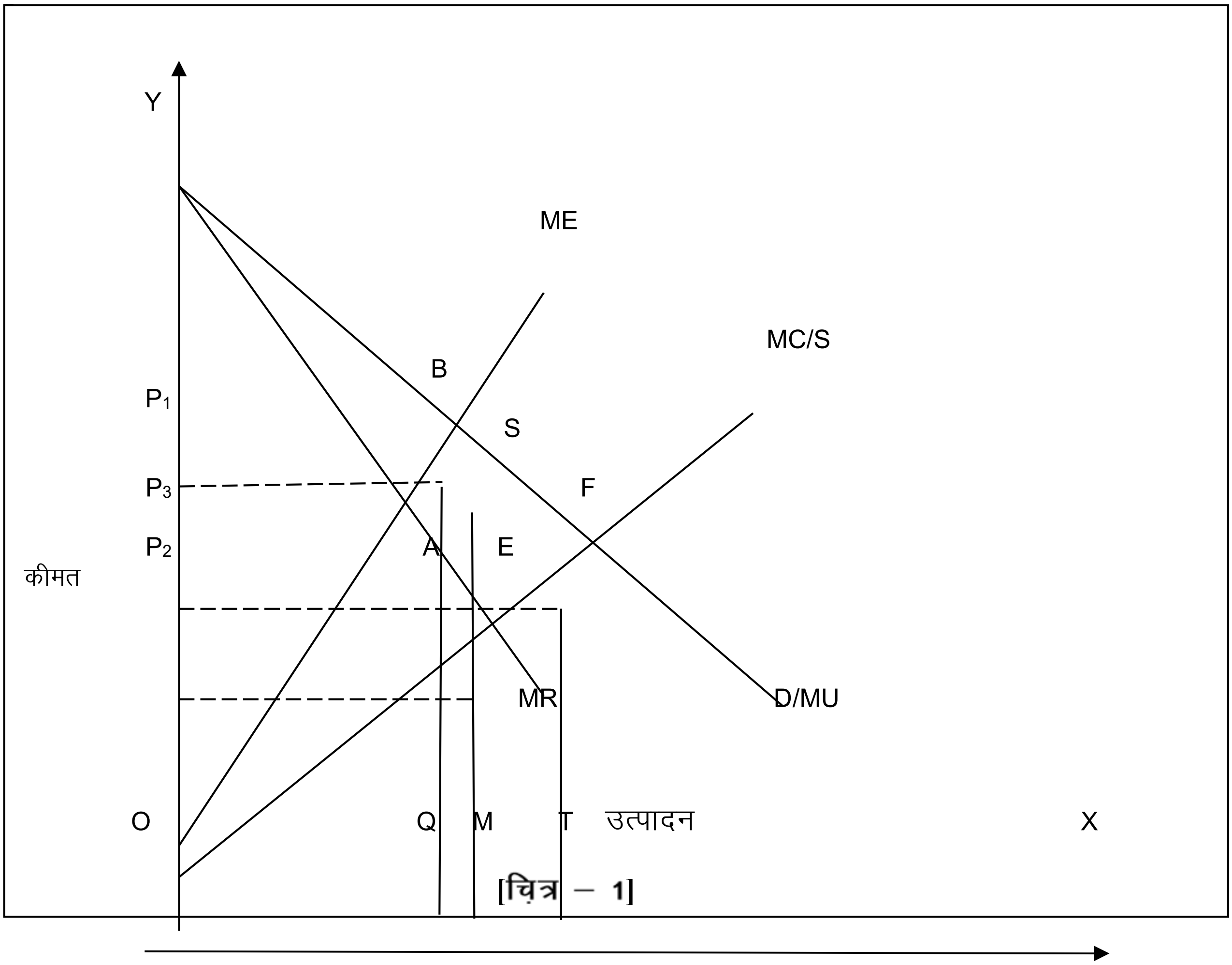

[चित्र – 1]

उपरोक्त रेखाचित्र में D माँग वक्र है, MR एकाधिकारी विक्रेता का सीमांत आय वक्र है। S आपूर्ति वक्र है, जिसका ऊपर की ओर ढाल दर्शाता है कि वस्तु की अधिक मात्रा क्रय करने हेतु अधिक कीमत चुकानी होगी। अतः क्रेता जैसे उत्पादन की अधिक इकाईयां क्रय करता है, उसका सीमांत व्यय बढ़ जाता है, जिसे ME वक्र द्वारा दर्शाया गया है।

एकाधिकारी विक्रेता E बिंदु पर संतुलन में है, जहाँ MC वक्र MR वक्र को काट रहा है। यहाँ लाभ अधिकतमीकरण मूल्य OP_1 है, जहाँ विक्रेता OM मात्रा बेचता है।

एकाधिकारी क्रेता B बिन्दु पर संतुलन में हैं, जहाँ सीमांत व्यय वक्र (ME) माँग वक्र (D) को प्रतिच्छेदित करता है। वह वस्तु की व्क मात्रा क्रय करता है तथा OP_2 कीमत अदा करता है।

यहाँ एकाधिकारी विक्रेता तथा क्रेता के बीच असहमति प्रदर्शित होती है। विक्रेता OP कीमत वसूलना चाहता है, तथा क्रेता उससे कम OP_1 कीमत देना चाहता है। परंतु वास्तव में बेचे गए उत्पाद की वास्तविक मात्रा और उसकी कीमत दोनों की सापेक्ष सौदेबाजी क्षमता पर निर्भर करती है। विक्रेता की सौदेबाजी ताकत जितनी अधिक होगी कीमत OP_1 के उतनी ही करीब होगी। और कीमत OP_1 तथा OP_2 के मध्य स्थिर हो जायेगी।

यदि विक्रेता और क्रेता फर्में एकाकी फर्म में विलीन हो जाती है, तो क्रेता एकाधिकारी, विक्रेता एकाधिकारी के ऊपर अधिपत्य स्थापित कर लेगा। तथा S वक्र ही सीमांत लागत वक्र बन जाता है। विलीन फर्में इस प्रकार F बिन्दु पर अपने लाभ को अधिकतम करेंगी, जहाँ MC/S वक्र MU/D वक्र को काटता है। यहाँ OP_3 कीमत पर OT उत्पाद की आपूर्ति होगी। इस स्थिति में विलीन फर्में OP_1 कीमत की तुलना में OP_3 कीमत पर OM उत्पाद की तुलना में OT (अधिक) उत्पाद प्राप्त होता है।

यद्यपि कि दोनों फर्मों का विलय सम्भव नहीं होने की स्थिति में अर्थशास्त्री द्वितीय समाधान का विचार प्रस्तुत

करते हैं। जो सम्मिलित लाभ को अधिकतम करता है। यहाँ एकाधिकारी क्रेता तथा विक्रेता एक दूसरे को बेची और खरीदी जाने वाली मात्रा पर सहमत होते हैं। इस आधार पर वे संयुक्त लाभ को अधिकतम करना चाहते हैं, क्योंकि उन्हे लगता है कि वे एक दूसरे की इच्छाओं को जान चुके हैं।

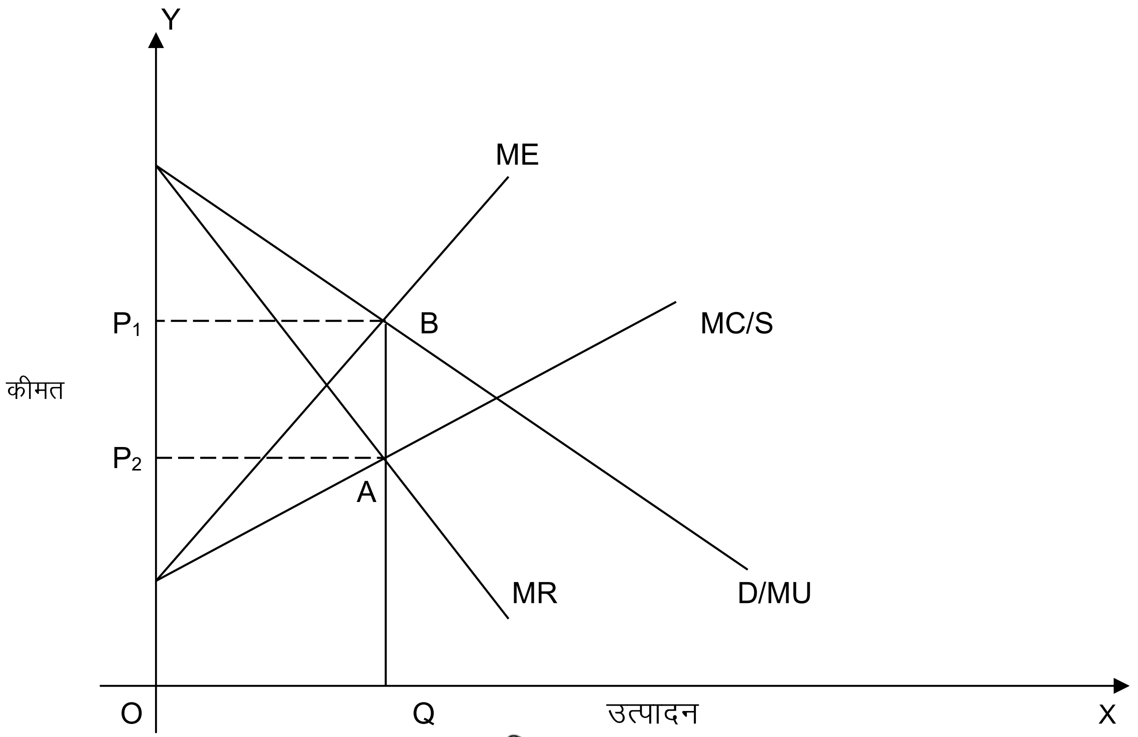

[चित्र – 2]

उपरोक्त रेखाचित्र में एकाधिकारी विक्रेता। बिन्दु पर संतुलन में है, जहाँ MC = MR है। वह OQ मात्रा को OP_1 कीमत पर बेचना चाहता है। दुसरी ओर एकाधिकारी क्रेता B बिन्दु पर संतुलन में है, जहाँ MU = ME है। वह OQ मात्रा खरीदना चाहता है, OP_2 कीमत पर। प्रत्येक (क्रेता – विक्रेता) की सापेक्ष सौदेबाजी की क्षमता के आधार पर संतुलन कीमत P_1 और P_2 के बीच कहीं भी हो सकती है लेकिन उनका संयुक्त लाभ $P_1P_2 \times OQ$ के बराबर होगा, जिसे एकाधिकारी क्रेता और विक्रेता के बीच अनुपात में विभक्त किया जा सकता है।

6.4 बोध प्रश्न

1. द्विपक्षीय एकाधिकार की परिभाषा बताईये।

6.5 सारांश

द्विपक्षीय एकाधिकार के अंतर्गत एक विक्रेता अथवा पूर्तिकर्ता अपने पदार्थ (वस्तु) या साधन का एकाधिकारी होता है तथा एकमात्र क्रेता उस पदार्थ/साधन का क्रय एकाधिकारी होता है। यह स्थिति मुख्यतः साधन बाजार में पायीं जाती हैं।

6.6 शब्दावली

स्थानापन्न – एक की जगह दूसरे वस्तु का प्रयोग

सीमांत व्यय – एक अतिरिक्त इकाई के उपभोग हेतु व्यय

6.7 संदर्भ ग्रंथ

15. WelfareAnd Competition — T. Scitovsky

16. The Economics of Imperfect Competition — Joan Robinson

17. Imperfect CompetitionAnd Excess Capicity — N. Kaldor

6.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.उत्तर– द्विपक्षीय एकाधिकार से आशय बाजार की उस स्थिति से है, जब एक वस्तु/साधन का एकमात्र विक्रेता उस वस्तु/साधन के एकमात्र क्रेता से सामना होता है।

6.9 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. द्विपक्षीय एकाधिकार के अंतर्गत कीमत निर्धारण की व्याख्या करिये।

खण्ड–5

साधन कीमत निर्धारण

इकाई–1 वितरण का सीमान्त उत्पादकता सिद्धान्त तथा साधन कीमत अन्तर

इकाई की रुपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 वितरण

1.3 सीमान्त उत्पादकता का आशय तथा उसकी माप

1.4 सीमान्त भौतिक उत्पादन

1.5 सीमान्त मूल्य उत्पादन

1.6 सीमान्त आय उत्पादन

1.7 वितरण का सीमान्त उत्पादकता सिद्धान्त

1.8 बोध प्रश्न

1.9 सारांश

1.10 शब्दावली

1.11 संदर्भ ग्रंथ

1.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.13 अभ्यासार्थ प्रश्न

1.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप समझ सकेंगे कि –

- वितरण की परिभाषा क्या है?
- वितरण की सीमांत उत्पादकता का आशय क्या है?
- वितरण का सीमांत उत्पादकता सिद्धांत क्या है?

1.1 प्रस्तावना

इस इकाई में वितरण का अर्थ समझाने के साथ साथ सीमांत उत्पादकता और उसकी माप को भी विस्तापूर्वक समझाया गया है। वितरण के सीमांत उत्पादकता सिद्धांत को उसकी मान्यताओं के आधार पर उचित रेखाचित्र के साथ प्रस्तुत किया गया है। तथा अंत में छात्रों की जानकारी के लिए वितरण के सीमांत उत्पादकता सिद्धांत की अनेक अर्थशास्त्रियों द्वारा की गयी आलोचना को भी समझाया गया है।

1.2 वितरण

एक निश्चित उत्पादन को साधनों के बीच विभाजित करने की प्रक्रिया ही **वितरण** कहलाती है। इसे साधनों के मूल्य निर्धारण का सिद्धान्त भी कहते हैं। जिस प्रकार किसी वस्तु का मूल्य उसकी माँग एवं पूर्ति के द्वारा निर्धारित होता है; उसी प्रकार उत्पादन के साधनों का मूल्य – निर्धारण उनकी माँग एवं पूर्ति के द्वारा होता है।

वितरण के दो रूप होते हैं– व्यक्तिगत तथा कार्यात्मक। इस खण्ड में वितरण के कार्यात्मक स्वरूप की चर्चा की जानी है। कार्यात्मक वितरण में उत्पादन क्रिया में लगे साधनों के पारिश्रमिक या मूल्य की दर निर्धारित करते हैं; जिसके अन्तर्गत हम यह अध्ययन करते हैं कि उत्पादन – क्रिया में संलग्न साधनों द्वारा की गयी सेवाओं या कार्यों के प्रतिफल में क्या पारिश्रमिक दिया जाना चाहिए।

1.3 सीमान्त उत्पादकता का आशय तथा उसकी माप

सीमान्त उत्पादकता से आशय किसी साधन की एक अतिरिक्त इकाई के रोजगार या उत्पादन – प्रक्रिया में प्रवेश के कारण कुल उत्पादन में वृद्धि से है। सीमान्त उत्पादकता का विभाजन निम्नलिखित आधारों पर होता है–

1.4 सीमान्त भौतिक उत्पादन;Marginal physical product –MMP)

अन्य साधनों की स्थिर मात्रा के साथ; किसी साधन की एक अतिरिक्त इकाई के रोजगार में आने के कारण कुल उत्पादन में दृष्टिगोचर वृद्धि/परिवर्तन ही उस साधन का सीमान्त भौतिक उत्पादन है।

सीमान्त भौतिक उत्पादन = साधन की एक अतिरिक्त – साधन की उस अतिरिक्त इकाई के बाद कुल उत्पादन इकाई के पहले कुल उत्पादन

$$MPP=Tp_n-Tp_n-1$$

1.5 सीमान्त मूल्य उत्पादन;Marginal value product – MVP)

जब सीमान्त भौतिक उत्पादन को वस्तु के मूल्य या औसत आय से गुणा कर दिया जाये तो प्राप्त गुणनफल ही सीमान्त मूल्य उत्पादन के तुल्य होगा।

सीमान्त मूल्य उत्पादन = सीमान्त भौतिक उत्पाद x मूल्य

MVP = Mpp × Price(AR)

1.6 सीमान्त आय उत्पादन;Marginal Revenue Product – MRP)

सीमान्त भौतिक उत्पादन में सीमान्त आय से गुणा करने पर प्राप्त गुणनफल ही सीमान्त आय उत्पादन ;MRP) कहलाता है।

$$MRP = MPP \times MR$$

इस प्रकार सीमान्त आय उत्पाद (MRP); साधन की एक अतिरिक्त इकाई के प्रयोग में आने के कारण कुल आय में परिवर्तन की दर को प्रदर्शित करता है।

- पूर्ण प्रतियोगिता की स्थिति में A$R = MR = P$ होता है, इसलिये पूर्ण प्रतियोगिता में MVP = MRP होता है।
- एकाधिकार मे A$R > MR$ होता है, अतः एकाधिकार में MVP > MRP होता है।

1.7 वितरण का सीमान्त उत्पादकता सिद्धान्त

इस सिद्धान्त को साधनों के मूल्य निर्धारण का सिद्धान्त भी माना जाता है। इसका प्रतिपादन सर्वप्रथम **वॉन थनेन** ने 1826 में किया। इसकी क्रमबद्ध एवं व्यवस्थित व्याखा 1902 में जे0 बी0 क्लार्क ने की। जे.बी. क्लार्क के अनुसार सभी साधनों को प्राप्त होने वाला पारितोषिक उनकी सीमान्त आय उत्पादकता के आधार पर निर्धारित होना चाहिये। जिस प्रकार किसी वस्तु का मूल्य उसमें नीहित सीमान्त उपयोगिता के आधार पर तय होता है, उसी प्रकार प्रत्येक साधन का मूल्य/पारितोषिक उसकी सीमान्त उत्पादकता के बराबर होना चाहिये।

मान्यतायें– वितरण के सीमान्त उत्पादकता सिद्धान्त की प्रमुख मान्यताएँ निम्नलिखित हैं–
i.उत्पादन के साधन पूर्णतया गतिशील हैं।

ii.साधन बाजार में पूर्ण प्रतियोगिता है।

iii दीर्घ कालीन समयावधि।

iv.समता प्रतिफल का नियम क्रियाशील होता है।

v.साधनों में प्रतिस्थापन सम्भव है।

उपर्युक्त मान्यताओं के आधार पर साधन का मूल्य(W) उसकी सीमान्त आय उत्पादकता के बराबर होगा तथा एक उत्पादक वहीं पर अधिकतम लाभ प्राप्त करते हुए संतुलन की स्थिति में होगा।

$$MRP = Wage(W)$$

यदि $W > MRP$ हो तो उत्पादक को हानि होगी तथा उत्पादक श्रम की इकाईयों में कमी करेगा, जिससे MRP में वृद्धि होगी और उत्पादक $W = MRP$ होने तक यह क्रिया जारी रखेगा।

यदि $W < MRP$ हो तो उत्पादक को लाभ प्राप्त होगा तथा वह साधनों की और अधिक रोजगार प्रदान करेगा, जिससे साधनों के सीमान्त आय उत्पादन(MRP)में कमी होगी जो मजदूरी(W) के बराबर होने तक जारी रहेगी।

उपरोक्त स्थितियों के आधार पर संतुलित मजदूरी का निर्धारण वहाँ पर होगा, जहाँ पर –

i.श्रम की माँग, श्रम की पूर्ति के बराबर हो।($D_L = S_L$)

ii. प्रत्येक रोजगार में एक साधन की सीमान्त उत्पादकता समान हो।

iii. एक रोजगार में प्रत्येक साधन की सीमान्त उत्पादकता उसी रोजगार में लगे अन्य साधनों की सीमान्त उत्पादकता के बराबर हो।

iv सीमान्त मजदूरी, सीमान्त आय उत्पादकता के बराबर हो।

$$\boxed{MW = MRP}$$

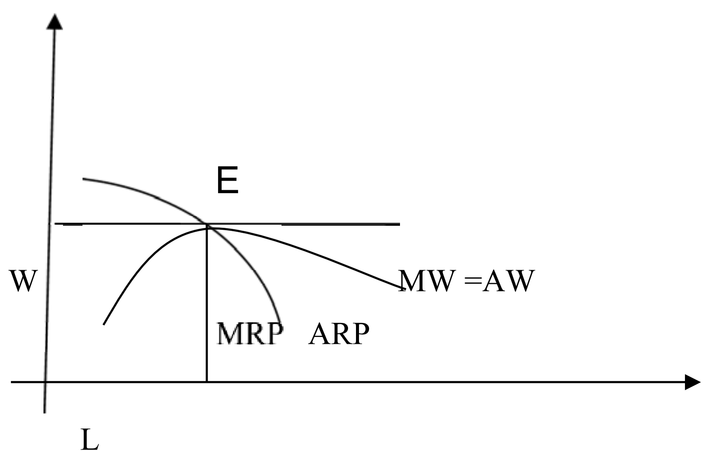

उपरोक्त रेखाचित्र में Y अक्ष पर मजदूरी तथा X अक्ष पर श्रम की मात्रा है। दोनों वक्रों के माध्यम से औसत आय – उत्पादन (ARP) तथा सीमान्त आय उत्पादन (MRP) प्रदर्शित किया गया है। बायें से E बिन्दु तक औसत आय उत्पादन बढ़ता है, जो उत्पादन –वृद्धि– नियम का परिचायक है तथा E बिन्दु से दाहिनी ओर यह नीचे की ओर गिरता है, जो उत्पादन ह्रास नियम का प्रतिक है, E बिन्दु पर उत्पादन समता नियम लागू है। E बिन्दु पर सन्तुलन की स्थिति है। यहीं उत्पादक संतुलन की स्थिति में होगा और श्रमिक OL मात्रा लगायेगा तथा OW मजदूरी देगा। इस बिन्दु पर मजदूरी, सीमान्त आय उत्पादन तथा औसत आय उत्पादन के बराबर होगी।

$$\boxed{AW = MW = MRP = ARP}$$

- आलोचनायें :– अनेक अर्थशास्त्रियो ने सीमान्त उत्पादकता सिद्धान्त की आलोचना की है, जिसके प्रमुख

आधार निम्नलिखित हैं

1. यह सिद्धान्त पूर्ण प्रतियोगिता की मान्यता पर आधारित है, जो कि अव्यावहारिक है।
2. यह सिद्धान्त दीर्घकाल में लागू होता है, अल्पकाल में क्रियाशील नहीं होता है।
3. इस सिद्धान्त के अनुसार साहसी का पारितोषिक नहीं निर्धारित किया जा सकता क्योंकि उसकी सीमान्त उत्पादकता नहीं ज्ञात की जा सकती।
4. यह सिद्धान्त आंशिक रूप से सत्य है तथा केवल माँग पक्ष (श्रम की माँग) पर आधारित होने के कारण एक– पक्षीय है। मॉरिस डॉब के अनुसार, **''इस सिद्धान्त की अपूर्णता का एक कारण यह है कि इसमें कहीं पर यह उल्लेख नहीं है कि श्रम की पूर्ति किस प्रकार निर्धारित होती है।''**
5. यदि श्रमिकों को पारिश्रमिक सीमान्त उत्पादकता के बराबर दिया जाय तो इससे श्रमिकों का शोशण होगा।
6. कुछ आलोचकों के अनुसार सीमान्त उत्पादकता का सही अनुमान लगाना कठिन होता है।

उपरोक्त आलोचनाओं के बाद भी वितरण में सीमान्त उत्पादकता सिद्धान्त की महत्वपूर्ण भूमिका है। विवरण के इस सिद्धान्त ने आधुनिक सिद्धान्त का आधार तैयार किया। प्रो0 बेन्हम का कथन है, ''जहाँ तक प्रथम अनुमान का प्रश्न है, यह अत्यन्त ही उपयोगी है, और वितरण का कोई अन्य सामान्य सिद्धान्त नहीं है, जो इससे अधिक उपयोगी हो। ''

1.8 बोध प्रश्न

1.वितरण क्या है?

2. सीमांत भौतिक उत्पादन क्या है?

3. वितरण का सीमांत उत्पादकता सिद्धांत कब और किसने दिया?

1.9 सारांश

उत्पादन को साधनों के बीच विभाजित करने की प्रक्रिया ही **वितरण** कहलाती है। इसे साधनों के मूल्य निर्धारण का सिद्धान्त भी कहते हैं। जिस प्रकार किसी वस्तु का मूल्य उसकी माँग एवं पूर्ति के द्वारा निर्धारित होता है; उसी प्रकार उत्पादन के साधनों का मूल्य – निर्धारण उनकी माँग एवं पूर्ति के द्वारा होता है।_वितरण के दो रूप होते हैं– व्यक्तिगत तथा कार्यात्मक।

1.10 शब्दावली

प्रतिफल – किसी सेवा के बदले मिलने वाला पारितोषिक

1.11 संदर्भ ग्रंथ

18. Ecomomics TheoryAnd OperatiionsAnalysis — W.J.Baumol

19. Pricing, DistributionAnd Employment — J.S.Bain

1.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.उत्तर – उत्पादन को साधनों के बीच विभाजित करने की प्रक्रिया ही वितरण कहलाती है।

2.उत्तर – किसी साधन की एक अतिरिक्त इकाई के रोजगार में आने के कारण कुल उत्पादन में दृष्टिगोचर वृद्धि/परिवर्तन ही उस साधन का सीमान्त भौतिक उत्पादन है।

3.उत्तर – इस सिद्धान्त को साधनों के मूल्य निर्धारण का सिद्धान्त भी माना जाता है। इसका प्रतिपादन

सर्वप्रथम **वॉन थनेन** ने 1826 में किया। इसकी क्रमबद्ध एवं व्यवस्थित व्याखा 1902 में जे0 बी0 क्लार्क ने की।

1.13 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. वितरण की सीमांत उत्पादकता का आशय तथा उसकी माप को समझाइये।
2. वितरण के सीमांत उत्पादकता सिद्धांत की विस्तारपूर्वक व्याख्या कीजिये।

इकाई 2 लगान के सिद्धान्त : रिकार्डो का सिद्धान्त, आधुनिक सिद्धान्त

इकाई की रुपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 लगान

2.3 रिकार्डो का लगान सिद्धान्त

2.4 रिकार्डो के लगान सिद्धान्त की आलोचनायें

2.5 लगान का आधुनिक सिद्धान्त

2.6 बोध प्रश्न

2.7 सारांश

2.8 शब्दावली

2.9 संदर्भ ग्रंथ

2.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

2.11 अभ्यासार्थ प्रश्न

2.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप समझ सकेंगे कि–

- लगान क्या है?
- रिकार्डो का लगान सिद्धांत।
- लगान का आधुनिक सिद्धांत क्या है।

2.1 प्रस्तावना

लगान शब्द का अर्थ भूमि के उपयोग हेतु प्रदान किये गए प्रतिफल से है। इस इकाई में लगान की परिभाषा प्रस्तुत करने के साथ साथ रिकार्डो के लगान सिद्धांत की व्याख्या की गयी है, जिसमें रिकार्डो द्वारा प्रतिपादित दुर्लभता तथा भेदात्मक लगान को समझाया गया है। इकाई के अंत में लगान के आधुनिक सिद्धांत की विस्तारपूर्वक व्याख्या की गयी है, जो विद्यार्थियों के ज्ञानार्जन हेतु लाभकारी है।

2.2 लगान;Rent)-

लगान शब्द का अभिप्राय प्रयोग भूमि के उपयोग के लिए दिये गये प्रतिकल से हैं। मार्शल के अनुसार, **''लगान वह आय हैं, जो भूमि के रूप में प्रकृति द्वारा प्रदत्त निःशुल्क उपहार के रूप में भू–स्वामी को प्राप्त होता हैं।**''इस प्रकार मार्शल प्रदत्त परिभाषा के अनुसार क्लासिकल दृष्टिकोण दृष्टिगोचर होता हैं। जबकि आधुनिक अर्थशात्रियों ने विशिष्टता के आधार पर भूमि की परिभाषा दी। आधुनिक अर्थशास्त्रियों के अनुसार लगान वह अतिरेक है, जो किसी साधन को वर्तमान व्यवसाय में बनाये रखने हेतु आवश्यक है।

2.3 रिकार्डो का लगान सिद्धान्त

प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों का लगान सिद्धान्त रिकार्डो के लगान सिद्धान्त के नाम से जाना जाता हैं। यद्यपि रिकार्डो से पहले विलियम पेटी ने 'अधिशेष'या बचा हुआ;Remainder) के रूप में लगान की व्याख्या की है।

रिकार्डो के अनुसार –''**लगान भुमि की उपज का वह भाग है, जो भूमि के मालिक को, भूमि की मौलिक एवं अविनाशी शाक्तियों के प्रयोग के लिए दिया जाता है। ''**

रिकार्डो लगान का कारण भूमि में उपलब्ध मौलिक एवं अविनाशी शक्तियों को मानते हैं, जिनके कारण भूमि पर

निरंतर उत्पादन होता रहता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि रिकार्डो की लगान सम्बधी धारणा, प्रसम्बिदा लगान की धारणा से भिन्न विनयोजित पूॅजी का प्रतिफल भी शामिल है। इस प्रकार रिकार्डो के अनुसार,–

आर्थिक लगान = प्रसम्बिदा लगान -भूमि की मौलिक तथा अविनाशी शक्तियों के अतिरिक्त प्रतिफल

रिकार्डो का लगान सिद्धान्त निम्नलिखित मान्यताओं को पूर्ण करता है–

(1) अर्थव्यवस्था में भूमि की पूर्ति पूर्णतया स्थिर हैं एवं बेलोच हैं। अर्थात् भूमि की पूर्ति में, लगान के परिवर्तन का प्रभाव शून्य होता है।

(2) भूमि के टुकडों को उत्पादकता के आधार पर या भौगोलिक स्थिति के आधार पर विभिन्न श्रेणियों में बॉटा जा सकता हैं।

(3) भूमि का एक मात्र प्रयोग (कृषि) ही सम्भव है।

(4) भूमि – बाजार में पूर्ण प्रतियोगिता है।

(5) उत्पादन में ह्रासमान प्रतिफल का नियम कार्यशील है।

उपर्युक्त मान्यताओं को ध्यान में रखते हुये रिकार्डो ने दो प्रकार के लगान की चर्चा की है–

(1) दुर्लभता का लगान :–

रिकार्डो ने स्पष्ट किया है कि, भूमि के विभिन्न टुकडों में समरूपता होने पर भी लगान उत्पन्न होगा, यदि भूमि की पूर्ति सीमित/दुर्लभ हो। इसे रिकार्डो ने शुद्ध दुर्लभता का लगान कहा। दुर्लभता का लगान औसत उत्पादन लागत (जिसमें लगान नहीं सम्मिलित हैं) के उपर औसत आय का वह आधिक्य है जो भूमि के गुण में एक रूपकता होने के बावजूद भी भूमिपति की भूमि की पुर्ति की सीमितता के कारण प्राप्त होता है।

रिकार्डो इसकी व्याख्या करने हेतु एक उदाहरण स्वरूप ऐसे टापू को लेते हैं, जिसमें भूमि के सभी टुकडों की ऊर्वरा – शक्ति समान है, तथा उनका मात्रा कृषि में उपयोग सम्भव है। यदि कुछ लोग यहाँ श्रम एवं पूँजी की मात्रा से अन्न उत्पादित करते हैं। भूमि का पूर्ण उपयोग होने से पहले बाजार में अन्न का मूल्य न्यूनतम इतना होगा कि श्रम तथा पूँजी के रूप में लगी औसत लागत के बराबर उत्पादकों को आय मिल जाये। इस प्रकार उत्पादक पूँजी एवं श्रम के रूप में व्यक्त औसत उत्पादन लागत वक्र के न्यूनतम बिन्दु पर उत्पादन करेगें क्योंकि पूर्ण प्रतियोगिता की मान्यता प्रभावी है।

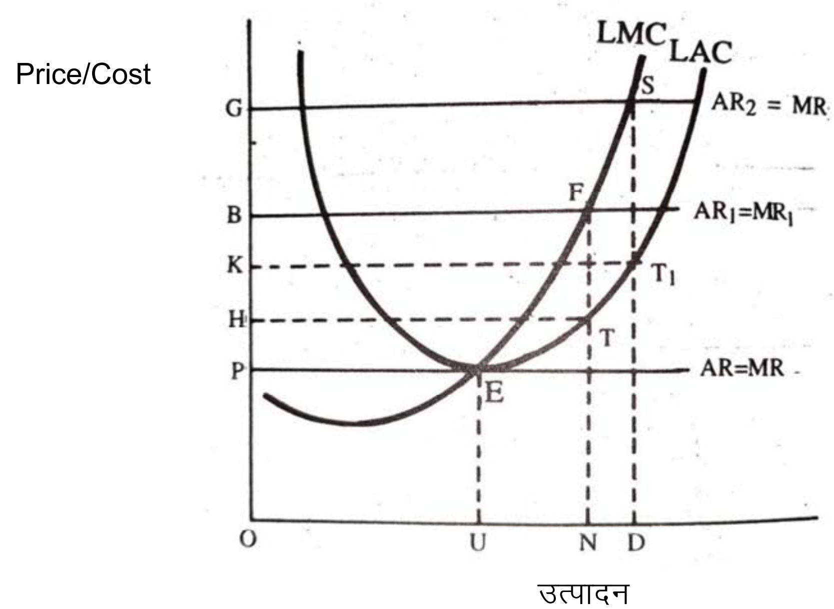

[चित्र–1]

उपरोक्त रेखाचित्र में LAC दीर्घकालीन औसत लागत वक्र है। उत्पादक संस्थिति में E बिन्दु पर है, अन्न का मूल्य OP होगा जिससे उत्पादक को पूँजी तथा श्रम की लागत प्रतिपूर्ति के बराबर आय प्राप्त होगी। यदि उपलब्ध समस्त भूमि प्रयोग में न आयी हो तो जनसंख्या वृद्धि के कारण अनाज का मूल्य OP से अधिक हो तो मूल्य में इस प्रकार की वृद्धि अल्पकालिक होगी क्योंकि अप्रयक्त भूमि जोत में आयेगी और मूल्य OP प्राप्त होगी। ऐसा तब तक होगा जब तक कि नि"क्रिय भूमि जोत में रहेगी।

सम्पूर्ण भूमि जोत में प्रयुक्त होने की स्थिति में मूल्य में स्थायी वृद्धि होने पर मूल्य OB हो जाये तो,उत्पादक LMC में बिन्दु F पर उत्पादन करेगा, जिससे सीमान्त लागत मूल्य के बराबर हो। इस स्थिति में पूँजी तथा श्रम के रूप में लगी औसत लागत तथा मूल्य बीच अन्तर होता है। मूल्य का लागत के ऊपर यह अतिरेक ही 'लगान ' है।

इस प्रकार लगान भूमि की पूर्ति की सीमितता का परिणाम है, जिसके फलस्वरूप मूल्य में वृद्धि के अनुरूप लगान भी वर्धमान होगा।

(2) भेदात्मक लगान :–

यदि भूमि के टुकडे भिन्न –भिन्न उर्वराशक्ति से युक्त हों तथा उनकी गुणवत्ता भी अलग –अलग प्रवृत्ति रखती हो तो यदि उत्तम कोटि की भूमि की पूर्ति उसकी मांग की तुलना में कम हो तो गुण की भिन्नता तथा पूर्ति की सीमितता के कारण जो लगान उत्पन्न होगा वह भिन्न – भिन्न होगा, जिसको भेदात्मक लगान की संज्ञा दी जाती हैं।

रिकार्डो ने दो प्रकार की भूमि का उल्लेख किया –

(a) सीमान्त भूमि :–

वह भूमि जिस पर उत्पादित वस्तुओं से प्राप्त होने वाली आय उत्पादन लागत के बराबर होती हैं,;AR =AC) उसे **सीमान्त भूमि** या लगानरहित भूमि कहते हैं।

(b) अधिसीमान्त भूमि :

ऐसी भूमि जिस पर उत्पादित वस्तुओं से प्राप्त होने वाली आय, उत्पादन लागत की तुलना में अधिक होती है (AR >AC) अर्थात इस पर लगान उत्पन्न है। इसे लगानयुक्त भूमि या **अधिसीमान्त भूमि** की संज्ञा दी जाती हैं।

रिकार्डो के अनुसार लगान एक भेदात्मक बचत है। उत्तम तथा खराब भूमि के उत्पादन अन्तर अथवा सीमान्त तथा अधिसीमान्त भूमि के उत्पादन के अन्तर को ही रिकार्डो ने 'लगान 'कहा है।

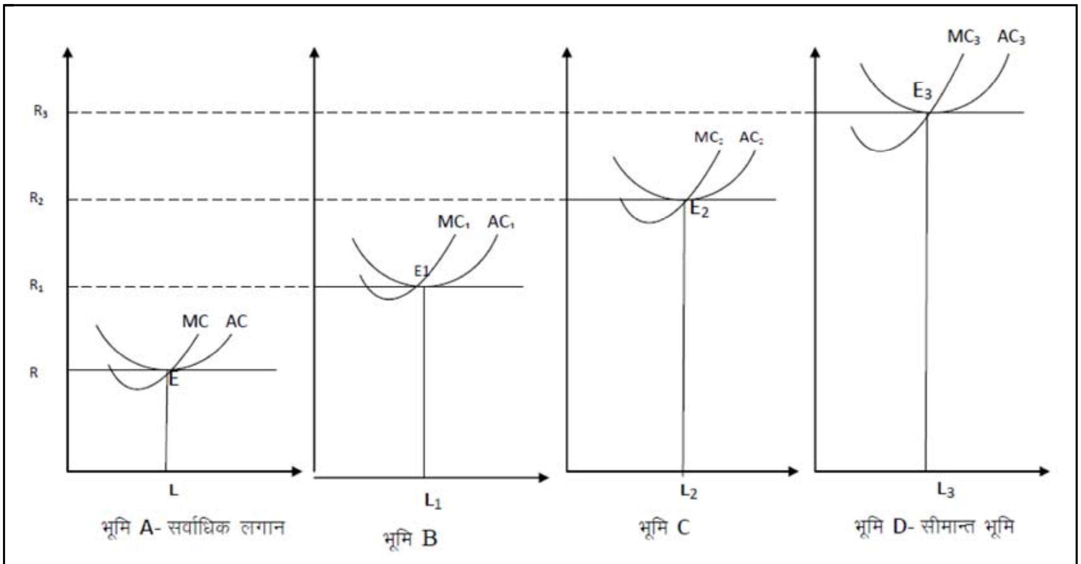

[चित्र–2]

संलग्न रेखाचित्र में चार प्रकार की भूमि का उल्लेख किया गया है, जिसमें स्पष्ट है कि जनसंख्या वृद्धि तथा भूमि की माँग में बढ़ोत्तरी के कारण लगान में वृद्धि होती है। भूमि –A, B, C क्रमशः अधिसीमांत भूमि है, क्योंकि इस पर लगान प्राप्त हो रहा है। भूमि D पर प्राप्त लगान शून्य है, अतः यह सीमान्त भूमि है।

इस प्रकार भूमि की गुणवत्ता में भिन्नता के कारण भूमि के भिन्न – भिन्न टुकड़ों पर भिन्न – भिन्न लगान प्राप्त होता है, इसे ही भेदात्मक लगान कहते हैं।

2.4 रिकार्डो के लगान सिद्धान्त की आलोचनायें

- कुछ आलोचकों के अनुसार भूमि की मौलिक एवं अविनाशी शक्तियों की मान्यता अव्यवहारिक है।
- सीमान्त भूमि (लगान हीन भूमि) की कल्पना असैद्धान्तिक है।
- लगान के सम्बन्ध में रिकार्डो द्वारा प्रतिपादित ऐतिहासिक क्रम तर्कसंगत नहीं है, क्योंकि उर्वर भूमि पर सबसे अंत में कृषि सम्पन्न होती है।
- पूर्ण प्रतियोगिता तथा दीर्घकाल की मान्यता अव्यावहारिक है; क्योंकी व्यावहारिक जीवन में सामान्यतः अपूर्ण प्रतियोगिता होती है।
- लगान तथा मूल्य के पारस्परिक सम्बन्ध विचार स्पष्ट नहीं है; क्योंकि कृषि वस्तु का मूल्य सीमान्त भूमि की उत्पादन लागत द्वारा निर्धारित होता है।
- रिकार्डो के लगान– सिद्धान्त की व्याख्या में माल्थस का जनसंख्या सिद्धान्त तथा क्रमागत उत्पादन ह्रास नियम सम्बन्धी निराशावादी विचाराधारा निहित है।

उपर्युक्त आलोचनाओं के बाद भी रिकार्डो का लगान सिद्धान्त महत्वपूर्ण है तथा आधुनिक लगान सिद्धान्त को दिशा देने में सफल रहा है।

2.5 लगान का आधुनिक सिद्धान्त

इसकी व्याख्या करने का श्रेय जे. एस. मिल को जाता है; पर वैज्ञानिक तथा व्यवस्थित रूप में व्याखा करने का श्रेय श्रीमती जॉन रॉबिन्सन को जाता है। इन्होंने स्पष्ट किया कि लगान का श्रेय मात्र कृषि को ही नहीं अपितु अन्य साधनों को भी प्राप्त होता है। आधुनिक अर्थशास्त्रियों ने लगान को विशिष्टता एवं अविशिष्टता का प्रतिफल माना।

विशिष्टता से अभिप्राय –गतिशीलता के अभाव या कमी से है। ऐसे साधनों का मात्रा एक ही उपयोग सम्भव है, जबकि अविशिष्टता से अभिप्राय विद्यामान गतिशीलता से है, जिनका एक से अधिक प्रयोग सम्भव है। साधन की विशिष्टता ही लगान का अंश निर्धारित करती है।

आधुनिक अर्थशास्त्रियों ने लगान को वास्तविक आय तथा स्थानांतरण आय का अन्तर माना है–

लगान = साधन की वास्तविक आय – साधन की स्थानांतरण आय

Rent =AE – TE

वास्तविक आय वह आय होती है, जो एक साधन को कार्य करने के दौरान प्राप्त होती रहती है। जबकि स्थानांतरण आय किसी साधन को एक कार्य को छोड़कर दूसरे कार्य को करने पर वैकल्पिक आय के रूप में प्राप्त होती है। जो साधन जितना ही अधिक विशिष्ट होगा, उसकी स्थानांतरण आय उतनी हीकम तथालगान उतना ही अधिक होगा।

रॉबिन्सन ने यह बताया कि एक साधन जिस कार्य को कर रहा होता है, उसे 'प्रथम सबसे अच्छा चुनाव'तथा दूसरे कार्य को जो वह कर सकता है, उसे 'द्वितीय सबसे अच्छा चुनाव'कहते है। अतः लगान प्रथम सबसे अच्छे चुनाव का ही द्वितीय सबसे अच्छे चुनाव पर आधिक्य है।

(1) यदि साधन पूर्णतः विशिष्ट या पूर्णतः बेलोचदार हो, तो वह पूर्णतः अगतिशील होगा और उसका एक ही प्रयोग सम्भव हो, ऐसा अल्पकाल में होता है। इस परिस्थिति के सन्दर्भ में निम्न मान्यतायें है–

(i) साधन पूर्णतः अगतिशील होगा।

(ii) साधन का एक समय में एक ही प्रयोग सम्भव।

(iii) साधन पूर्ति सीमित तथा पूर्णतः बेलोचदार होगी।

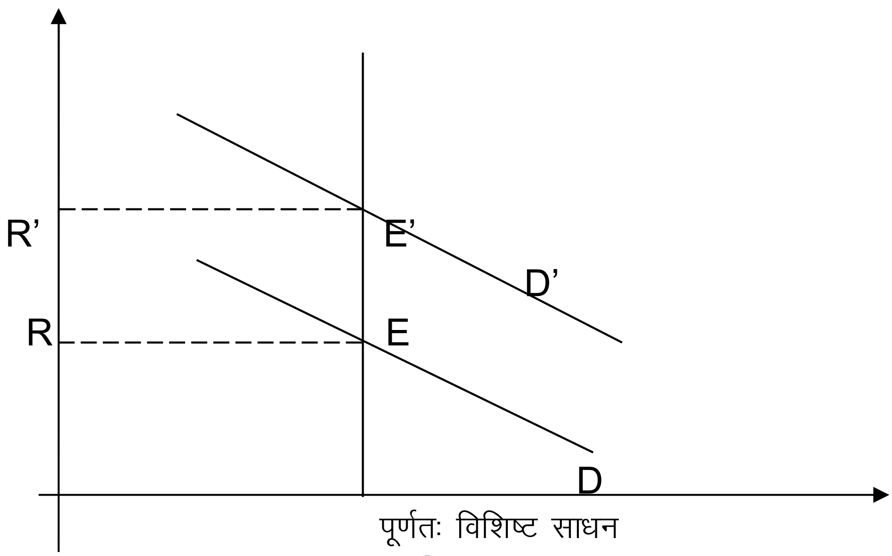

[चित्र–3]

(2) यदि साधन पूर्णतः अविशिष्ट तथा पूर्णतः लोचदार हो तो वह पूर्णतः गतिशील होगा; ऐसा दीर्घकाल में होता है, जिसकी निम्नलिखित मान्यतायें हैं–

(i) साधन पूर्णतः गतिशील है।

(ii) उसकी पूर्ति की लोच अनन्त है।

(iii) साधनों को प्राप्त होने वाला प्रतिफल उनकी सीमांत आय उत्पादकता के बराबर होगा।

इस स्थिति में साधन को प्राप्त प्रतिफल या सम्पूर्ण आय साधन की स्थानान्तरण आय के बराबर होगी, अतः लगान प्राप्त नहीं होगा, जैसा रेखाचित्र से स्पष्ट है–

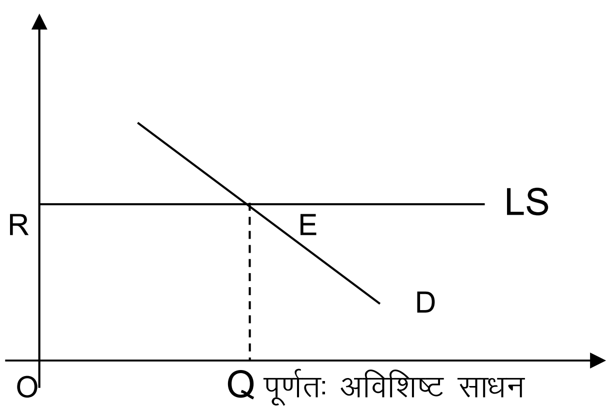

[चित्र–4]

लगान = साधन की वास्तविक आय – साधन की स्थानांतरण आय

= OREQ – OREQ

लगान = 0

(3) यदि उत्पादन का साधन न तो पूर्णतया लोचदार हो और न पूर्णतया बेलोचदार अथवा उत्पत्ति का साधन न तो पूर्ण विशिष्ट हो और न पूर्ण अविशिष्ट हो–

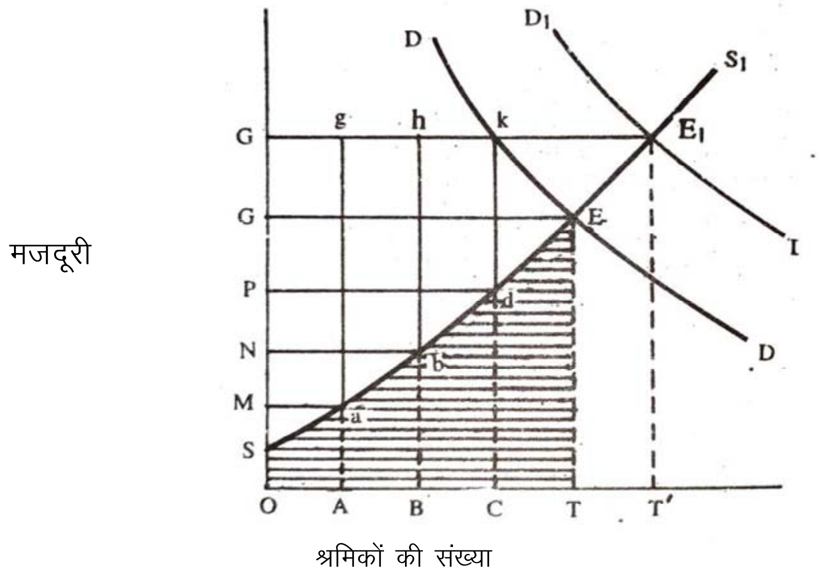

[चित्र–5]

दिये गये चित्र में DD तथा SS' माँग तथा पूर्ति वक्र एक दूसरे को E बिन्दु पर काटते हैं। साम्य कीस्थिति में मजदूरी ET होगी। इस चित्र में यदि मजदूरी OS है, तो कोई भी श्रमिक कार्य पर नहीं आयेगा। यदि मजदूरी OM हो तो OA श्रमिक आते हैं। स्पष्ट है कि इन OA श्रमिकों को किसी अन्य रोजगार में OM से अधिक नहीं मिल रहा था। यही उनका सर्वोत्तम प्रयोग हैं। तथा इसी प्रकार ON,OP तथा OG मजदूरी पर क्रमशः OB, OC तथा OT श्रमिक उपलब्ध होंगे। श्रम की पूर्ति रेखा उनन्यूनतम मजदूरियों को प्रकट करती है, जिन पर श्रमिकों की उनसे सम्बद्ध मात्रायें कार्य करने के लिए तत्पर हैं।

यह भी कहा जा सकता है कि पूर्ति – वक्र के विभिन्न बिन्दु, साधनों के वैकल्पिक लागत के प्रतीक हैं।चूँकि प्रत्येक श्रमिक को OG मजदूरी, जिसका निर्धारण माँग एवं पूर्ति की शक्तियों के द्वारा होगा तथा बाजार में प्रचलित होगी, वही मिलेगी। इसलिए ऐसे श्रमिक जो OM, ON तथा OP मजदूरी पर कार्य करने के लिए तत्पर थे, उन्हें अतिरेक मिलेगा और वास्तविक आय तथा स्थानान्तरण आय अथवा अवसर लागत के अन्तर के आधार पर लगान की गणना इस प्रकार होगी–

वास्तविक आय (कुल मजदूरी) = OG×OT = OTEG

अवसर लागत = पूर्ति रेखा SS1 के नीचे का क्षेत्र = OSET

OT श्रमिकों का लगान = वास्तविक आय – अवसर लागत = OTEG – OSET = GSE

यदि माँग और बढ़ के माँग वक्र D' D' से व्यक्त हो तो लगान में निरंतर वृद्धि होगी।

2.6 बोध प्रश्न

1. लगान से आप क्या समझते हैं?
2. दुर्लभता का लगान क्या है?
3. सीमांत भूमि क्या होती है?

2.7 सारांश

लगान का शब्द का अभिप्राय प्रयोग भूमि के उपयोग के लिए दिये गये प्रतिकल से हैं। मार्शल के अनुसार, **''लगान वह आय हैं, जो भूमि के रूप में प्रकृति द्वारा प्रदत्त निःशुल्क उपहार के रूप में भू–स्वामी को प्राप्त होता हैं।''**इस प्रकार मार्शल प्रदत्त परिभाषा के अनुसार क्लासिकल दृष्टिकोण दृष्टिगोचर होता हैं।

प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों का लगान सिद्धान्त रिकार्डो के लगान सिद्धान्त के नाम से जाना जाता हैं। आधुनिक अर्थशास्त्रियों ने लगान को विशिष्टता एवं अविशिष्टता का प्रतिफल माना। विशिष्टता से अभिप्राय –गतिशीलता के अभाव या कमी से है। ऐसे साधनों का मात्रा एक ही उपयोग सम्भव है, जबकि अविशिष्टता से अभिप्राय विद्यामान गतिशीलता से है, जिनका एक से अधिक प्रयोग सम्भव है। साधन की विशिष्टता ही लगान का अंश निर्धारित करती है।

2.8 शब्दावली

- **अधिशेष** – बचा हुआ
- **अविनाशी** – कभी नष्ट न होने वाला
- **प्रसंविदा** – एक प्रकार का समझौता

2.9 संदर्भ ग्रंथ

20. Alternative Theories of Distribution — N. Kaldor

21. Economics of Welfare — A.C. Pigou

2.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

1 उत्तर – लगान का शब्द का अभिप्राय प्रयोग भूमि के उपयोग के लिए दिये गये प्रतिकल से हैं।

2 उत्तर – दुर्लभता का लगान औसत उत्पादन लागत (जिसमें लगान नहीं सम्मिलित हैं) के उपर औसत आय का वह आधिक्य है जो भूमि के गुण में एक रूपकता होने के बावजूद भी भूमिपति की भूमि की पुर्ति की सीमितता के कारण प्राप्त होता है।

3 उत्तर – वह भूमि जिस पर उत्पादित वस्तुओं से प्राप्त होने वाली आय उत्पादन लागत के बराबर होती हैं

2.11 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. रिकार्डो के लगान सिद्धांत की विस्तारपूर्वक व्याख्या कीजिये।
2. आधुनिक लगान सिद्धांत से आप क्या समझते हैं? व्याख्या कीजिये।

इकाई–3 मजदूरी के सिद्धान्त

इकाई की रुपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 नकद मजदूरी

3.3 असल मजदूरी

3.4 मजदूरी का आधुनिक सिद्धान्त : माँग–पूर्ति का सिद्धान्त

3.4.1 श्रम की माँग

3.4.2 श्रम की पूर्ति

3.4.3 मजदूरी मूल्य का निर्धारण

3.5 बोध प्रश्न

3.6 सारांश

3.7 शब्दावली

3.8 संदर्भ ग्रंथ

3.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

3.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

3.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप समझ सकेंगे कि –

- मजदूरी और उसके विभिन्न प्रकार का परिचय।
- मजदूरी का आधुनिक सिद्धांत क्या है?
- मजदूरी का मूल्य निर्धारण कैसे होता है?

3.1 प्रस्तावना

कुल उत्पादन का वह भाग जो मजदूर को उत्पादन की क्रिया में उसकी सेवाओं के लिए दिया जाता है, उसे ही मजदूरी कहते हैं। यह श्रम के त्याग का प्रतिफल है। मार्शल के अनुसार, ''श्रम को सेवाओं के लिये दिया गया मूल्य मजदूरी है।''

समय –समय पर मजदूरी –निर्धारण के अनेक सिद्धान्त प्रतिपादित किये गये। इनमें से कुछ महत्वपूर्ण सिद्धान्त इस प्रकार हैं– जीवन निर्वाह सिद्धान्त, रहन –सहन स्तर सिद्धान्त, मजदूरी कोश सिद्धान्त, सीमान्त उत्पादकता सिद्धान्त, मजदूरी का अवशेष स्वत्व सिद्धान्त माँग एव पूर्ति का आधुनिक सिद्धान्त आदि।

3.2 नकद मजदूरी –

नकद मजदूरी वह मजदूरी होती है, जो किसी श्रमिक को एक निश्चित समय में कार्य करने के लिये दी जाती है। नकद मजदूरी श्रमिक को द्रव्य या मुद्रा के रूप में मिलती है, जिससे वह अपनी विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति करता है।

3.3 असल मजदूरी

इसे वास्तविक मजदूरी भी कहते हैं। एक श्रमिक अपनी नकद मजदूरी की सहायता से जो वस्तुएँ एवं सेवायें क्रय कर सकता है, उसे असल मजदूरी कहते हैं। यहाँ नकद मजदूरी के साथ अन्य सुविधायें भी असल मजदूरी में शामिल होती हैं, जो श्रमिक को प्रतिफल में प्राप्त होती हैं।

3.4 मजदूरी का आधुनिक सिद्धान्त : माँग–पूर्ति का सिद्धान्त

मजदूरी – निर्धारण का आधुनिक सिद्धान्त माँग तथा पूर्ति का सिद्धान्त है। इस सिद्धान्त अनुसार श्रम की इकाई का मूल्य अथवा पारितोषिक –निर्धारण भी उसकी माँग एवं पूर्ति के द्वारा होता है। श्रम की माँग सीमान्त –उत्पादकता तथा श्रम की पूर्ति उसके त्याग पर निर्भर है। जहाँ दोनों एक – दूसरे के बराबर होंगे, वहीं मजदूरी निर्धारित होती है।

3.4.1 श्रम की माँग

श्रम की माँग व्यूत्पन्न माँग होती हैं, जो उस वस्तु के कारण होती है, जिसका उत्पादन श्रम की सहायता से किया जाता है, तथा उस वस्तु के विक्रय से साहसी को लाभ प्राप्त होता है। उत्पादित वस्तु की माँग प्रत्यक्ष माँग होती है। श्रम की माँग उसकी 'सीमान्त आय उत्पादकता पर निर्भर होती है। श्रम की सीमान्त आय उत्पादकता को प्रदर्शित करने वाला वक्र ही श्रम का माँग वक्र होता है।

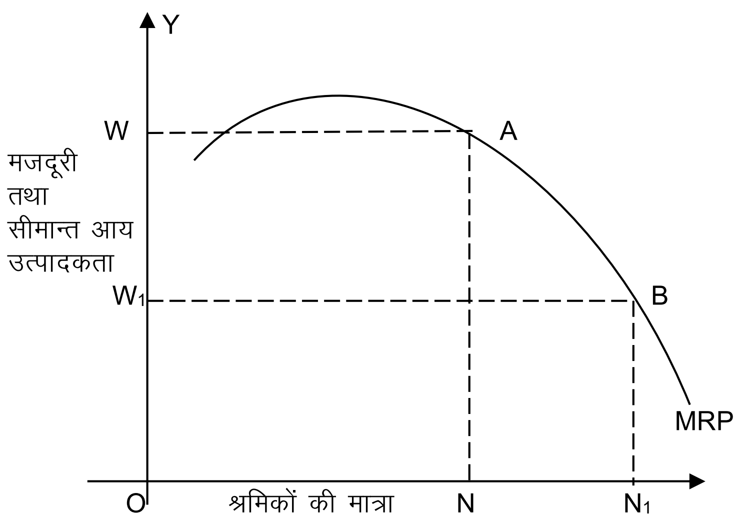

चित्र – 1

किसी उद्योग में श्रम हेतु माँग वक्र प्राप्त करने के लिये, उस उद्योग में संलग्न समस्त फर्मों के माँग वक्र (MRP) को जोड़ देते हैं।

3.4.2 श्रम की पूर्ति

पूर्ति से तात्पर्य श्रमिकों की उस मात्रा से है, जो मजदूरी की विभिन्न दरों पर सेवा देने हेतु तत्पर हो। मजदूरी की दर बढ़ने श्रम की पूर्ति बढ़ जाती है। श्रम की पूर्ति उसकी लागत – सीमान्त त्याग –पर निर्भर करती है। श्रम की पूर्ति अनेक आर्थिक तथा अनार्थिक कारणों से प्रभावित होती है। मजदूरी दर में परिवर्तन के फलस्वरूप प्रतिस्थापन प्रभाव तथा आय प्रभाव दृष्टिगोचर होते हैं। मजदूरी बढ़ने के कारण अधिक आय अर्जित करने की इच्छा पर जब श्रमिक आराम को अधिक कार्य से प्रतिस्थापित करें तो इसे **प्रतिस्थापन प्रभाव** कहते हैं।दूसरी ओर यदि मजदूरी वृद्धि के कारण यदि श्रमिक अधिक कार्य करने की जगह आराम को वरीयता दें, तो यह **आय**

प्रभाव है।

यदि मजदूरी में वृद्धि के कारण श्रमिक अधिक आराम पसंद करें, तो पूर्ति वक्र के स्वरूप का ठीक अनुमान नहीं लगाया जा सकता। पूर्ति वक्र इन दोनों प्रभावों की सापेक्षिक शक्तियों पर निर्भर करता है। (पूर्ति = आय प्रभाव + प्रतिस्थापन प्रभाव) यदि आय प्रभाव इतना ऋणात्मक हो कि वह प्रतिस्थापन प्रभाव को समाप्त कर दे, तो पूर्ति वक्र पीछे मुड़ जायेगा। संलग्न चित्र में पूर्ति वक्र आरम्भ प्रतिस्थापन प्रभाव को दर्शाता है, परंतु एक सीमा के बाद आय प्रभाव शक्तिशाली हो जाता है,इस स्थिति में मजदूरी की वृद्धि के बाद भी श्रम की पूर्ति कम होती जाती है।

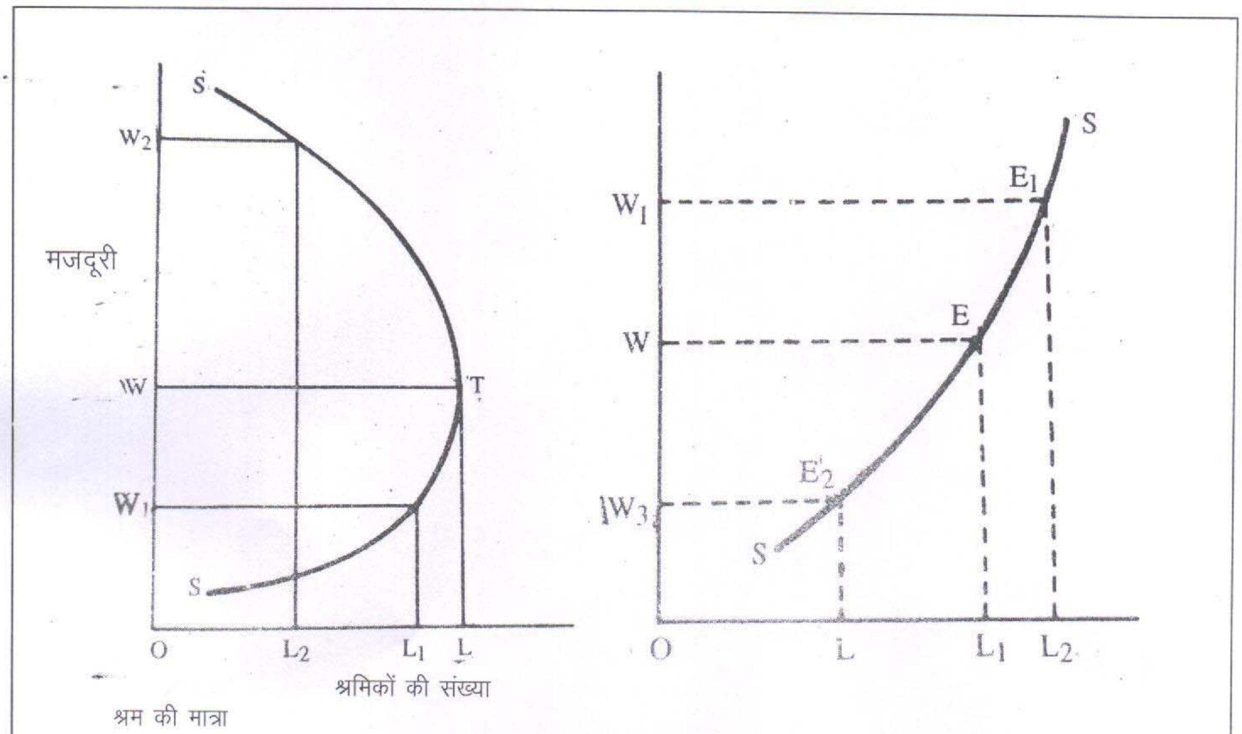

चित्र – 2

उपरोक्त दांये रेखाचित्र में पूर्ति वक्र यह प्रदर्शित करता है कि आय प्रभाव की अपेक्षा प्रतिस्थापन प्रभाव अधिक शक्तिाशाली है।

3.4.3 मजदूरी मूल्य का निर्धारण

श्रम बाजार में पूर्ण प्रतियोगिता के अन्तर्गत मजदूरी का निर्धारण करने के सन्दर्भ में दो स्थितियाँ होती हैं–

(क) जब साधन बाजार तथा वस्तु बाजार दोनों में पूर्ण प्रतियोगिता की स्थिति हो –

श्रम का मूल्य, श्रम की माँग तथा पूर्ति के द्वारा निर्धारित होगा। मजदूरी दर वहाँ निर्धारित होगी, जहाँ माँग–पूर्ति के बराबर हो जाय। चूँकि श्रम की माँग उसकी सीमान्त आय उत्पादकता पर निर्भर करती है। अतः सतुंलन की स्थिति में श्रम की मजदूरी तथा सीमान्त आय उत्पादन भी बराबर होगा क्योंकि साहसी अपने लाभ को अधिकतम करने का प्रयास करेगा। माँग तथा पूर्ति के द्वारा मजदूरी निर्धारण को निम्नलिखित रेखाचित्र में दर्शाया गया है।–

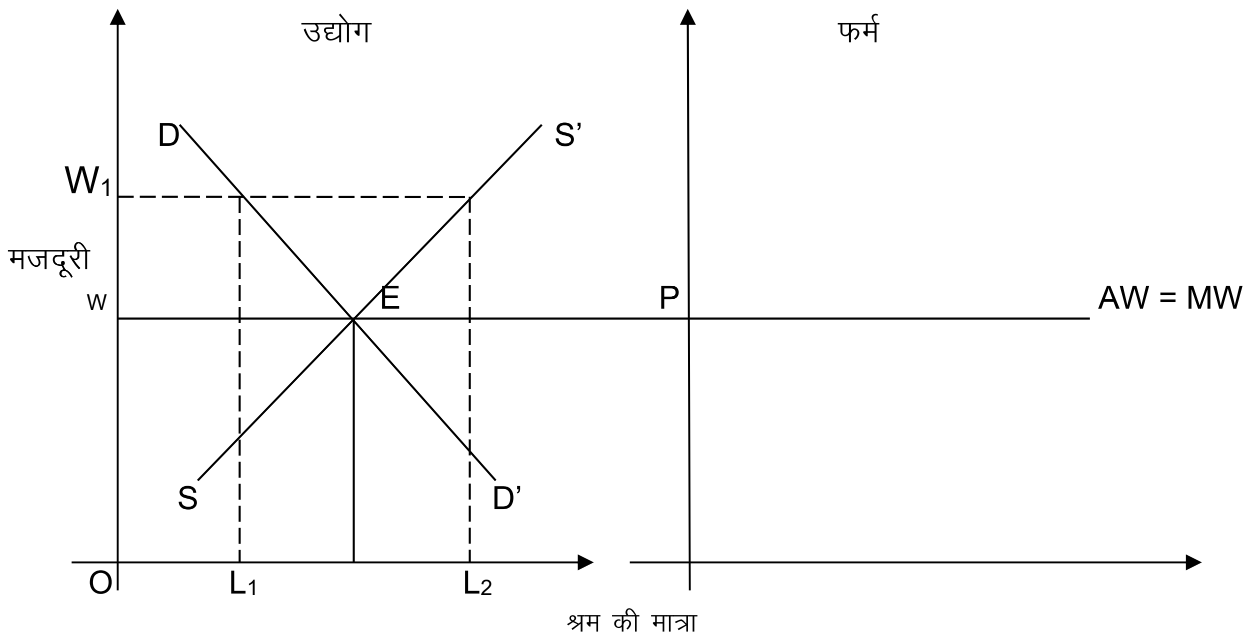

चित्र – 3

श्रम बाजार में पूर्ण प्रतियोगिता होने के कारण औसत मजदूरी तथा सीमांत मजदूरी रेखा प्रचलित दर के स्तर पर आधार के समानान्तर होगी। अर्थात MRP= MW=AW.

चूँकि वस्तु बाजार में अपूर्ण प्रतियोगिता है,अतः सीमान्त आय– उत्पादन (MRP),सीमान्त मूल्य उत्पादन MVP से कम होगा। क्योंकि –

$MRP = MPP \times MR$ $MVP = MPP \times AR$

अपूर्ण प्रतियोगिता में औसत आय, सीमान्त आय से अधिक होगा। (AR>MR) इसका अर्थ यह है कि श्रमिक को प्राप्त मजदूरी उसके सीमान्त आय के बराबर तो होगी पर उसका शोशण होगा, जो उसके सीमान्त मूल्य उत्पादन तथा मजदूरी दर के अन्तर के बराबर होगा। श्रम के होने वाले शोशण को एकाधिकारिक शोशण कहते हैं।

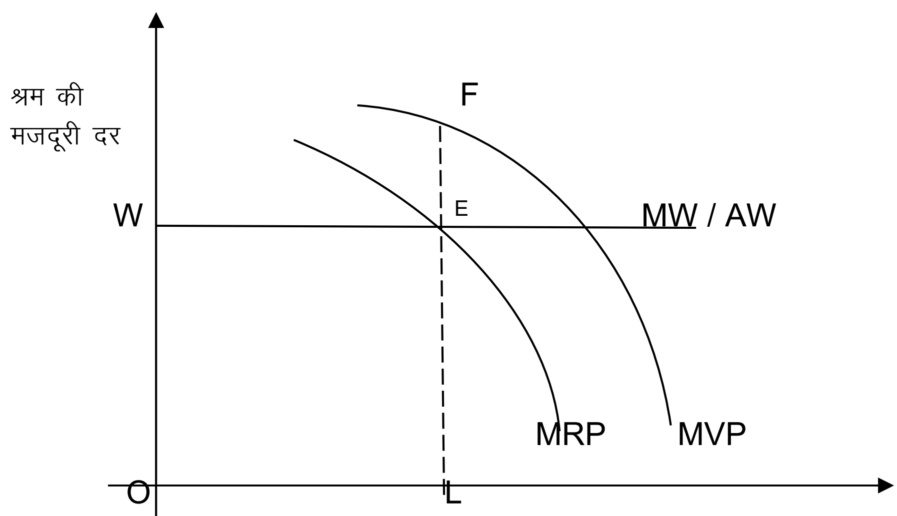

चित्र – 4

उपरोक्त रेखाचित्र में EF श्रम की प्रति इकाई एकाधिकारी शोशण को दर्शाता है।

(ग) क्रेताधिकार – जब श्रम –बाजार में नियोक्ता श्रम का अकेला क्रेता हो –

वस्तु बाजार में अकेले विक्रेता की स्थिति को एकाधिकार कहते हैं। इसी प्रकार साधन/श्रम बाजार में जब क्रेता एकमात्र हो तो, स्थिति क्रेताधिकार कहलाती है। इस प्रकार की स्थिति व्यवहार में सामान्यतया तब पायी जाती है, जब कि उत्पादक को विशिष्ट वस्तु के उत्पादन में एकाधिकार प्राप्त हो। क्रेताधिकार में भी दो स्थितियाँ पायी जाती हैं–

i. जब श्रम / साधन बाजार में क्रेताधिकार तथा वस्तु बाजार में पूर्ण प्रतियोगिता की स्थिति हो–

इस स्थिति में सीमान्त आय उत्पादन, सीमान्त मूल्य उत्पादन तथा सीमान्त मजदूरी परस्पर बराबर होंगे पर यह समानता औसत मजदूरी या श्रम के मूल्य से ऊपर होगी।

$MVP = MRP = MW > AW$

ii. जब साधन बाजार में क्रेताधिकार तथा वस्तु बाजार में एकाधिकार हो–

इस स्थिति में सीमान्त आय उत्पादन, सीमान्त मजदूरी के बराबर होगा पर सीमान्त मूल्य उत्पादन संतुलन के स्तर से ऊँचा होगा पर मजदूरी कम होगी–

$MVP > MRP = MW > AW$

3.5 बोध प्रश्न

1. नकद मजदूरी क्या है?
2. असल मजदूरी क्या होती है?

3.6 सारांश

मार्शल के अनुसार, ''श्रम को सेवाओं के लिये दिया गया मूल्य मजदूरी है।''समय –समय पर मजदूरी –निर्धारण के अनेक सिद्धान्त प्रतिपादित किये गये। इनमें से कुछ महत्वपूर्ण सिद्धान्त इस प्रकार हैं– जीवन निर्वाह सिद्धान्त, रहन –सहन स्तर सिद्धान्त, मजदूरी कोश सिद्धान्त, सीमान्त उत्पादकता सिद्धान्त, मजदूरी का अवशेष स्वत्व सिद्धान्त माँग एव पूर्ति का आधुनिक सिद्धान्त आदि। मजदूरी – निर्धारण का आधुनिक सिद्धान्त माँग तथा पूर्ति का सिद्धान्त है। इस सिद्धान्त अनुसार श्रम की इकाई का मूल्य अथवा पारितोषिक –निर्धारण भी उसकी माँग एवं पूर्ति के द्वारा होता है। श्रम की माँग सीमान्त –उत्पादकता तथा श्रम की पूर्ति उसके त्याग पर निर्भर है। जहाँ दोनों एक – दूसरे के बराबर होंगे, वहीं मजदूरी निर्धारित होती है।

3.7 शब्दावली

असल – वास्तविक

संलग्न – लगा हुआ

उत्पादकता – उत्पादन करने की क्षमता

3.8 संदर्भ ग्रंथ

22. Pricing, DistributionAnd Employment — J.S.Bain

23. The Theory of Wages — J.R. Hicks

24. Theory of Wages — Paul Douglas

25. Income Distribution — J. Pen

3.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. **उत्तर**– नकद मजदूरी वह मजदूरी होती है, जो किसी श्रमिक को एक निश्चित समय में कार्य करने के लिये दी जाती है।

2. **उत्तर**–एक श्रमिक अपनी नकद मजदूरी की सहायता से जो वस्तुएँ एवं सेवायें क्रय कर सकता है, उसे असल मजदूरी कहते हैं।

3.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. मजदूरी के आधुनिक सिद्धांत की व्याख्या करिये।

इकाई–4 ब्याज के सिद्धान्त : पूर्व किन्सियन एव किन्सियन सिद्धान्त

इकाई की रुपरेखा

4.0 उद्देश्य
4.1 प्रस्तावना
4.2 ब्याज (Interest)
4.3 क्लासिकल/परम्परागत ब्याज का सिद्धान्त
4.3.1 बचत की माँग (demand of surplus)
4.3.2 बचत की पूर्ति (Supply of surplus)
4.3.3 ब्याज दर की संस्थिति का निर्धारण
4.3.4 क्लासिकल सिद्धान्त की आलोचनायें
4.4 कीन्स : ब्याज का तरलता अधिमान सिद्धान्त
4.4.1 मुद्रा/तरलता की पूर्ति
4.4.2 मुद्रा/तरलता की माँग
4.4.3 ब्याज की दर का निर्धारण
4.5 बोध प्रश्न
4.6 सारांश
4.7 शब्दावली
4.8 संदर्भ ग्रंथ
4.9 बोध प्रश्नों के उत्तर
4.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

4.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप समझ सकेंगे कि –

- ब्याज क्या होता है?
- परम्परागत ब्याज का सिद्धांत क्या होता है?
- कीन्स द्वारा प्रतिपादित ब्याज का तरलता अधिमान सिद्धांत क्या है?

4.1 प्रस्तावना

ब्याज पूँजी के परिमाण का प्रतिफल होता है। इस इकाई में ब्याज को परिभाषित करने के साथ साथ परम्परागत ब्याज सिद्धांत की व्याख्या विस्तृत रूप से की गयी है, जिससे छात्र इस सिद्धांत को कुशलता पूर्वक समझ सकें। कीन्स द्वारा प्रतिपादित ब्याज के तरलता अधिमान सिद्धांत को उसके विभिन्न आयामों के साथ समझाया गया है और ब्याज दर निर्धारण की उचित रेखाचित्र द्वारा प्रस्तुति की गयी है।

4.2 ब्याज (Interest)

ब्याज पूँजी के परिमाण का प्रतिफल है। अर्थव्यवस्था में जब कोई पूँजीपति अपनी पूँजी को उधार में ऋण के रूप में देता है, तो वह निजी उपभोग की वस्तुओं का त्याग करता हैं और इस त्याग के बदले में वह कुछ अतिरिक्त प्रतिफल प्राप्त करता है, जिसे ब्याज (Interest) कहते हैं।

मेयर्स के अनुसार–Þब्याज वह कीमत है, जो कि उधार देय योग्य कोश के प्रयोग के लिए दिया जाता है।Þ

4.3 क्लासिकल/परम्परागत ब्याज का सिद्धान्त

इसे क्लासिकल या परम्परागत या प्रतिष्ठित ब्याज के निर्धारण का सिद्धान्त भी कहते है।इस सिद्धान्त का

प्रतिपादन प्रो0 मार्शल ने किया, अतः इसे 'मार्शल का ब्याज सिद्धान्त 'भी कहा जाता है। पीगू, कैसेल, वालरा, टासिग आदि अर्थशास्त्रियों ने इस सिद्धान्त का समर्थन किया। मार्शल ने बताया कि किसी भी समय में ब्याज की दर का निर्धारण उस बिन्दु पर होगा, जहाँ बचत की माँग, बचत की पूर्ति के बराबर हो, इसलिये इस सिद्धान्त को माँग एवं पूर्ति का सिद्धान्त भी कहा जाता है।

4.3.1 बचत की माँग (demand of surplus)

बचत की माँग या निवेश की माँग अर्थव्यवस्था में रहने वाले उत्पादकों या नियोक्ताओं द्वारा निवेश के लिये की जाती है। यह ब्याज दर के साथ विपरीत सम्बन्ध रखती है।

$$D_s = f(r) - ve$$

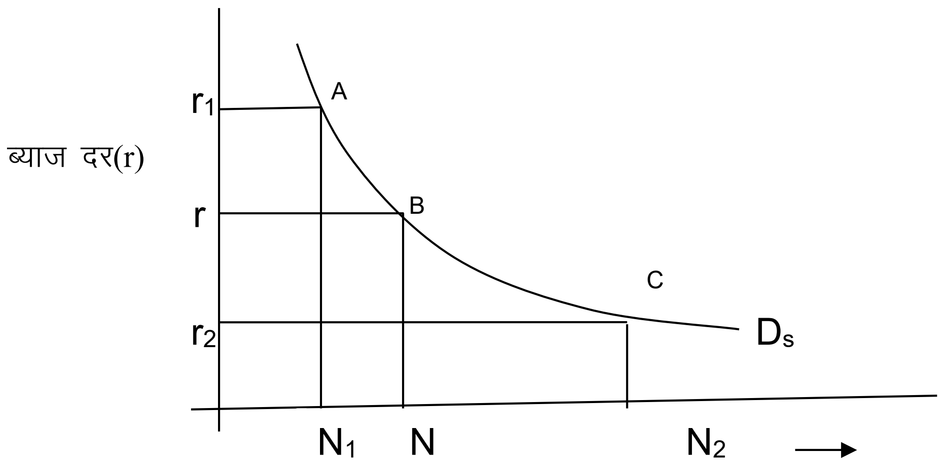

उपरोक्त रेखाचित्र से स्पस्ट है कि विनियोग तथा ब्याज की दर में विलोम सम्बन्ध है अर्थात जैसे–जैसे ब्याज की दर घटती जायेगी, इसके फलस्वरूप विनियोग की माँग में वृद्धि होगी।

4.3.2 बचत की पूर्ति (Supply of surplus)

बचत की पूर्ति बचत की उन मात्राओं को प्रदर्शित करती है, जिनको बचतकर्ता सम्भावित ब्याजदारों पर पूर्ति करने के लिये तत्पर होता है। बचत की पूर्ति, ब्याज की दर के साथ प्रत्यक्ष धनात्मक सम्बन्ध रखती है।

$$S_s = f(r) + re$$

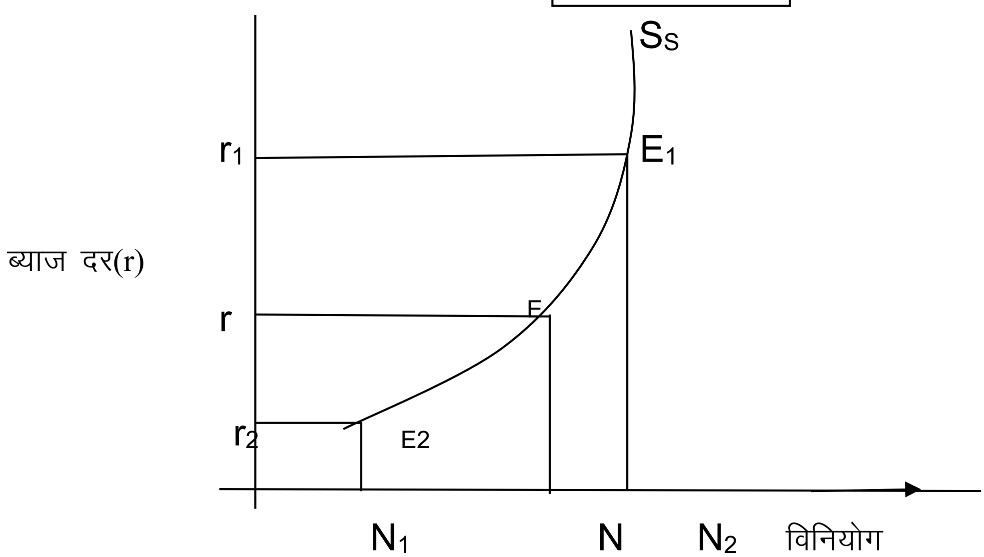

उपरोक्त रेखाचित्र से स्पष्ट है जैसे–जैसे ब्याज की दर ऊँची होती जायेगी, बचत की पूर्ति योग्य मात्रा भी बढ़ती

चली जायेगी। or_2 ब्याज दर पर बचत ON_2 तथा or ब्याज दर पर बचत ON है, जो ON_2 से अधिक है।

4.3.3 ब्याज दर की संस्थिति का निर्धारण

मार्शल के अनुसार बचत की माँग एवं बचत की पूर्ति दोनों अधिक लोचदार है, अतः संतुलित ब्याज दर का निर्धारण उस बिन्दु पर होगा, जहाँ पर बचत की माँग, बचत की पूर्ति के बराबर होगी।

अर्थात, बचत की माँग = बचत की पूर्ति $D_S = S_S$

संतुलन बिन्दु से सम्बन्धित ब्याज दर ही संतुलित ब्याज की दर कहलाती है।

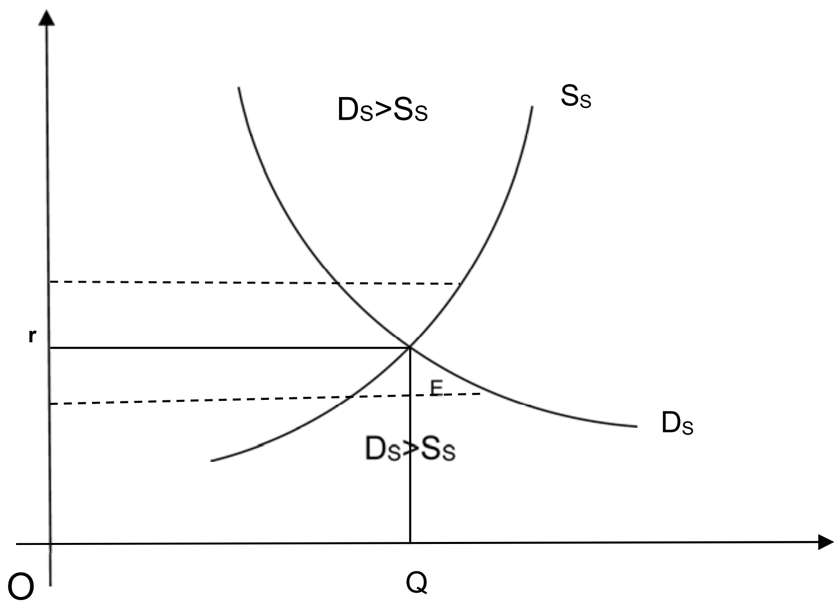

यदि संतुलन में किसी प्रकार का परिवर्तन होता है, तो निवेश एवं बचत की शक्तियों के अधिक लोचशील होने के कारण संतुलन की स्थिति पुनः कुछ समय ात् प्राप्त हो जाती है, जैसा कि उपरोक्त रेखाचित्र से स्पष्ट है, जिसमें संतुलन बिन्दु E पर है, जिससे सम्बन्धित ब्याज दर (r) तथा विनियोग की मात्रा OQ है।

इस प्रकार ब्याज की दर वह, मूल्य जो विनियोग किये जाने वाले साधनों की माँग को उनकी बचत/पूर्ति के बराबर कर देता है।

4.3.4 क्लासिकल सिद्धान्त की आलोचनायें

जॉन मेनॉर्ड कीन्स ने इस सिद्धान्त की कटु आलोचना की तथा एक नये सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। कीन्स द्वारा की गयी प्रमुख आलोचनायें निम्नलिखित हैं–

(1) ब्याज बचत करने का पारितोषिक न होकर तरलता के परित्याग का प्रतिफल है।

(2) बचत तथा पूँजी एक दूसरे के पर्याय नहीं हैं।

(3) इस सिद्धान्त द्वारा ब्याज की दर अनिर्धार्य रहेगी, अतः यह क्लासिकल सिद्धान्त हमारे सम्मुख कोई निर्धार्यता नहीं दर्शाता।

(4) पूर्ण रोजगार की मान्यता गलत है।

(5) मुद्रा की पूर्ति की उपेक्षा गलत हैं।

4.4 कीन्स : ब्याज का तरलता अधिमान सिद्धान्त

इस सिद्धान्त को कीन्स के ब्याज निर्धारण का सिद्धान्त भी कहते है, जिसकी व्याख्या कीन्स ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'General theory of Employment InterestAnd money(1936) में किया। कीन्स ने बताया की मुद्रा एक तरल वस्तु है, इसे तरलता भी कहा जाता है। आर्थिक ईकाइयाँ अपने व्यवहारों को पूरा करने के लिये अपनी सम्पति का कुछ भाग अत्यन्त तरल सम्पत्तियों जैसे– नकद मुद्रा, बाँण्ड आदि के रूप में रखना चाहती हैं। जब इस तरल कोश से कुछ उधार दिया जाता है, तो तरलता का परित्याग होता है, और इस तरलता के परित्याग के बदले जो पारितोषिक प्राप्त होता है, उसे ही ब्याज कहते है।

कीन्स के अनूसार –Þब्याज वह प्रतिफल है, जो एक निश्चित समय के लिये तरलता के परित्याग हेतु प्राप्त होता है।Þ

कीन्स के अनुसार– ''ब्याज का निर्धारण निवेश एवं बचत की समानता के आधार पर न हो कर बल्कि मुद्रा की माँग एवं मुद्रा की की पूर्ति की समानता के द्वारा होती है। Þमुद्रा को दो प्रकार से प्रयोग कर सकते हैं– नकद रूप में रखें, या फिर बॉन्ड/ प्रतिभूतियों में निवेश करें।

4.4.1 मुद्रा/तरलता की पूर्ति

कीन्स के अनुसार, मुद्रा/तरलता की पूर्ति का निर्धारण अर्थव्यवस्था में केन्द्रीय बैंक या मौद्रिक अधिकारी द्वारा की जाती है। यह वाह्य रूप से निर्धारित होती है। इसलिये यह किसी भी अर्थव्यवस्था में निश्चित एवं स्थिर बनी रहती है। यह ब्याज निरपेक्ष होती है, क्योंकि ब्याज की दर का कोई प्रभाव मुद्रा की पूर्ति पर नहीं पड़ता है, इस प्रकार मुद्रा की पूर्ति पूर्णतः बेलोच होती है।

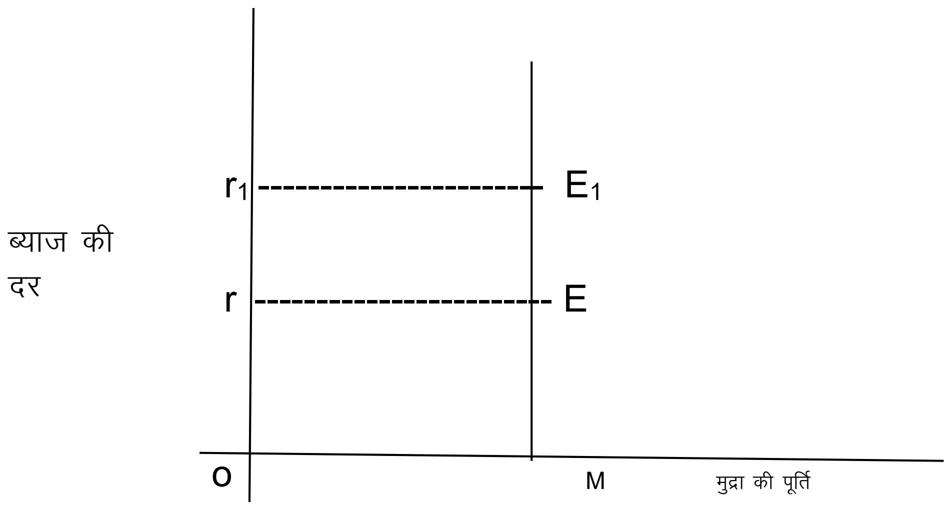

4.4.2 मुद्रा/तरलता की माँग

मुद्रा की माँग तरलता पसंदगी की मांग होती है। मुद्रा की मांग अर्थव्यवस्था में संलग्न लोगों द्वारा की जाती है। कीन्स ने यह स्पष्ट किया कि मुद्रा की मांग तीन उद्देश्यों के लिये की जाती है–

(I)लेन –देन/सौदेबाजी/व्यापारिक उद्देश्य[L_T या L_1]-

लेन–देन या व्यापारिक उद्देश्य से की गयी मुद्रा की माँग का अभिप्राय मुद्रा की उस मात्रा से है, जो व्यक्ति तथा फर्मे अपने दैनिक लेन –देन को पूरा करने के लिये रखती है। यह सिर्फ आय से प्रभावित होती है, ब्याज से नहीं। $L_T = f(y) + ve$

(II) **दूरदर्षिता/पूर्वोपाय उद्देश्य [L_P या L_2]**–

कीन्स के अनुसार अर्थव्यवस्था में प्रत्येक व्यक्ति, फर्म आदि अपनी आय का एक निश्चित प्रतिशत भाग अप्रत्यशित घटनाओं जैसे – दुर्घटना, बीमारी इत्यादि का सामना करने हेतु अपने पास कुछ नकद शेश के रूप में रखता है, जिस पर ब्याज की दर का कोई प्रभाव नहीं पड़ता, यह सिर्फ आय से प्रभावित होती है।

$$L_P = f(y) + ve$$

कीन्स ने L_T तथा L_P को जोड़कर L_1 के रूप में प्रदर्शित किया क्योंकि दोनों ही आय स्तर का फलन होती हैं।

$$L_T + L_P = L_1$$

$$L_1 = f(y)$$

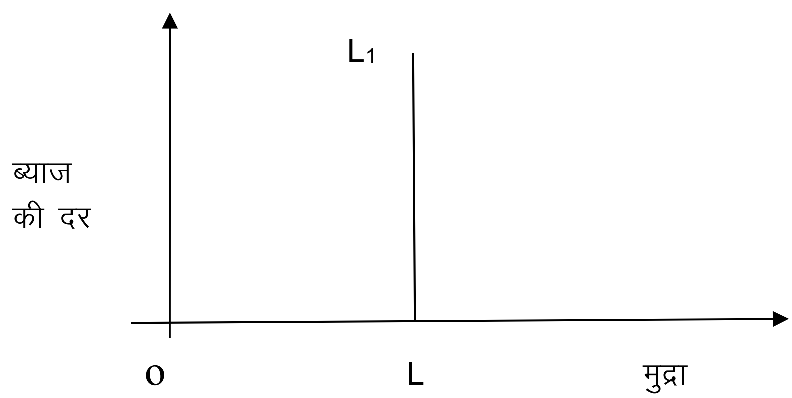

(III) **पूर्वकल्पी प्रेरक या सट्टा उद्देश्य [L_S या L_3]**–

कीन्स ने यह बताया कि अर्थव्यवस्था में सट्टेबाजी के लिये मुद्रा की माँग की जाती है, जो ब्याज दर से विपरीत रूप से सम्बन्धित/ प्रभावित होती है। अर्थात्

$$L_S = f(r) - ve$$

कीन्स के अनुसार अर्थव्यवस्था में लोग अपने पास इसलिए भी मुद्रा रखना चाहते हैं, जिससे वे प्रतिभूतियों के क्रय विक्रय से सट्टा लाभ प्राप्त कर सकें। अर्थव्यवस्था में सट्टा–लाभ दो रूपों में कार्य करता है–

एक तरफ वो लोग हैं, जो भविष्य में सम्पत्ति या बाँड़ का मूल्य बढ़ाने का अनुमान लगाते हैं, फलस्वरूप अर्थव्यवस्था में अधिक निवेश करते हैं, क्योकि उन्हें पूँजीगत लाभ होने की सम्भावना होती है। उन्हें तेजड़िये (Bulls) कहा जाता है।

दूसरी तरफ वे लोग, जो भविष्य में शेयर या बाँड़ के मूल्यों में कमी का अनुमान लगाते हैं तथा बाँड़,शेयर का विक्रय आरम्भ कर देता हैं, क्योंकि उन्हें पूँजीगत हानी होने की सम्भावना होती है। इन्हें मंदड़िये (Bears) कहते हैं। कीन्स के अनुसार ब्याज की दर तथा बाण्ड के मूल्य के बीच विपरीत सम्बन्ध पाया जाता है।

$$L_S = f(r) – ve$$

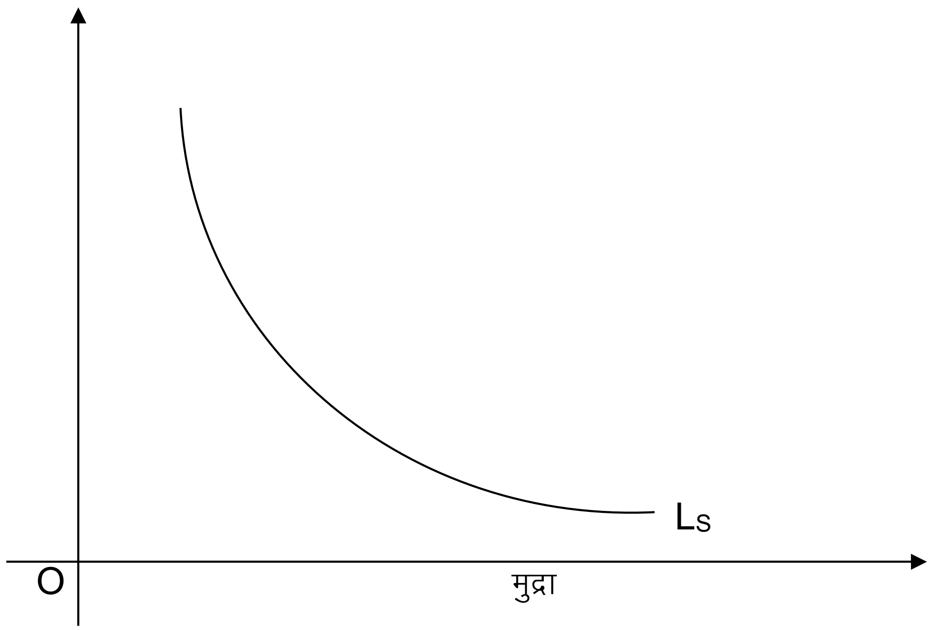

मुद्रा की कुल माँग – व्यापारिक उद्देश्य (L_T), पूर्वोपाय उद्देश्य (L_P), तथा पूर्वकल्पी उद्देश्य (L_S) से की गयी मुद्रा माँगों का योग होती है। अर्थात

$$M_D = L_T + L_P + L_S$$

4.4.3 ब्याज की दर का निर्धारण

कीन्स के अनुसार ब्याज की दर का निर्धारण उस बिन्दु पर होगा, जहाँ मुद्रा की माँग, मुद्रा के पूर्ति के बराबर होगा। अर्थात्

$$M_D = M_S$$

➢ $M = L$

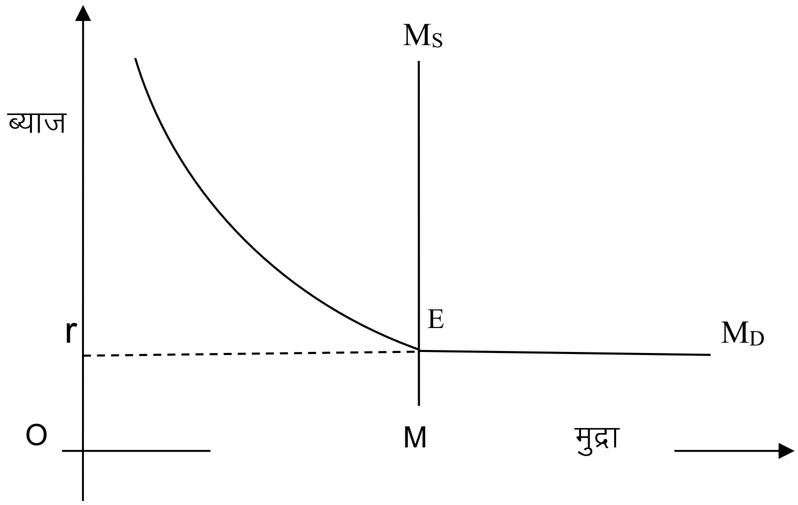

रेखाचित्र में E बिन्दु पर संस्थिति है, जहाँ मुद्रा की माँग, मुद्रा की पूर्ति के बराबर ($N_D = M_S$) है और संतुलित ब्याज दर or है।

यदि केन्द्रीय बैंक द्वारा मुद्रा की पूर्ति में लगातार वृद्धि की जाती है, तो मुद्रा की पूर्ति वक्र दाहिने विवर्तित हो जायेगा और ब्याज दर (r) निरन्तर घटती जाती है लेकिन एक निश्चित सीमा के बाद मुद्रा की पूर्ति में वृद्धि ब्याज दर को प्रभावित नहीं कर पायेगी। यह ब्याज दर न्यून ब्याज दर होती है, जिसके बाद मौद्रिक नीति अप्रभावी हो जाती है, इसे तरलता जाल की स्थिति कहते हैं। जैसा निम्न रेखाचित्र में E1 बिन्दु से स्पष्ट है।

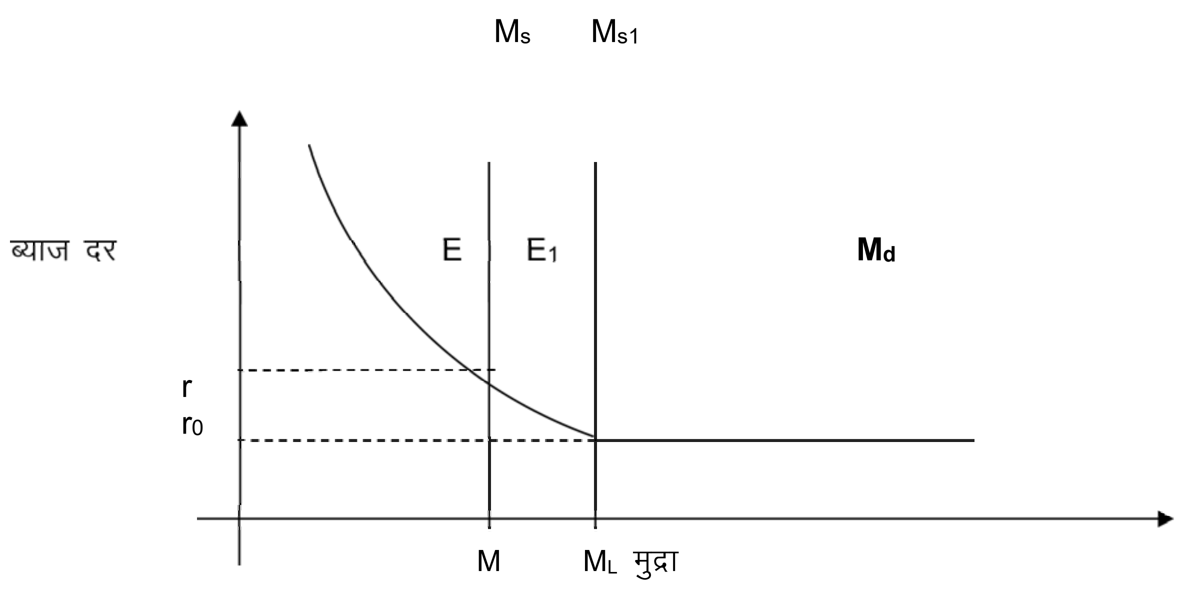

4.5 बोध प्रश्न

1. ब्याज क्या होता है?
2. बचत की माँग क्या है?

4.6 सारांश

ब्याज पूँजी के परिमाण का प्रतिफल है। अर्थव्यवस्था में जब कोई पूँजीपति अपनी पूँजी को उधार में ऋण के रूप में देता है, तो वह निजी उपभोग की वस्तुओं का त्याग करता हैं और इस त्याग के बदले में वह कुछ अतिरिक्त प्रतिफल प्राप्त करता है। क्लासिकल या परम्परागत या प्रतिष्ठित ब्याज के निर्धारण का सिद्धान्त में मार्शल ने बताया कि किसी भी समय में ब्याज की दर का निर्धारण उस बिन्दु पर होगा, जहाँ बचत की माँग, बचत की पूर्ति के बराबर हो, इसलिये इस सिद्धान्त को माँग एवं पूर्ति का सिद्धान्त भी कहा जाता है। कीन्स ने बताया की मुद्रा एक तरल वस्तु है, इसे तरलता भी कहा जाता है। आर्थिक ईकाइयाँ अपने व्यवहारों को पूरा करने के लिये अपनी सम्पति का कुछ भाग अत्यन्त तरल सम्पत्तियों जैसे– नकद मुद्रा, बाँण्ड आदि के रूप में रखना चाहती हैं। जब इस तरल कोश से कुछ उधार दिया जाता है, तो तरलता का परित्याग होता है, और इस तरलता के परित्याग के बदले जो पारितोषिक प्राप्त होता है, उसे ही ब्याज कहते है।

4.7 शब्दावली

पूँजीपति – जिसके पास पूँजी का स्वामित्व हो

नियोक्ता – उत्पादक

4.8 संदर्भ ग्रंथ

26. Monetary Theory — G. N. Halm

27. The General Theory of Employment, InterestAnd Money — J. M. Keynes

28. Capital, InterestAnd Profits — B. S. Keirstead

4.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.उत्तर – ब्याज पूँजी के परिमाण का प्रतिफल है।

2.उत्तर – बचत की माँग या निवेश की माँग अर्थव्यवस्था में रहने वाले उत्पादकों या नियोक्ताओं द्वारा निवेश के लिये की जाती है।

4.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. परम्परागत ब्याज के सिद्धांत की व्याख्या करिये।
2. कीन्स द्वारा प्रतिपादित ब्याज का तरलता अधिमान सिद्धांत को विस्तार में समझाइये।

इकाई–5 ब्याज का आधुनिक सिद्धांत IS – LM वक्र द्वारा

इकाई की रुपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 ब्याज का आधुनिक सिद्धांत

5.3 बोध प्रश्न

5.4 सारांश

5.5 शब्दावली

5.6 संदर्भ ग्रंथ

5.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

5.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

5.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप समझ सकेंगे कि –

- ब्याज का आधुनिक सिद्धांत क्या है?
- इसकी IS – LM वक्रों द्वारा व्याख्या कैसे होती है?

5.1 प्रस्तावना

ब्याज का आधुनिक सिद्धांत परंपरागत तथा कीन्स के सिद्धांत का समन्वय है। इस इकाई में विनियोग, बचत, तरलता पसंदगी और मुद्रा पूर्ति के संयोजन से बने IS – LM वक्रों की सहायता से ब्याज के आधुनिक सिद्धांत की सचित्र व्याख्या प्रस्तुत की गयी है। यह छात्रों के लिए अत्यंत ही महत्वपूर्ण है।

5.2 ब्याज का आधुनिक सिद्धांत

इस सिद्धांत का प्रतिपादन प्रोफेसर हिक्स और प्रोफेसर हेन्सन ने किया। यह सिद्धांत ब्याज के प्रतिष्ठित सिद्धांत तथा कीन्स के तरलता पसंदगी सिद्धांत का समन्वय है। यह सिद्धांत IS–LM वक्र सिद्धांत के रूप में जाना जाता है। आधुनिक सिद्धांत में चार तत्वों का समन्वय है, जो कि निम्नलिखित है–

विनियोग

- बचत
- तरलता पसंदगी
- मुद्रा की पूर्ति

उपर्युक्त चारो तत्वों के संयोजन से बने IS–LM वक्र एक दूसरे को जिस बिन्दु पर काटते हैं, उस संतुलन बिन्दु पर ही ब्याज दर का निर्धारण होता है।

<u>[A] विनियोग – बचत (IS) वक्र</u>

IS वक्र बचत – विनियोग को संतुलित करने वाले ब्याज दरों तथा आय के विभिन्न स्तरों के संयोगों को दर्शाता है। बाजार में निवेश ब्याज दर का ऋणात्मक फलन है, वहीं बचत आय का धनात्मक फलन है। आय का स्तर बढ़ने से बचत अधिक होगी तथा अधिक बचत के कारण ब्याज दर में गिरावट आयेगी।

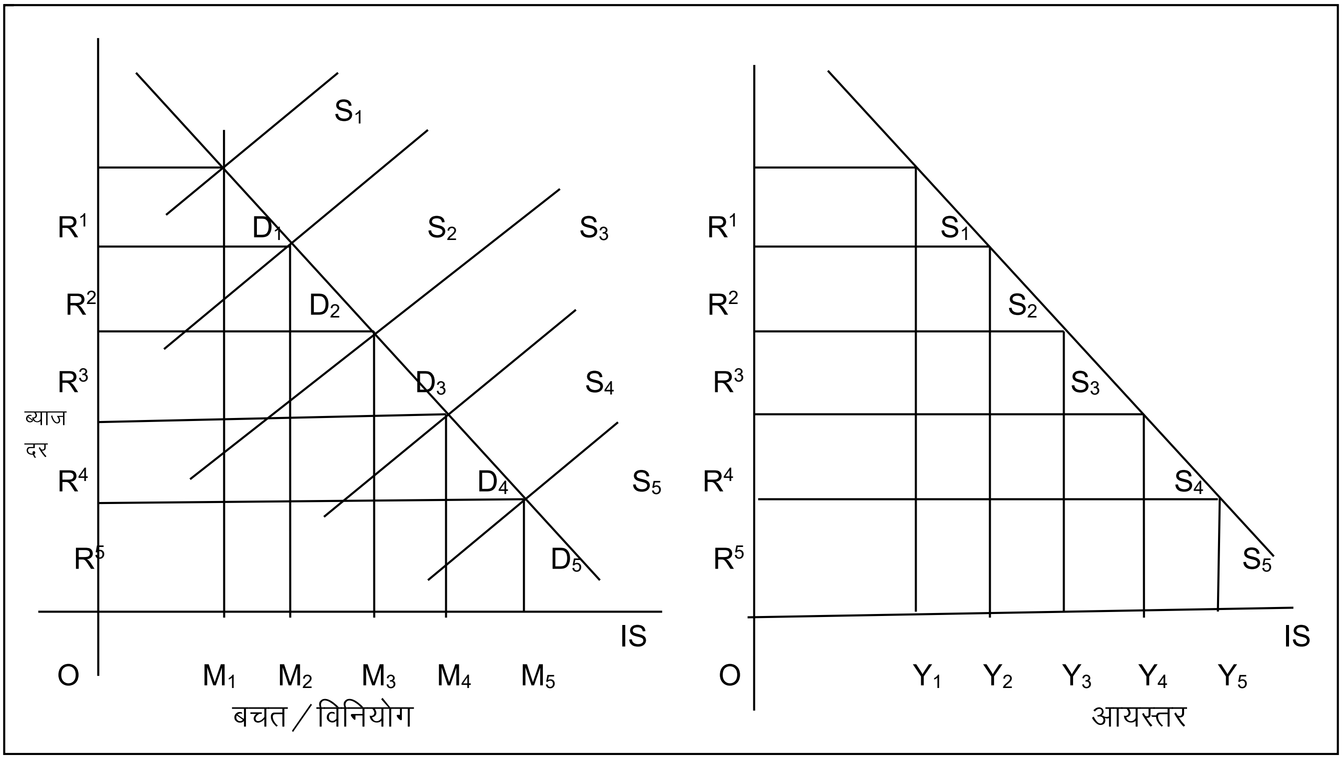

उपरोक्त रेखाचित्र में S_1, S_2, S_3, S_4, S_5 विभिन्न आय स्तर के बढ़ते क्रम हैं, जिनपर ब्याज दरें क्रमशः r_1, r_2, r_3, r_4, r_5 और बचत तथा विनियोग की मात्रा क्रमशः M_1, M_2, M_3, M_4 तथा M_5 हैं।

[B] तरलता पसंदगी/मुद्रा पूर्ति वक्र (LM)

LM वक्र ब्याज की दरों एवं आय के विभिन्न स्तरों के उन संयोगों को दर्शाता है, जहाँ पर तरलता पसन्दगी और मुद्रा पूर्ति के बीच संतुलन होता है।

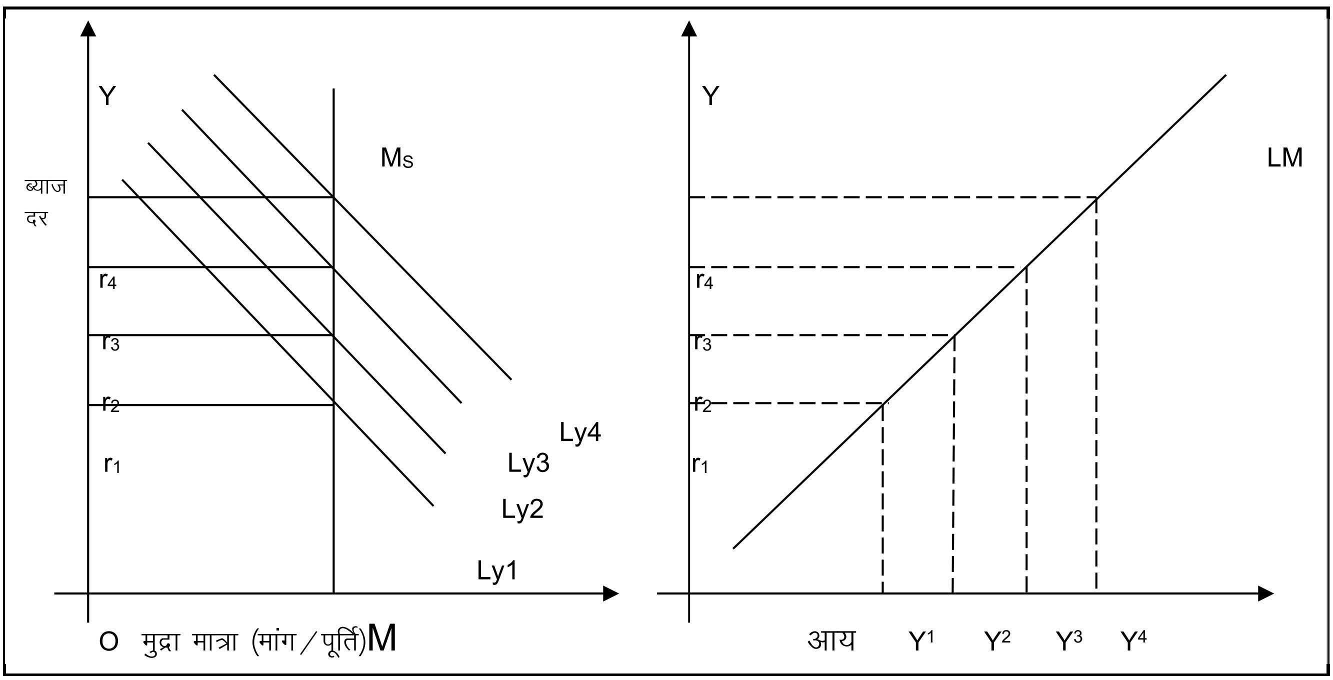

[चित्र – 2]

उपरोक्त रेखाचित्र में विभिन्न आय स्तरों के सापेक्ष ब्याज दर और मुद्रा माँग द्वारा LM वक्र प्राप्त किया गया है।

ब्याज दर का निर्धारण –

ब्याज दर का निर्धारण उस बिन्दु पर होगा, जहाँ IS और LM वक्र एक दूसरे को काटेंगे, उसी बिन्दु पर ब्याज दर का साम्य स्थापित होता है।

उपरोक्त रेखाचित्र में IS तथा LM वक्र परस्पर E बिन्दु पर प्रतिच्छेदित होती हैं, तथा OR संतुलित ब्याज दर है।

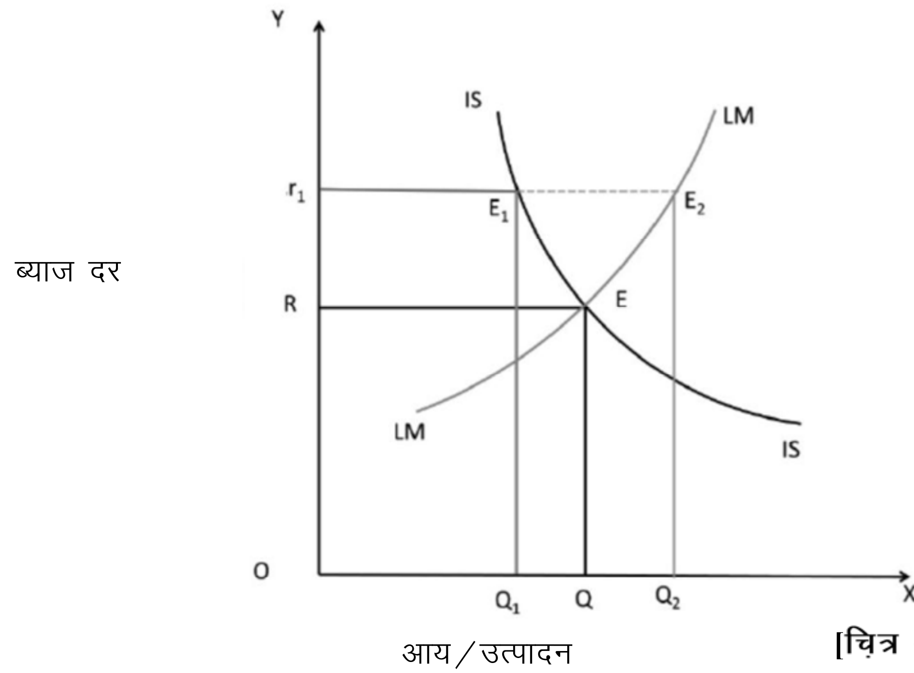

[चित्र – 3]

उपरोक्त रेखाचित्र में IS तथा LM वक्र परस्पर E बिन्दु पर प्रतिच्छेदित होती हैं, तथा OR संतुलित ब्याज दर है।

5.3 बोध प्रश्न

1. IS वक्र क्या है?
2. LM वक्र क्या है?

5.4 सारांश

ब्याज का आधुनिक सिद्धांत परंपरागत तथा कीन्स के सिद्धांत का समन्वय है। इस सिद्धांत का प्रतिपादन प्रोफेसर हिक्स और प्रोफेसर हेन्सन ने किया। यह सिद्धांत ब्याज के प्रतिष्ठित सिद्धांत तथा कीन्स के तरलता पसंदगी सिद्धांत का समन्वय है। यह सिद्धांत IS–LM वक्र सिद्धांत के रूप में जाना जाता है।

5.5 शब्दावली

विनियोग – निवेश

समन्वय – संयोजन

5.6 संदर्भ ग्रंथ

29. The General Theory of Employment, InterestAnd Money — J. M. Keynes

30. Capital, InterestAnd Profits — B. S. Keirstead

31. The Conception of Surplus in Theoretical Economics — A. K. Dass Gupta

32. Income. EmploymentAnd Economic Growth — W. C. Patterson

5.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.उत्तर – IS वक्र बचत – विनियोग को संतुलित करने वाले ब्याज दरों तथा आय के विभिन्न स्तरों के संयोगों को दर्शाता है।

2.उत्तर – LM वक्र ब्याज की दरों एवं आय के विभिन्न स्तरों के उन संयोगों को दर्शाता है, जहाँ पर तरलता पसन्दगी और मुद्रा पूर्ति के बीच संतुलन होता है।

5.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. ब्याज के आधुनिक सिद्धांत की व्याख्या करिये।

इकाई–6 लाभ के सिद्धान्त : जोखिम एवं अनिश्चितता वहन सिद्धान्त, लाभ के कार्य

इकाई की रुपरेखा

6.0 उद्देश्य
6.1 प्रस्तावना
6.2 लाभ (Profit)
6.3 नाइट का जोखिम एवं अनिश्चितता वहन सिद्धान्त
6.4 शुम्पीटर का नवप्रवर्तन सिद्धान्त
6.5 बोध प्रश्न
6.6 सारांश
6.7 शब्दावली
6.8 संदर्भ ग्रंथ
6.9 बोध प्रश्नों के उत्तर
6.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

6.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप यह समझ सकेंगे कि –

- लाभ क्या होता है?
- सामान्य एवं असामान्य लाभ का परिचय।
- नाइट का जोखिम एवम् अनिश्चितता वहन का सिद्धांत क्या है?

6.1 प्रस्तावना

इस इकाई में प्रोफेसर नाइट द्वारा प्रतिपादित जोखिम एवम् अनिश्चितता वहन सिद्धांत को विस्तारपूर्वक समझाया गया है। लाभ एक गैर प्रसंविदा स्वभाव की आय होती है, जो भूमिपति, श्रमिक तथा पूँजीपति को प्रसंविदात्मक आय के भुगतान के पश्चात साहसी को प्राप्त होता है। लाभ से अभिप्राय कुल आय के उस भाग से है, जो उत्पादन प्रक्रिया में कुल आय के उस भाग से है, जो उत्पादन प्रक्रिया में कुल खर्चों के भुगतान के बाद शेश बचती है।

6.2 लाभ (Profit)

प्रो0 वाकर के अनुसार –कुल लाभ अनेक तत्वों के मिश्रण से बना होता है, शुद्ध लाभ उनमें से एक हैं

कुल लाभ = कुल आय–कुल व्यापारिक व्यय

= साहसी द्वारा प्रयुक्त साधनों का प्रतिफल+ह्रास/संरक्षण व्यय +प्रबन्ध का प्रतिफल +एकाधिकारी लाभ +अकस्मिक लाभ +शुद्ध लाभ

शुद्ध लाभ = कुल लाभ–(साहसी के साधनों का प्रतिफल +हास तथा संरक्षण व्यय +प्रबन्ध का प्रतिफल +एकाधिकारी लाभ +आकस्मिक लाभ)

समान्य लाभ –

उत्पादन प्रक्रिया में साहसी को संलग्न रखने हेतु उसे आवश्यक, न्यूनतम रूप से प्राप्त होने वाले लाभ को

सामान्य लाभ कहते हैं। लाभ की यह न्यूनतम सीमा है, जिससें कम लाभ प्राप्त होने पर साहसी जोखिम उठाना त्याग देगा।

असामान्य लाभ –

साहसी को सामान्य लाभ के अतिरिक्त जो कुछ भी लाभ स्वरूप प्राप्त होता है, उसे असामान्य लाभ कहते हैं।

6.3 नाइट का जोखिम एवं अनिश्चितता वहन सिद्धान्त

प्रो0 नाइट ने अपनी पुस्तक 'Risk .uncertaintyAnd profit''में इस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। उनके अनुसार लाभ अनिश्चितता के कारण उत्पन्न जोखिम को वहन करने का प्रतिफल है, जो इसके लिये साहसी को प्राप्त होता है। लाभ के सम्बन्ध में नाइट प्रवैगिक अर्थव्यवस्था को स्वीकार करते हैं।

प्रो0 नाइट के अनुसार –

प्रवैगिकता या परिवर्तन का होना ही लाभ के जन्म के लिये आवश्यक नहीं हैं यदि भविष्य में होने वाले परिवर्तनों के सम्बन्ध में अनुमान किया जा सके, उन्हें जाना जा सके तो इस प्रकार के परिवर्तन के कारण लाभ नहीं उत्पन्न होगा, लाभ का कारण ही भविष्य की अनिश्चितता है।

नाइट ने जोखिम को दो भागों में बाँटा –

(क) ऐसे जोखिम, जो अनुमान लगाने योग्य हों –

इस प्रकार की जोखिमें ऐसी जोखिमें हैं, जिनका बीमा कराया जा सकता है, जैसे –आग लगना, चोरी, अवि''वसनीय कर्मचारी आदि। बीमा कम्पनी को बीमा के लिये जो प्रीमियम दिया जाता है, उसे अन्य व्यापारिक खर्चों की भाँति उत्पादन लागत में रखा जाता है।

(ख) अनिश्चित स्वभाव की (गैर –अनुमानेय) जोखिमें –

ये ऐसे जोखिम होते हैं, जिनका पहले से कोई ज्ञान न होने के कारण बीमा नहीं कराया जा सकता है, जैसे–

(1) प्रतियागिता का जोखिम।

(2) व्यापार –चक्र सम्बन्धी जोखिम।

(3) सरकार की नीति में परिवर्तन से जुड़े जाखिम।

(4) नयी मशीनों, तकनीक, अविष्कार के कारण जोखिम।

नाइट दूसरे प्रकार की जोखिमों को अनिश्चितता कहते हैं और लाभ इन अनिश्चितताओं का ही प्रतिफल है।

स्थैतिक अवस्था में जहाँ प्रत्येक चीज निश्चित है, लाभ का प्रश्न ही नहीं उठता लाभ केवल प्रवैगिक अवस्था असके सम्बन्ध कें अनेक महत्वपूर्ण निर्णय लेने पड़ते हैं। उसे लाभ या हानि का सामाना करना पड़ता है। उत्पादन के अन्य साधनों का पारिश्रमिक निश्चित होने के कारण शेष अवशिष्ट भाग ही साहसी का लाभ कहलाता है।

नाइट के अनुसार साहसी की आय के दो तत्व हो सकते हैं– एक मजदूरी, ब्याज आदि की तरह से लागत का तत्व तथा दूसरा आधिक्य तत्व। अंततः नाइट यह प्रतिपादित करते हैं कि एक प्रवैगिक अर्थव्यवस्था में साहसी जोखिम उठाने तथा संगठन करने, दोनों ही कार्यों को करता है, इसलिये उसे दोनों ही कार्यो के प्रतिफल में जो आय प्राप्त होती है, वह लाभ है।

आलोचनायें –

(1) प्रो0 जे0 के0 मेहता के अनुसार नाइट के सिद्धान्त की सबसे बड़ी कमी यह है कि उनका सिद्धान्त लाभ तथा आकस्मिक आय में अन्तर नहीं करता है।

(2) संगठन से प्राप्त आय को जोखिम के कारण उत्पन्न लाभ से अलग नहीं किया जाता है।

(3) नाइट ने माना कि लाभ वह अवशेष है, जो उत्पत्ति के अन्य साधनों को पारिश्रमिक देनें के बाद साहसी के

पास बच जाता है, इस प्रकार लाभ केवल अनिश्चितता वहन करने का प्रतिफल नहीं हुआ।

6.4 शुम्पीटर का नवप्रवर्तन सिद्धान्त

जोसेफ शुम्पीटर ने बताया कि साहसी का प्रमुख कार्य उत्पादन – क्रिया में नवप्रवर्तन को जन्म देना है। इसी नवप्रवर्तन की क्रिया का प्रतिफल ही लाभ है।

साहसी की आय उत्पादन मात्रा तथा उत्पादन लागत के साथ–साथ उत्पादित वस्तु की माँग पर आश्रित है। अतः नवप्रवर्तन एक ओर उत्पादन फलन में लाया जाने वाला परिवर्तन है तथा दूसरी ओर ऐसा परिवर्तन है, जो वस्तु की माँग में वृद्धि ला सके। नवप्रर्वन के अंतर्गत निम्न क्रियायें आती है–

(1) उत्पादन की नयी प्रविधि/तकनीक की खोज।

(2) आगतों के नये स्त्रोत की खोज।

(3) उद्योग की नयी संगठन संरचना।

(4) बाजार से नयी वस्तु का प्रचलन।

(5) नये बाजार की खोज।

प्रो. शुम्पीटर ने इस बात पर बल दिया कि साहसी को यदि किसी नवप्रर्वन के कारण सफलता मिली तथा उसके फल– स्वरूप या तो उत्पादन –लागत में कमी या माँग में वृद्धि हुयी तो लाभ का स्जन होगा।

स्पष्ट है कि लाभ साहसी के उस प्रयास का ही परिणाम है, जिसे, नवप्रवर्तन कहा जा सकता है। यह आवश्यक नहीं कि साहसी उस नयी प्रविधि का अविष्कार को प्रयोग करने के कारण लाभ प्राप्त होगा। शुम्पीटर यह भी कहते हैं कि नतप्रवर्तनजन्य लाभ कहीं स्थायी नहीं होगा, यह एक अस्थायी अवशेष या अतिरेक होता है।

<u>शुम्पीटर के सिद्धान्त की आलोचनायें</u>

(1) साहसी के कार्यों के सम्बन्ध में संकुचित दृष्टिकोण, क्योंकि शुम्पीटर ने साहसी के केवल नवप्रवर्तन से जुड़े एकमात्र कार्य पर बल दिया।

(2) शुम्पीटर का सिद्धान्त लाभ का स्पष्ट तथा विस्तृत विवेचन नहीं प्रस्तुत करता है।

(3) प्रो0 शुम्पीटर यह नहीं मानते की साहसी जोखिम उठाता है।

6.5 बोध प्रश्न

1. लाभ की परिभाषा क्या है?

2. सामान्य लाभ क्या होता है?

3. असमान्य लाभ क्या है?

6.6 सारांश

लाभ अनिश्चितता के कारण उत्पन्न जोखिम को वहन करने का प्रतिफल है, जो इसके लिये साहसी को प्राप्त होता है। लाभ के सम्बन्ध में नाइट प्रवैगिक अर्थव्यवस्था को स्वीकार करते हैं। प्रवैगिकता या परिवर्तन का होना ही लाभ के जन्म के लिये आवश्यक नहीं हैं यदि भविष्य में होने वाले पनिवर्तनों के सम्बन्ध में अनुमान किया जा सके, उन्हें जाना जा सके तो इस प्रकार के परिवर्तन के कारण लाभ नहीं उत्पन्न होगा, लाभ का कारण ही भविष्य की अनिश्चितता है।

6.7 शब्दावली

जोखिम – खतरा

प्रवैगिक – परिवर्तन

6.8 संदर्भ ग्रंथ

33. The Conception of Surplus in Theoretical Economics — A. K. Dass Gupta

34. Income. EmploymentAnd Economic Growth — W. C. Patterson

35. The Distribution of National Income — M. Kalecki

6.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. **उत्तर** – लाभ अनिश्चितता के कारण उत्पन्न जोखिम को वहन करने का प्रतिफल है, जो इसके लिये साहसी को प्राप्त होता है।
2. **उत्तर** – उत्पादन प्रक्रिया में साहसी को संलग्न रखने हेतु उसे आवश्यक, न्यूनतम रूप से प्राप्त होने वाले लाभ को सामान्य लाभ कहते हैं।
3. **उत्तर** – साहसी को सामान्य लाभ के अतिरिक्त जो कुछ भी लाभ स्वरूप प्राप्त होता है, उसे असामान्य लाभ कहते हैं।

6.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. प्रोफेसर नाइट द्वारा दिये गये जोखिम एवम् अनिश्चितता वहन सिद्धांत को विस्तारपूर्वक समझाइये।

Notes

Notes